ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला, हिन्दी ग्रन्थाङ्क—५

शेर-ओ-शायरी

निकला हूँ साथ लेके शकिस्ता किताबेदिल।
हर-हर वरक़में शरहे तमन्ना लिये हुए॥

अयोध्याप्रसाद गोयलीय

द्वितीय संस्करण

प्रथम संस्करणमें 'दर्द'के केवल ३० शेर दिये गये थे, इसमें अन्य ग़ज़लगो शायरोंकी तरह उनके भी ५१ शेर दिये गए हैं। 'नज़ीर' के ५-६ शेर और बढ़ाये गये हैं। ४००-५०० नये मायने बढ़ाये हैं और इतने ही संशोधन भी किये हैं। कितावके आकारने हमें इजाजत नहीं दी कि हम और भी परिवर्द्धन कर सकें। यह सब अपनेमें मुकम्मिल है। इस संस्करणके समूचे प्रूफ़ एक बार लेखकने और एक बार श्रीरामाधारजी शुक्लने देखे हैं। विषय-सूची तथा अनुक्रमणिका दुबारा श्री प० देवीशरणजी पाडयने तैयार की है।

सस्नेह भेंट

प्रिय सुमत वावू !

यूँ तो न जाने कितने मुशायरे देखे थे, परन्तु १५ जून १९३३का वह दिन कितना सुखद और भव्य था, जव हम दोनों एक साथ प्रथम वार ग़ाज़ियावाद मुशायरेमें गये थे। मुशायरेमें जाते समय तो यूँ ही इत्तफ़ाक़िया साथ हो लिये थे, परन्तु वहाँसे लौटे तो दोनों अभिन्न हृदय मित्र वनकर। उन ३-४ घंटोंमें इतने शीघ्र कैसे हमने एक-दूसरेको पहचान लिया, कैसे विना प्रयासके आत्मीय वन गये, स्मरण करके आश्चर्य होता है।

उस दिनके वाद कितने मुशायरे और कवि-सम्मेलन साथ-साथ देखे, और दिखाये; साहित्य उत्सवोंमें गये, और लोगोंको अपने यहाँ वुलाया, कुछ याद है ?

तव तुम वी० ए०के विद्यार्थी थे और अव ९-१० वर्षसे मजिस्ट्रेट। परन्तु साहित्यिक अभिरुचि वही वनी हुई है। कॉलेजमें रहे तो वहाँ मुशायरों, कविसम्मेलनों, और साहित्यिक गोष्ठियोंकी धूम मचा दी। मजिस्ट्रेट हुए तो उस रुचिमें और भी चार चाँद लग गये—रौनक़े वज़्मे अदव वन गये।

इस पुस्तकमें सैकड़ों ऐसे शेर हैं जो हम दोनोंने झूम-झूमकर सुने हैं, पढ़े हैं, पचासों शेर समय-समयपर अपने पत्रोंमें लिखे है। जिस शेरोशायरीकी वजहसे हम दोनों आत्मीय वने, उस शेरोशायरीको इस रूपमें भेंट करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है।

अपन वड़े भाईकी

और उपयोग करोगे, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ। यह जवाहरपारे योग्य पारखीके हाथमें दे रहा हूँ। इस सूझमें मुझे अत्यन्त सन्तोष मिल रहा है।

"कि जौहर हूँ और जौहरी चाहता हूँ।"

—गोयलीय

विषय-सूची

	पृष्ठ
अपनी बात ..	१५
प्रथम संस्करणका स्वागत	२३
प्रस्तावना—श्री राहुल सांकृत्यायन	३३
एक नजर—श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन, एम० ए० ..	३७
१—उद्‌गम	
उर्दू-शायरीका संक्षिप्त परिचय ..	४६
राष्ट्रीय भाषाके जनक ..	५१
अमीर खुसरो ..	५१
कबीर ..	५२
जायसी ..	५३
रहीम ..	५३
हिन्दी : हिन्दवी ..	५२
उर्दूके आदि कवि ..	५२
वली ..	५५
रेख़्ता ..	५५
उर्दू ..	५५
उर्दू-पद्य ..	५६
ग़ज़ल ..	५६
मतला, क़ाफ़िया, रदीफ़, शेर मक़्ता ..	६०
रेख़्ती ..	६१
क़सीदा ..	६३
मसनवी ..	६३
मर्सिया ..	६३
नात ..	६४
तसव्वुफ़ ..	६४
रुबाई ..	६५
नज़्म ..	६७
ख़ुदासे जुदा (भ्रामक शब्द)	६८
२—तरंग	
(उर्दू-शायरीका मर्म)	७५
गुलशन ..	८०
चमन ..	८१
गुल ..	८२
बुलबुल ..	८३
आशियाँ ..	८४
क़फ़स ..	८६

	पृष्ठ		पृष्ठ
बाग़बाँ	८७	हुस्न	१२७
गुलचीं	८६	माशूक	१२८
सैयाद	६०	रूप शोखी, अदा	१२८
मयख़ाना	६४	कमसिन	१२६
शराब	६६	शर्मीला	१२६
ज़ाहिद	६८	नाज़ुक	१३०
नासेह्	६६	शोख़	१३२
शेख़	६६	बग्रदब	१३५
वाइज़	१००	बवफ़ा	१३५
बिरहमन	१०१	ज़ालिम	१३६
इश्क	१०२	बमुरव्वत	१३७
हक़ीक़ी इश्क	१०३	वायदा फ़रामोश	१३७
मजाज़ी इश्क	१०७	बुत	१३७
आशिक़	११०	क़ातिल	१३७
वस्लोदीदार	११२	हरजाई	१३८
फ़ुरक़त	११३	पर्दादार	१३८
रोना विसूरना	११५	शमा-परवाना	१३६
क़ाहीदगी	११६	सहरा	१४२
बदगुमानी	११८	आदम	१४२
उदू	११८	हव्वा	१४२
दरबान	११६	शैतान	१४३
क़ासिद	१२०	ख़िज्र	१४३
दीवानगी, आवारगी	१२२	ईसा	१४३
मृत्युकी इच्छा	१२३	लैला-मजनूं	१४३
खुद्दारी	१२५	जुलखा-यूसुफ़	१४५

	पृष्ठ
शीरीं-फ़रहाद	.. १४५

३—उद्घाटन

उर्दू-शायरीका विकास	.. १४९
उर्दू-शायरीके पोषक	.. १५१
ग़ज़लके बादशाह	.. १५१
१—मीर	.. १५३
२—दर्द	.. १६७

४—संगम

उर्दूका प्रथम भारतीय विशुद्ध कवि

३—नज़ीर	.. १७७
कामुक वृद्ध	.. १७९
तन्दुरुस्ती और आबरू	.. १८०
कलियुग	.. १८०
आटे-दालकी फ़िक्र	.. १८०
रोटियाँ	.. १८१
कौड़ीका महत्व	.. १८१
पैसेकी इज़्ज़त	.. १८२
होली	.. १८२
दूसरी बहरमें होली	.. १८३
फ़क़ीरकी सदा	.. १८३
मृत्युकी आमद	.. १८४
ख़ाकका पुतला	... १८४

	पृष्ठ
आदमीनामा	.. १८५
रानी	.. १८६
मुफ़लिसी	.. १८६
बनजारानामा	.. १८७
कुछ दोहे	.. १८९

५—ज्योत्स्ना

उर्दू-शायरी जवानीकी चोटीपर—सन् १८०० से १९०० तकके अमर कलाकार

४—ज़ौक़	.. १९३
५—ग़ालिब	.. २०६
६—मोमिन	.. २३३
७—अमीर मीनाई	.. २४२
८—दाग़	.. २५३

६—नव प्रभात

उर्दू-शायरीमें अभूतपूर्व परिवर्तन

१८५७के विप्लवके पश्चात् युगान्तरकारी शायर	.. २६१
९—आज़ाद	.. २६८
हुब्बेवतन	.. २७०

	पृष्ठ
१०–हाली	२७४
मुसद्दस	२७८
जमीमा	२८९
फुटकर	२९१
११–अकबर	२९४
१२–इकबाल	३०७
बच्चोंका कौमी गीत	३०९
तरानय हिन्दी	३०९
नया शिवाला	३०९
आफ्ताब सुबह	३०९
सर सैयदकी लोह-तुरबत	३११
तसवीर दर्द	३१२
शमअ	३१३
एक आरजू	३१४
कुछ और नमूने	३१५
शिकवा	३१६
जवाब शिकवा	३२२
दुआ	३२४
शमअ व शायर	३२५
फूल	३२७
कुछ और नमूने	३२७
हास्य रस	३३०
साम्प्रदायिक मनोवृत्तिके कुछ शेर	३३३
१३–चकबस्त	३४७

	पृष्ठ
खाके हिन्द	३५२
वतनका राग	३५४
पयामे वफा	३५५
फरियादे कौम	३५६
फूल-माला	३५८
फुटकर	३६०
कौमी मुसद्दस	३६१
मजहब शायर	३६२
फुटकर	३६२
७—जागरण	
सन् १९१४के महासमरके बाद राजनैतिक चेतना	
साम्राज्य विरोधी मजदूर किसान हितैषी शायर	३७१
राजनैतिक चेतना	३७३
१४–जोश मलीहाबादी	३७६
गुलामोंसे खिताब	३८१
मुल्कके रजज	३८२
मुस्तकबिलके गुलाम	३८३
पस्त कौम	३८३
रवीन्द्रनाथ टैगोर	३८३
सज्जादसे	३८४
हुब्बवतन और मुसलमान	३८४
गद्दारसे खिताब	३८५
भूखा हिन्दोस्तान	३८६

	पृष्ठ
चलाए जा तलवार	.. ३८६
मक़तले कानपुर	.. ३८७
दर्दे मुश्तरक	.. ३८८
नाजुक अन्दामाने कॉलिजसे खिताव	.. ३८८
किसान और मजदूर	.. ३८६
ज़वाले जहाँबानी	.. ३६१
ईद मिलनेवाले	.. ३६१
मुफ़लिसोंकी ईद	.. ३६२
दीने आदमीयत	.. ३६३
वनवासी बाबू	.. ३६४
दुनियामें आग लगी है	.. ३६५
साँस लो या खुश रहो	.. ३६६
हमारी सैर	३६७
फुटकर	.. ३६८
रुबाइयात	.. ४००
गुज़र जा	.. ४०१
चुने हुए शेर	.. ४०२
रेशये पीरी	.. ४०३
इबादत	.. ४०४
१५—सीमाब अकबराबादी	४०५
दुआ	.. ४०६
जंगी तराना	.. ४०६
वतन	.. ४०७
दावते इन्क़लाब	.. ४०७

	पृष्ठ
जवानाने वतन	.. ४०८
ख्वाब आश्नाये जमूदसे	.. ४०८
ग़द्दारे क़ौम और वतन	.. ४०६
फुटकर	.. ४०६
मजदूर	.. ४१०
शायरे इमरोज़	.. ४११
हिन्दुस्तानी माँका पैग़ाम	.. ४११
ग़ज़लोंके कुछ शेर	.. ४१२
१६—अहसान बिन दानिश	४१७
नाख्वान्दा खातून	.. ४२१
मजदूरकी मौत	.. ४२४
एक शिकारीसे	.. ४२७
नौ उरूस बेवा	.. ४२८
कुत्ता और मजदूर	.. ४३१
१७—बर्क़ देहलवी	.. ४३२
नसीमे सुबह	.. ४३६
मिट्टीका चिराग़	.. ४३७
जुगनूँ	.. ४३७
शफ़क़	.. ४३८
सुबहे उम्मीद	.. ४३६
अहले हिन्द	.. ४३६
तेग़े हिन्द	.. ४४०
पयामे शौक़	.. ४४१
सब्ज़ये बेगाना	.. ४४२
दिलेदर्द आश्ना	.. ४४४

	पृष्ठ
जेबुन्निसाकी क़ब्र	४४४
दच्चकी गुलाबी मुस्कराहट	४४५
अब्र करम बरस	४४६
कार खैर	४४७
कुछ शेर	४५०
८—सफल प्रयास	
उर्दू शायरी एक नये मोड़ पर—सरल भाषाके समर्थक	
भाषा उर्दू मगर आसान	४५३
उर्दूमें हिन्दी शब्द	४५४
केवल हिन्दी	४५४
१८—हफ़ीज़ जालन्धरी	४५६
जल्वये सहर	४६५
तूफ़ानी किश्ती	४६५
ईदका चाँद	४६७
शाम रंगीं	४६८
खँडरका दर्गाह	४६९
तसवीर काश्मीर	४६९
प्रीतका गीत	४७०
ग़ज़लोंके नमूने	४७१
१९—साग़र निज़ामी	४७६
चन्द ग़ज़लोंके नमूने	४७८
सगतराशका गीत	४८२
अहद	४८४

	पृष्ठ
कौमी तराना	४८६
पनघटकी रानी	४९२
हुस्न गुज़रान	४९३
औरत	४९३
बुझा हुआ दीपक	४९४
नाग	४९५
महात्मा गान्धी	४९९
पुजारिन	५००
२०—अख़्तर शीरानी	५०३
मुझे बद्दुआ न दे	५०४
नग़मये सहर	५०४
ए इश्क़	५०५
सलमा	५०६
आख़िरी उम्मीद	५०८
मदर्सेकी लड़कियोंकी दुआ	५०९
औरत	५०९
दुनिया	५११
२१—अर्श मलसियानी	५१२
क्या मानी ?	५१२
जागा सब संसार	५१३
मेरे मनकी आशा जाग	५१४
९—प्रगतिशील युग	
प्राचीन इश्किया शायरी नवीन प्रेम-मार्गपर वर्तमान युगके उदीयमान	

	पृष्ठ
कवि	.. ५१६
बाज़पुर्स	.. ५२१
महबूबसे	.. ५२१
इक़बाल सलमाका एक गीत	५२५
पसे मंज़र	.. ५२५
दावते ख़ुदी	.. ५२६
डूबती नैया	.. ५२६
घूरनेवाले	.. ५२७
सबा मथरावीकी नज़्म	.. ५२६
२२—फ़ैज़	.. ५३२
मौज़ूए सुखन	.. ५३३
रक़ीबसे	.. ५३४
पहली-सी मुहब्बत	.. ५३५
चन्द रोज़ और	.. ५३५
कुत्ते	.. ५३६
खुदा वोह वक़्त न लाए	.. ५३७
हुस्न और मौत	.. ५३७
तनहाई	.. ५३८
२३—मजाज़	.. ५४०
मजबूरियाँ	.. ५४१
नौजवाँ ख़ातूनसे	.. ५४२
नौजवाँसे	.. ५४३
सरमायादारी	.. ५४३
विदेशी महमानसे	.. ५४५
रात और रेल	.. ५४५

	पृष्ठ
नन्हीं पुजारिन	.. ५४६
नूरा नर्स	.. ५४७
फुटकर	.. ५५०
२४—जज़्बी	.. ५५१
ऐ काश !	.. ५५१
ग़ज़लोंके शेर	.. ५५२
२५—साहिर लुधियानवी	.. ५५७
ताज महल	.. ५५६
कभी-कभी	.. ५६०
फ़रार	.. ५६२
हिरास	.. ५६३
शकिस्त	.. ५६४
एक तसवीरें रंग	.. ५६६
मादाम	.. ५६७

१०—मधुर प्रवाह

अतीत युगकी ग़ज़लके वर्तमान समर्थ शायर	..
सलाम मछली शहरीकी नज़्म	५७२
गायत्री देवीकी नज़्म	.. ५७२
२६—साक़िब लखनवी	.. ५७६
२७—हसरत मोहानी	.. ५८४
२८—फ़ानी बदायूनी	.. ५६०
२६—असग़र गोण्डवी	.. ५६६
३०—जिगर मुरादाबादी	६०२

	पृष्ठ		पृष्ठ
३१–फ़िराक़ गोरखपुरी	६०७	कुछ ग़मे जानाँ कुछ ग़मे दौराँ	६१७
ग़ज़लें कुछ अशआर ..	६११	शामे अयादत ..	६१७
रूप ..	६१४	क्या कहना ! ..	६१८
आज दुनिया पै रात भारी है	६१५	आधी रात को ..	६१९
नई आवाज़ ..	६१६	सहायक ग्रन्थ-सूची ..	६२३
तस्वीरें आदम ..	६१६	अनुक्रमणिका ..	६२९

•

अपनी बात

शेरोशायरी प्रस्तुत करनेका लक्ष्य केवल यह रहा है कि उर्दू-शायरीमें प्रत्येक दृष्टिकोणको लिये हुए जो सुरुचिपूर्ण साहित्य प्रकाशति हो रहा है, और वह कहाँ-से-कहाँ पहुँच गया है, यह हिन्दी-पाठक भी जान लें। उर्दू-शायरीपर अभीतक प्रकाशित २-४ पुस्तकोंसे अधिकांश लोग यही जानते हैं कि उर्दू-शायरी गुलोबुलबुल, साक़ी-ओ-शराब और हुस्नोइश्क़के झमेलेमें फँसी हुई है। उन्हें क्या मालूम कि वह कहाँ-से-कहाँ पहुँच गई है!

सदसाला दौरेचर्ख़ था साग़रका एक दौर।
निकले जो मयकदेसे तो दुनिया बदल गई॥
—'रियाज़' ख़ैराबादी

विश्वज्ञान और विश्व-साहित्यसे जो साहित्यिक जितना ही अधिक परिचित होगा, वह अपनी भाषाको उतना ही अधिक विकसित कर सकेगा। प्रान्तीय और अभारतीय भाषाओंका हिन्दीमें अनुवाद हो, हिन्दीमें ही सब कुछ मिले, तभी हिन्दी पढ़नेमें लोगोंकी रुचि बढ़ेगी। राष्ट्रभाषा पदपर अभिषिक्त हमारी हिन्दी सर्वगुणालंकृत हो, उसमें कहीं भी कोई ख़ामी न रहने पाये, इसके लिए हमें पूरे मनोयोगसे प्रयत्न करना है।

"एक भी पत्ती अगर कम हो तो वह गुल ही नहीं।"

हमारे ही देशवासियोंने—हमारे अपने ही बन्धुओंने भारतमें ही जन्मी जिस भाषाको पाल-पोसकर और अरबी-फ़ारसीके वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत करके प्रस्तुत किया है, उस ओर प्यार और स्नेहसे न सही, पारखी-दृष्टिसे तो देखना ही होगा, ताकि उस जैसे दोषोंसे हम अपनी हिन्दी-भाषा-

को अछूती रग सकें और गुणोंसे अपनी भाषाको सँवारनेमें लाभ उठा सकें।

इतर भाषाओंकी विशेषताएँ हमें इस खूबीसे पचानी चाहियें कि वे स्वय हमारी सम्पत्ति बन जाएँ। अन्धानुकरण करने या नकलची बननेसे भाषाकी प्रतिष्ठा गिरती है। अंग्रेजी पढ़े-लिखे उर्दू-साहित्यिकोंने योरोपीय साहित्यसे प्रभावित होकर उर्दू-गद्य-पद्यमें अनेक परिवर्त्तन और परिवर्द्धन किये हैं, और इस खूबीसे कि वह खालिस उर्दूकी अपनी निधि बन गए हैं।

हिन्दी-कवितामें बातको बढ़ा-चढ़ाकर कहनेका रिवाज चल पड़ा है। इसीलिये वर्त्तमानयुगी अधिकांश हिन्दी-कविता व्यावहारिक न बनकर केवल पठन-पाठनकी चीज़ बन रही है। ग़ज़लगो शायरोंकी तरह गागरमें सागर भरनेकी कलामें पारगत होना हिन्दी-कवियोंके लिए भी नितान्त आवश्यक है। इस प्रकारकी कलाके मर्मज्ञ हमारे यहाँ हिन्दी-दोहोंके रचयिता कितने ही हुए हैं। इस प्रथाको नवीन ढगसे भिन्न-भिन्न छन्दोंकी दो-दो या चार-चार पक्तियोंमें पुन चालू करना चाहिए। यदि हिन्दी-कविता भी संस्कृत-श्लोको और उर्दू-फ़ारसी-शेरोंकी तरह व्याख्याना, लेख और दैनिक जीवनोपयोगी कार्योंमें सूक्ति-रूपसे प्रयुक्त की जा सकी, तो इसका विश्वव्यापी प्रसार अवश्यम्भावी है।

कई ख्याति-प्राप्त हिन्दी-कवि हिन्दीमें ग़ज़ल लिखने लगे हैं। ग़ज़ल कहना बुरा नहीं, परन्तु आश्चर्य तो यह देखकर होता है कि ग़ज़लका अर्थ क्या है, इसमें किस तरहके भावोंको व्यक्त करनेकी परिपाटी है, उसका दाखिली (अन्तरग) और खारिजी (बाह्य) पहलू क्या हैं, ग़ज़ल और नज़मके शेरमें क्या अन्तर है, पारिभाषिक शब्दोंका परस्पर कितना सम्बन्ध और विच्छेद है, यह न जानते हुए भी अनाप-शनाप जो जीमें आता है, लिखते हैं। गुलचींको मयख़ानमें और पीरमुग़ाँको गुलशनमें खींच लाते हैं। सभा-सोसाइटियोंके उत्सवोंमें गाये जानेवाले हिन्दी उर्दू मिश्रित

गाने या मनचाहे भाव, मनभावते शब्दों और छन्दोंमें व्यक्त करनेका नाम ग़ज़ल नहीं है। यदि जिन्नाका जीवनचरित्र, रेलगाड़ीका वर्णन, सास-बहूके झगड़ेकी कविता रामायण कहला सकती है, तो ये प्रयत्न भी ग़ज़ल कहला सकते हैं।

१९२९में एक ख्याति-प्राप्त आशुकवि नजीबाबाद पधारे। मुझे भी उनकी यह अद्भुत कला देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। सचमुच ही उन्होंने तत्काल समस्या-पूर्त्ति करके जनताको मंत्रमुग्ध कर दिया। कई एक उर्दू-साहित्यिक भी उनकी प्रतिभाकी भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे कि उनको जो लन्तरानीकी सूझी तो बोले अब हम उर्दू ग़ज़लोंके मिसरोंपर गिरह लगायेंगे। मिसरे दिये गये तो ऐसी भोण्डी और उपहासास्पद तुक लगाई कि हिन्दी-हितैपियोंकी गर्दनें झुक गईं। वे मिसरोंपर गिरह क्या लगा रहे थे, अपने हाथों अपनें कीर्त्तिका शव पीट रहे थे।

इसी प्रकारकी हरकतें मैं ४-५ कवियोंकी और देख चुका हूँ। भरी सभामें जब उर्दू-साहित्यिक भी बड़ी तन्मयतासे हिन्दी-कविताका रसास्वादन कर रहे थे, हिन्दीकी मधुरता, शैली, उपमा, अलंकार आदिकी मुक्त कण्ठसे दाद दे रहे थे, तभी कवि महोदयने अकस्मात हिन्दी-उर्दू-मिश्रित तुकबन्दी प्रारम्भ कर दी। और तुकबन्दी भी कैसी? जिसे चवन्निया क्लास सिनेमा-प्रेमी भी गुनगुनाते हिचकिचाएँ। उर्दू-अदीब मुँहमें रूमाल देकर हँस रहे हैं, और बनानेके लिये वाह-वाकी झूठी दाद दे रहे हैं। हिन्दी-हितैपी पानी-पानी हुए जा रहे हैं; किन्तु कवि हैं कि न वे आँखके इशारेको समझते हैं, न चिट पढ़ते हैं, और न घंटीकी परवाह करते हैं। अपनी रामधुनमें अर्जित की हुई समस्त कीर्त्तिको चौपट किये जा रहे हैं।

उफ़! री शबनम! इस क़दर नादानियाँ?
मोतियों को घास पर फैला दिया॥

—आग़ा शाइर देहलवी

उर्दू-शायरोंने पुरानी और नवीन बहरो (तर्जों)में सैकडो ऐसी नज्में और गीत लिखे हैं जिनमें हिन्दी शब्दोंको अत्यन्त कुशलतापूर्वक और आकर्षक ढगसे समोया है। उर्दू शायरीके नियमोंकी परिधिके अन्दर इस खूबीसे उन्हें अलकृत किया है कि वे खालिस हिन्दी-कविता होते हुए भी उर्दू-साहित्यकी अपनी निधि बन गये हैं। अत हमारे यहाँ भी गजलें लिखी जाएँ या नज्में परन्तु उनपर छाप अपनी होनी चाहिए, नकल शोभनीय नही।

"रहे इक बाँकपन भी बेदमागी में तो जेबा है।"

उर्दूसे अनभिज्ञ हिन्दी भाषा-भाषी भी उर्दू-शायरीके सम्बन्धमें यथोचित और आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सकें, इस ओर भरसक प्रयत्न किया गया है। अपना विश्वास है कि यदि उच्चारणकी ओर ठीक ध्यान दिया जायगा, तो शेरोशायरीके पाठककी उर्दू अनभिज्ञता उर्दू-साहित्यक भी सहज ही नही भाँप सकेगे।

पुस्तक लिखनेमें शुद्धताकी ओर पूर्ण ध्यान रक्खा गया है। पल भरको भी प्रमाद या असावधानीको आश्रय नही दिया गया है। फिर भी मेरी अल्पज्ञता या उर्दू लिपिके दोषके[1] कारण त्रुटियोंका रह जाना सम्भव है। जो महानुभाव त्रुटियोंकी सूचना देगे, उनका मैं अत्यन्त आभारी रहूँगा।

३१ शायरोंकी निश्चित सख्याका बन्धन न होता और पुस्तकके

---

[1] उर्दू-लिपिमें 'जा अबतक नही आया' या 'जवाब तक नहीं आया', 'मुमतहन' (परीक्षार्थी) या 'मुमतहिन' (परीक्षक), 'मुअद्दब' (जिसका अदब किया जा सके) या 'मुअद्दिब' (अदब करनेवाला), 'सस्र' या 'सरवर' आदि शब्द प्राय एक ही तरह लिखे जाते हैं। तनिकसे नुकतेके हेर फेरसे 'कौंसिलामें सीट चाहिए' की बजाय "घासलेटमें बीट चाहिए" पढा जाना साधारण-सी बात है।

आकारने इजाज़त दी होती तो और भी कई शायरोंका उल्लेख किया जा सकता था। ३१ शायरोंमें अमुक शायर क्यों नहीं रक्खा गया, यह प्रश्न तो स्वाभाविक है; परन्तु वह किस अध्यायमें, किसके स्थानमें रक्खा जाय, यह बताना तनिक कठिन होगा। बहुत-से क़ीमती शेर दुरूह होनेके कारण या अधिक प्रचलित होनेकी वजहसे नहीं चुने गये हैं। और भी बहुत-से शेर एक ही भावके द्योतक होनेके कारण या ५१ शेरकी निश्चित संख्याके बन्धनके कारण छोड़ दिये गये हैं।

संकलन-कार्य बैठे-बिठाये दर्देसर मोल लेना है। शायरेइन्क़लाब फ़ख्रेवतन जनाब 'जोश' मलीहाबादी तो अपनी ही ७-८ पुस्तकोंसे पसन्दीदा कलाम चुननेके बजाय नया लिख देना अधिक सुविधाजनक समझते हैं। यदि सहृदय पाठक इसे आत्मविज्ञापन न समझें, तो मैं निस्संकोच कहूँगा, कि हज़ारों शेर पढ़कर उनमेंसे ५१ शेर चुनना समुद्रके उदर-गह्वरसे मोती ढूँढ लानेसे भी अधिक दुष्कर है। कुछ भावोंके कारण, कुछ भाषाके विचारसे, कुछ अछूती कल्पनाकी वजहसे, कुछ उपमाकी विचित्रतासे और कुछ अपनी मधुरता-कोमलताके लिहाजसे अपना सानी नहीं रखते, फिर उनमेंसे किनको चुना जाय, और किनको छोड़ा जाय, निर्णय करना आसान नहीं।

दिल ये कहता था कि सीने से लगा लूँ उनको।
शौक़ कहता था कि आँखोंमें छुपालूँ उनको॥

संकलन-कार्यमें उपस्थित वातावरणका भी काफ़ी प्रभाव पड़ता है। राजनैतिक लहरोंमें प्रेम-विरहके अंकुर नष्ट हो जाते हैं। साम्प्रदायिक आँधियोंके समक्ष भ्रातृत्व और एकताके दृढ़ भाव धराशायी हो जाते हैं। व्यक्तिगत आपदाओंसे आकुल मन कर्त्तव्यसे विमुख होकर वेदना और व्यथामें डूब जाता है। श्रेष्ठ-से-श्रेष्ठ कलाम नज़रोंसे गुज़रता है, परन्तु दृष्टि वातावरणके अनुकूल कलामपर ही ठहरती है। पुस्तक-निर्माणके इन चार-पाँच वर्षोंमें राजनैतिक बाढ़ और साम्प्रदायिक

भारतीय ज्ञानपीठके हिन्दी-विभागके सुयोग्य विद्वान सम्पादक प्रियवर बाबू लक्ष्मीचन्द्रजी एम० ए०के साथ प्रातःकालीन सैरमें शेरोशायरीकी पुरलुत्फ़ चर्चाएँ रही हैं। पुस्तकका इतना मौज़ूं नाम भी उन्होंने ही सुझाया है। जब लिखने-पढ़नेसे मन ऊब गया है, तब उन्हीके प्रेमाग्रहोंने लिखनेको बाध्य किया है और अब वही इसे अपनी ग्रन्थमालामें प्रकाशित कर रहे हैं। यदि उनका आग्रह न होता और ज्ञानपीठकी अध्यक्षा स्नेहमयी श्रीमती रमारानी जैनने प्रकाशनकी अनुमति न दी होती तो मेरी पुस्तक इस कागज़ और प्रेसके अकालमें कौन छापता ?

"ऊँचे-ऊँचे मुजरिमों की पूछ होगी हश्रमें।
कौन पूछेगा मुझे मैं किन गुनहगारोंमें हूँ ॥"

श्री पं० देवीशरणजी पाण्डेय शास्त्री और श्री पं० रामाधारजी दुबे 'साहित्य-भूषण' ने सुवाच्य अक्षरोंमें मेरे हस्तलेखकी प्रतिलिपि करके मूलप्रतिके खोये जानेके भयसे मुझे मुक्त किया है, उससे कम्पोजिङ्गमें भी सुविधा पहुँची है। अनुक्रमणिका और विषय-सूची बनानेमें भी सहायता दी है। दुबेजीने फ़ाइनल प्रूफ़ देखनेमें भी मुझे पूर्ण सहयोग दिया है।

श्रीकुलभूषण जैन 'कौसर'ने 'ग़ालिब', 'साक़िब', 'फ़ानी', 'असग़रके कलाम-चयनमें सहायता दी है। पढ़ते-लिखते जब थक गया हूँ, तो कई लेख उन्होंने स्वयं पढ़कर सुनाये हैं। श्रीमृगांककुमार राय एम० ए०, बी० एल०, श्रीश्यामलाल बी० ए०, एल-एल० बी० और प्रिय बन्धु नेमिचन्द जैन एम० एस-सी० ने निरन्तर प्रेरणा देकर पुस्तक समाप्त करने और प्रेसमें देनेको मुझे बाध्य किया है।

लेबर-वेलफ़ेयर-सेण्टरके उत्साही और परिश्रमी पुस्तकालयाध्यक्ष बाबू रामप्रसादसिंह अध्ययनके लिये यथावश्यक ग्रन्थ देते रहे हैं।

धन्यवाद देनेका और आभार माननेका साहस मुझमें नहीं है। मैं तो अपने आकुल मनको भुलाये रखनेके लिये पढ़ने-लिखनेमें खोया रहा हूँ, यदि मैंने यह प्रयास न किया होता तो :

आँधियाँ अभूतपूर्व आई हैं। विश्व-इतिहासमें इस तरहके प्रलयकारी और नर-मेध-यज्ञके उदाहरण खोजनेपर भी नहीं मिलते :

यह इत्तफाक तो देखो बहार जब आई।
हमारे जोशे जुनूंका वही जमाना था॥
—'असर' लखनवी

और व्यक्तिगत आपदाएँ तो पहाड बनकर टूटी हैं —

"जिन्दगी मौतकी मानिन्द गुजारी मैंने।"

बार-बार विघ्न-बाधाओंके कारण साहस और उत्साह भागे, लिखने पढ़नेके साधन नष्ट हुए, फिर भी भाई 'खुरशीद'के शब्दोंमें—

माना कि हर बहारमें पर टूटते रहे।
फिर भी तवाफे सहने गुलिस्ताँ किये गये॥

देश और मनकी स्थिति कैसी भी रही, हमने अपनी समझके अनुसार हर युगके अनेक शायरोंमेंसे केवल दो-दो चार-चार चुने हुए श्रेष्ठ प्रतिनिधि शायरोंके हर रंगके उत्तम कलामको चुननेका यथाशक्य प्रयत्न किया है।'

जनवरी १६४४में मेरे परम हितैषी, सहृदय दानवीर सेठ शान्तिप्रसादजीकी अभिलाषा हुई कि उर्दूके कुछ सुभाषित उनकी डायरीमें नोट करा दिये जाएँ, परन्तु डायरीमें नोट करानेका उनके पास समय ही कहाँ था? अत बात आई-गई हुई। किन्तु उनकी यह अभिलाषा मुझे भा गई और वही अभिलाषा आज इस रूपमें प्रस्तुत है। बकौल ग़ालिब .—

अपना नहीं ये शेवा कि आरामसे बैठें।
उस दर पै नहीं बार तो कावे ही को हो आये॥

'प्रथम संस्करणमें उपर्युक्त अंश स्थानाभावके कारण नहीं छप सका था।

भारतीय ज्ञानपीठके हिन्दी-विभागके सुयोग्य विद्वान सम्पादक प्रियवर बाबू लक्ष्मीचन्द्रजी एम० ए०के साथ प्रातःकालीन सैरमें शेरोशायरीकी पुरलुत्फ़ चर्चाएँ रही हैं। पुस्तकका इतना मौजूं नाम भी उन्होंने ही सुझाया है। जब लिखने-पढ़नेसे मन ऊब गया है, तब उन्होंके प्रेमाग्रहोंने लिखनेको बाध्य किया है और अब वही इसे अपनी ग्रन्थमालामें प्रकाशित कर रहे हैं। यदि उनका आग्रह न होता और ज्ञानपीठकी अध्यक्षा स्नेहमयी श्रीमती रमारानी जैनने प्रकाशनकी अनुमति न दी होती तो मेरी पुस्तक इस कागज़ और प्रेसके अकालमें कौन छापता?

"ऊँचे-ऊँचे मुजरिमों की पूछ होगी हश्रमें।
कौन पूछेगा मुझे मैं किन गुनहगारोंमें हूँ॥"

श्री पं० देवीशरणजी पाण्डेय शास्त्री और श्री पं० रामाधारजी दुबे 'साहित्य-भूषण' ने सुवाच्य अक्षरोंमें मेरे हस्तलेखकी प्रतिलिपि करके मूलप्रतिके खोये जानेके भयसे मुझे मुक्त किया है, उससे कम्पोज़िङ्गमें भी सुविधा पहुँची है। अनुक्रमणिका और विषय-सूची बनानेमें भी सहायता दी है। दुबेजीने फ़ाइनल प्रूफ़ देखनेमें भी मुझे पूर्ण सहयोग दिया है।

श्रीकुलभूषण जैन 'कौसर'ने 'ग़ालिब', 'साक़िब', 'फ़ानी', 'असग़रके कलाम-चयनमें सहायता दी है। पढ़ते-लिखते जब थक गया हूँ, तो कई लेख उन्होंने स्वयं पढ़कर सुनाये हैं। श्रीमृगांककुमार राय एम० ए०, बी० एल०, श्रीश्यामलाल बी० ए०, एल-एल० बी० और प्रिय बन्धु नेमिचन्द जैन एम० एस-सी० ने निरन्तर प्रेरणा देकर पुस्तक समाप्त करने और प्रेसमें देनेको मुझे बाध्य किया है।

लेबर-वेलफ़ेयर-सेण्टरके उत्साही और परिश्रमी पुस्तकालयाध्यक्ष बाबू रामप्रसादसिंह अध्ययनके लिये यथावश्यक ग्रन्थ देते रहे हैं।

धन्यवाद देनेका और आभार माननेका साहस मुझमें नहीं है। मैं तो अपने आकुल मनको भुलाये रखनेके लिये पढ़ने-लिखनेमें खोया रहा हूँ, यदि मैंने यह प्रयास न किया होता तो :

"मेरी नाजुक तबीयत पर यह दुनिया बार हो जाती।"

यत पुस्तक उपादेय बन पड़ी हो, तो उसका श्रेय मेरे इन आत्मीय बन्धुओ, हितैषी मित्रो, और प्रिय सहयोगियोको है। भूला और त्रुटियोंकी जिम्मेवारीसे मैं चाहूँ तो भी बरी नही हो सकता।

पहाड़ीधीरज, देहली
वर्त्तमान
डालमियानगर, (बिहार)

अयोध्याप्रसाद गोयलीय
२६ सितम्बर, १६४८

शेर-ओ-शायरीके प्रथम संस्करण

का

स्वागत

शेरोशायरीके प्रथम संस्करणपर जिन विद्वानों और पत्र-पत्रिकाओंने आलोचनाएँ की हैं उनका संक्षिप्त अंश यहाँ दिया जा रहा है :—

डा० अमरनाथ झा इलाहाबाद—

शेर-ओ-शायरी बहुत अच्छी पुस्तक है। उर्दू-कविताका इसके पढ़नेसे अच्छा ज्ञान होता है। रचयिता बधाईके पात्र हैं।

डा० भगवानदास, काशी—

शरोशायरी बहुत विद्वत्ता और बहुत परिश्रमका फल है। उर्दू कविताके क्रमिक विकास (ईवोल्यूशन)को दिखानेका अच्छा प्रयास किया है।

डा० रामकुमार वर्मा, इलाहाबाद—

शेर-ओ-शायरी द्वारा उर्दू-साहित्यका क्रमबद्ध इतिहास अत्यन्त मनोरंजक और मनोवैज्ञानिक रूपसे उपस्थित किया गया है।

पं० बनारसीदास चतुर्वेदी—

'शेर-ओ-शायरी'पर मेरा हार्दिक अभिनन्दन स्वीकार कीजिये। यद्यपि मेरा उर्दू-विषयक ज्ञान नगण्य ही है तथापि आपकी इस पुस्तककी मददसे मैं अनेक उर्दू-कविताओंके रसको ग्रहण कर सका। बहुत बढ़िया चीज़ आपने तैयार कर दी है।

आर० सहगल, इलाहाबाद—

वर्षोकी छानबीनके बाद जो दुर्लभ सामग्री श्रीगोयलीयजी भेंट कर रहे हैं इसका जवाब हिन्दी-संसारमें चिराग लेकर ढूँढनेसे भी न मिलेगा, यह हमारा दावा है।

श्री वीरेन्द्रकुमार एम० ए०, बम्बई—

शरोशायरीपर मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार कीजियें। उर्दूकी अमृतमयी रसवतीको हिन्दीमें लानेका इससे पूर्णतर प्रयत्न हिन्दीके इतिहासमें पहले कभी नहीं हुआ। और परिचय क्या खूब लिखे हैं आपने! बड़ी ही जिन्दा और मस्त लिखावट है। मैं तो कई बार उन्हें झूम झूमकर पढ़ा है। अथाह रस छलकियाँ ले रहा है उनमें। इक़बालकी चुनी (Master piece) कृतियोंका एक दीवान अपनी मार्मिक टिप्पणियोंके साथ आप दें तो हिन्दीपर बड़ा अहसान होगा। उस्ताद 'जिगर' और 'असगर' गोण्डवीपर भी मिलाकर एक पुस्तक बन सकती है।

'Leader' Dated 17th April, '49

Today when India is going to decide the question of the national language, a controversy has arisen between Hindi and Urdu Commonly, the Hindi speaking people are very ignorent about Urdu and also Urdu wallas are in darkness about Hindi There is therefore need of books which introduce both the languages to the people This book is a laudable attempt in this direction The book will help people to know all about Urdu poetry Almost all the representative Urdu poets are introduced to the reader in selected works and masterpieces The

editor Shri Goyaliya deserves thanks for this solid contribution to Hindi by which Hindi reading public will get to know a lot about literature in the sister language Urdu.

The Indian P. E. N. May 1950.

At an apportune time in the history of our nation Shri Goyaliyaji has given to all lovers of modern Indian literature a suitable selection of choice Urdu poems, printed in Devanagari characters. This anthology will go a long way towards opening to a wider public the hidden treasures of Urdu poetry, well-known for its flow and its flavour. Shri Goyaliyaji deserves our appreciation for his wide outlook, his cosmopoliton spirit and his excellent taste. This is a fine publication, creditable to both editor and publisher.

सम्मेलन पत्रिका (प्रयाग कार्तिक-पौष सं० २००५)––

संक्षेपमें प्रस्तुत पुस्तकके संग्राहक श्रीगोयलीयजीके आधे जीवनके परिश्रम और साहित्य साधनाके फलस्वरूप इस उत्तम ग्रन्थका प्रकाशन हुआ है। गोयलीयजी स्वयं एक कविहृदय तथा साहित्यके पारखी हैं। उर्दू-साहित्यकी उन तमाम ख़ूबियोंके वे पहले नम्बरके जानकार हैं जो शायरोंके समाज तक ही सीमित होती हैं। इस पुस्तकमें जिन अमर कीर्त्ति, उर्दू-शायरोंके कलामोंका संग्रह किया गया है; उनकी स्वभावगत एवं जीवन-गत कितनी ऐसी बातोंपर इस संग्रहमें प्रकाश डाला गया है जो इस पुस्तकके प्रकाशनसे पूर्व हिन्दी जगतके लिए अपरिचित थीं। उर्दूके सारे महान

कवियोंका साहित्य यदि इसी प्रकार नागरी अक्षरोंमें उनकी परिचयात्मक पृष्ठभूमि और संक्षिप्त आलोचनाके साथ प्रकाशित हो जाए तो हिन्दी-साहित्यके साथ उर्दू-साहित्यका भी महान हित हो। सांस्कृतिक ऐक्य और सामाजिक पृष्ठभूमिपर भी ये नव प्रकाशन अपना प्रभाव छोड़ जाएँ। काव्यरसिकोंके साथ-साथ हिन्दू-मुस्लिम जनताकी सुरुचि और संस्कार बनानेमें भी ऐसे प्रकाशनोंका महत्त्वपूर्ण हाथ होगा। प्रसन्नताकी बात है कि भारतीय ज्ञानपीठने इस दिशामें इस महत्त्वपूर्ण रचना द्वारा जो कार्य प्रारम्भ किया है, वह उसके सुगम साधनोंके कारण अनवरत जारी रहेगा।

कहना न होगा कि इन परिचयात्मक टिप्पणियोंसे उर्दू-शायरीके रंगीन और चमकते महलका दरवाज़ा उन हिन्दीवालोंके लिये गोयलीयजी-ने खोल दिया है, जो उर्दूके नामसे ही घबरा जाते थे। गोयलीयजीने उद्घाटन, संगम, ज्योत्स्ना, नवप्रभात, जागरण, सागर प्रयाग, प्रगति-शीलयुग, मधुर प्रवाह—नामक अध्यायोंके भीतर उर्दू-साहित्यकी सभी बारीकियों तथा विशेषताओंसे हिन्दीवालोंको परिचित करानेकी सफल चेष्टा की है। ऐसा लगता है जैसे वे इस रंगीन और चमकती उर्दू-शायरी-की महफ़िलमें एक परिचित दुभाषिएकी तरह हिन्दीवालोंको ले जाकर सबसे बखूबी परिचय कराते हैं और खूब कराते हैं। प्रत्येक शायरकी उन उत्तमोत्तम रचनाओंका गोयलीयजीने इस पुस्तकमें उद्धृत किया है जो उनकी प्रवृत्ति और दिशाकी ओर भी संकेत करती हैं।

उर्दूके अमर कवि मीर, दर्द, नज़ीर, ज़ौक़, ग़ालिब, मोमिन, अमीर मीनाई, दाग़, आज़ाद, हाली, अकबर, इक़बाल, चकबस्त, जोश मलीहा-बादी, सीमाब अकबराबादी, अहसान बिन दानिश, बर्क़ देहलवी, हफ़ीज़ जालन्धरी, सागर निज़ामी, अख़्तर शीरानी, अर्श मलसियानी, फ़ैज़, मजाज़, जज़्बी, साहिर लुधियानवी, साक़िब लखनवी, हसरत मोहानी, फ़ानी बदा-यूनी, असग़र गोण्डवी, जिगर मुरादाबादी, और फ़िराक़ गोरखपुरीकी चुनी हुई रचनाओंके साथ उनकी निजी काव्यगत विशेषताओंपर भी

इस संग्रहमें प्रकाश डाला गया है। साथ ही ऐसे समान तथा सूझोंका भी संकेत गोयलीयजी यथास्थान करते गये हैं जो भिन्न-भिन्न कवियोंकी रचनाओंमें पाई जाती हैं। साथ ही अरबी और फ़ारसीके प्रायः सभी कठिन शब्दोंका हिन्दीमें अर्थ भी दे दिया गया है, जिससे एक साधारण हिन्दी जानकार भी इनका आनन्द उठा सके।

इस प्रकार कुल मिलाकर ऐसी उत्तम पुस्तकके सम्पादन और प्रकाशनके लिये हिन्दी-जगतको उसके सम्पादक और प्रकाशकका कृतज्ञ होना चाहिए।

नया जीवन (सहारनपुर जनवरी १९५०)--

श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीय एक निरन्तर जलती मसाल हैं। वे उन लोगोंमें हैं, जो दुनियासे समेटकर किसी एक कार्यमें अपनेको लीन कर सकते हैं। वे गुम होते हैं तो कोई रत्न लेकर ही बाहर आते हैं, पर इस बार वर्षोंकी गुम-सुमके बाद वे बाहर निकले, तो कोहनूर ही लाये। यही कोहनूर है शेरोशायरी।

हिन्दी-साहित्य सन्दर्भ-पुस्तककी दृष्टिसे दरिद्र है। उर्दू-साहित्यके सम्बन्धमें यह पुस्तक इतनी पूर्ण है कि शताब्दियों तक एक श्रेष्ठ सन्दर्भ-पुस्तकका काम देगी। उर्दू-साहित्यने अपने विकास-पथमें जो बड़े-बड़े क़दम उठाये, उनके प्रतीक कवियोंका परिचय भी इसमें है और उनकी कविताके नमूने भी, इस प्रकार यह 'इतिहास' भी है और 'काव्य' भी। आरम्भमें दी गई विस्तृत और प्रामाणिक जानकारीके कारण उर्दू-साहित्यकी 'गाइड' भी। ये परिचय और यह जानकारी गोयलीयकी मचमचाती जवानीके चुलबुले जौहर और अध्ययनकी गम्भीरताके रसमें डूबकर एक ऐसा मौलिक निखार पा गये हैं कि जड़ क़लमको फेंकिये दूर; ख़ुद गोयलीयको भरी मजलिसमें चूमनेको जी चाहता है। हिन्दीका भण्डार अधूरी पुस्तकोंसे भरा जा रहा है। बहुत दिनों बाद यह अपनेमें पूरी पुस्तक सामने आई। इस पुस्तकका चमत्कार है कि यह उनके भी काम-

की है, जो उर्दूकी अलिफ, बे नहीं जानते और उनके भी, जो उसके पण्डित हैं। इस तरह यह पुस्तक उर्दू-साहित्य जानने के लिये गागरमें सागर है।

सरस्वती (प्रयाग जून १९४९)—

उर्दू-शायरीसे हिन्दीवालोंको परिचित करानेके लिये छोटे-मोटे प्रयत्न अबतक बहुत हो चुके हैं। अबसे बहुत पूर्व पंडित रामनरेश त्रिपाठी-ने अपने बृहत्संग्रह ग्रन्थ 'कविताकौमुदी'का एक भाग उर्दू-शायरीपर ही प्रकाशित किया था, समाचार पत्रोंमें भी 'उर्दू-शायरीके परिचयात्मक लेख प्राय छपे हैं और मुशायरोंके द्वारा उर्दूके शायरोंकी सूक्तियाँ सुननेका सौभाग्य अनेक काव्य-रसिकोंको प्राय प्राप्त होता रहता है। परन्तु *आवश्यकता और उपयोगिताकी दृष्टिसे यह प्रयास अपने पूर्ववर्ती सभी* प्रयासोंसे बढकर है।

ग्रन्थ १० परिच्छेदोंमें विभक्त है, जिनमें 'मीरसे लेकर 'फ़िराक़' तक कुल ३१ शायरोंकी शायरीपर विचार किया गया है, परम्पराओं और 'स्कूलों' का भी युक्तियुक्त विवेचन किया गया है; प्रस्तावना भागमें उर्दू-शायरीके विभिन्न पहलुओं, 'टकनिकी' शब्दोंके 'हिज्जों' और काव्य-गत बारीकियोंपर खुलकर विचार किया गया है और संक्षेपमें वह सभी कुछ सकलित कर दिया गया है, जिसकी आवश्यकता उर्दू-शायरीको हृदयगम करनेके लिये उर्दूसे अल्प-परिचित किसी साहित्य-रसिकके लिये हो सकती है।

इस प्रकार यह ग्रथ न केवल हिन्दी-पुस्तकालयोंके लिए उपादेय है, *कविता, काव्यरसिकों और सूक्ति दीवानोंके निकट भी आदरणीय है।*

साहित्य-सन्देश (आगरा फरवरी १९४९ ई०)—

यह पुस्तक उर्दू कविताके मर्मको हिन्दीके माध्यमसे समझनेका एक मात्र साधन है, इसलिए इसका लेखक सर्वथा बधाईका पात्र है। उर्दू और हिन्दीपर समान अधिकार होनेके कारण गोयलीयजी इस पुस्तकको

सर्वाङ्ग सुन्दर बना सके हैं। श्रीराहुलजीने प्रस्तावनामें ठीक ही लिखा है कि "इस विषयपर ऐसा ग्रंथ वे ही लिख सकते थे।"

आजकल हिन्दी (देहली १५ अप्रेल १९४९)--

इस दिशामें गोयलीयजीका कार्य सदैव चिरस्मरणीय रहेगा। पुस्तकके स्तम्भोंको देखते हुए हमें लेखकके गहरे अध्ययनका पता चलता है। कविताओंका सुन्दर संकलन इस पुस्तककी विशेपता है। फ़ुटनोटोंमें कठिन शब्दोंके अर्थ देकर पुस्तकको उन पाठकोंके लिए भी उपयोगी बना दिया है जो उर्दू-भाषासे परिचित नहीं है। इस सुन्दर और उपयोगी प्रकाशनके लिए हम गोयलीयजीको बधाई देना अपना कर्तव्य समझते हैं।

भारती (नागपुर जून १९५०)--

लेखकने कलाकारोंकी रचनाओंको चुनते समय बड़ी सहृदयता और काव्यमर्मज्ञताका परिचय दिया है।

संगम (वर्धा मई १९४९)—

सभी रसोंकी सामग्री इसमें भरी पड़ी है और कहीं-कहीं बहुत अद्‌भुत छटाके साथ।

प्रहरी, जबलपुर—

"उर्दू-कविताके सम्बन्धमें अभीतक जितनी संग्रह-पुस्तकें निकली हैं, उन सबमें यह बहुत ही विशद, वैज्ञानिक, क्रमागत और ज्ञातव्य बातोंसे परिपूर्ण है। लेखकने उर्दू-कविताका विकास और परिपक्वरूप बड़े रोचक ढंगसे दिया है। उर्दू कविताकी बारीकियों और भेदोंको समझानेकी सफल कोशिश की है। प्रत्येक कविकी विशेपताओंको उदाहरण सहित समझाया है और आधुनिक कालतकके कवियोंसे परिचित कराया गया है। उदाहरण बहुत सुन्दर, सामयिक और रुचिपूर्ण हैं। प्रतिष्ठित कवियोंका जीवन और साहित्य-चित्रण किया है। पुस्तक बहुत ही उपयोगी है और

निस्संकोच प्रत्येक संस्था और विद्यालयमें इस पुस्तकको रखा जा सकता है।'

आज, साप्ताहिक (बनारस १४ जनवरी १९४९)—

हिन्दीमें ऐसी पुस्तकें बहुत कम हैं जो जिज्ञासु पाठकोंको दूसरी भाषाओंके साहित्यका रसास्वादन करा सकें। उन्हीं इनी गिनी पुस्तकोंमें प्रस्तुत पुस्तक भी है। इसके द्वारा लेखकने उर्दू-काव्यसे हिन्दी पाठकोंका परिचय करानेका सफल प्रयत्न किया है।

आद्यन्त पुस्तक पढ़ जानेके पश्चात् लेखकके कविहृदय, अन्तर्दृष्टि और गम्भीर अध्ययनका पता मिलता है। उर्दू-साहित्यका गम्भीर अध्ययन करनेवाले पाठकोंके लिए यह पुस्तक जितनी उपयोगी है, सामान्य पाठकोंके लिए भी यह उतनी ही सुबोध और सरस है।

उर्दू-काव्यका यह संग्रह हिन्दी-साहित्यके कोषका एक अमूल्य रत्न है।

समाज, साप्ताहिक (बनारस १3 जनवरी, ४९)—

गोयलीयजी काव्यमर्मज्ञ हैं। अतः उन्होंने गद्य भी पद्यात्मक ही लिखा है। उनकी शैली सरल और भावमयी है। और पुस्तकको अधिकाधिक उपयोगी बनानेका उन्होंने सफल प्रयास किया है। हम चाहते हैं कि गोयलीयजीकी दूसरी पुस्तकें भी शीघ्र प्रकाशित हों। पुस्तक काव्य-प्रेमियोंके लिए पठनीय और संग्राह्य है। छपाई-सफ़ाई आदि आकर्षक है।

कर्मवीर (खंडवा ता० ९-४-४९ ई०) —

श्री गोयलीयजीने बड़े अध्ययन, परिश्रम और सुरुचिके साथ उर्दूके प्राचीन और नवीन कलाकारोंमें ३१ कलाकार चुन लिये हैं और उनकी व रचनाएँ इस संकलनमें हैं जो लोकरुचिपर आरूढ़ होकर काफ़ी ख्याति प्राप्त कर चुकी हैं। उत्तम एवं मौलिक उक्तियोंका यह भण्डार काव्य-

-

रसिकोंके रुचि परिमार्जन, ज्ञान वृद्धि और कल्पना पंखोंको बलवान् बनानेमें खूब सहायक होगा। कठिन और पारिभाषिक शब्दोंके अर्थ अथवा हिन्दी पर्यायवाची शब्द भी दे दिये गये हैं, जिससे उर्दूमें विशेष गति नहीं रखनेवाले पाठक भी इसका आनन्द ले सकते हैं। उर्दूकी कविता-की गति-विधिका आलोचनात्मक परिचय भी दिया गया है। जिससे साधारण पाठकको उर्दू साहित्यके अध्ययनके लिए एक दिशा–दर्शन मिलता है। हिन्दी भाषी जनताको उर्दूके श्रेष्ठ कवियोंसे परिचित करानेका यह प्रयत्न आदर एवं अनुकरणकी चीज़ है। गोयलीयजीकी इस कृतिका हिन्दी क्षेत्रमें खूब स्वागत होना चाहिए। छपाई और सफ़ाई उत्तम और आकर्षक है।

वीरवाणी (जयपुर ३ अगस्त '४९)—

वास्तवमें यह पुस्तक लिखकर गोयलीयजीने एक अभावकी पूर्त्ति की है और हिन्दी-साहित्य-भण्डारकी शोभा बढ़ाई है।

दैनिक विश्वमित्र, (पटना ६ मार्च १९४९)—

प्राचीन और वर्त्तमान ३१ प्रमुख उर्दू-कवियोंकी काव्यशैलीका पाण्डित्यपूर्ण विवेचन करते हुए उनकी हृदयग्राही कविताओंका सुन्दर संकलन किया गया है।

दै० आर्यावर्त्त (पटना ता० २१ फरवरी '४९)—

प्रस्तुत पुस्तकमें विद्वान् गोयलीयजीने उर्दूके श्रेष्ठ ३१ कवियोंकी कविताओंका संग्रह किया है। अबतक उर्दूकी कविताएँ फ़ारसी लिपिमें छपी होनेके कारण केवल उर्दू जाननेवालोंके कामकी चीज़ थीं, किन्तु अब गोयलीयजी जैसे विद्वानोंके प्रयाससे वे हिन्दी जाननेवालोंके सामने भी आने लगी हैं। गोयलीयजीने अपने अथक परिश्रमसे वही काम किया है, जिसकी बहुत दिनोंसे उत्सुकताके साथ प्रतीक्षा की जा रही थी।

कविताओंके साथ-साथ गोयलीयजीने कवियोंके सम्भिन्न शब्द चित्र भी दे दिये हैं जिनसे उसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है। कपड़ेकी सजिल्द और ६४० पृष्ठोंकी इतनी बड़ी पुस्तकका मूल्य आठ रुपये अधिक नहीं। छपाई-सफाई सुन्दर और आकर्षक हैं।

आजकल (उर्दू दिल्ली)——

हिन्दी जाननेवालोंके लिए यह शायरीपर अपनी किस्मकी पहली वाहिद (प्रथम-अकेली) किताब है। इसमें उर्दू शायरीके मुताल्लिक़ मालूमात वहम (महत्त्वपूर्ण जानकारी) पहुँचाई गई है। अब जब कि उर्दू और हिन्दीको एक दूसरेके करीब लानेकी जरूरत महसूस की जा रही थी श्रीगोयलीयजीकी यह कोशिश यक़ीनन क़ाबिल तारीफ है।

निगार (लखनऊ मार्च १९४९)——

मुसन्निफ़ ने गुलोबुलबुल शहरा व चमन मयखाना व शराबकी जो तारीह की है और अच्छे गजलगोयोंका जो इन्तखाब दिया है उनसे उनके ज़ौक़के मुतअल्लिक अच्छी राय कायम की जा सकती है।

इन्तखाबातमें अक्सर शोअराके अच्छे शेर और मशहूर नज़्में दी गई हैं। हिन्दीदानोंकी सहूलियतके लिए मुश्किल अल्फाज़के मानी फुटनोटमें दिये गये हैं। किताब निहायत सलीक़ेसे मुरत्तब की गई है और अच्छी तबायतसे मुज़य्यन है।

किताब बड़ी मिहनतसे मुरत्तिब की गई है यह हिन्दीदानोंको चन्द अच्छे शाअरोंसे रूशनास करनेमें मदद देगी। उर्दूदानोंके लिए भी ऐसी किताब मुरत्तिब करनेकी ज़रूरत हैं। जिसकी मददसे वह हिन्दी शायरीकी खसूसियतको समझ सकें।

प्रस्तावना

'शेरोशायरी'के छः सौ पृष्ठोंमें गोयलीयजीने उर्दू-कविताके विकास और उसके चोटीके कवियोंका काव्य-परिचय दिया। यह एक कवि-हृदय साहित्य-पारखीके आधे जीवनके परिश्रम और साधनाका फल है। हिन्दीको ऐसे ग्रन्थोंकी कितनी आवश्यकता है, इसे कहनेकी आवश्यकता नहीं। जितना जल्दी हो सके, हमें उर्दूके सारे महान् कवियोंको नागरी अक्षरोंमें प्रकाशित कर देना है। गोयलीयजीका यह ग्रन्थ हिन्दीके उस कार्यकी भूमिका है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन शीघ्र ही उर्दूके एक दर्जन श्रेष्ठ कवियोंके परिचय-ग्रन्थ निकालनेकी इच्छा रखता है, फिर हमें उनकी पूरी ग्रन्थावलियोंको नागरी अक्षरोंमें लाना है। हमारे महाप्रदेशने संस्कृतनिष्ठ हिन्दीको अपनी राज-भाषा स्वीकृत किया है, किन्तु उसका यह अर्थ नहीं, कि हमारे महाप्रदेश (उत्तरप्रदेश, विहार, महाकोसल, विन्ध्यप्रदेश, मालवसंघ, राजस्थानसंघ, मत्स्यसंघ, हिमाचलप्रदेश, पूर्व-पंजाब और फुलकिया संघ)की सन्तानोंने अपनी प्रतिभाका जो चमत्कार साहित्यके किसी भी क्षेत्रमें दिखलाया है, उसे अपनी वस्तुके तौरपर अरक्षित करना हिन्दीभाषियोंका कर्त्तव्य नहीं है। जिस तरह भाषाकी कठिनाई होनेपर भी सरह, स्वयंभू, पुष्पदन्त, अब्दुर्रहमान आदि अपभ्रंश कवियोंको हिन्दीकाव्य-प्रेमियोंसे सुपरिचित कराना हमारा कर्त्तव्य है; उसी तरह उर्दूके महाकवियोंकी कृतियोंसे काव्यरसिकोंको वञ्चित नहीं होने देना चाहिये। व्यक्तिके लिये भी बीस-पच्चीस साल अधिक नहीं होते, जातिके लिये तो वह मिनट-सेकेण्डके बराबर हैं। १९७०-७५ ई० तक अरबी अक्षरोंमें उर्दू-कविता पढ़नेवाले बहुत कम ही आदमी हमारे यहाँ मिल पायेंगे। आजतक दुर्राष्ट्रिय भावनाओंके कारण हिन्दी-मुसल्मानोंकी विचारधारा चाहे कैसी ही रही हो, किन्तु अब वह हिन्दी में वही स्थान लेने जा रहे हैं, जो उनके पूर्वजों जायसी, रहीम आदिने लिया था, और जो उनके सहधर्मियोंने बंग-साहित्यमें ले रखा है। हिन्दीको एक संप्रदाय-विशेषकी भाषा माननेवाले ग़लतीपर हैं। समय दूर नहीं है, जब

न्दिाम भा नजरन्दाजमर-परम्परा चलगा। मम मान वधमाकी प्रतिभा जा उदूव क्षत्रम अपना चमत्कार दिखलाता था श्रव वह हिन्दीकी हान जा रहा ह। इसीलिय म हिन्दीवालाम जोर दकर कहना चाहता हूँ कि कम स कम आप अपन साहित्य-क्षत्रम साम्प्रदायिक सकाणताका स्थान न द।

उदूकी सत्कविता हमार लिय कदापि विस्मृत पृष्ठ न बनना न बना रहना चाहिय। ऐसा करनक लिय अयावश्यक ह कि वह नागरा वर्णमालाम हमार सामन श्रा जाय। शराशायरीके पढनवालाक लिय यह बतानकी आवश्यकता नहा कि मारन्दस-शज़ीरत कान्यासम कितना उडान की जौक-गालिब मोमिनन अपन खयालोकाम काव्य जगतको कितना आलोकित किया दाग नासा-अकबरन कविता-सुन्दरी का कितन अलकारास अलकृत किया और चकबस्त-जोश-सागरन इसक तरगोको कितनी अन्त प्ररणा दी।

अधिकाश उदू-कवियान जनाँक लोग सम्भ अपनी कविताको विस्ता साँचम ढालना चाहा कोई बरी बात नहा था यदि वह अरबी छन्दाका भी उपयोग करत किन्तु हिन्दीक छन्दोका सवथा बायकाट करना कभी उचित नहीं था पहिला अवस्थाम हिन्दी छन्दास्य और समद्ध होता किन्तु दूसरी बातन कवियाक परका उनकी जम भमिसे उखाड दिया। आखिर हिन्दीसगीतको मसलमान सगीतकाराकी देन कम नहा ह। उनका भारतम फिरन नार सौ वर्षोस प्रचलित सगात वहा सगीत नहा ह जा कि मसलमानाक आनके पहिल भारतम प्रचलित था। लकिन सगीत क्षत्रम मस्लिम कलाकारान बायकाटकी नीति नहा अपनाई। उन्हान सम्पूर्ण भारतीय सगीतका अपनाया और उसम श्ररबी इरानी और उजबकी सगीतका पट देकर उस आर समद्ध किया। इसी तरह वीणा और मदगको उन्हान जला नहा दिया बल्कि साथ-साथ उनम सितार और तबलकी सष्टि कर भारतीय वाद्य-यन्त्राम कुछ सुन्दर यन्त्रा की वद्धि का इसमा अलकरण और उपजाव्य कथानकम भी उदू कवियान स्वदेशी बायकाट और विदेशी स्वीकारकी नीतिको बडा कठो रतासे अपनाया। यदि अपन देशके कृतित्वके साथ-साथ बाहरी वस्तुए

भी ली जातीं, तो वह हमारी दृष्टिको विशाल करनेमें सहायक होतीं। मैं यहां शिकायतोंका लेखा प्रस्तुत करनेके लिये इन बातोंको नहीं कह रहा हूं। छन्द, काव्यशैली, दृष्टान्त, और काव्योपजीव्य कथानकसे परिचित होनेपर सहृदय व्यक्तिके लिये काव्यरसका आस्वादन करना सरल हो जाता है। उर्दू-कवितासे प्रथम परिचय प्राप्त करनेवालोंके लिये इन बातोंका जानना अत्यावश्यक है। गोयलीयजी जैसे उर्दू-कविताके मर्मज्ञ-का ही यह काम था, जो कि इतने संक्षेपमें उन्होंने उर्दू 'छन्द और कविता'-का चतुर्मुखीन परिचय कराया।

'वली'ने उत्तरीय भारतके मुसलमान कवियोंका मुंह फ़ारसीकी तरफ़से हटाकर उर्दूकी ओर मोड़ा था। गोयलीयजीने अपने संग्रहमें 'मीर' (१७०९-१८०९)से लेकर अभी भी हमारे बीचमें वर्त्तमान उर्दूके श्रेष्ठ कवियों और उनकी कविताके विकासको लिया है, किन्तु यह काव्य-धारा न 'मीर'से आरम्भ होती है, न 'वली' (१७०० ई०)से ही। वह उससे भी पहिले 'दकनी' कवियों तक पहुँचती है। दकनी कवि और उनकी कृतियां उर्दूमें भी बहुत कम प्रकाशित हुई है, हिन्दीके लिये तो वह सर्वथा अपरिचित हैं। उर्दूमें उनके काव्य इसीलिये सर्वप्रिय नहीं हो सके, कि वह हिन्दी-शब्दोंका सर्वथा बायकाट नहीं करते थे, और उन शब्दोंको अरबी अक्षरोंमें शुद्धतापूर्वक लिखा-पढ़ा नहीं जा सकता था। 'दकनी' काव्योंमेंसे अत्यधिकने अभी छापेका मुँह नहीं देखा, वह अब भी हैदराबादके कुछ पुस्तकालयोंकी अलमारियोंमें बन्द हैं। हमें कामना करनी चाहिये, कि निज़ामकी धर्मान्धताकी अग्निमें निजामकी भाँति उनकी भी भेंट न चढ़ जाये। हमारे 'अंग्रेज़ मित्र' तो समस्या-को खटाईमें ही नहीं रखना बल्कि उसे और भीषण बनाना चाहते रहे। यह जनतन्त्रताके दावेदार हैदराबादकी ८७% जनताके अस्तित्वसे इनकार कर रहे थे, किन्तु हमने समस्याको पाँच दिनमें हल करके छोड़ा। आगे यही करना है, कि आजके निजाम हटाये जायें और हैदराबादमें जबर्दस्ती मिलाये आन्ध्र, कर्नाटक और महाराष्ट्रके भागोंको अपने अपने प्रदेशोंमें लौटनेके लिये स्वतन्त्रता मिले। निज़ामके क़ैदख़ानेमें

एक नज़र

'शेरोशायरी'के ६२० पृष्ठों और १० परिच्छेदोंमें उर्दूके ३१ श्रेष्ठ कवियोंके सर्वोत्तम काव्यांशोंका संकलन और तत्सम्बन्धी साहित्यिक अध्ययनका सार है। इसके अतिरिक्त प्रसंगवश तथा संकलनको व्यापक बनानेके लिये लगभग १५० कवियोंके काव्यांशोंके उद्धरण दिये गये हैं। पुस्तकमें कुल मिलाकर लगभग डेढ़ हज़ार शेर (अशआर) और १६० नज़्में तथा गीत होंगे—सब अपनी जगहपर चुस्त, फड़कते हुए और नमूनेके ! जैसा कि महापंडित राहुल सांकृत्यायनने अपनी प्रस्तावनामें लिखा है—"यह एक कवि-हृदय साहित्य-पारखीके आधे जीवनके परिश्रम और साधनाका फल है। गोयलीयजीके संग्रहकी पंक्ति-पंक्तिसे उनकी अन्तर्दृष्टि और गम्भीर अध्ययनका परिचय मिलता है।" हमारा विश्वास है कि उर्दू-साहित्यकी गतिविधिका अनुभवपूर्ण दिग्दर्शन करानेवाली और नामी कवियोंकी चुनी हुई काव्य-वाणीका इतना सुन्दर, प्रामाणिक और व्यापक संग्रह प्रस्तुत करनेवाली इस जोड़की कोई दूसरी पुस्तक हिन्दीमें अभी तक प्रकाशित नहीं हुई।

'शेरोशायरी'की कल्पना इसके निर्माता, श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीयके मनमें आजसे १८ वर्ष पूर्व उदित हुई जब कि वह राष्ट्रिय आन्दोलनके 'सरगर्म कार्यकर्त्ता'के रूपमें देहलीकी सैण्ट्रल जेलमें अन्य स्थानीय नेताओं और बन्दी मित्रोंके साथ साहित्यचर्चा किया करते थे। उस समय तक गोयलीयजी सफल लेखक, प्रभावशाली वक्ता और उर्दू-काव्यके प्रामाणिक अध्येताके रूपमें ख्याति पा चुके थे। यह हिन्दीके अनेक स्थानीय पत्रोंके लिये नियमित रूपसे उर्दूके शेरोंका संकलन किया करते थे और 'मधु-संचय', 'चयनिका' तथा 'महफ़िल' आदि स्तम्भोंका सम्पादन किया करते थे। तबसे अबतक श्री गोयलीयजीका अध्ययन जारी रहा और उसके साथ-साथ 'शेरोशायरी'का पुलिन्दा

बढ़ता गया। सन् १९४७में जब देशकी समस्याओंने नया रूप धारण किया और जब आज़ादीकी मंज़िल क़रीब आती हुई दिखाई दी, तब देशके नेताओंका ध्यान देशकी जनताके साहित्यिक मेलजोल और हिन्दी-उर्दूकी समस्याके समाधानकी ओर गया। उस समय अनेक मित्रोंने श्री गोयलीयजीसे अनुरोध किया कि वह 'शेरोशायरी'का जल्दी पूरा कर लें। परिस्थितियोंका तक़ाज़ा था कि ऐसी पुस्तक शीघ्र प्रकाशमें आ जाय। सोचा गया कि सारे संग्रहको कई जिल्दोंमें प्रकाशित कर दिया जाय, पर काग़ज़ और छपाईकी समस्या आड़े आई। तब निश्चय किया गया कि तबतक सारी सामग्रीके आधारपर एक संकलन तय्यार कर दें जो तात्कालिक समस्याकी पूर्ति तो कर ही दे, पर चीज़ ऐसी बन जाय कि एक ओर तो वह उर्दूके साहित्यिक अध्ययनके लिए प्रामाणिक सर्वांगीण पृष्ठभूमि दे और दूसरी ओर सामान्य पाठकोंकी सुविधाके लिए उर्दूके सब रंगत और सब मुख्य कवियोंके बहतरीन चुने हुए शेरोंका संग्रह प्रस्तुत कर दे।

इस प्रकारका संकलन कितना कष्ट-साध्य है इसे साहित्यिकोंमें भी केवल भुक्तभोगी ही जान सकते। जो साहित्य निरन्तर ३०० वर्षोंमें बादशाहों और नवाबोंकी छत्रछायामें पनपा, जो साहित्य सब साम्राज्यों और सामाजिक संस्थाओंके ध्वंस और निर्माणके दौरसे गुज़रा और जिस साहित्यके हृदय आत्मा परिधान, अलंकार और उद्देश्यमें युगान्तकारी परिवर्तन हुए—और फिर भी जिसका तारतम्य शताब्दियोंकी घनी तहोंको पार कर आजके अनेक ग़ज़ल-गो शायरोंकी कविताओंमें गुँथा हुआ है—उसके युग-निर्माता और युग-प्रवर्तक कवियोंको छाँटना और छाँटना और छाँटे हुए कवियोंके दीवानों और संग्रहोंसे अमुक शेरको रखना और अमुकको रद्द करना बड़ा टेढ़ा भार, यदि कहूँ तो संकलनकर्ताकी साहित्यिक रसानुभूतिका मनोरम भार देनेवाला काम है।

निःसन्देह श्री गोयलीयजीने इस कामको अधिक-से अधिक सफलताके साथ निभाया है। आज जब यह किताब छपकर तय्यार है तो हम

सन् १६४५से १६४८में आ पहुँचे हैं। कलतक जो 'इन्क़लाब' महज़ एक ख़याल था और जिसकी ज़िन्दाबादीकी सदा हम पुरजोश जुलूसोंमें महज़ नारोंके रूपमें लगाते थे, आज वह इन्क़लाब मुजस्सिम और साकार हमारे सामने है। अभी कितने इन्क़लाब आस्मानसे झाँक रहे हैं—

"आँख जो कुछ देखती है, लब पै आ सकता नहीं।
महवे-हैरत हूँ कि दुनिया क्या-से-क्या हो जायेगी।"

—इक़बाल

कल जिस 'शेरोशायरी'की आवश्यकता राजनैतिक आन्दोलनकी सहकारिताके लिये थी, आज हम उसका मूल्य अपने स्वतन्त्र और विशाल देशकी गत तीन शताब्दियोंके उर्दूके साहित्यिक उत्तराधिकारके रूपमें आँकेंगे। देशके बँटवारेके बाद जो मुसलमान भाई आज हिन्दुस्तानमें रह गए हैं वह ख़ालिस हिन्दुस्तानी ही बनकर रहेंगे, उनके लिए अब कोई दूसरा रास्ता नहीं। कवि और साहित्यकार सदा ही सब वर्गोंमें होते हैं जो अपनी साहित्यिक परम्पराको नई परिस्थितियोंके अनुरूप विकसित करते हैं। क्या हिन्दुस्तानी मुसलमान शायर चुप होकर बैठ जायेगा, इसलिए कि हिन्दुस्तानकी राष्ट्रभाषा हिन्दी है? मुसलमानके लिए हिन्दी 'हौआ' नहीं है—या यों कहें कि मुसलमान 'आदम'के लिए हिन्दी ही 'हौआ' होगी। हिन्दी आखिर ख़ुसरो, जायसी, रसखान और रहीमकी भाषा है; हिन्दीने नज़ीरके कलामको चमकाया और हफ़ीज जालन्धरी, साग़िर निज़ामी और अख़्तर शीरानीके गीतोंको मधुर बनाया। हिन्दीकी जादूभरी छैनीसे 'फ़िराक़' गोरखपुरी और दूसरे कवि उर्दूका नया दिलकश बुत तराश रहे हैं। आख़िर लिपिका भेद दो चार सालमें जब मिट जायेगा, तो उर्दू और हिन्दीमें कोई फ़र्क़ न रह जायेगा, हिन्दू और मुसलमान सबकी राष्ट्रिय भाषा एक होगी। तब 'शेरोशायरी' राष्ट्रके परम्परागत साहित्यके अंग-विशेषकी झाँकी और अध्ययनके लिए अत्यन्त उपयोगी परिचयात्मक पुस्तक प्रमाणित ही होगी।

'शेरोशायरी'की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह उर्दू-साहित्यमें

उर्दूकी कविता अश्लील है तो इस प्रकारकी हिन्दी-कवितामें कम अश्लीलता न पाइयेगा—हाँ, हिन्दी-कविताके शृंगारका रूप स्वाभाविक और परिधान परिष्कृत है। उर्दू-कविताका यह रीतिकालीन युग महान साहित्यिक कलाकारोंका युग है। मीरकी कविताकी दर्दीली पैनी धार, ज़ौककी सुथराई, ग़ालिबकी दार्शनिक गहराई और कल्पनाकी उड़ान, मोमिनकी सादा बयानीका चमत्कार और दाग़की भाषा-माधुरीके दर्शन इसी युगकी कवितामे मिलते है। इनके शेरकी ख़ूबीका क्या कहना! शेरके बँधे छन्दमें, नपे-तुले शब्दोंमे वह बात और वह चमत्कार पैदा करते है कि आदमी सकतेमे आ जाये। बिहारीके दोहोंकी तरह, "देखतमें छोटे लगें घाव करें गम्भीर"।

डालमियानगरमे अपनी तरहकी एक छोटी-सी संगत है। कभी यह 'साहित्य-गोष्ठी' हो जाती है, और कभी 'बज्मेअदब'। इस अदबी बज्मके 'पीरेमुग़ाँ' है गोयलीयजी और 'रिन्दों'मे शामिल है डालमिया-नगरकी बड़ी-से-बड़ी हस्तियाँ (जिसमे ज्ञानपीठके संस्थापक और अध्यक्ष भी शामिल है)। गालिब, दाग, इकबाल और अकबरके एक-एक शेर-पर हम लोग मुद्दतों अश-अश किए है और दुहराते-तिहराते रहे है। इस सकलनमे इस तरहके सैकड़ो शेर है। कुछेक शेरोके अर्थकी गहराई, शब्दोंकी सुघराई और आशयका चमत्कार, इसी पुस्तकमे आप देखेंगे :—

ग़ालिब— 'कोई मेरे दिलसे पूछे तेरे तीरे नीम-कशको[1]।
ये ख़लिश[2] कहाँसे होती, जो जिगरके पार होता॥

× × ×

मैं और बज्मेमयसे[3] यूँ तिश्नाकाम[4] आऊँ!
गर मैंने की थी तौबा[5], साक़ीको क्या हुआ था?

× × ×

[1]अधूरे तीरके चमत्कारको; [2]चुभन; [3]मधुशालासे; [4]प्यास लिये हुए; [5]शराब न पीनेकी प्रतिज्ञा।

चलता हूँ थोड़ी दूर हर इक तेज़-रौके[1] साथ।
पहचानता नहीं हूँ अभी राहबरको[2] मैं॥

× × ×

न लुटता दिनको तो कब रातको यूँ बेख़बर सोता।
रहा खटका न चोरीका, दुआ देता हूँ रहज़नको[3]॥

× × ×

मोमिन— माँगा करेंगे अबसे दुआ हिज्रेयारकी[4]।
आख़िर तो दुश्मनी है असरको दुआके साथ॥

× × ×

अक्बर— हरचन्द बगोला मुज़्तरिब[5] है, इक जोश तो उसके अन्दर है।
इक वज्द[6] तो है, इक रक्स[7] तो है, बेचैन सही, बरबाद सही॥

× × ×

कह गए हैं ख़ूब भाई घूरन।
दुनिया रोटी है और मज़हब चूरन॥

इक्बाल— ख़ुदीको[8] कर बुलन्द इतना कि हर तक़दीरसे पहले।
ख़ुदा बन्देसे ख़ुद पूछे, बता तेरी रज़ा[9] क्या है॥

उर्दू-कविताके जो दो कलाकार सदा अमर रहेंगे, वह हैं ग़ालिब और इक़बाल। 'शेरोशायरी'में दोनोंकी कविताओंका संकलन विशेष रुचिके साथ किया गया है और व्याख्यामें परिश्रम किया गया है। हमारा ख़याल है कि इक़बालका मर्तबा आनेवाली पीढ़ियोंकी निगाहमें ग़ालिबसे भी ऊँचा होगा। प्रस्तुत संकलनमें लेखकने इक़बालके जीवनको तीन दौरोंमें विभक्त करके, हर दौरकी नुमाइन्दा कविताओंके उद्धरण दिए हैं। प्रारम्भमें इक़बालने भारतके राष्ट्रिय आन्दोलनका अपने व्यक्तित्वका समर्थन और अपनी वाणीका बल दिया।

---

[1]तेज़ चलनेवालेके [2]पथप्रदर्शकको, [3]चोरका, [4]प्रेयसीसे विरहकी [5]उद्विग्न, [6]तन्मयता, [7]नृत्य, [8]अपनी आत्माको [9]सम्मति, अभिलाषा।

"कैफ़ियत बाकी पुराने कोहो[1]-सहरामें नहीं ।
है जुनूं[2] तेरा नया, पैदा नया वीराना कर ।।"

और सुनिये —

"मुझे रोकेगा तू ऐ नाखुदा[3] क्या ग़र्क़ होनेसे ?
कि जिनको डूबना हो, डूब जाते हैं सफ़ीनोंमें[4] ।।"

× × ×

तुम्हारी तहज़ीब अपने खंजरसे आप ही खुदकशी करेगी ।
जो शाख़े नाज़ुकपै आशियाना बनेगा, नापाएदार होगा ।।

और फिर 'शिक्वा'का आख़िरी बन्द —

बुत[5] सनमख़ानोंमें[6] कहते हैं, "मुसलमान गए ।
हैं ख़ुशी उनको कि काबेके निगहबान[7] गए ।।
मंज़िलेदहरसे[8] ऊँटोंके हुदीख़्वान गए ।
अपनी बग़लोंमें दबाये हुए क़ुरआन गए ।।
ख़न्दाज़न[9] कुफ़्र[10] है, अहसास तुझे है कि नहीं ।
अपनी तौहीदका[11] कुछ पास तुझे है कि नहीं ।

काश ! इक़बाल बादकी सियासतका ग़ायरीस दूर रखते ! वह अमर तो है ही, उन्हें सब पूजते भी ।

इस सग्रहकी एक और विशेषता है कि इसमें उर्दू-कविताने वर्तमान प्रगतिशील युगका उचित प्रतिनिधित्व किया गया है । आजके माहौल, आजके ज़माने और वातावरणमें उर्दू-कविताने जो उन्नति की है, हिन्दी के बहुत कम साहित्यिकोंको इस बातका सही सही अन्दाज़ा है । अभी

---

[1]पर्वतों-जगलोंमें [2]उन्माद उमंग, [3]नाविक [4]नौकाओंमें, [5]हिन्दू देवी-देवता [6]मन्दिरोंमें [7]पहरेदार रक्षक, [8]संसारसे, [9]हँसी उड़ा रहे हैं [10]गैरमुस्लिम हिन्दू [11]एक ईश्वरवादका ।

तक हिन्दीके ९० प्रतिशत पाठक उर्दूको महज़ 'हुस्नोइश्क़' और 'गुलो-बुलबुल'की शायरी समझते हैं। वर्त्तमान नवयुवक कवियोंमें, विशेपकर फ़ैज़, मजाज़, जज़्बी, साहिर और फ़िराक़ने आज उर्दू-शायरीको किसी भी भाषाके तरक़्क़ीपसन्द युग-साहित्यके हमपल्ले ला बिठाया है। आजका उर्दू-कवि युगका और जनताकी आवाज़का प्रतिनिधि है। उसने आदमीको ख़ुद्दारी और आत्मगौरव दिया है। वह भगवान्‌से भी आदर माँगता है :—

हश्रमें[1] भी ख़ुसरवाना[2], शानसे जायेंगे हम।
और अगर पुरसिश[3] न होगी तो पलट आयेंगे हम॥

—जोश

सजदे करूँ, सवाल करूँ, इल्तजा करूँ।
यूँ दे तो कायनात[4] मेरे कामकी नहीं॥
वो ख़ुद अता करे तो जहन्नुम भी है बहिश्त।
माँगी हुई निजात[5] मेरे कामकी नहीं॥

—सीमाब

आज भी उर्दू-शायरीमें मोहब्बतका चर्चा है, मगर यह अब अकेले भोगनेकी चीज़ नहीं रही :—

अपनी हस्तीका सफ़ीना[6] सूयेतूफ़ाँ[7] कर लें।
हम मोहब्बतको शरीकेग़मे-इन्साँ कर लें॥

—मजाज़

आजका इन्सान इश्क़की महफ़िलमें न शमाकी तरह जलता है, न परवानेकी तरह फुँकता है। उसे मुहब्बतकी नाकामीका डर नहीं, वह सरेतूफ़ान ज़िन्दगीकी मौजोंपर अठखेलियाँ करता हुआ चलता है :—

मुझको कहने दो कि मैं आज भी जी सकता हूँ।
इश्क़ नाकाम सही, ज़िन्दगी नाकाम नहीं॥

—साहिर

---

[1]प्रलयवाले दिन ईश्वरके समक्ष; [2]बादशाही; [3]आवभगत; [4]संसार, सम्पत्ति; [5]स्वर्ग, बहिश्त; [6]नाव; [7]तूफ़ानकी ओर।

दरियाकी जिन्दगीपर, सदके हज़ार जानें।
मुझको नहीं गवारा, साहिलकी[1] मौत मरना॥
—जिगर

आधुनिक प्रगतिशील कविताके अन्य विषयोंपर मसलन मज़दूर-किसानोंकी तबाही, देशभक्ति, मानवप्रेम, जागरण, आत्मगौरव आदिपर उर्दूमें जो लिखा गया है उसके अनेक सुन्दर उदाहरण इस संकलनमें यथास्थान दिए गए हैं।

श्री गोयलीयजीके इस संग्रहमें जहाँ अध्ययनकी गहराई, अनुभवकी परिपक्वता और साहित्यकी सच्ची परखकी खूबियाँ हैं, वहाँ उनकी निराली टकसाली शैलीका चमत्कार भी कम आकर्षक नहीं। उनके कुछ परिचय देखिए —

मयख़ाना—

झिझकिये नहीं, जब आ ही गये तो इतमीनानसे बैठिये। यहाँ ऊँच नीचका भेद-भाव नहीं। ज़ाहिद, नासेह, शेख़, और वाइज़की परवा न कीजिए। वे तो यहाँ ख़ुद ही चोरी चुपके आते हैं, और जल्दीमें दुम दबाकर भाग जाते हैं। यह बुज़ुर्ग तो पीरेमुग़ाँ हैं। इनकी कृपादृष्टि तो ग़रीब-अमीर सबपर यकसाँ रहती है। ये जो सुराही लिये आ रहे हैं, यही साक़ी हैं। उधर वे रिन्द बैठे हुए हैं। उनके हाथोंमें साग़िर और पैमाने हैं जिनमें सुर्ख़ मय भरी हुई है। इधर ये शराबसे भरे हुए खुम और कूज़ रक्खे हुए हैं। जब उमरख़य्याम और हाफ़िज़ जिन्दा थे, यहाँ रोज़ आते थे।

नज़ीर—

नज़ीरने अज़ान भी दी और शंख भी फूँका। तसबीह भी ली और जनऊ भी पहना। मुहर्रममें राये तो होलीमें भड़वे भी बने। रमज़ानमें रोज़े रक्खे और सलूनोंपर राखी बाँधनेको मचल पड़े। शबबरात-पर महताबियाँ छोड़ीं तो दीवालीपर दीप सँजोए। नबी, रसूल, वली, पीर, पैग़म्बरके लिए जी भरकर लिखा, तो कृष्ण महादेव, नरसी, भैरो

---

[1] किनारा (भावार्थ सुख शान्तिसे अकर्मण्योंकी तरह)।

और नानकपर भी श्रद्धाञ्जलि चढ़ाई। गुलोबुलबुलपर कहा तो आम और कोयलको पहले याद रखा। पर्देके साथ बसन्ती साड़ी भी याद रही। और-तो-और, गर्मी, बरसात और सर्दीपर भी लिखा। बच्चोंके लिए रीछका बच्चा, तोता और हिरन, गिलहरीका बच्चा, तरबूज, पतंगबाजी, बुलबुलोंकी लड़ाई, ककड़ी, तेराकी, तितली नदीपर लिखने बैठे तो बच्चे बन गये। हरएक बालक गली-कूचोंमें गाता फिर रहा है। जवानों और बुद्धोंको नसीहत देने बैठे तो लोग वज्दमें आ गये। मानों क़ुरान, हदीस, वेद, गीता, उपनिषद्, पुराण सब घोलकर पी जानेवाला कोई सिद्ध पुरुष बोल रहा है।

हफ़ीज—"मिसरी जैसी भाषा, कन्या-सी अछूती कल्पना और कृष्णकन्हाई-की बाँसुरीसे निकले हुए—से मादक गीत आनन्दविभोर कर देनेके लिए काफ़ी हैं" (पृष्ठ ४२८)

जिगर—"मालूम होता है अल्लाहमियाँ जब अपने बन्दोंको हुस्न तक़सीम कर रहे थे, तब हजरते जिगर कौसरपर बैठे पी रहे थे। उन्हें जिगर-की यह मस्ती और बेपरवाही शायद पसन्द न आई और कुढ़कर हुस्नके एवज इश्क़ अता फ़रमाया ताकि जिगर उम्रभर जलते और बुझते रहें" (पृष्ठ ५७८)

इस प्रकारका हर परिचय अपने आपमें एक कविता है। इन्हें पढ़कर और गोयलीयजीके परिश्रमके सफल परिणामको देखकर उनके सम्बन्धमें कहनेको जी चाहता है :—

बड़ी मुश्किलसे होता है चमनमें दीदावर पैदा।

यह बात नहीं कि पुस्तकमें छोटी-मोटी ख़ामियाँ नहीं रह गई हैं। कोई भी 'संकलन' निर्दोष नहीं हो सकता। जो दोष रह गये हैं, लेखक उनको जानता है और उनके बारेमें उसकी अपनी सफ़ाई भी है। पर, रुचिके प्रश्नपर या साधनोंकी सीमितताके आधारपर सफ़ाईका प्रश्न उठता ही नहीं। संकलनमें जो सावधानी बरती गई है, बाज़ वक़्त एक-एक शेरके इन्तज़ारमें जो लम्बी बहरें झेलनी पड़ी है और हर ज़ौक़ (रुचि)

और हर स्तरके पाठकोंका ध्यान रखकर सँवारा। जब-जब जो मरहलेपर रुक जाना पड़ा है, वह दास्तान मुझे मालूम है। इसीलिए मैं जानता हूँ कि यह मजमूआ कितना सुन्दर और कितना रंगीन है।

> "दास्ताँ उनकी अदाओंकी है रंगीं, लेकिन।
> उसमें कुछ खूनेतमन्ना भी है शामिल अपना ॥"
>
> —असगर

भारतीय ज्ञानपीठ इस संकलनको बहुत प्रसन्नताके साथ पाठकोंके हाथोंमें समर्पित करता है। हमारा यह सौभाग्य है कि इस संकलनकी *प्रस्तावना अन्तर्राष्ट्रिय ख्यातिप्राप्त* धुरन्धर विद्वान और अनथक पुरुषार्थी महापण्डित राहुल सांकृत्यायनने लिखनेकी कृपा की है। वह हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके सभापति भी हैं। इस संग्रहकी प्रामाणिकता, राष्ट्रिय साहित्यकी समृद्धि और मूल्यांकनके लिए इस संग्रहकी उपयोगिता तथा *नस्रकी अद्वितीय समस्याओंके सम्बन्धमें श्री राहुलजीने प्रस्तावनामें* जो कहा है वह ज्ञानपीठके प्रकाशनके लिए गौरवकी बात है। हम महापण्डित राहुलजीके प्रति हृदयसे आभारी हैं।

इस संग्रहमें गोयलीयजीने इस बातका ध्यान रखा है कि पुस्तक सब प्रकारसे प्रामाणिक और सर्वोपयोगी हो। यह पुस्तक साहित्यिक विद्यार्थियोंके लिए, परीक्षालयों और पुस्तकालयोंके लिए, व्याख्यानदाता लेखकों और पत्रकारोंके लिए विशेष रूपसे उपयोगी है। सामान्य पाठकके लिए इसे अधिक-से-अधिक सुबोध बनानेका प्रयत्न किया गया है। पुस्तक आपके लिए है, यदि आप आगे बढ़कर इसे लेनेका कष्ट करें —

> "ये बज़्मे मय है, याँ कोताहदस्तीमें है महरूमी।
> जो बढ़कर खुद उठा ले हाथमें, मीना उसीका है ॥"

डालमियानगर
३० सितम्बर १९४८

लक्ष्मीचन्द्र जैन
सम्पादक
ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

उद्गम

: १ :
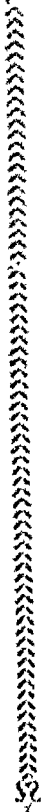
[उर्दू-शायरीका संक्षिप्त परिचय]

उर्दू-शायरीका परिचय

राष्ट्रिय भाषाके जनक—अमीर खुसरोको हिन्दी-साहित्यिक हिन्दी-कविताका और उर्दू-अदीब उर्दू-शायरीका जनक मानते हैं। खुसरोसे पूर्व हिन्दू कवि संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, ब्रज या प्रान्तीय भाषाओंमें और मुस्लिम कवि अरबी-फ़ारसीमें रचना किया करते थे। आवश्यकता एक ऐसी भाषाकी थी, जो समूचे राष्ट्रकी भाषा कहलाई जा सके और जिसमें हिन्दू-मुसलमान समान रूपसे अपने भाव व्यक्त कर सकें।

अमीर खुसरो यद्यपि फ़ारसीके ख्याति-प्राप्त कवि थे, परन्तु उन्होंने इस आवश्यकताको अनुभव करते हुए कुछ इस तरहकी कविताएँ लिखीं जो संस्कृत या फ़ारसी मिश्रित न होकर सर्वसाधारणके समझने योग्य सार्वजनिक प्रचलित शब्दोंमें थीं।[1]

---

[1] अमीर खुसरो—(जन्म सन् १२५३, मृत्यु सन् १३२५ ई०)

इन्होंने ग़यासुद्दीनके शासनकालसे मुहम्मद तुग़लक़के शासन तक ११ बादशाहोंके दरबार देखे थे। इनकी कविताके नमूने :—

चकवा चकवी दो जनें इन मत मारो कोय।
यह मारे करतारके रैन-बिछोवा होय॥
गोरी सोवे सेजपर मुखपर डाले केस।
चल खुसरू घर आपने रैन भई चहुँ देस॥
खुसरो रैन सुहागकी, जागी पीके संग।
तन मेरो, मन पीउको दोऊ भये इकरंग॥

खुसरोने जिस राष्ट्रभाषाको जन्म दिया उसका उन्होंने स्वयं हिंदी या हिंदवी नाम रखा। ख्यातिप्राप्त भाषाचार्य साहित्याचार्य प० पद्मसिंहजी शर्मा लिखते हैं—'हिंदी नामकी सृष्टि हिन्दुओंने नहीं की और न उन्होंने इसका प्रचार ही किया है। हिंदू लेखकोंने इसके लिए प्रायः सर्वत्र भाषाका प्रयोग किया है। भाषाके लिए हिन्दी शब्दके सर्वप्रथम नामकरणका सारा श्रेय मुसलमान लेखकों और कवियोंको ही दिया जा सकता है।

हिन्दी हिंदवी

'उर्दूए कदीम' 'तारीख नस्र उर्दू' 'पंजाबमें उर्दू' इत्यादि ग्रन्थोंके विद्वान लेखकोंने बड़ी खोजके साथ यह साबित कर दिया है कि उर्दूका सबसे पुराना नाम हिन्दी ही है। अमीर खुसरोकी खालिकबारी (हिन्दी-उर्दूके सबसे पुराने कोष)में सब जगह हिंदी या हिन्दवी आया है। उसमें 'उर्दू', 'रेख्ता' या और किसी नामका कहीं भी उल्लेख नहीं है। खालिकबारीमें १२ बार हिंदी और ५५ बार हिंदवी शब्दका प्रयोग हुआ है। हिन्दीका अर्थ है हिंदकी भाषा और हिन्दवीसे मतलब है हिंदुओं या हिंदुस्तानियोंकी भाषा। कविवर सौदाके उस्ताद शाहहातमने भी १७५० ईस्वीमें 'हिन्दवी' या 'हिन्दी भाषा' हिन्दुस्तानकी भाषाके अर्थमें इस्तेमाल किया है।[1]

उर्दूके आदि कवि—अमीर खुसरोने जिस राष्ट्रभाषाको जन्म दिया उसका लालन पालन कबीर[2]

---

[1] हिन्दी उर्दू और हिन्दुस्तानी पृ० १८।

[2] कबीर—(जन्म सन १३९१ मृत्यु १५१८ ई०)

ये जातिके जुलाहे थे और उच्चकोटिके सन्त और सुधारक थे। इनकी कविताएं प्रेम भक्ति वैराग्य और नीति-सम्बन्धी बड़ी मर्मस्पर्शिनी हैं। कविताका नमूना —

जा घट प्रेम न संचरै सो घट जान मसान।
जैसे खाल लुहारकी, सांस लेत बिन प्रान॥

जायसी,[1] रहीम,[2] वग़ैरहने इस तरह किया कि उसे सभीने

प्रेम छिपाया ना छिपै, जाघट परघट होय।
जो पै मुख बोले नहीं, नैन देत हैं रोय॥
आजा प्यारे नैनमें, पलक ढाँप तोय लूँ।
ना मैं देखूँ औरको, ना तोय देखन दूँ॥
प्रेम न वाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट विकाय।
राजा-परजा जिहि रुचै, सीस देइ ले जाय॥
प्रेम-प्रेम सब कोइ कहै, प्रेम न चीन्हे कोय।
आठ पहर भीनो रहै, प्रेम कहावे सोय॥
प्रेम-पियाला जो पिये, सीस दच्छिना देय।
लोभी सीस न दे सके, नाम प्रेमका लेय॥
कबिरा खड़े बज़ारमें, लिये लुकाटी हाथ।
जो घर फूँके आपनो, चले हमारे साथ॥

[1] मलिक मुहम्मद जायसी—(कविता-काल सन् १५१८ से १५४३ ई० तक)

पद्मावत इन्हींकी प्रसिद्ध रचना है। १४ कृतियाँ आपकी लिखी मिलती हैं।

हाड़ भये सब काँकरी, नसें भई सब ताँत।
रोम-रोमसे धुनि उठे, कहूँ विरह किह भाँत॥

[2] अब्दुल रहीम खानखाना—(जन्म सन् १५५३ कविता-काल १५८३)

रहीम बैरमखाँके पुत्र और अकबर बादशाहके नवरत्नोंमेंसे एक थे। ये अकबरके समस्त दलके सेनापति और मन्त्री थे। बड़े भद्र और दानी थे। कहा जाता है कि गंग कविको एक ही छन्दके बनानेपर ३६ लाख रुपये इन्होंने उसे पुरस्कार-स्वरूप दिये थे। गंग कवि बड़े स्वच्छन्द प्रकृतिके

अपना समझकर अपनाया, परन्तु ४०० वर्षके बाद यानी सत्रहवीं सदीमें राष्ट्रिय भाषाको विदेशी रूप दिया जाने लगा। यानी

थे। पर इनकी गुण-ग्राहकतापर रीझकर उन्होंने इनका काफी गुण-गान किया। रहीम इतने निरभिमानी और विनयशील थे कि गगके पूछनेपर —

सीखे कहाँ नवाबजू ! ऐसी देनी देन।
ज्यों-ज्यों कर ऊँचे करो, त्यों-त्यों नीचे नैन॥

सकुचाते हुए उत्तर दिया —

देनहार कोऊ और है, भेजत सो दिन-रैन।
लोग भरम हमपर धरें, याते नीचे नैन॥

इनके एक दर्जनके करीब ग्रन्थ पाये जाते हैं। इनकी कविताका नमूना—

थोरो किए बडेनकी, बडी बडाई होय।
ज्यो रहीम हनुमतको, गिरिधर कहे न कोय॥
खैर, खून, खाँसी, खुसी, वैर, प्रीति, मधुपान।
रहिमन दाबे ना दबै, जानत सकल ज्हान॥
रहिमन चाक कुम्हारको, माँगे दिया न देइ।
छेदमें डंडा डारिकै, चाहै नाद लइ लेइ॥
फरजी साह न ह्वै सकै, गति-टेढी तासीर।
रहिमन सूधी चालते, प्यादो होत बजीर॥
जेहि अचल दीपक दुरचो, हन्यो सो ताही गात।
रहिमन कुसमयके परे, मित्र शत्रु ह्वै जात॥
उरग, तुरग, नारी, नृपति, नीचजाति, हथियार।
रहिमन इन्हें सँभारिये, पलटत लगे न बार॥
समि कृपण चाहत कुमन, यह रहीम जिय सोस।
महिमा घटी समुद्रकी, रावन बस्यो परोस॥

और खुसरोकी निर्विकार भाषा रूपी बालिकाको 'वली'ने अरबी-फ़ारसी शब्दों और भावोंके वस्त्रोंमें लपेट दिया। इसीलिए 'वली' उर्दूके आदि कवि माने जाते हैं; किन्तु वलीके जीवनकालमें इस अभारतीय भाषाका नाम उर्दूके बजाय 'रेख़्ता' शब्द प्रचलित था। वलीका समय ई० स० १६६८से १७४४ तक माना गया है।

रेख़्ता

हिन्दी-हिन्दवीके बजाय भाषाके लिए 'रेख़्ता' शब्दका प्रयोग सबसे पहले 'सादी' दक्खनीके कलाममें मिलता है। शाह मुबारिक, आबरू, मीर, सौदा, ग़ालिब, जुरअत और क़ायमने भी अपनी कवितामें 'रेख़्ता' शब्दका ही प्रयोग किया है।[1]

उर्दू

तुर्की भाषामें 'उर्दू' लश्कर (छावनी)को कहते हैं। प्रारम्भमें मुग़ल और तुर्क बादशाह छावनीमें रहा करते थे। उनका दरबार और रनवास सब लश्करोंमें ही होता था। इस विशेषताके कारण वहाँकी मिली-जुली भाषा—लश्करी या उर्दू ज़बान भी कहलाने लगी। दिल्लीमें लाल क़िलेके सामने शाही छावनी थी, उसका नाम उर्दूका बाज़ार पड़ गया, जो आजकल भी प्रचलित है। फ़ौजमें हर प्रान्त, हर मज़हब और हर जातिके लोग रहते थे, इसलिए उनकी उस मिली-जुली खिचड़ी भाषाको लोग लश्करी या उर्दू ज़बान कहने लगे। नवाब शुजाउद्दौला और आसफ़ुद्दौलाके शासनकाल (१७६७ ई०)में सैयद अताहुसेन 'तहसील'ने 'चहारदरवेश'का तर्जुमा किया था। उसमें उन्होंने अपनी ज़बानके लिए—'रेख़्ता', 'हिन्दी' और 'ज़बान उर्दू-ए-मोअल्ला'—इन तीन नामोंका प्रयोग एक ही प्रसंग और एक ही पृष्ठमें साथ-साथ किया है। केवल 'उर्दू' शब्द उनकी किताबमें कहीं नहीं पाया जाता। यदि उर्दू शब्द उस युगमें व्यापक और रूढ़ हो गया होता तो 'तहसीन' साहब

---

[1]हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी, पृ० १६-२२।

इन तीन शब्दोंके झमेलेमें न पड़कर केवल उर्दू शब्दसे काम चला लेते। इससे मालूम होता है कि उर्दू शब्दका प्रयोग इस मानमें अच्छी तरहसे नहीं हुआ था। अलबत्ता इस समयको उर्दू शब्दके प्रचारका आरम्भकाल कहा जा सकता है। इसके बाद धीरे-धीरे यह शब्द भाषाके अर्थमें प्रयुक्त होने लगा।[1]

उर्दू-पद्य—का प्रारम्भ गजलसे हुआ। फिर धीरे-धीरे कसीदे, मसनवी, मर्सिया नज्म, गीत, सॉनेट (१४ पंक्तियोंका लघु छन्द), आजाद नज्म (मुक्त छन्द) भी लिखे जाने लगे। उर्दू-गजलमें १९ बहरें (छन्द) होती हैं।

गजल—का अर्थ है स्त्रियोंका आचार कहना, औरतोंका वर्णन करना। यानी वह कविता जिसमें —

वस्ल	=	मिलन
फ़िराक़	=	विरह
इश्क़	=	प्रेम
तमन्नाएँ	=	चाहनें
उम्मीद	=	कामना, आशा
यास	=	निराशा—

का वर्णन हो। गजलको हिन्दीमें शृंगारिक कविता कहा जा सकता था, यदि गजलमें एकांकी होनेका दोष न होता। हिन्दी शृंगारिक कविताके प्रेमी और प्रेमपात्र दोनों समान रूपसे प्रेम अथवा विरह-ज्वालामें मुलसते रहते हैं। उर्दू-गजलमें केवल पुरुष इश्कके हिज्रके सदमे उठाता रहता है। स्त्रीको इस ओर लेशमात्र भी लगाव नहीं होता।

उर्दू-गजल का आशिक ठीक उन दिलफेंक छोकरोंकी तरह होता

[1] हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी, पृ० २५ २८।

है, जो कॉलेजकी छोकरियों, राह चलती युवतियों, पास-पड़ोसकी बहू-बेटियों, सीनेमाएक्ट्रेसोंपर दिल दे बैठते हैं; और उन बेचारियोंको पता भी नहीं होता कि हमपर कितने कामुक छोकरे दिल निछावर किये बैठे हैं। जब यही इकतरफ़ा इश्क़ बढ़ने लगता है तो जुनूँ (उन्माद-पागलपन)की शक्ल अख्तियार कर लेता है। राह चलते हुए आवाज़े कसना, कुचेष्टायें करना, पत्र लिखना, मित्रोंमें उसके सौन्दर्य और नख-शिखका वर्णन करना, अपनी इस इकतरफ़ा मुहब्बतको उसकी लापरवाही, बेवफ़ाई समझना, उसे प्राप्त करनेके हथकण्डे तलाश करना, उसके वास्तविक प्रेमी या पतिको उदू (प्रतिद्वन्द्वी) समझकर उसकी बर्बादीके उपाय सोचना; अपनी कामुकताके कारण ऐसी हरकतें करना जिससे अपने और उसके कुटुम्ब दोनों बदनाम होकर, परेशानियोंमें मुब्तिला हो जाएँ, यही ग़ज़लमें वर्णित आशिक़का काम है।

उर्दूके प्रसिद्ध आलोचक डा० अन्दलीब शादानी एम० ए०, पी-एच० डी०का कथन है कि—"जो आशिक़ और माशूक़ दोनोंके दिलोंमें यकसाँ सुलग रही हो, उसीको मुहब्बत कहा जा सकता है। इकतर्फ़ा मुहब्बत जुनूँ है, मुहब्बत नहीं।"[1] और इस दुतर्फ़ा मुहब्बतका वास्तविक आनन्द तभी आता या आ सकता है, जब कि इसका प्रारम्भ स्त्रीकी ओरसे हुआ हो; क्योंकि यदि स्त्री प्रेम करती है तो वह सैकड़ों उपायों द्वारा प्रेम ज़ाहिर करके प्रेमपात्रको अपनी ओर आकर्षित कर सकती है। मिलनका कोई न कोई मार्ग खोज निकालती है; और यदि पुरुष इस रोगमें पहले फँसता है, तो वह तिल-तिलकर घुटता है, उसे सफलता बहुत कम प्राप्त होती है।[2]

[1] आजकल-उर्दू (१५ अप्रैल १९४६) पृ० ११-१२में प्रकाशित जनाब अताउल्लाह पालवीके लेखसे।

[2] आजकल-उर्दू (१५ अप्रैल १९४६) पृ० ११-१२में प्रकाशित जनाब अताउल्लाह पालवीके लेखका भावानुवाद।

उर्दू-ग़ज़लमें माशूक़ (प्रेमपात्र) तीन रूपमें दिखाई देता है।—

(१) स्त्री, (२) संदिग्ध, स्त्री है या पुरुष, (३) स्पष्टतया पुरुष।

१—जिन अशआरमें माशूक़का स्त्रीत्व प्रकट हो, ऐसे शेर बहुत कम हैं।

२—कुछ अशआर ऐसे हैं, जिनसे स्पष्ट प्रकट नहीं होता कि माशूक़ स्त्री है या पुरुष।

३—सबसे अधिक संख्या ऐसे अशआरकी है, जिनमें माशूक़ साफ़ तौरसे मर्द नज़र आता है।

हिन्दी शायरीमें भी माशूक़ (प्रेमपात्र) मर्द ही नज़र आता है, किन्तु ग़ज़ल और शृंगारिक कवितामें बहुत बड़ा अन्तर यह है कि हिन्दी कवितामें वर्णित आशिक़ स्त्री और माशूक़ पुरुष होता है। ग़ज़लमें आशिक़ स्त्री न होकर पुरुष होता है, और माशूक़ भी अक्सर पुरुष। स्त्रीको प्रायः पुरुषके लिए या पुरुषको प्रायः स्त्रीके लिए प्रेम होना तो स्वाभाविक है, किन्तु पुरुषको औरस पुरुषके लिए कामवासनाकी इच्छा 'अमरद[1]-परस्ती' (अप्राकृतिक व्यभिचार) है। और उसपर भी तुर्रा यह कि यह अप्राकृतिक प्रेम भी दुतर्फ़ा न होकर इकतर्फ़ा होता है। उर्दू-ग़ज़लका माशूक़ अपने आशिक़से घृणा और उपेक्षा रखता है। आशिक़के अस्तित्वको अपने लिए अनिष्टकर समझता है।[2]

उर्दू-शायरीका जन्म भारतकी अधमुई दशामें हुआ। इसलिए इसमें उस समयके सभी—विलासिता, अकर्मण्यता, कायरता, प्रतिद्वन्द्विता आदि अवगुण प्रवेश कर गए। बादशाहों, नवाबोंका कुपित होना—उनके आश्रित शायर उसे माशूक़का रूठना तसव्वुर करके झूठा आत्मसंतोष करते रहे। राजनैतिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय होनेके कारण शाही

---

[1]अमरद—जिसकी मूँछ न निकली हो—लौंडा, नौ उम्र।

[2]आजकल-उर्दू (१५ अप्रैल १९४६) पृ० ११-१२में प्रकाशित जनाब अताउल्लाह पालवीके लेखका भावानुवाद।

दरबारोंमें किसीकी भी स्थिति स्थायी नहीं थी। हर एक एकदूसरेको नीचा दिखाने और मिटानेमें लगा रहता था। एकदूसरेके ख़िलाफ़ षड्यन्त्र रचता रहता था। बादशाह, नवाब और रईस हियेके अन्धे और कानके कच्चे होते थे। इनके यहाँ आकर निरपराध सज़ा और धूर्त तथा गुनहगार पुरस्कार पाते थे। जो भी कूटनीति, धूर्तता, जालसाज़ी, षड्यन्त्र और चापलूसीमें उस्ताद होता वही शाही दरबारोंमें इज़्ज़त पाता, और जो इन हुनरोंमें दक्ष न होता, वह ज़लील और रुसवा होता। यहाँ तक कि दरबारसे निकाल दिया जाता। इस दरबारको शायरोंने 'महफ़िलेमाशूक़' और बेइज़्ज़तीसे निकलवानेवाले मुँह लगे मुसाहबोंको उदू (प्रतिद्वन्द्वी) कहकर दिलकी जलन बुझानेका प्रयास किया है :—

तेरी महफ़िलसे उठाता ग़ैर मुझको क्या मजाल।
देखता था मैं कि तूने ही इशारा कर दिया॥

—'हसरत' मोहानी

इस तरहके माशूक़ जो महफ़िलसे निकाल देनेका इशारा कर दें और ग़ैर (प्रतिद्वन्द्वी) तत्काल निकाल दें; बादशाहों, नवाबों, रईसों या चरित्र-भ्रष्ट जनाने छोकरोंके सिवा कोई और नहीं हो सकता। किसी सद्‌गृहस्थकी कन्या या स्त्री इस्लामी दुनियामें ऐसी नहीं हुई जो अनेक आशिक़ोंके झुण्डमें बैठकर बेहयाईको भी हया आ जानेवाली इस तरहकी हरकत करे। इतना गया-गुज़रा जीवन और व्यवहार वेश्याका भी नहीं होता। वह पैसेके लिए अनेक पुरुषोंके समक्ष गाती, नाचती और परिहास करती है, सभीको भरमाती है। किसीको भी महफ़िलसे उठनेका विचार तक नहीं लाने देती। जो पैसा नहीं दे पाता, उससे उपेक्षा कर लेती है और वह स्वयं ही फिर नहीं आता। यदि कोई बेहया आया भी तो चुप-चाप बूढ़ी नायिका न आनेके लिए संकेत कर देती है और कह देती है "हुज़ूर! इस पापी पेटके लिए हम अस्मत-फ़रोशी-जैसा गुनाह करती हैं।

अगर उसीको कुछ न मिला तब बताइए यूँ गुज़र क्यनर होगी ?" भरी महफ़िलमें जिसमें तय हो जाता है उसे लेकर वेश्या स्वयं ही महफ़िलसे उठकर अपने दूसरे कमरेमें चली जाती है और बाकी तमाशबीन नाच-गाना सुनकर यथास्थान चले जाते हैं। ऐसे हुस्नाई और उर्दू की कल्पना तो शाही दरबारों और वहांके कूचकियोंपर ही नहीं टिक होती है।

ग़ज़लमें कम-से-कम १ मतला ३ शेर और १ मक़ता आवश्यक समझा जाता है। मतला ग़ज़लके प्रारम्भमें होता है। इसके दोनों मिसरे (चरण) क़ाफ़िया रदीफ़में संयुक्त होते हैं —

मतला

कमर बाधे हुए चलनेको यां सब यार बैठे हैं।
बहुत आगे गये बाक़ी जो हैं तैयार बैठे हैं॥

यह मतला है क्योंकि इसके ऊले (पहले) मिसरेमें **यार और** सानी (द्वितीय)में **तैयार** क़ाफ़िये हैं, और दोनों मिसरोंमें **बैठे हैं** रदीफ़ **मौजूद** है। क़ाफ़ियेको तुक कहा जा सकता है। यार, तैयार, बेज़ार, दो चार, नाचार, इस ग़ज़लमें क़ाफ़िये हैं। **रदीफ़** क़ाफ़ियेके बाद रहती है और यह ज्यों-की-त्यों रहती है, क़ाफ़ियेकी तरह बदलती नहीं। इस ग़ज़लमें 'बैठे हैं' रदीफ़ है।

शेर

शेरमें भी मिसरे दो ही होते हैं। पहले मिसरेमें क़ाफ़िया और रदीफ़ न होकर केवल दूसरे चरणमें होते हैं :—

न छेड़ ऐ निगहते बादे बहारी ! राह लग अपनी।
तुझे अठखेलियाँ सूझी हैं, हम बेज़ार बैठे हैं॥

मक़ता

ग़ज़लमें शायरका तख़ल्लुस (उपनाम) जिस शेरमें हो उसे मक़ता कहते हैं। मतले और शेर तो ग़ज़लमें अधिक लिखे जाते हैं परन्तु मक़ता हर ग़ज़लमें एक ही होता है और वह ग़ज़लके अन्तमें रहता है —

भला गर्दिश फ़लककी चैन देती है किसे 'इन्शा' ?
ग़नीमत है कि हम-सूरत यहाँ दो चार बैठे हैं ॥

यह मक़्ता है क्योंकि इसमें 'इन्शा' शायरका नाम आया है ।

ग़ज़लमें प्रेमका इज़हार अक्सर पुरुषकी ओरसे होता है । कुछ लोगोंने औरतोंके जज़्बात (भावों)को ग़ज़लमें समोनेका असफल प्रयत्न किया । वे भाषा तो ज़नानी लिख सके, परन्तु भाव स्त्रियोचित न ला सके, और उसमें ऐसी हास्यास्पद कविता की, कि वह उर्दू-साहित्यका कलंक बनकर रह गई । इसी अश्लील ज़नानी कविताको रेख़्ती कहते थे ।[1]

रेख़्ती

---

[1] हिन्दी कवितामें स्त्रियोचित भावोंके मर्मस्पर्शी स्थलोंसे प्रभावित होकर जनाब अताउल्लाह पालवी फ़र्माते हैं । :—

"हिन्दी शायरीको दुनियाकी तमाम ज़बानोंकी शायरीमें महमूद और मुमताज़ (श्लाध्य और श्रेष्ठ) दर्जा मिलनेकी महज़ वजह यह थी कि वह अपने जज़्बोअसर (भावव्यक्त करने और मर्मस्थलको छूने)में सारी दुनियाकी शायरीसे यगाना (अनुपम, बेजोड़) और मुनफ़रद (निराली) थी, और इसका सबब सिर्फ़ यह था कि हिन्दीमें जज़्बाते मुहब्बत (प्रेम-भाव) औरतकी तरफ़से और औरतकी ज़बानसे अदा होते थे, और इसमें मुख़ातिब माशूक़ (यानी हिन्दी कवितामें वर्णित प्रेम-पात्र)-मर्द बल्कि शौहर हुआ करता था । जिस वजहसे वह 'मुहब्बत' एक तरफ़ तो फ़ितरी (स्वाभाविक) तसलीम की जाती थी और दूसरी जानिब इकतर्फ़ा होनेके इल्ज़ामसे भी बरी थी ।

बिला शुबह जज़्बाती हैसियत (भावमय होने)से हिन्दीके यह अशआर हद दर्जेके चुटीले अलबेले और रसीले होते थे, और इस वजहसे उनको जो दर्जा दुनियाकी शायरीमें मिला वह इसके मुस्तहक़ (अधिकारी) थे । (आजकल-उर्दू १५ अप्रैल १९४६, पृ० ११)

नात—नातका मानी है प्रशंसा या खूबी बयान करना। मुसलमान कट्टर मजहबी होते हैं। इसलिए प्रारम्भसे ही प्रेम विरह-वर्णनकी तरह धार्मिक उल्लेख भी गजलोंमें होने लगा। हज़रत मुहम्मदकी प्रशंसा, ईश्वर भक्ति या इस्लामकी गुण-गान जिन गजलोंमें होता है वे नातिया गज़ल कहलाती हैं। यूँ तो हर शायर अपने दीवानके प्रारम्भमें मंगला-चरण-स्वरूप नातिया गज़ल लिखते ही थे, परन्तु बहुतसे कट्टरपन्थी केवल नातिया गज़लें ही लिखते थे। यह रंग 'अमीर मीनाई' तक रहा। सम्भवतः मुनीर 'नमनवाला गुज़रा' पहला दीवान है, जो नातिया गज़लोंसे मुक्त है।

तसव्वुफ़—तसव्वुफ़का अर्थ है सब कामनाओंसे रहित होना और सब वस्तुओंमें ईश्वरका अस्तित्व समझना। यह सूफ़ियोंका सिद्धान्त है। सूफ़ी दिव्य प्रेमके भिक्षुक हैं। न इन्हें कुफ्रसे मतलब है न ईमानसे, क्योंकि यह दोनोंको दाग मानते हैं। वे सब बन्धनोंको तोड़कर अपने प्रियतम ईश्वरकी खोजमें ही तन्मय रहना चाहते हैं। सूफ़ीके निकट हिन्दू-मुसलिम जाति-पाँतिका कोई मूल्य नहीं। सत्यकी खोज, ईश्वर प्रेम तथा संसारसे विराग उनका ध्येय है। ईश्वर उनका माशूक़ भक्ति उनकी साधना और जहाँ बढ़कर ईश्वरसे वह साक्षात्कार कर सकें वह उसका मयखाना अथवा सराय है। धीरे धीरे इस सूफ़ी सिद्धान्तका प्रसार बढ़ने लगा। यहाँ तक कि उर्दू शायरोंने इसे इस तरह अपना लिया कि वह उर्दू शायरीमें घुल मिलकर इस्लामी सिद्धान्त-सा मालूम होने लगा, हालाँ कि सूफ़ी और मुस्लिम-दर्शनमें बहुत बड़ा अन्तर है। मज़हबी विश्वासके प्रति विद्रोह मज़हबी लोगों—नासेह शेख़ ज़ाहिद—के प्रति उपहासकी भावना यह सब उर्दू शायरीको सूफ़ी सिद्धान्तकी देन है।

सूफ़ी दर्शनकी झलक प्रस्तुत पुस्तकमें यत्र-तत्र दिखाई देगी। यहाँ हम केवल फ़ारसीके अमर कवि हाफ़िज़की अन्तिम अभिलाषा

का उल्लेख किये देते हैं। इससे सूफ़ी-सिद्धान्त सरलतासे समझमें आ सकता है :—

"यदि अधिक मदिरा-पानसे ही मेरी मृत्यु हो तो मुझे मेरी समाधि तक एक शराबीके ही भेषमें लाना। जहाँ चारों ओर अंगूर-की बेल हों, और जो किसी सरायके बग़लमें हो, वहाँ मेरी क़ब्र बनाना। मेरी लाशको उसी सरायके पानीसे स्नान कराना और शराबियोंके कन्धेपर ही मेरी अर्थी ले जाना। मेरी मट्टीको लाल मदिरासे नम किया जाय और मेरे शोकमें वही तीन तारोंवाली सितार बजाई जाय। यही मेरी अन्तिम इच्छा—वसीयत है"[1]

रुबाई—ग़ज़लके प्रत्येक शेरमें पृथक-पृथक भाव रहते हैं। यदि दो शेरोंमें एक ही भाव आये और पहिले, दूसरे और चौथे चरणोंके तुकान्त मिलते हों तो उसे रुबाई कहते हैं। रुबाईकी बहरें ग़ज़लोंसे जुदा होती हैं। फ़ारसीमें उमरख़य्यामने इतनी मनमोहक रुबाइयात लिखी हैं कि उन्हें अन्तर्राष्ट्रिय ख्याति मिल चुकी है। हज़ारों भिन्न-भिन्न भाषाओंमें सुन्दर-से-सुन्दर संस्करण निकल रहे हैं। बतौर बानगी—

माम्रो मैम्रो माशूक़ दरीं कुंजे ख़राब।
जानो दिलो जामो जामा दर रहने शराब॥
फ़ारिग़ जे उमीदे रहमतो बीमे अज़ाब।
आज़ाद जे ख़ाकम्रो बादो जे आतिशो आब॥

(इस सुनसान बीहड़में—मैं हूँ, मदिरा है और मेरी प्यारी है। प्राणोंको, दिलको, प्यालेको तथा वस्त्रोंको मदिराके लिए गिरवी रख दिया है। न तो यही कहता हूँ कि 'हे भगवन्! कृपाकर' और न उसके क्रोधका ही भय है। मैं इस समय जल, वायु, अग्नि और मिट्टी इत्यादि चारों भूतोंसे पृथक हूँ)

---

[1] ईरानके सूफ़ी कवि, पृ० ३१७

हिन्दी हिन्दवी शब्दके बाद और उर्दू शब्द रूढ़ होनेसे पूर्व भाषाके लिए 'रेख़्ता' शब्द व्यवहृत होता था। चूँकि इन दिनों गद्यकी अपेक्षा पद्य ही अधिक लिखा जाता था, इसलिए 'रेख़्ता' शब्द पद्यके लिए रूढ़ हो गया था। बादमें यही रेख़्ता शब्द 'उर्दू-ग़ज़ल'में परिवर्तित हो गया। रेख़्तामें पुरुषके प्रेम, विरह आदिका वर्णन रहता था, अतः स्त्रियोचित भाव भाषावाली कविताको 'रेख़्ती' नाम दिया गया। इसकी ऐसी कुरुचिपूर्ण कविताको प्रस्तुत पुस्तकमें स्थान नहीं दिया है। नमूना देते हुए भी जी ख़राब होता है —

दस घर तो छुट चुके हैं, कहाँ तक करूँ सलाम।
किस जा बिठाये देखिये, अब आस्माँ मुझे॥

—नाज़नीन

उर्दू-अदीब एक साहब लिखते हैं —

हिन्दी ज़बानमें तरन्नुम[1] और मौसीक़ी[2] इस क़दर है कि किसी दूसरी ज़बानको मयस्सर नहीं। हिन्दीका शायर मामूली-से-मामूली बातको भी निहायत ही पुरलुत्फ़ अन्दाज़में बयान करता है। मुख़्तसिर अल्फ़ाज़में बहुतसे मतालिब अदा किये जा सकते हैं। डाक्टर अज़ीमके नज़दीक तो "भाषाकी शायरी हुस्नो इश्क़, फ़लसफ़ा[3], और ख़ुद्दारी,[4] मनाज़िरे क़ुदरतकी[5] मुसव्वरी[6] 'विरोग—मौसीक़ी,[7] और दर्दोग़मकी एक दिलगुदाज़[8] तसवीर है। शम्स उलउलमा मौलाना मुहम्मद हुसैन आज़ादने तो यहाँ तक कह दिया कि—"सादगी, इज़हार और असलियतको उर्दू वाले भाषासे सीखें। जज़्बातकी सादगी शायरीकी हक़ीक़ी रूह[9] है और इसमें हिन्दी शायरीका कोई ज़बान नहीं पहुँच सकती।"[10]

---

[1]गाना, गीत, [2]संगीत, [3]दर्शन, [4]स्वाभिमान, [5]प्राकृतिक दृश्यकी, [6]चित्रकारी, [7]विरह-संगीतकी, [8]हृदयको द्रवित करनेवाली, [9]आत्मा।

[10]हिन्दीके मुसलमान शायर, पृ० १५।

क़सीदा—जिनमें १५से अधिक चरण हों और जिसमें किसीकी प्रशंसा आदि की गई हो, उसे क़सीदा कहते हैं। बादशाहोंके आश्रयमें रहनेवाले कवियोंको—जन्मगांठ, विजयोत्सव, तथा अनेक खुशीके अवसरोंपर बादशाहों, नवाबोंकी प्रशंसात्मक कविता करनी पड़ती थी, उसीको क़सीदा कहते थे। जो कवि क़सीदा लिखनेमें जितना निपुण होता था, वह उतनी ही अधिक प्रतिष्ठा पाता था। यहाँ तक कि क़सीदा न लिख सकनेवाला कवि, कवि ही नहीं समझा जाता था। क़सीदा लिखनेमें 'सौदा', 'इन्शा' और 'ज़ौक़' काफ़ी सिद्धहस्त हुए हैं। हमें प्रशंसात्मक चापलूसी कवितासे नफ़रत है; अतः प्रस्तुत पुस्तकमें क़सीदेका उल्लेख नहीं हुआ है।

मसनवी—उस कविताको कहते हैं जिसमें दो चरण एक साथ रहते हैं और दोनोंमें तुकान्त मिलाया जाता है। किसीकी जीवनी या कल्पित कथा मसनवीमें होती है। उर्दूमें पं० दयाशंकर 'नसीम' और 'मीरहसन-' की मसनवी काफ़ी प्रसिद्ध है। एक ज़माना हुआ जब इन दोनों मसनवियोंके पक्ष-विपक्षमें आलोचनाओंकी एक बाढ़-सी आ गई थी, और उर्दू-दुनियामें काफ़ी कटुता उत्पन्न हो गई थी। मसनवी लिखनेका रिवाज अब प्रायः बन्द-सा हो गया है। वर्त्तमानमें इस तरहका उल्लेख जिस ढंगसे किया जाता है, उसकी झाँकी **नवप्रभात** परिच्छेदसे मिलने लगेगी।

मर्सिया—रंजोग़मका वर्णन, मृत्यु सम्बन्धी उल्लेख जिस कवितामें हो उसे मर्सिया कहते हैं। विशेषतः हज़रतअलीके पुत्रोंकी शहादत (वीर-गति) सम्बन्धी जो कविताएं लिखी जाती हैं, उन्हें मर्सिया कहते हैं। मर्सियोंमें युद्धका ओजस्वी वर्णन, शहीदोंकी वीरताका रोमांचकारी गुणगान, करबला (जहाँ यह युद्ध हुआ उस युद्धस्थल)का करुण चित्र होता है। मर्सियोंके 'अनीस' और 'दबीर' श्रेष्ठ कवि हुए हैं। यह केवल एक सम्प्रदाय (मुसलमानोंमें 'शिया' फ़िरक़े)से सम्बन्ध रखते हैं, सार्वजनिक हित और रुचिसे नहीं, इसलिए प्रस्तुत पुस्तकमें इनका उल्लेख नहीं किया है।

नात—नातका अर्थ है प्रशंसा या खूबी बयान करना। मुसलमान कट्टर मज़हबी होते हैं। इसलिए प्रारम्भसे ही प्रेम विरह-वर्णनकी तरह धार्मिक-उल्लेख भी ग़ज़लोंमें होने लगा। हज़रत मुहम्मदकी प्रशंसा, ईश्वर भक्ति या इस्लामका गुण-गान जिन ग़ज़लोंमें होता है वे नातिया ग़ज़ल कहलाती हैं। यूँ तो हर शायर अपने दीवानके प्रारम्भमें मंगला चरण-स्वरूप नातिया ग़ज़ल लिखते ही थे, परन्तु बहुतसे कट्टरपन्थी केवल नातिया ग़ज़ल ही लिखते थे। यह रंग 'अमीर मीनाई' तक रहा। सम्भवतः अज़ीज़ लखनवीका 'गुलकदा' पहला दीवान है, जो नातिया ग़ज़लोंसे क़तई मुक्त है।

तसव्वुफ़—तसव्वुफ़का अर्थ है सब कामनाओंसे रहित होना और सब वस्तुओंमें ईश्वरका अस्तित्व समझना। यह सूफ़ियोंका सिद्धान्त है। सूफ़ी दिव्य प्रेमके भिक्षुक हैं। न इन्हें कुफ़्रसे मतलब है न ईमानसे, क्योंकि यह दोनोंको ढोंग मानते हैं। ये सब बन्धनोंको तोड़कर अपने प्रियतम ईश्वरकी खोजमें ही तन्मय रहना चाहते हैं। सूफ़ीके निकट हिन्दू मुसलिम जाति पाँतिका कोई मूल्य नहीं। सत्यकी खोज, ईश्वर प्रेम संसारसे विराग उसका ध्येय है। ईश्वर उसका माशूक़, भक्ति उसकी शराब और जहाँ बैठकर ईश्वरसे वह साक्षात्कार कर सके, वह उसका मयख़ाना अथवा सराय है। धीरे धीरे इस सूफ़ी सिद्धान्तका प्रसार बढ़ने लगा। यहाँ तक कि उर्दू शायरोंने इसे इस तरह अपना लिया कि वह उर्दू शायरीमें घुल मिलकर इस्लामी सिद्धान्त-सा मालूम होने लगा, हालाँ कि सूफ़ी और मुस्लिम-दर्शनमें बहुत बड़ा अन्तर है। मज़हबी विश्वासोंके प्रति विद्रोह मज़हबी लोगों—नासेह शेख़ ज़ाहिद—के प्रति उपहासकी भावना यह सब उर्दू शायरीको सूफ़ी सिद्धान्तकी देन है।

सूफ़ी-दर्शनकी झलक प्रस्तुत पुस्तकमें यत्र-तत्र दिखाई देगी। यहाँ हम केवल फ़ारसीके अमर कवि हाफ़िज़की अन्तिम अभिलाषा

का उल्लेख किये देते हैं। इससे सूफ़ी-सिद्धान्त सरलतासे समझमें आ सकता है :—

"यदि अधिक मदिरा-पानसे ही मेरी मृत्यु हो तो मुझे मेरी समाधि तक एक शराबीके ही भेषमें लाना। जहाँ चारों ओर अंगूर-की बेल हों, और जो किसी सरायके बग़लमें हो, वहाँ मेरी क़ब्र बनाना। मेरी लाशको उसी सरायके पानीसे स्नान कराना और शराबियोंके कन्धेपर ही मेरी अर्थी ले जाना। मेरी मट्टीको लाल मदिरासे नम किया जाय और मेरे शोकमें वही तीन तारोंवाली सितार बजाई जाय। यही मेरी अन्तिम इच्छा—वसीयत है"[1]

रुबाई—ग़ज़लके प्रत्येक शेरमें पृथक-पृथक भाव रहते हैं। यदि दो शेरोंमें एक ही भाव आये और पहिले, दूसरे और चौथे चरणोंके तुकान्त मिलते हों तो उसे रुबाई कहते हैं। रुबाईकी बहरें ग़ज़लोंसे जुदा होती हैं। फ़ारसीमें उमरख़य्यामने इतनी मनमोहक रुबाइयात लिखी हैं कि उन्हें अन्तर्राष्ट्रिय ख्याति मिल चुकी है। हज़ारों भिन्न-भिन्न भाषाओंमें सुन्दर-से-सुन्दर संस्करण निकल रहे हैं। बतौर बानगी—

माओ मैंओ माशूक़ दरीं कुंजे ख़राब।
जानो दिलो जामो जामा दर रहने शराब॥
फ़ारिग़ ज़े उमीदे रहमतो बीमे अज़ाब।
आज़ाद ज़े ख़ाकओ बादो ज़े आतिशो आब॥

(इस सुनसान बीहड़में—मैं हूँ, मदिरा है और मेरी प्यारी है। प्राणोंको, दिलको, प्यालेको तथा वस्त्रोंको मदिराके लिए गिरवी रख दिया है। न तो यही कहता हूँ कि 'हे भगवन्! कृपाकर' और न उसके क्रोधका ही भय है। मैं इस समय जल, वायु, अग्नि और मिट्टी इत्यादि चारों भूतोंसे पृथक हूँ)

[1] ईरानके सूफ़ी कवि, पृ० ३१७

हर दिल कि दरूने ऊ मोहब्बत बसिरिश्त।
गर साकिनें मस्जिदस्त वर अह्लें कुनिश्त॥
दर दफ़्तरे इश्क़ नामे हर कसके नविश्त।
आज़ाद जे दोजखस्त वो फ़ारिग जे बहिश्त॥

(जिस हृदयमें प्रेमकी सान लग गई, वह चाहे मस्जिदमें निवास करता हो, चाहे बुतख़ाने (मन्दिर)मे, जिस किसीका भी नाम प्रेमियोंकी सूचीमें आ गया, उसको न तो नरककी ही चिन्ता है और न स्वर्गकी इच्छा[1])

उर्दूमें 'जोश'की रुबाइयाँ काफ़ी लोक-प्रिय हैं। इसी पुस्तकके 'जागरण' परिच्छेदमें उनकी झलक मिलेगी।

तारीख़—किसीके जन्म, या मृत्युपर या अन्य स्मरण योग्य अवसरपर जो शेर कहा जाता है उसे तारीख़ कहते हैं। उनमें ऐसे शब्दोंका प्रयोग किया जाता है जो भावसूचक भी हो और घटनाके वर्षके भी परिचायक हो। उर्दूके अक्षरोंके साथ गिनतीके अक नियत हैं, उन्हींको जोड़नेसे सन्-सवत् मालूम हो जाता है। मुसलमानोंमें जन्म और मृत्युपर तारीख़ कहनेका बहुत चलन है। जितनी अधिक जिसकी ख्याति होती है, उतनी ही अधिक तादादमें लोग उसकी तारीख़ें लिखते हैं। यहाँ तक कि बहुतसे तो अपने बच्चोंका नाम ही तारीख़ी रखते हैं। मरनेका तारीख़ी शेर क़ब्रपर लिख दिया जाता है। उर्दूके प्रसिद्ध कवि प० बृजनारायण 'चक-बस्त'के स्वर्गवासपर लोगोंने काफ़ी तारीख़ें कहीं। एक साहबने उनके ही एक मृत्यु सम्बन्धी मिसरेपर तारीख़ कहके कमाल कर दिया —

उनके ही मिसरेमें तारीख़ है हमराह 'अज़ा'।
"मौत क्या है, इन्हीं अजज़ाका परेशाँ होना"॥

नज़्म—नज़्मका अर्थ है मोतिया आदिको तागेमें पिरोना। नज़्मके बानी 'नज़ीर', 'हाली' और 'आज़ाद' माने गये हैं। ग़ज़लमें समूचे भावको

---

[1]ईरानके सूफ़ी कवि, पृ० ५३

एक ही शेरमें लाना पड़ता है, और इस तरह पूरी ग़ज़लके लिए अनेक विचारों और कल्पनाओंकी आवश्यकता रहती थी। जहाँ हज़ारों शायर हों, वहाँ नित नये विचार सूझना असम्भव है। हिर-फिरकर शब्दोंकी कतरब्योंतमें उन्हीं पुराने विचारोंसे शायरीको जीवित नहीं रखा जा सकता था। दूसरे, ग़ज़लमें क़ाफ़िया, रदीफ़ और व्याकरण आदिके ऐसे बन्धन थे कि जिसके सहारे इस इन्क़लाबी युगके साथ चलना क़तई नामुमकिन था। किसी घटनाको धाराप्रवाह कहनेकी ग़ज़लमें गुंजाइश न थी। इसीलिए नज़्मका आविर्भाव हुआ। धीरे-धीरे नज़्मोंमें भी अनेक तरहके विकास हुए। अब तो १४ लाइनके लघु छन्दोंमें, मुक्त छन्दोंमें, गीतोंमें उर्दू-शायर अपने भाव नज़्म करने (पिरोने) लगे हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें 'नवप्रभात' परिच्छेदसे इस तरहकी झाँकी मिलती है।

१५ अक्तूबर १९४६

ख़ुदा से जुदा

[भ्रामक शब्द]

नुक्तेके हेर-फेरसे उर्दूमें खुदासे जुदा पढ लिया जाता है। वकील अकबर इलाहाबादी तनिक-सी भूलसे—"कौंसिलोंमें सीट चाहिए"के बजाय "घासलेंमें बीट चाहिए" बन जाता है। भाषाकी अनभिज्ञतासे ऐसी मोटी और भद्दी भूल हो जाती हैं कि बाज़ दफा बडी मुँहकी खानी पडती है। सन् ३४ या ३५का मेरे सामनेका वाक्या है, देहलीके मिशन कालेजमें बडे जोशो-खरोशके साथ मुशायरेकी तैयारियाँ हुई थीं। हॉल खचाखच भरा हुआ था। नियत समयसे कुछ विलम्ब हुआ तो जनता तालियाँ पीटने लगी। तब आवेशमें मुशायरेके सयोजक बोले—"आप लोग ताम्मुल कीजिए अभी डाक्टर   साहबके अहतलामसे मुशायरा शुरू होनेवाला है। लोगोने सुना तो मारे कहकहोके आसमान सरपर उठा लिया। चारो तरफसे आवाजें कसी जाने लगी। सयोजक साहब भुनभुनाते हुए स्टेजसे खिसक लिये। तब मेरे ही सामने मेरे एक मित्रने उनसे कहा कि "भाईजान! आप अहतमाम (प्रबन्ध)के बजाय अहतलाम (स्वप्नदोष) कह गये थे। जनता तालियाँ न पीटे तो क्या करे?"

अब हम यहाँ पाठकोकी जानकारीके लिए थोडे-से ऐसे शब्द दे रहे हैं, जिनके तनिकसे हेर-फेरसे अर्थका अनर्थ हो जाता है। आशा है पाठक इससे लाभ उठाएँगे।

अजल = मृत्यु
अज़ल = अनादिकाल
अमीन = कुर्की और नाप करनेवाला सरकारी कर्मचारी

गोर	=	कब्र समाधि
गोर	=	कन्धारके पास एक नगरका नाम
ग़ौर	=	सोच विचार ध्यान
चर्ख	=	आसमान
चरखा	=	सूत कातनेवाला यन्त्र
जंग	=	लड़ाई
ज़ंग	=	लोहेपर लगनेवाला मोर्चा
जद	=	दादा नाना
ज़द	=	चोट लक्ष्य
जफर	=	यन्त्र और तावीज़ आदि बनानेकी कला
ज़फ़र	=	विजय
ज़बर	=	बलवान
जब्र	=	अत्याचार दबाव
ज़बान	=	जीभ
जवान	=	युवक
जर	=	खींचना
ज़र	=	धन
जरी	=	वीर
ज़री	=	सोनेके तारों आदिसे बना हुआ काम
जलील	=	बड़ा प्रतिष्ठित
ज़लील	=	तुच्छ अपमानित
जानी	=	जानसे सम्बन्ध रखनेवाला जैसे जानी दुश्‌
ज़ानी	=	व्यभिचारी
जारी	=	बहता हुआ प्रवाहित
ज़ारी	=	रोना धोना
जिन	=	भूत प्रेत

ज़िना	=	व्यभिचार
जिरह	=	हुज्जत, बहस
ज़िरह	=	कवच
जिला	=	चमक, दमक
ज़िला	=	डिस्ट्रिक्ट
ज़ियाँ	=	हानि, घाटा
ज़िया	=	प्रकाश
जीना	=	जीवित रहना
ज़ीना	=	सीढ़ी
जू	=	नदी, जलाशय, रखनेवाला
ज़ू	=	चमक
जेब	=	खीसा, पाकेट
ज़ेब	=	उपयुक्त, शोभा
जेल	=	कारागृह
ज़ैल	=	नीचेका भाग, दामन
ज़ोर	=	बल
जौर	=	अत्याचार
जौक़	=	सेना, भीड़
ज़ौक़	=	शौक, सुखपूर्वक
जौज	=	अख़रोट, जायफल, नारियल
ज़ौज	=	पति, जोड़ा
जौज़ा	=	मिथुन राशि
ज़ौजा	=	पत्नी
ज़ोफ़	=	दुर्बलता, मूर्च्छा
जौफ़	=	ख़ाली जगह, उदर
तसव्वुर	=	किसीका मनमें चित्र खींचना

तअम्मुल = ध्यानपूर्वक देखना
तेज = ओज, दीप्ति, (यह शब्द हिन्दी है)
तेज़ = फुर्तीला, तीक्ष्ण
दरबान = पहरेदार
दरमान = दवा
नाज = अन्न
नाज़ = अभिमान, नखरा
वक्त = पुष्ट मता, (दोनों श्रोग्गा)
बर्क़ = बिजली
शफ़ा = तन्दुरुस्ती
सफ़ा = स्वच्छ
शफ़ी = सिफ़ारिश करनेवाला
सफ़ी = पवित्र
शर = शरारत
सर = सिर
शाकी = शिकायत करनेवाला
साक़ी = शराब तक़सीम करनेवाला
शान = तड़क-भड़क
सान = धार, समान
शमा = चिराग
समा = आकाश
शायाँ = उपयुक्त
शाया = प्रकाशित
शारअ = आम सड़क
शारह = टीकाकार
शाल = दुशाला

साल = वर्ष
शाही = बादशाहोंका-सा
शाही = बाज पक्षी
शबाब = सौन्दर्य
सवाब = पुण्य
संग = पत्थर
सग = कुत्ता
सखी = दानी
सखी = सहेली
शहर = बड़ा नगर
सहर = प्रातःकाल
सहरा = जंगल
सेहरा = दूल्हाके मुंहपर फूलों या मोतियोंकी जो झालर डाली जाती है
सेहर = जादू
साई = प्रयत्न करनेवाला
साईं = फ़क़ीर
साकित = मौन
साक़ित = त्यक्त, निरर्थक
साकिन = निवासी
साक़िन = वह दुश्चरित्रा स्त्री जो भंग और हुक़्क़ा पिलाकर जीविका-उपार्जन करे
साज = सागूनका दरख़्त, तीतरकी तरह एक पक्षी
साज़ = सजावटका सामान, बाजे वग़ैरह
हुज्म = मोटाई
हज़्म = पेटमें पचा हुआ

हव्वा = आदमकी स्त्री

हब्बा = अन्न कण

इसके अतिरिक्त कुछ शब्द ऐसे हैं, जिनका अक्सर अशुद्ध उच्चारण होता है, जैसे कि—

शुद्ध	अशुद्ध
ज़ुकाम	जुखाम
फ़सील (क़िलेकी प्राचीर)	फ़शील
सबील (प्याऊ)	सवील, सफ़ील
ख़ालिस	निख़ालिस
लुत्फ़	लुफ़्त
लफ़्ज़	लब्ज़
रौनक़	रवनक़
हैरान	हरियान
दरअसल	दरअसलमें
रईस	रहीस
साईस	सहीस
मानी	मानी
मसला	अमला
मज़ा	मजा
ज़ुल्म	जुलम
जल्वा	जलवा
चादर	चद्दर
नुस्ख़ा	नुस्मा

२० अक्तूबर १९४९

तरंग
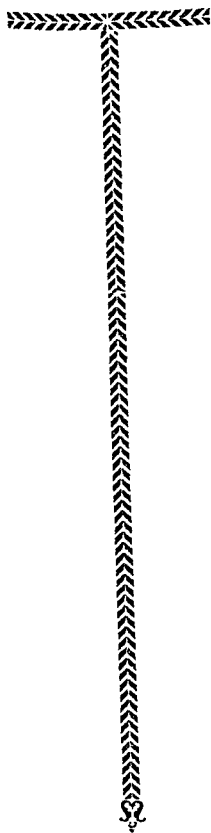
: २ :

[उर्दू-शायरीका मर्म]

[उर्दू-शायरीका मर्म]

कवि या लेखक जो कुछ लिखता है उसे हर जगह उसका निजी विचार या आप-बीती समझ लेना बहुत बड़ी भूल है। लेखक या कवि अपने चारों ओर जो कुछ देखता है, सुनता है, अनुभव करता है, या जरूरत महसूस करता है, उसे अपने रंगमें चित्रित कर देता है। यदि उसी चित्र-को कलाकारका चित्र समझ लिया जाय तो इससे अधिक कलाकारका और क्या अपमान होगा ?

इसी तरहकी समझसे तंग आकर प्रसिद्ध हास्य-लेखक मिर्ज़ा अजीमबेग चग़ताईने उर्दू-साहित्यके आलोचक डा० अन्दलीब शादानी एम० ए० पी०-एच०-डी०को ९ अक्तूबर १९४०के पत्रमें लिखा था :—

. . . . "मैं अफ़साने लिखता हूँ। कोई गुज़रा हुआ वाक़िया आँखोंसे देखा या सुना उठाकर लिख दिया। ख़्वाह वह अपनी मर्ज़ीके सख़्त ख़िलाफ़ ही क्यों न हो। मसलन मेरे नाविल 'कोलतार'के बाद 'आलूके भुरतेकी हीरोइन'। मैं ऐसी गधी औरतको ५ जूते मारने लायक़ समझता हूँ और हज़रत नक़्क़ाद (आलोचक) फ़र्माते हैं कि मैं तालीम देता हूँ कि औरत ऐसी ही हो। हालाँकि बस चले तो तालीम दूँ कि मार ५ जूते। ख़्वाजा हसन निज़ामी इस कोलतारके बाद 'अंजामे नफ़रत'को पढ़कर अख़बारमें तनक़ीद (समालोचना) करते हैं कि अज़ीमबेगने नसीहत दी है कि औरतें अकेली सफ़र न करें। हालाँकि मेरा दस्तूर और अमल यह है कि मैं जवान लड़कीको तनहा अलीगढ़से जोधपुर बुलाता और भेजता हूँ, और सख़्त हिदायत करता हूँ कि ऐसा ही करो। मुसीबत या आफ़त आये तो आने दो।

ओ-शरावपर उम्र भर लिखते रहे; क्योंकि ग़ज़लका क्षेत्र ही ये है। कोई कितना ही कल्पनाकी उड़ान ले अन्तमें उतरना उसे उसी क्षेत्रमें होगा। वक़ौल ग़ालिव :—

वनती नहीं है वादा-ओ-साग़र कहे वग़ैर।

उर्दू-शायरीमें कुछ पारिभाषिक शब्द ऐसे हैं जो वार-वार प्रयुक्त होते हैं, और जिनको समझे विना शायरीका मर्म समझमें नहीं आता। इन्हीं पारिभापक शब्दोंका प्रयोग करके उर्दू-शायर मनकी तरंगमें सव कुछ कह जाते हैं। अतः पुस्तक प्रारम्भ करनेसे पूर्व उनको जान लेना आवश्यक है। सुविधाके लिए हमने ऐसे शब्दोंको चार—गुलशन, मयख़ाना, इश्क़ और सहरा—शीर्षकोंमें विभक्त कर दिया है, और इन शीर्षकोंमें अधिकतर हमने उन शायरोंका कलाम दिया है, जिनको हम ३१ शायरोंकी निश्चित संख्याकी क़ैदके कारण प्रस्तुत पुस्तकमें नहीं दे सके हैं। हालाँ कि सौदा, आतिश, नासिख़, नसीम, रियाज़, साइल, वेख़ुद, आग़ा शाइर, कैफ़ी, साहिर, माइल, जलील, अज़ीज़, सफ़ी, ज़रीफ़, नूह, आरज़ू, दिल, अहसनमाहरहरवी, आदि जैसे वाकमाल उस्ताद और रविश सद्दीक़ी, विस्मिल इलाहावादी, वहज़ाद लखनवी, पं० हरिश्चन्द्र अख़्तर, त्रिलोकचन्द महरूम आदि जैसे लोकप्रिय कलाकारोंका पुस्तकमें उल्लेख न करना वड़ी भारी धृष्टता है। हम इनमेंसे कितने ही जीवित शायरोंको मुशायरोंमें वार-वार सुनकर भी नहीं अघाये। मगर संकलनकी कोई तो निश्चित संख्या रखनी ही थी। अतः इच्छा होते हुए भी चुना हुआ वहुत-सा कलाम मजवूरन छोड़ना पड़ा। इन शीर्षकोंमें उक्त शायरोंके १-१; २-२ शेर देनेका लोभ हम संवरण नहीं कर सके हैं। इसीलिए यह अध्याय आवश्यकतासे अधिक लम्वा हो गया है। पुस्तकमें उल्लिखित ३१ शायरोंका कोई शेर—प्रसंगवश इस परिच्छेदमें वही दिया गया है जो प्रायः अन्यत्र नहीं लिखा गया है।

गुलशन = पुष्प वाटिका

गुल	=	फूल, बुलबुलका प्रमपात्र ।
बुलबुल	=	मधुर बोलनेवाला सुन्दर पक्षी गुलपर आसक्त ।
आशियाँ	=	घोसला ।
कफस	=	पिंजरा ।
बागवाँ	=	बागका रक्षक, व्यवस्थापक ।
गुलची	=	फूल तोडनेवाला ।
सैयाद	=	अहेरी, शिकारी ।

इस गुलशनकी आडमें उर्दू शायरोंने बडे-बडे मर्मस्पर्शी तीर छोडे हैं, और इस खूबीसे कि हजारोंका खून हो जाय, मगर दामनपर दाग तक न आने पाय। शोषकों और पीडकोंके भयसे वास्तविक बात कहना, शापितों और पीडितोंको उनके कर्त्तव्यका ज्ञान कराना जब असम्भव हो जाता है तब कवि ऐसी सांकेतिक भाषामें अपने उद्गार प्रकट करता है कि उसका मूल उद्देश्य भी पूरा हो जाय और अत्याचारीको आभास भी न मिलने पाय, क्योंकि आभास होनेसे वह सावधान होकर और भी अधिक वगैर अत्याचार करने लगता है। गुलशनमें इसी तरहके राजनैतिक दाव देखनेको मिलते हैं। दरअसल —

चमन	=	वतन देश ।
गुल	=	परतन्त्र मनुष्यका प्रेम पात्र देश धन ।
बुलबुल	=	परतन्त्र मनुष्य ।
आशियाँ	=	परतन्त्र मनुष्यका घर ।
कफस	=	कारागृह ।
बागवाँ	=	देश रक्षक नेता ।

गुलचीं == अर्थ-लोलुप, देश-शत्रु ।

सैयाद == अधीन करनेवाला विदेशी विजेता है ।

इन रूपकोंको ध्यानमें रखते हुए आइये गुलशनकी सैर कीजिए ।

चमन

देश जब समृद्धिशाली था, सुख-वैभवका सब सामान था, तब भी हमें हमारा देश प्रिय था, और आज यह उजाड़ दिया गया है तब भी हमारे दिलोंमें वही प्यार है। हम उसके बाह्य रंग-रूपपर मोहित नहीं, हमें तो जन्मजात उससे दिली मुहब्बत है ।

बूएख़िज़ाँसे[1] मस्त हैं, याद हमें बहार क्या ?
हम तो चमन परस्त हैं, फूल कहाँके ख़ार[2] क्या ??

—फ़ानी बदायूनी

देशकी आन्तरिक स्थिति इतनी विषाक्त हो चुकी है कि कारागृहमें पड़े हुए लोग भी यहाँकी हालतको देखकर कराह उठते हैं :—

नहीं मालूम किस हालतमें हूँ मैं दाग़े आलममें ।
क़फ़सवाले[3] भी मुझको देखकर फ़रियाद करते हैं ।।

—साक़िब लखनवी

ऐसे भी लोग हैं जो विदेशी बन्धनको ज़ेवरकी तरह अपना लेते हैं । विदेशोंमें ही रहकर गुलामीको ही अपने वतनपर तरजीह देते हैं :—

ख़ुदफ़रामोश[4] क़फ़समें हैं, चमन याद नहीं ।
ग़ैरके[5] हो गये ऐसे कि वतन याद नहीं ।।

—साक़िब लखनवी

---

[1]पतझड़की गन्धसे; [2]काँटे; [3]पिंजरेमें बन्दपक्षी; कारागृही; [4]अपनेको भूले हुए; [5]शत्रुके ।

गुल

जब ऱ्गाम कोई उन्मादवद्धक और गणज नहीं होता ना गणा यें ना अविकसित द्गाम मर्भा जाते ऱ। उन अपन वमालात निखानरा अवमर ही नगी मिन पाना ऱ —

हजारों साल नर्गिस[1] अपनी बनूरी[2] प रोती ह ।
बडी मुश्किलसे होता ह चमनमें दीदावर[3] पदा ॥

—इकबाल

जिस दगाम पारखी नही वनां नररत्न उत्पन्न होन वन हा जात ह। विकसित होन—कुछ कर गजरनका अवमर ही विचारोका नगी मिल पाना

कोई इन फूलोकी किस्मत देखना ।
जिन्दगी काटोम पलकर रह गई ॥

—अर्शी भोपाली

गुञ्चोके मुस्करान य कहते ह हसके फूल—
अपना करो खयाल हमारी तो कट गई ॥

—शाद अजीमाबादी

भिन्न भिन्न पहलुओपर कतिपय अगआर —

शाखोसे बर्गे गुल नहीं झडते ह बाग्राम ।
जवर उतर रहा ह उरूसेबहारका[4] ॥

—अमीर मीनाई

---

[1] एक फूल जिसकी उपमा उर्द गायर मुन्दर आँखके लिए देते ह। [2] ज्योतिहीनता

[3] दर्शनवाला ।

[4] बहाररूपी दुल्हनका ।

सुबहको राज़[1] गुलो शबनम खुला।
हँसनेवाले रात भर रोते रहे॥

—साक़िब लखनवी

रफ़ीक़ोंसे[2] रक़ीब[3] अच्छे जो जलकर नाम लेते हैं।
गुलोंसे ख़ार[4] बेहतर है जो दामन थाम लेते हैं॥

—अज्ञात

बूये गुल फूलोंमें रहती थी, मगर रह न सकी।
मैं तो काँटोंमें रहा और परेशाँ न हुआ॥

—साक़िब लखनवी

बुलबुल

इसे गुलदम और अन्दलीब भी कहते हैं। यह फूलोंको प्यार करती है। फूलोंका तनिक-सा भी अनिष्ट इसे मृत्युसे अधिक वेदना पहुँचाता है। गुलके किंचित मात्र कुम्हलानेसे यह बेचैन हो उठती है। भला ऐसा कौन देश-प्रेमी होगा जिसे अपने देशकी वस्तु-क्षतिसे आघात न पहुँचे? इसी प्रेमको किस ख़ूबीसे अमीर मीनाई साहब बयान करते हैं:—

झाड़नी है कौनसे गुलकी नज़र?
बुलबुलें फिरती हैं क्यों तिनके लिये?

उसके प्रेम-पात्रसे कोई अन्य प्रेम करने लगे यह भी उसे बर्दाश्त नहीं:—

फट पड़ा एक आस्माँ बुलबुलके दिलपर रातको।
रख दिया फूलों पै मुँह शबनमने[5] जिस दम प्यारसे॥

—साक़िब लखनवी

---

[1] भेद; [2] मित्रोंसे; [3] शत्रु, प्रतिस्पर्द्धी;
[4] काँटे; [5] ओसने।

फूलोंके नष्ट होनेपर बेचारी बुलबुल सुध-बुध भूल बैठी है। मगर शायरके वह जान न दे दे अपने कर्तव्यको न भूल बैठे, इसी ख़यालसे फ़रमाते हैं —

> आ अन्दलीब[1]! मिलके करें आहो-ज़ारियाँ।
> तू हाय गुल पुकार, मैं चिल्लाऊँ हाय दिल॥

शायद रातभर दिन-दूना हो नाम और मुश-बुलबुल का नाम।
आशियाँ

उसकी वास्तविक स्थिति इतनी विगड़ चुकी है कि—

> दिल घुट रहा है आपसे अपने आशियानेमें।
> अच्छी नहीं चमनकी हवा इस ज़मानेमें॥
> —साक़िब लखनवी

चार दिनके संयम भी आगका सामना दिखाई देता था। क्या ख़ूब फ़र्माया है —

> चार दिनकी इस बुलन्दीमें भी थी पस्ती निहाँ।
> आशियानेसे नज़र आता था घर सैयादका॥
> —साक़िब लखनवी

पस्त-ख़याली मजबूर क़फ़समें अपनी घासफूसकी झोपड़ी भी प्रिय मालूम होती है —

> क़फ़सकी[2] तीलियाँ अच्छी हैं तिनकोंसे नशेमनके[3]।
> यह सब कुछ है मगर सैयाद! तिनपर क्या इजारा है?
> क़फ़स-ओ-आशियाँका फ़र्क़ ऐ सैयाद! सुन मुझसे।
> यह तेरी दस्तकारी है उसे मैंने बनाया है॥
> —साक़िब लखनवी

---

[1]बुलबुल [2]रोना चिल्लाना [3]पिंजड़ी [4]घोंसले घोंसलेका।

.रायें क़ब्ज़ेमें होनेसे तो घरका विध्वंस होना अच्छा :—

जब मैं नहीं तो बाग़में इसका मुक़ाम क्यों ?
अच्छा हुआ कि लग गई आग आशियानेमें ॥

—साक़िब लखनवी

हमारे घरपर और अधिक सितम न ढाये गये, इसका कारण कुछ और है, शत्रुका दयाभाव नहीं। अब हममें भी अत्याचारोंको रोकनेकी, नष्ट करनेकी शक्ति आगई है; इसीलिए शत्रु छेड़ते हुए झिझकता है :—

गिरी न बर्क़[1] कुछ, इस ख़ौफ़से मेरे होते।
तड़पके आग बुझा दूँ न आशियानेकी ॥

—फ़ानी बदायूनी

और देखिये :—

इक मेरा आशियाँ है कि जलकर है बेनिशाँ।
इक तूर है कि जबसे जला नाम हो गया ॥

—साक़िब लखनवी

गुलशनसे उठके मेरा मकाँ दिलमें आ गया।
इक बाग़ बन गया है नशेमन जला हुआ ॥

—साक़िब लखनवी

बहारोंमें यह होश ही कब रहा था।
कि जलती है क्या शै[2], कहाँ आशियाँ है ॥

—मदहोश ग्वालियरी

उस साल फ़स्ले गुलमें उजड़ा था बनते-बनते।
रहता तो आशियाँको अब एक साल होता ॥

—आसी लखनवी

---

[1] बिजली; [2] चीज़।

तामीरेआशियांसे[1] मैंने यह राज[2] पाया।
अहलेनवाके[3] हकमें बिजली है आशियाना॥

—इकबाल

कफस=पिंजरा, कारागृह

हम कारागृहमें जानबूझकर आये हैं और अपने मनमें चुपचाप सब सहन कर रहे हैं। सैयादका किसी तरह दिल न दुखे, इसी हमारे विचार (आन्दोलन)ने हमें मजबूर कर दिया है। उसे अपने बाहुबलपर अधिक नहीं इतराना चाहिए —

दरेकफस[4] न खुला, कद्रेसब्रकर[5] सैयाद!
तड़पने हम तो पहाड़ोंमें रास्ता करते॥

कारागृहमें बन्द हैं फिर भी घरका प्यार बना हुआ है —

हो गये बरसों कि आँखोंको खटक जाती नहीं।
जब कोई तिनका उड़ा, घर अपना याद आया मुझे॥

—साकिब लखनवी

वतनके लिए जल जाएँ और अपने ही लोग हँसी उड़ाएँ मानो हमारी गुलामी दूसरोंके लिए तमाशा है —

कदेगम भी दिल लगी है हँसनेवालोंके लिये।
अन्दलीब आकर कफसमें इक तमाशा हो गई॥

बन्द और चमन —

गुलशन बहारपर था नशेमन बना लिया।
मैं क्यों हुआ असीर[6] मेरा क्या कुसूर था?

---

[1] घोंसलेके निर्माणसे [2] भेद [3] मधुर स्वरवालोंके,
[4] पिंजरेका दर्वाजा [5] सन्तोषका आदर कर [6] गिरफ्तार।

मेरी क़ैदका दिलशिकन[1] माजरा[2] था।
बहार आई थी, आशियाँ बन चुका था॥
आफ़तेदहरको[3] क्या ख़ुफ़्ता-ओबेदारसे[4] काम ?
क़ैद होनेसे न समझो कि मैं हुश्यार न था॥

—साक़िब लखनवी

हमीं नावाक़िफ़े रस्मेचमन थे ऐ क़फ़सवालो !
फ़लकसे अहद[5] ले लेते तो फ़िक्रे आशियाँ करते॥

—आसी लखनवी

वाग़बाँ

बाग़की रक्षा करनेवाला और गुलोंको सींचनेवाला। यह बुलबुलका एक तरहसे तरफ़दार समझा जाता है; किन्तु जब कभी यह फूलोंके तोड़ने आदिका काम करता है, तो बुलबुल इसे भी अपना शत्रु समझ लेती है। फूल तोड़ना तो दरकिनार, इसकी बेपरवाहीसे भी अगर गुलशनका कुछ नुक़सान होने लगता है तो वह भी बुलबुलको बर्दाश्त नहीं होता :—

दस्तेगुलचीं क़त्ले आमे लालओ गुल मी कुनद।
बाग़बाँ दर सहने गुलशन, मस्ते ख़्वाब उफ़तादाअस्त॥

(बुलबुल मन-ही-मनमें कुढ़ती हुई कह रही है—गुलचींके हाथसे बाग़में क़त्ले आम हो रहा है और बाग़बाँ फिर भी गुलशनमें मीठी नींद सो रहा है।)

निशाने बर्गेगुल[6] तक भी, न छोड़ इस बाग़में गुलचीं !
तेरी क़िस्मतसे रज़मआराइयाँ[7] हैं बाग़बानोंमें।

—इक़बाल

---

[1] दिल तोड़नेवाला; [2] दृश्य; [3] सांसारिक आपदाओंको; [4] सोये हुओं और जागे हुओंसे; [5] प्रतिज्ञा, घोंसला न जलानेका आश्वासन; [6] फूलकी पँखुड़ी; [7] लड़ाई-झगड़े।

होता नहीं है कोई। बुरे वक़्तमें शरीक।
पत्ते भी भागते हैं ख़िज़ाँमें[1] शजरसे[2] दूर॥
—अज्ञात

सियहबख़्तीमें[3] कब कोई किसीका साथ देता है।
कि तारीकीमें[4] साया भी, जुदा रहता है इन्साँसे॥
—नासिख़

कौन होता है बुरे वक़्तकी हालतका शरीक।
मरते दम आँखको देखा है कि फिर जाती है॥
—अज्ञात

दोस्तोंसे इसक़दर सदमे उठाये जानपर।
दिलसे दुश्मनकी अदावतका गिला[5] जाता रहा॥
—आतिश

यह ग़म नहीं है वह जिसे कोई बटा सके।
ग़मख़्वारी[6] अपनी रहने दे ऐ ग़मगुसार[7]! बस!!
दें ग़ैर दुश्मनीका हमारी ख़याल छोड़।
याँ दुश्मनीके वास्ते काफ़ी है यार बस॥
—हाली

गुलचीं=फूल चुननेवाला

यह बुलबुलको क़तई पसन्द नहीं, क्योंकि यह उसके माशूक़ों (गुलों)को नष्ट करता है। इसके इस व्यवहारसे बुलबुलको मर्मान्तिक पीड़ा होती है।

---

[1]पतझड़में; [2]पेड़से; [3]दुर्दिनोंमें; [4]अँधेरेमें; [5]शिकायत; [6]हमदर्दी; [7]हमदर्द।

वाए[1] क़िस्मत! कि चमनमें हूँ, मगर शाद[2] नहीं।
ज़ोरेगुलचीं[3] मुझे क्या कम है, जो सैयाद नहीं॥
—रहमत अतकावली

सैयाद

ये हज़रत बुलबुलको उससे आशियाना छुड़ाकर क़फ़समें बन्द किये रहते हैं। बुलबुलको सताना ही इनका ध्येय है। यह गुलशन उजाड़ते हैं आशियाँको आग लगाते हैं, बुलबुलको जैसे भी बने व्यथा पहुँचाते रहते हैं। क़फ़समें बन्द बुलबुल परतन्त्रताके बन्धनमें घबराकर सैयादके आगे गिड़गिड़ाते हुए कहती है —

आज़ाद मुझको कर दे, ओ क़ैद करनेवाले।
मैं बेज़बाँ हूँ क़ैदी, तू छोड़कर दुआ ले॥
—इक़बाल

स्वतन्त्रताकी चाहमें उसे यह भी ध्यान नहीं रहा कि स्वतन्त्रता माँगनेसे नहीं मिलती, वह तो छीनी जाती है —

बना लेता हूँ मौजेख़ूँ[4] दिलसे इक चमन अपना।
वह पाबन्देक़फ़स[5] जो फ़ितरतन[6] आज़ाद होता है॥
—असग़र गोण्डवी

जो स्वतन्त्रताको जन्मसिद्ध अधिकार समझते हैं, वह कारागृहमें बन्द होते हुए भी अपने रक्तसे सींचकर सब कुछ कर गुज़रते हैं।

रोने और गिड़गिड़ाने तो वही हैं जिन्हें स्वतन्त्रताकी भूख नहीं लगी —

---

[1]हाय [2]ख़ुश [3]गुलचींका अत्याचार [4]हृदय रक्तकी लहरोंसे [5]क़ैदी [6]जन्मतः स्वभावतः।

यह सब नाआश्नाये[1] लज्जतेपरवाज[2] हैं शायद।
असीरोंमें[3] अभीतक शिकवयेसैयाद[4] होता है॥

—असग़र गोण्डवी

पराधीन पंछी जब विवश हो जाता है, अत्याचार सहन करते-करते जब तंग आ जाता है और उनके निराकरणका कोई उपाय नहीं सूझता तब उसका भी मन होता है कि अत्याचारीको भी कुछ हाथ लग जाएँ; ताकि वह अब अधिक अत्याचार न कर सके। वर्षोंकी मनोकामना और परिश्रमके बाद साधन भी जुटे, मगर बेसूद :—

बर्क़[5] गिरनेको गिरी लेकिन जरा बचकर गिरी।
आँच तक आने न पाई खानयेसैयाद[6] पर॥

—बर्क़

हायरे दुर्भाग्य! शत्रुपर बिजली तो गिरी, मगर तनिक हटकर गिरी, उसे आँचतक न आने पाई। तनिक-सा भी झुलस जाता तो कुछ तो आत्म-सन्तोष होता। वर्षोंके प्रयत्न इस तरह धूलमें मिलते देख शोषित और पीड़ितको कितनी वेदना होती है, व्यक्त नहीं की जा सकती।*

शत्रु परस्पर लड़ाई-झगड़ेमें लिप्त हो जाएँ, यह संवाद भी पराधीनोंके लिए आह्लादकारक है; क्योंकि इससे शत्रुओंमें निर्बलता आयेगी और इससे स्वतन्त्र होनेका अवसर मिल सकता है :—

---

[1]अनभिज्ञ; [2]उड़नेके आनन्दसे; [3]क़ैदियोंमें; [4]सैयादकी शिकायत; [5]बिजली; [6]सैयादके घरपर;

*अमर शहीद भगतसिंहने जब साइमन कमीशनपर बम फेंका था और निशाना ख़ता हो गया था, उन्हीं दिनो एक ग़ज़लमें उक्त शेर पढ़ा था।

सुनते हैं गुलचींसे झगड़ा हो गया सैयादका।
हमसफ़ीरो[1] आज मौक़ा है मुबारिकबादका॥

—दाग़

किसी भी जाँनिसारका बलिदान व्यर्थ नहीं जाता। वह बलिदान वतन रूपी चमनको सींचनेमें खाद और पानीका काम देता है —

चमन सँवारनेमें सींचा यहाँ तक ख़ूने बुलबुलसे।
कि आख़िर रंग बनकर फूट निकला आरिज़ेगुलसे[2]॥

—अज्ञात

क़ैद और नमूने —

न तड़पनेकी इजाज़त है न फ़रियादकी है।
घुटके मर जाऊँ, यह मर्ज़ी मेरे सैयादकी है॥

—शाद

गलेपै छुरी क्यों नहीं फेर देते।
असीरोंको बेबालोपर करनेवाले॥

—यगाना चंगेज़ी

यहाँ कोताहिये[3] ज़ौक़ेअमल[4] है ख़ुद गिरफ़्तारी।
जहाँ बाज़ू सिमटते हैं वहीं सैयाद होता है॥

—असग़र गोण्डवी

कल बहुत नाज़ाँ[5] उरूजेबख़्तपर[6] सैयाद था।
बात इतनी थी कि मैं था क़ैद, वह आज़ाद था॥

—साक़िब लखनवी

---

[1]एक ही प्रकारकी बोली बोलनेवाले साथी, [2]फूलके कपोलोंसे, [3]कमी [4]कर्त्तव्यका चाव, [5]अभिमानी [6]भाग्यकी बुलंदीपर।

मैं तो था मजबूर कफ़सेपर कि था पाबन्दे इश्क़ ।
कोई पूछे बागमें क्या काम था सैयादका ?

—साकिब लखनवी

मेरे सैयादको तालीमकी है धुन गुलशनमें ।
यहां जो आज फँसता है वो कल सैयाद होता है ॥

—अकबर इलाहाबादी

मयखाना=मधुशाला

झिझकिये नहीं, जब आ ही गये तो खुलकर बैठिये। यहाँ ऊँच-नीचका भेद-भाव नहीं। ज़ाहिद[1], नासेह[2], शेख[3], और वाइज़[4] की परवा न कीजिये। वे तो यहाँ स्वयं ही चोरी-चुपके आते हैं और [illegible] दुम दबाकर भाग जाते हैं। यह बुज़ुर्ग तो पीरमुगाँ[5] हैं। इनकी कृपादृष्टि तो ग़रीब-अमीर सबपर एकसी रहती है। ये जो सुराही लिये आ रहे हैं, यही साक़ी[6] हैं। उधर वे रिन्द[7] बैठे हुए हैं। उनके हाथोंमें साग़िर[8] और पैमाने[9] हैं जिनमें सर्व मय भरी हुई है। उधर ये शराबसे भरे हुए खुम[10] और कदू[11] रक्खे हुए हैं। जब उमरख़य्याम और हाफ़िज़ ज़िन्दा थे, यहीं रोज़ आते थे। यहाँके बारेमें जो उन्होंने लिखा है, वह देखिये दीवारोंपर चारों तरफ़ सुनहरे पानीसे अंकित है —

१—एक प्रभातकालमें मेरे मदिरालयसे एक आवाज़ मेरे कानोंमें पड़ी कि ऐ मेरे मनचले मदिरा-प्रेमी! उठ-बैठ, आ जीवन प्याला भर जानेसे पहले ही हम उस ईश्वरके प्रेमरूपी प्यालेका पान करें। मृत्यु होनेसे पहले ही उससे लगन लगा लें।'

२—प्रणयकी मदिरा हमें बहुत लाभ पहुँचाती है। उससे हमारे शरीर तथा प्राणोंको शक्ति प्राप्त होती है। उसके पीनेसे रहस्योंका पता लग जाता है। बस मैं उस मदिराकी केवल एक बूँद चाहता हूँ।

---

[1]सब दुष्कर्मोंसे बचकर ईश्वरका उपासक [2]उपदेशक, [3]इस्लाम धर्मका आचार्य [4]धर्मोपदेशक [5]मधुशाला-संचालक, [6]मदिरा वितरक प्रेमी [7]शराबी [8-9]शराब पीनेके पात्र [10-11]शराबके मटके—घड़े।

उसके उपरान्त न तो मुझे संसार अथवा जीवनकी ही चिन्ता रहेगी, और न मृत्युकी ।

४९—प्रणयीको समस्त दिन प्रणयमें ही मतवाला रहना चाहिए । उसे पागल, व्याकुल होकर भटकते रहना चाहिए । होशमें प्रत्येक वस्तु-की चिन्ता घेरे रहती है: परन्तु मतवाला हो जानेपर सभी वस्तुओंका ध्यान मस्तिष्कसे दूर हो जाता है । यदि किसी वस्तुका ध्यान रहता है तो उसीका, जिसने मतवाला बना दिया है ।

५०—इस प्रणयके मदिरागृहकी सूचीमें सबसे पहले मेरा ही नाम है । मस्ती और मदिरा मेरे ही हिस्सेमें आ पड़ी है । शराब विक्रेताओंके इस घरमें जो कुछ है मैं ही हूँ । मैं ही शरीर और मैं ही प्राण हूँ । इन समस्त संसारकी सूरतोंमें केवल मैं-ही-मैं हूँ ।

५२—यदि किसी पहाड़को मदिरा पिला दो तो वह भी हिलने लगे । इसलिए जो उसे बुरा बतलाता है वह स्वयं बुरा है । मुझे मदिरा पीनेसे क्यों रोकते हो ? यह तो ऐसी वस्तु है जिसके द्वारा ईश्वरसे मिलनेका सौभाग्य प्राप्त होता है ।[1]

—उमर ख़ैय्याम

"यह नेकी, सच्चाई और पवित्रताका मार्ग तुम्हारे लिए ही मुबारिक रहे, मैं मदिरागृह, जनेऊ और मन्दिर तक पहुँचनेवाला मार्ग हूँ ।"

"ऐ पवित्र हृदय साधु ! मुझे मदिरा-पानसे न रोक । जिस समय मैं उत्पन्न हुआ था, उस समय स्रष्टाने मेरी मिट्टीको मदिरासे ही गूँधा था ।"

"चाहे जितना भी पवित्र मनुष्य क्यों न हो, लेकिन तबतक वह स्वर्गमें

---

[1] उमरख़ैयामकी फ़ारसी रुबाइयोंका अनुवाद 'ईरानके सूफ़ी कवि', पृ० ५२-६४से ।

यहाँ फसानये दैरो[1] हरम[2] नहीं 'असग़र'।
यह मैकदा[3] है यहाँ बेख़ुदीका आलम है॥

—असग़र गोण्डवी

हंगामा है क्या बरपा, थोड़ी-सी जो पी ली है।
डाका तो नहीं मारा, चोरी तो नहीं की है॥

—अकबर इलाहाबादी

सदसाला[4] दौरेचर्ख़[5] था साग़िरका एक दौर।
निकले जो मैकदेसे[6] तो दुनिया बदल गई॥

× × ×

यह काली-काली बोतलें जो हैं शराबकी।
रातें हैं उनमें बन्द हमारे शबाबकी[7]॥

× × ×

मय[8] छीनकर किसीसे जो पीते तो थी ख़ता।
जब दाम देके पी तो, गुनह क्या किसीका था?

—रियाज ख़ैराबादी

पीता नहीं शराब कभी बेवज़ू किये।
क़ालिबमें[9] मेरे रूह[10] किसी पारसाकी[11] है॥

—आबरू

सोनेवालोंको क्या ख़बर ऐ रिन्द[12]!
क्या हुआ एक शबमें, क्या न हुआ?

—साक़िब लखनवी

---

[1] मन्दिर; [2] मस्जिद; [3] शराबघर; [4] सौ वर्ष, एक सदी; [5] आसमानका दौर; [6] शराबख़ानेसे; [7] यौवनकी, सौन्दर्यकी; [8] शराब; [9] शरीरमें; [10] आत्मा; [11] पवित्रात्माकी; [12] शराबी।

रोज पीते हैं सुबूही भी अदा करके नमाज़।
फ़र्क़ आजाय तो पाबन्दिये ग्रीवान ही क्या ?

—दाग़

अर्ज़ां हो रही है पिला जल्द साक़ी।
इबादत[1] करूँ आज मख़्मूर[2] होकर ॥

—अज्ञात

दिनमें चर्चे ख़ुल्दके[3] शबमें मये कौसरके ख़्वाब।
हम हरममें आ रहे मयख़ाना वीरां देखकर ॥

—*रियाज़ ख़ैराबादी*

ज़ाहिद—

ज़ाहिदको ढेढ ईंटकी मस्जिदपै ये ग़रूर।
वह भी ख़ुदाके फ़ज़्लसे[4] घरका मकां नहीं ॥

—अज्ञात

हुआ है चार सिजदोंपर[5] यह दावा ज़ाहिदो तुमको।
ख़ुदाने क्या तुम्हारे हाथ जन्नत बेच डाली है ?

—दाग़

लुत्फ़ेमय तुझसे क्या कहूँ ज़ाहिद !
हाय, कमबख़्त ! तूने पी ही नहीं ॥

—दाग़

है नमाज़ उन ज़ाहिदोंकी ज़ौफ़ेईमांकी[6] दलील।
सामने अल्लाहके जाते हैं उठते-बैठते ॥

—अमीर मीनाई

---

[1] नमाज़ अदा [2] तन्मय मस्त [3] जन्नतके [4] कृपासे, [5] ईश्वरके नामपर नतमस्तक होनेपर, [6] ईमानकी कमजोरीकी।

क़दम रखना सम्हलकर महफ़िले रिन्दांमें ऐ ज़ाहिद !
यहां पगड़ी उछलती है, इसे मयख़ाना कहते हैं ॥
—अज्ञात

बोतल खुली जो हज़रते ज़ाहिदके वास्ते ।
मारे ख़ुशीके काग भी दो गज़ उछल गया ॥
—क़ैसर देहलवी

नासेह—

मस्जिदमें बुलाता है हमें नासहे नाफ़हम[1] ।
होता अगर कुछ होश तो मयख़ाने न जाते ॥
—दाग़

हज़रते नासेह गर आएं दीदओ दिल फ़र्शे राह ।
कोई मुझको यह तो समझा दे वोह समझायेंगे क्या ?
—ग़ालिब

शेख़—

बाक़ी है मनमें शेख़के हसरत गुनाहकी ।
काला करेगा मुँह भी जो दाढ़ी सियाह की ॥
—ज़ौक़

शेख़ने मस्जिद बना मिसमार[2] बुतख़ाना किया ।
तब तो यक सूरत भी थी अब साफ़ वीराना किया ॥
—नसीम

सिधारें शेख़ काबेको हम इँगलिस्तान देखेंगे ।
वह देखें घर ख़ुदाका हम ख़ुदाकी शान देखेंगे ॥

---

[1] बेअक़्ल; [2] विध्वंस, नष्ट-भ्रष्ट ।

तुम नाक चढ़ाते हो मेरी बातपै ऐ शेख़ !
खींचूंगा किसी रोज़ मैं अब कान तुम्हारे ॥

×　　×

खिलाफ़े शरअ[1] कभी शेख़ थूकता भी नहीं।
मगर अन्धेरे-उजालेमें चूकता भी नहीं ॥

—अक्बर इलाहाबादी

ऐ शेख़ ! गो नहीं हैं कोई जीशऊर[2] हम।
इतना तो जानते हैं कि तुम बेशऊर हो ॥

—जोश मलसियानी

दहरकी[3] तहक़ीरकर[4] इतनी न ऐ शेखेहरम[5] !
आज काबा बन गया कलतक यही बुतखाना था ॥

—अमीर मीनाई

शेख़ हो या बिरहमन, माबूद[6] है सबका वही।
एक है दोनोंकी मंज़िल, फेर है कुछ राहका ॥

—अज्ञात

लड़ते हैं जाके बाहर यह शेख़ और बिरहमन।
पीते हैं मयकदेमें[7] साग़र बदल-बदलकर ॥

—प० जिनेश्वरदास जैन, माइल देहलवी

वाइज़—

फ़र्क क्या वाइज़ो आशिक़में बताएँ तुमको ?
उसको हुज्जतमें कटी इसको मुहब्बतमें कटी ॥

—अक्बर इलाहाबादी

---

[1]कुरआनके खिलाफ़ [2]अक़्लमन्द [3]मन्दिरकी, [4]अपमान; [5]मस्जिदका आचार्य [6]ईश्वर, [7]शराबखानेमें

दरेमयख़ाना[1] चौपट है, तहज्जुदकी[2] हुई चोरी।
निरे टूटे हुए शीशे, फ़क़त झूठे पियाले हैं॥
गुमाँ किसपर करें मयकश, इधर वाइज़ उधर सूफ़ी।
ख़ुदा रक्खे मुहल्ले में सभी अल्लाहवाले हैं॥

—नवाब साइल देहलवी

हमें तो हज़रते वाइज़की ज़िदने पिलवाई।
यहाँ इरादये नोशेमुदाम[3] किसका था?

—दाग़

मजलिसेवाज़[4] तो तादेर[5] रहेगी क़ायम।
यह है मयख़ाना अभी पीके चले आते हैं॥

—सम्भवतः क़ायम चाँदपुरीका शेर है।

छिपाकर बहुत पी है मस्जिदमें वाइज़।
यह जर्फ़ेवज़ू[6] सब खँगाले हुए हैं॥

—रियाज़ ख़ैराबादी

बिरहमन—

बिरहमन नालयेनाक़ूस[7] मस्जिद तक भी पहुँचा दे।
बुरा क्या है मुअज़्ज़िन[8] भी अगर बेदार[9] हो जाये॥

—हफ़ीज़ जालन्धरी

---

[1]शराबख़ानेका दरवाज़ा; [2]रात्रिका पिछला पहर, वह नमाज़ जो आधीरातके बाद पढ़ी जाती है; [3]मुतवातिर पीनेका; [4]व्याख्यान-सभा; [5]काफ़ी अर्सेतक; [6]नमाजिओंके मुँह धोनेके बर्तन; [7]शंखकी आवाज़; [8]अज़ान देनेवाला; [9]सचेत, जागरूक।

इश्क़=प्रेम, आसक्ति

देखिए, इस मकतब (स्कूल)में ज़रा सोच-समझकर क़दम रखिए, ऐसा न हो कि फिर आपको पछताना पड़े। क्योंकि —

मकतबे इश्क़का दुनियामें निराला है सबक़।
उसको छुट्टी न मिली, जिसको सबक़ याद हुआ॥

जी हाँ! इस मकतबका उसूल दूसरे मकतबोंसे बिल्कुल अनोखा है। अन्य सब मकतबोंमें सबक़ याद होनेपर छुट्टी मिल जाती है, और यहाँ जिसने एक बार सबक़ याद कर लिया उसे फिर जीते जी कभी छुट्टी नहीं मिली।

हाँ, हाँ, शौक़से इस कूचेकी सैर कीजिए, आपको रोकता कौन है? और चेहरेपर जबतक दो चुल्लू खून है, जेबमें बाप-दादाका कमाया हुआ रुपया है, तब आप किसीका कहना मानने भी क्यों? आपकी आँखें साफ़ कह रही हैं —

नासहा! मत कर नसीहत, दिल मेरा घबराये है।
वह मुझे लगता है दुश्मन, जो मुझे समझाये है॥

भला मुझे क्या ग़रज़ पड़ी है साहब! जो मैं आपको समझाकर मुफ़्तमें दुश्मनी मोल लूँ?

इस कूचेमें मकतब इश्क़के दो हैं: १—हक़ीक़ी इश्क़ (ईश्वरीय प्रेम), २—मजाज़ी इश्क़ (सांसारिक प्रेम)।

बहुत बेहतर, आप दोनोंकी ही सैर कीजिए। मगर मेरी नाक़िस रायमें पहले वहाँ फँसे हुए तालिबइल्मों (विद्यार्थियों)की हालत देख लीजिए, फिर अपने बारेमें कोई फ़ैसला कीजिए।

हक़ीक़ी इश्क़

हाँ, हाँ, यही सामनेवाला मकतबे-इश्क़ेहक़ीक़ी है। और वह देखिये सब बाआवाज बुलन्द गया फ़र्मा रहे हैं: —

मोमिन—

असरेग़म[1] ! ज़रा बता देना।
वोह बहुत पूछते हैं, "क्या है इश्क़" ?

शेफ़्ता—

शायद इसीका नाम मुहब्बत है 'शेफ़्ता'।
इक आग-सी है सीनेके अन्दर लगी हुई।।

बेख़ुद देहलवी—

इस इश्क़ो आशिक़ीके मज़े हमसे पूछिये।
दौलत लुटाई, रंज सहे, खो दिया शबाब।।

आतिश—

ख़ुदा याद आगया मुझको, बुतोंकी[2] बेनियाज़ीसे[3]।
मिला जामेहक़ीक़त[4] जीनयेइश्क़ेमजाज़ीमें[5]।।

शाकिर मेरठी—

शौक़े नज्जारा था जब तक, आँख थी सूरत परस्त।
बन्द जब रहने लगी, पाए हक़ीक़तके मज़े।।

माइल देहलवी—

अपनी तो आशिक़ीका क़िस्सा ये मुख़्तसिर है।
हम जा मिले ख़ुदासे, दिलबर बदल-बदलकर।।

---

[1] विपदाओंके चिन्हों; [2] पत्थर-हृदय, प्रेम-पात्र, मूर्तियों; [3] उपेक्षासे। [4] ईश्वरीय मार्ग; [5] सांसारिक प्रेमकी सीढ़ीमें।

असग़र—

हक़ीक़ी इश्क़की इश्क़े मजाज़ी पहली मंज़िल है।
चलो सूये ख़ुदा ऐ ज़ाहिदो! बूएबुतां[1] होकर॥

अकबर मेरठी—

क्यों न हो इश्क़े मजाज़ीमें हक़ीक़ीको फ़रोग़[2]?
बन गया काबा वहां पहले जहां बुतख़ाना था॥

असग़र—

खो गये जब तेरा मकां देखा।
मिट गये जब तेरा निशां देखा॥

× × ×

दुनियासे हाय धोके चले कूए यारमें।
जाइज़ नहीं तवाफ़ेहरम[3] बेवज़ू किये॥

ग़ालिब—

ईमां मुझे रोके है, तो खींचे है मुझे कुफ़्र।
काबा मेरे पीछे है, कलीसा मेरे आगे॥

अमीर मीनाई—

बड़ी पेच दर पेच थी राहे दहर।
ख़ुदा हमको लाया, ख़ुदा ले गया॥

---

[1]शायरका तात्पर्य है—मन्दिरकी उपासना करते हुए ख़ुदाकी तरफ़ चलो, यानी साकार ईश्वर-पूजा करते-करते निराकार ईश्वर तक पहुँच जाओ।

[2]प्रकाश, [3]मक्के या मस्जिदकी प्रदक्षिणा।

मजरूह—

क्या हमारी नमाज, क्या रोजा ?
वख़्श देनेके सौ वहाने हैं ॥

वहजाद लखनवी—

तेरी जिक्रने तेरी फ़िक्रने, तेरी यादने वोह मजा दिया ।
कि जहाँ मिला कोई नक़्शेपा[1] वहीं हमने सरको झुका दिया ॥

जिगर मुरादाबादी—

रूवरूए दोस्त हंगामे सलाम आ ही गया ।
रुख़सत ऐ दैरो हरम ! दिलका मुक़ाम आ ही गया ॥

आग़ाशायर देहलवी—

तुम्हारा ही वुतख़ाना, कावा तुम्हारा ।
हैं दोनों घरोंमें उजाला तुम्हारा ॥

अजीज लखनवी—

तेरे करममें[2] कमी कुछ नहीं, करीम[3] है तू ।
क़ुसूर मेरा है, झूठा उम्मीदवार हूँ मैं ॥

साक़िब—

पर्दा हुआ कि जल्वयेवहदतनुमाँ[4] हुआ ।
ग़शने ख़बर न दी मुझे कब सामना हुआ ॥

अलम मुजफ़्फ़रनगरी—

आये थे तजस्सुसमें[5] उसकी, जाते हैं उसीको ढूंढ़ेंगे ।
इस आरजी आने-जानेको फिर मरना-जीना क्या कहिये ॥

---

[1]चरण-चिन्ह; [2]कृपामें; [3]दातार; [4]ईश्वरका प्रकाश; [5]तलाशमें ।

मजाज़ी इश्क़—सांसारिक प्रेम

काबे भी हम गये न गया पर बुतोंका इश्क़ ।
इस दर्दकी ख़ुदाके भी घरमें दवा नहीं ॥

—यक़ीन सरहदी

दर्दसे वाक़िफ़ न थे ग़मसे शनासाई न थी ।
हाय ! क्या दिन थे तबीयत जब कहीं आई न थी ॥

—जलील

जवानीकी दुआ लड़कोंको नाहक़ लोग देते हैं ।
यही लड़के मिटाते हैं, जवानीको जवाँ होकर ॥

—अकबर इलाहाबादी

जज़्बयेइश्क़[1] सलामत है तो इन्शाअल्लाह ।
कच्चे धागेमें चले आएँगे सरकार बँधे ॥

—अज्ञात

इश्क़की जिसपर इनायत होगई ।
होश ज़ाइल,[2] अक़्ल रुख़सत होगई ॥

—अज्ञात

कभी हर्फ़े मुहब्बत ता-ब-लब आया था चुपके-से ।
इसीने रफ़्ता-रफ़्ता तूल खींचा दास्ताँ होकर ॥

—रियाज़ ख़ैराबादी

---

[1] प्रेम-लगन; [2] नष्ट ।

किया यह मुहब्बतने क्या अन्दर-अन्दर।
कि दिल कुछ-का-कुछ बन गया अन्दर-अन्दर॥
हँसी बनके होंटोंसे खला किया ग़म।
मगर दिल मसलता रहा अन्दर अन्दर॥

—आरज़ू लखनवी

जो राहे-इश्कमें[1] कदम रक्खें।
वोह नशेबो फराज़[2] क्या जानें?

—दाग़

ज़रासी इक निगाहे इश्कमें आँखोंसे गिरता हूँ।
बहुत आसान है इन्सानका बेकार हो जाना॥

—साकिब लखनवी

दुनियामें जो आकर न करे इश्क बुतांका।
नज़दीक हमारे है, यहांका न वहांका॥

—अमीन अज़ीमाबादी

रखते ही पांव लुट गये बाज़ारे इश्कमें।
बैठे न दिलको बेचनेवाले दुकानपर॥

—साकिब लखनवी

इश्कको दो चार राहें हो तो दिलको ढूंढ लूं।
मुझको क्या मालूम, किस कूचेमें मरकर रह गया?

—साकिब लखनवी

सोनेसे चर्खेपीर[3] लगाये है चाँदको।
कुछ इश्क मुनहसिर नहीं बूढ़े-जवानपर॥

—जलील

---

[1] प्रेम-मार्गमें, [2] ऊँच-नीच, [3] प्राचीन आकाश।

जिन्दोंमें अब शुमार नहीं हजरते 'अजीज' ।
कहते थे आपसे कि मुहब्बत न कीजिये ॥

—अज़ीज़ लखनवी

मैं तेरी यादमें हूँ ओ काफ़िर !
मस्जिदोंमें नमाज होती है ॥

—मदहोश ग्वालियरी

अब मुहब्बत ही मुहब्बत है न हम हैं और न तुम ।
जिसके आगे कुछ नहीं है वह मुक़ाम आ ही गया ॥

× × ×

अजलके[1] दिनसे हैं अहले-मुहब्बत नौहाख्वाँ[2] अब तक ।
मगर अपनी जगहपर है जमीनो आस्माँ अब तक ॥

—आसी लखनवी

---

[1]अनादिसे, सृष्टिके प्रारम्भसे; [2]रुदन करनेवाले ।

आशिक=प्रेमी, आसक्त

मक्तबे इश्के मजाजीसे फ़ारिग़शुदा स्नातक न कहलाकर आशिक कहलाते हैं। यदि आपको कोई आदमी तालिबे वस्लो दीदार,[1] हिज्रमें[2] बेचैन, रोने-बिसूरने, कमज़ोर, बदगुमान[3] हासिद,[4] आवारा, नाकारा, दीवाना, फटेहाल, मौतका इच्छुक दिखाई दे तो उसे बेखटके आशिक समझ लीजिये और उससे तो हाथ दूर रहिये। अन्यथा जो अपने कपड़ों की धज्जियाँ किये फिरता है, उसे दूसरोंके कपड़े फाड़ने देर न लगेगी।

आदमका जिस्म जब कि अनासिरसे[5] मिल बना।
जितनी बची थी आग सो आशिकका दिल बना॥

—सौदा

जो दानिशमन्द हैं वोह यूँ दुआ देते हैं लड़कोंको।
न हों मक्कार पीरीमें[6], न हो आशिक जवाँ होकर॥

—अकबर इलाहाबादी

मुसीबत और लम्बी ज़िन्दगानी।
बुज़ुर्गोंकी दुआ ने मार डाला॥

—मुज़्तर खैराबादी

---

[1]मिलन और दर्शनका अभिलाषी,
[2]विरहमें,
[3]जिसके मनमें किसीकी ओर सन्देह उत्पन्न हुआ हो,
[4]ईर्ष्यालु, [5]पंचतत्त्वसे [6]वृद्धावस्थामें।

मेरी तिफ़्लीमें[1] शानेइश्क़बाज़ी आशकारा[2] थी।
अगर बचपनमें खेला खेल तो आँखें लड़ानेका॥
—क़ैसर देहलवी

अज़लसे[3] हुस्नपरस्ती लिखी थी क़िस्मतमें।
मेरा मिज़ाज लड़कपनसे आशिक़ाना था॥
—रहमत

पैदा हुए तो हाथ जिगरपर धरे हुए।
क्या जानें हम हैं कबसे किसीपर मरे हुए॥
—बेनज़ीरशाह वारसी

हाँ, आपको देखा था मुहब्बतसे हमींने।
जी, सारे ज़मानेके गुनहगार हमीं हैं॥
—अहसान दानिश

बहुत दिलचस्प है अपनी कहानी।
कहो तो हम सुनाएँ कुछ कहींसे॥
—अज्ञात

ख़ुलूसेइश्क़[4] न जोशेअमल[5] न दर्देवतन।
यह ज़िन्दगी है ख़ुदाया कि ज़िन्दगीका कफ़न॥
—जिगर मुरादाबादी

अपनी हालतका ख़ुद अहसास नहीं है मुझको।
मैंने औरोंसे सुना है कि परीशाँ हूँ मैं॥

ग़मोंपर ग़म फटे पड़ते हैं ऐय्यामे जवानीमें।
इज़ाफ़े हो रहे हैं वाक़ियाते ज़िन्दगानीमें॥
—आसी लखनवी

---

[1]बचपनमें; [2]ज़ाहिर; [3]अनादिकालसे; [4]प्यारकी चाहत; [5]कार्य करनेका उत्साह, चारित्र पालनकी उमंग।

शहीदे मुहब्बत न काफिर ना गाज़ी ।
मुहब्बतकी रस्में न तुर्की न ताज़ी ॥
वह कुछ और शै है मुहब्बत नहीं है ।
सिखाती है जो गज़नवीको अयाज़ी[1] ॥

—इकबाल

वस्ल-ओ-दीदार की ख्वाहिश (मिलन और दर्शनकी अभिलाषा)

ठहर जा ऐ कज़ा[2] ! आता है वोह मेरी अयादतको[3] ।
दमेआखिर तो मिल लेने दे, मुझको उस सितमगरसे ॥

—हमदम अकबराबादी

किस वक्त आप मेरी अयादतको आए हैं ।
जब सुन चुके गलेसे उतरती दवा नहीं ॥

—मुज़्तर लखनवी

तुम न आओगे तो क्या, मौत भी आनेकी नहीं ।
रास्ते रोक दिये होंगे, कज़ाके तुमने ?

—तनहा

वह झरोखेसे जो देखे तो मैं इतना पूछूं—
"बिस्तर अपना पसेदीवार करूँ या न करूँ ?"

तू भी उस शोखसे वाकिफ है बता कुछ तो 'निज़ाम' !
मुझसे दिल माँगे तो इन्कार करूँ या न करूँ ?

—निज़ाम

---

[1] अयाज़ एक कमसिन छोकरा था जिसपर महमूद गजनवी आशिक था । यहाँ अयाज़ीसे तात्पर्य लौंडेबाज़ीसे है ।
[2] मृत्यु, [3] हाल पूछनेको ।

उम्रे दराज़ माँगकर लाया था चार रोज़।
दो आरज़ूमें कट गये, दो इन्तज़ारमें॥

—ज़फ़र

बातें तसव्वुरे यारमें करता हूँ इस तरह।
समझे कोई कि आठ पहर हूँ नमाज़में॥

—जलील

दर्वाज़े पै उस बुतके सौबार हमें जाना।
अपना तो वही काबा, अपना तो वही हज है॥

—आग़ा शाइर देहलवी

ऐसा भी इत्तफ़ाक़ मुझे बारहा[1] हुआ।
उनसे मिला हूँ उनका पता पूछता हुआ॥

—आसी नरानवी

रहा ख़्वाबमें उनसे शब भर विसाल।
मेरे बख़्त जागे मैं सोया किया॥

—अमीर मीनाई

फ़ुरक़त (विरह)—

दुआए मर्ग[2] फ़ुरक़तमें जो माँगी।
मुहल्लेवाले चिल्लाये कि "आये"॥

—अमीर मीनाई

यूँ शबे हिज्रमें[3] करते हैं ग़लत ग़म अपना।
मुर्दा ख़ुद बनते हैं, ख़ुद करते हैं मातम अपना॥

—अमीर मीनाई

---

[1]बार-बार; [2]मृत्युकी दुआ; [3]विरहमें।

एवज ले लिया हिज्रका मैंने मरके।
वोह तुरबत[1] पै रोते थे मैं सो रहा था॥

—साक़िब लखनवी

उनके देखेसे जो आ जाती है मुँहपर रौनक़।
वह समझते हैं कि बीमारका हाल अच्छा है॥

—ग़ालिब

यहाँ तक आतिशेफ़ुर्क़तने[2] तेरी मुझको फूँका है।
रगेजाँ जलती रहती है, चिराग़ेदिलमें बत्ती-सी॥

—अज्ञात

शबेहिजराँकी[3] सख़्ती हो तो हो लेकिन यह क्या कम है।
कि लबपर रातभर रह-रहके तेरा नाम आयेगा॥

—शाद अज़ीमाबादी

उस कूचेकी हवा थी कि मेरी ही आह थी।
कोई तो दिलकी आगपर पखा-सा झल गया॥

—मोमिन

अब इस फ़िक्रमें रातदिन कट रहे हैं।
तुझे भूल जाएँ कि ख़ुदको भुला दें॥

थी जो कलतक कश्तिये उम्मीदको थामे हुए।
रुख़ बदलकर आज वोह भी मौजतूफ़ाँ[4] होगई॥

—शफ़ीक़ टौंकी

---

[1]क़ब्र [2]विरह अग्नि [3]विरह रात्रिका [4]तूफ़ानकी लहर।

काहीदगी (निर्बलता) रंज ग़म और हिज्र का ग़म सहते सहते इतने निर्बल हो गये हैं कि —

> क्या देखता है हाथ मेरा, छोड़ दे तबीब[1] !
> याँ जान ही बदनमें नहीं, नब्ज़ क्या चले ?
>
> —ज़ौक़

> मर गया बीमारे ग़म करवट जो बदली ज़ोफ़से[2]।
> आलमेहस्तीमें[3] आख़िर इन्क़लाब आही गया ॥
>
> —मुज़्तर लखनवी

> दिल टूटनेसे थोड़ी-सी तकलीफ़ तो हुई ।
> लेकिन तमाम उम्रको आराम हो गया ॥
>
> —सफ़ी लखनवी

> कुछ सम्हल जाता अगर करवट बदल जाती मेरी ।
> यह मुझे दुश्वार था, उनके लिये मुश्किल न था ॥
>
> —साक़िब लखनवी

> अल्लाहरे ज़ोरे मजबूरी ख़ुद मुझको हैरत होती है ।
> जो बार उठाना पड़ता है क्योंकर वह उठाया जाता है ॥
> यह भी है तमाशा उल्फ़तका, जो बात है वह नादानी है ।
> मजबूर नहीं है रक्त जिन्हें, रक्त उनसे बढ़ाया जाता है ॥
>
> —वहशत कलकत्तवी

> हमारे शीशये दिलको सम्हलकर हाथमें लेना ।
> नज़ाक़त इसमें इतनी है नज़रसे जब गिरा टूटा ॥
>
> —अज्ञात

---

[1] चिकित्सक [2] कमज़ोरीसे, [3] जीवन-संसारमें ।

साँस आहिस्ता लीजियो 'बीमार' !
टूट जाये न आबला दिलका ॥

—बीमार

उसके चक्करमें दुबारा तो मैं आनेका नहीं ।
ढूँढ़ती फिरती है क्यों गर्दिशेदौराँ[1] मुझको ॥
नाकामे तमन्ना हूँ मैं उस अश्ककी मानिन्द ।
गिरते हुए आशिक़की जो आँखोंमें रुका हो ॥
मेरे दिलकी तड़पने जान तक छोड़ी न क़ालिबमें[2] ।
बुझा डाला चिराग़े उम्र इस पंखेने हिल-हिलके ॥

—लम्भूराम 'जोश' मलसियानी

मसरूफ़ कर लिया मुझे उसके ख़यालने ।
जा ऐ अजल ! कि मरनेकी फ़ुरसत नहीं मुझे ॥

—जलील

ग़श उन्हें देखके आया तो मेरा बस क्या था ?
मुझसे सम्हला गया जबतक तो सम्हलता ही गया ॥

—साक़िब लखनवी

फोड़ा था दिल न था यह मुएपर[3] ख़लल गया ।
जब ठेस साँसकी लगी दम ही निकल गया ॥

—मोमिन

न पूछो कुछ मेरा अहवाल मेरी जाँ मुझसे ।
यह देख लो कि मुझे ताक़ते बयान नहीं ॥
अब यह है सूरत कि ऐ परदानशीं !
तुझसे अहबाब[4] छुपाते हैं मुझे ॥

—मोमिन

---

[1] संसारकी मुसीबत; [2] शरीरमें; [3] मरनेपर; [4] इष्ट-मित्र ।

मगर दुश्मनका ज़ियादा तुमसे है मुझको मलाल ।
दुश्मनोंका ज़ुल्म, शिकवेका मज़ा आता नहीं ॥

—दाग़

तुम्हें चाहूँ तुम्हारे चाहनेवालोंको भी चाहूँ ।
मेरा दिल फेर दो मुझसे यह झगड़ा हो नहीं सकता ॥

—दाग़

आँखें बिछायें हम तो उदूको भी राहमें ।
पर क्या करें कि तुम हो हमारी निगाहमें ॥

—अज्ञात

बुलाया जो दावतमें ग़ैरोंको तुमने ।
मुझे पेश्तर अपने घर देख लेना ॥

—दाग़

दरबान—ये दिल-फेंक आशिक़ घरमें न घुस आयें इस भयसे माशूक़ दरबान रखता है :—

दरबाँकी यह मजाल कि यूँ रोक ले हमें ।
हमने तुम्हारा पास, तुम्हारा अदब किया ।

—बेख़ुद देहलवी

याँ आनेसे किस वास्ते जलता है हमारे ।
आशिक़ तो नहीं है कहीं दरबान तुम्हारा ?

—तसकीन देहलवी

चले आओ जब चाहो दिलमें हमारे ।
न दर है, न दरबान, उजड़ा मकाँ है ॥

—मुग़ल जान तस्नीम

तुम्हारे दर पै जो दरबानें श्रास्तीं पकड़ी।
सरे नक्शेक़दम हमने भी जमीं पकड़ी॥
—दिल शाहजहाँपुरी

ग़ैरको आने न दूँ तुमको कहीं जाने न दूँ।
काश! मिल जाये तुम्हारे दरकी दरबानी मुझे॥
—हसरत बदायूनी

ख़ुशामद इस क़दर की हो गया बदनाम आलममें।
ज़माना जानता है मुझको मैं आशिक़ हूँ दरबाँका॥
—दाग़

मना मुझको ही किया, रातको मुझसे ही कहा।
मैं गदा[1] बनके गया दर पै वोह दरबाँ समझा॥
—दाग़

क़ासिद=पत्रवाहक आशिक़ पत्र द्वारा दर्दका इज़हार करते हैं —

हरजाईपनमें उसके ठिकाने नहीं हैं दिल।
फिरता ख़राब होगा मेरा नामाबर कहीं॥
—मुश्ताक़ देहलवी

क़ासिद! चला तो हूँ ख़बरे यारके लिये।
इतना रहे ख़याल कि आँखोंमें जान है॥
—असात

आजतक लाया न नामेका जवाब।
नामाबर हमको मिला क्या लाजवाब॥
—हाफ़िज़ जौनपुरी

---

[1] भिखारी।

दोस्तके धोखेमें उसने दे दिया दुश्मनको ख़त ।
नामावर ऐसा मेरा आँखोंका अन्धा हो गया ॥

—बेख़ुद देहलवी

लिक्खो सलाम ग़ैरके ख़तमें ग़ुलामको ।
बन्देका बस सलाम है ऐसे सलामको ॥

—मोमिन

बहकी-बहकी आके बातें कर रहा है मुझसे वोह ।
नामाबर आता है उनका क्या कहीं पीकर शराब ॥

—जाकिर देहलवी

क़ासिदके आते-आते ख़त इक और लिख रखूँ ।
मैं जानता हूँ जो वोह लिखेंगे जवाबमें ॥

—ग़ालिब

बदख़त बताके कर दिया उस सब्ज़ख़तने[1] चाक ।
ख़तकी ख़ता नहीं, मेरा लिक्खा ख़राब है ॥

—अकबर मेरठी

बरसोंसे कानमें है क़लम इस उम्मीदपर ।
लिखवायें मुझसे ख़त मेरे ख़तके जवाबमें ॥

—अज्ञात

पुर्ज़े उड़ाके ख़तके यह इक पुर्ज़ा लिख दिया ।
लो, अपने एक ख़तके यह सौ ख़त जवाबमें ॥

—बिस्मिल देहलवी

नामाबर ! ख़त पै मेरी आँख भी रखकर लेजा ।
क्या गया तू जो, यही देखनेवाली न गई ॥

—अज्ञात

---

[1]वह कमसिन छोकरा जिसके कपोलोंपर रुएँ आ गये हों ।

दिल चाहता है अपना कि कासिद ! बजाय मुहर।
आंख अपनी हो लिफाफये खत पै लगी हुई* ॥
नामेको पढ़ना मेरे ज़रा देखभालकर।
काग़ज़ पै रख दिया है कलेजा निकालकर ॥

—अज्ञात

नामेके पेंचको ज़रा आहिस्ता खोलना।
लिपटा हुआ किसीका कहीं इसमें दिल न हो ॥

—अज्ञात

कैसा जवाब, हज़रते दिल ! देखिये ज़रा।
पैग़ाम्बरके[1] हाथमें टुकड़े ज़ुबांके हैं ॥

—दाग़

दीवानगी=आवारगी जब वस्ल नसीब नहीं हुआ तो मारे सदमोंके आशिक दीवाना हो जाता है —

सौदाइयोंसे इश्क़में करते हैं मशविरे।
जैसे हैं आप, वैसे हमारे मुशीर[2] हैं ॥

—रिन्द

होश ही मुझको न था जब पहलुओंमें लूट थी।
मुझको क्या मालूम, क्या जाता रहा, क्या रह गया ॥

—साकिब लखनवी

---

*कागा नैन निकार दूं, पिया पास ले जाय।
पहले दरस दिखायके पाछे लीजो खाय ॥
कागा सब तन खाइयो चुन चुन खइयो मास।
द्वै नैना मत खाइयो, पिया मिलनकी आस ॥

[1]पत्रवाहकके [2]मशवरा देनेवाले सलाहकार।

सहरा-सहरा[1] जंगल-जंगल मारे-मारे फिरते हैं।
आहू[2] वहशी[3] जानके हमको साथ हमारे फिरते हैं॥

—इमदाद इमाम असर

हम उसी जिन्दगी पै मरते हैं, जो यहाँ चैनसे बसर न हुई।
दिलने दुनिया नई बना डाली, और हमें आजतक ख़बर न हुई॥

—अज़ीज़ लखनवी

निकम्मा हो गया हूँ इस क़दर मसरूफ़ेग़म[4] होकर।
मेरे ऐमालकेकातिब[5] भी अब बेकार बैठे हैं॥

—जोश मलसियानी

मृत्युकी इच्छा—जब वस्ल न हुआ और विरहमें सूखकर काँटा हो गये तो मृत्युकी इच्छा करने लगे :—

देख लीजे चलके अपने चाहनेवालेकी नाश[6]।
आप फ़रमाते थे ऐसेको क़ज़ा आती नहीं॥

—क़ैसर देहलवी

उनकी गलीमें जिस दम मेरा गया जनाज़ा।
हसरतसे देखते थे पर्दा उठा-उठाकर॥

—अज्ञात

दफ़नाना देख-भालके हसरत भरेकी लाश।
लिपटी हुई कफ़नमें कोई आरजू न हो॥

—अज्ञात

---

[1]जंगल, वन; [2]हिरन; [3]पागल; [4]आपदाओंमें व्यस्त; [5]भाग्यलेख लिखनेवाले; [6]लाश।

ख़बर उनको हुई होगी, अजब क्या वे चले आएँ।
जनाज़ा ले चलो सूए-मज़ार[1] आहिस्ता-आहिस्ता॥
—अज्ञात

लहदमें[2] क्यों न जाऊँ मुँह छिपाये।
भरी महफ़िलसे उठवाया गया हूँ॥
—दाग़

कोई कन्धा तक नहीं देता हमारी लाशको।
हम ख़ुदाके घर भी अपने पाँवसे जायेंगे क्या?
—अज्ञात

राम आया है मुझे वहशतमें मर जाना मेरा।
वह मुझे रोये यह कहकर "हाय! परवाना मेरा"॥
—रसा रामपुरी

रो रहे हैं दोस्त मेरी लाशपर बेअख़्तियार।
यह नहीं दरियाफ़्त करते "किसने इसकी जान ली"॥
—अकबर इलाहाबादी

नज़अमें[3] यारसे पैमानेवफ़ा[4] करते हैं।
उस दग़ाबाज़से हम आज दग़ा करते हैं॥
—रियाज़ ख़ैराबादी

यह कहकर क़ब्रपर फिर याद अपनी कर गये ताज़ा।
"अरे ओ मरनेवाले! अब मुझे दिलमें भुला देना"॥
—अज़ीज़ लखनवी

---

[1]क़ब्रिस्तानकी ओर [2]क़ब्र, [3]मृत्युके समय अन्तिम श्वास तोड़ना, [4]वायदा पूरा करनेकी बात।

न जाना कि दुनियासे जाता है कोई।
बहुत देर की महर्बां आते-आते॥

—दाग़

शहीदेग़मकी लाशपर न सर झुकाके रोइये।
वह आँसुओंका क्या करे? जो मुँह लहूसे धो चुका॥

—अज्ञात

वादा किया था फिर भी न आये मजारपर।
हमने तो जान दी थी, इसी एतबारपर॥

—अजीज लखनवी

वो आये हैं पशेमाँ[1] लाशपर अब।
तुझे ऐं जिन्दगी लाऊँ कहाँसे?

—मोमिन

खुद्दारी=स्वाभिमान—

ऐ 'दाग़' अपनी वजह हमेशा यही रही।
कोई खिचा, खिचे, कोई हमसे मिला, मिले॥

—दाग़

शामिल हो जिसमें रंज वोह राहत न कर क़ुबूल।
दोजख़के मुत्तसिल[2] हो तो जन्नत न कर क़ुबूल॥
ग़ैरत नहीं रही तो है बेकार जिन्दगी।
फैलाके हाथ जर्फ़ेनदामत[3] न कर क़ुबूल॥

—अदब

[1] शर्मिन्दा; [2] नजदीक; [3] निर्लज्ज-जीवन, सम्पत्ति।

हूँ कामयाब वहो इस जहाने फ़ानीमें।
जो बेनियाज़े[1] तमन्ना हैं ज़िन्दगानीमें॥

—असलम मुज़फ़्फ़रनगरी

अक्बर ने सुना है अहलेग़ैरतसे यही—
"जीना ज़िल्लतसे हो तो, मरना अच्छा॥"

—अकबर इलाहाबादी

कुछ हम खिचे-खिचे रहे कुछ तुम खिचे-खिचे।
इस कशमकशमें टूट गया रिश्ता चाहका॥

—अज्ञात

यह गवारा न किया दिलने कि माँगूँ तो मिले।
वर्ना साक़ीको पिलानेमें कुछ इनकार न था॥

—साक़िब लखनवी

पेशे अरबाबेकरम[2] हाथ वह क्या फैलाता।
जिसको तिनकेका भी अहसान गवारा न हुआ॥

—साक़िब लखनवी

जिसने कुछ एहसाँ किया इक बोझ हमपर रख दिया।
सरसे तिनका क्या उतारा, सरपै छप्पर रख दिया॥

—अज्ञात

रूठकर बैठे हो उनसे किस तवक़्क़ोपर 'निज़ाम'?
होशमें आओ, वोह आएँगे मनानेके लिये?

—निज़ाम शाह

---

[1] बेपरवाह [2] कृपालुओंके आगे।

हश्र[1]—जब इस दुनियामें अभिलाषा पूरी न हुई तो प्रलय (क़यामत)-के बाद हश्रमें फ़रियाद की :—

ऊँचे-ऊँचे मुजरिमोंकी पूछ होगी हश्रमें।
कौन पूछेगा मुझे मैं किन गुनहगारोंमें हूँ?

—अज्ञात

मेरी रुसवाईका हाल ऐ दावरेमहशर[2]! न पूछ।
मैं भरी महफ़िलमें यह क़िस्सा सुना सकता नहीं॥

—जोश मलसियानी

वह दुनिया थी जहाँ तुम बन्द रखते थे जवाँ मेरी।
ये महशर[3] है यहाँ सुननी पड़ेगी दास्ताँ मेरी॥

—अज्ञात

महशरमें कोई पूछनेवाला तो मिल गया।
रहमत[4] बढ़ी है मुझको गुनहगार देखकर॥

—साक़िब लखनवी

सवाब[5] कहते हैं किसे दिखादे हश्रमें मुझे।
करीम! पहली जिन्दगी तो कट गई अज़ाबमें[6]॥

—साक़िब लखनवी

---

[1] क़यामत—जब कि सब मुर्दे खड़े होंगे और उनके शुभ-अशुभ कर्मोंका हिसाब (चेकिंग) होगा; [2] स्वर्गका न्यायाधीश; [3] मुसलमानी धर्मके अनुसार वह अन्तिम दिन जिसमें ईश्वर सब प्राणियोंका न्याय करेगा। [4] दया; [5] पुण्य; [6] विपदाओंमें।

शर्ममें भी हैं तेरी परले सिरेकी शोखियाँ।
आँख नीची करके बुरका रुखसे ऊँचा कर दिया ॥

—अज्ञात

बताओ तो नीची नज़र आज क्यों है ?
यह क्यों बार पड़ता है ओढ़ा तुम्हारा ?
मनाएँ तो अब जान देकर मनाएँ।
क़यामत है यह रूठ जाना तुम्हारा ॥

—आग़ाशाइर देहलवी

है वस्लकी शब तुमको अफ़सोस हिजाब इतना।
किस शरअमें[1] जाइज़[2] है ख़िलवतमें[3] हया करना ?

—नसीम

आपकी प्यारी हया पामाल होकर रह गई।
और चलिये नाज़से जोबनपै इतराते हुए ॥

—जलील

नाज़ुक—

यही बातें हैं जिनकी याद तड़पा देती है दिलको।
मेरा अँगड़ाइयाँ लेना और उस ज़ालिमका डर जाना ॥

—अकबर इलाहाबादी

कौन कहता है ज़ुबाँ यारकी तुतलाती है।
कसरतेनाज़से[4] ओठोंपै गिरह आती है ॥

—अज्ञात

---

[1] धर्मशास्त्रमें, [2] ठीक, [3] एकान्तमें, [4] इठलाहटसे।

शानोंपै[1] ज़ुल्फ़, ज़ुल्फ़में दिल, दिलमें हसरतें[2]।
इतना तो बोझ सरपै, नज़ाकत कहाँ रही?

—अज्ञात

क्या नज़ाकत है कि आरिज़[3] उनके नीले पड़ गये।
मैंने तो बोसा[4] लिया था ख़्वाबमें तसवीरका॥

—अज्ञात

बड़े गुस्ताख़ हैं झुककर तेरा मुँह चूम लेते हैं।
बहुत-सा तूने ज़ालिम गेसुओंको[5] सर चढ़ाया है॥

—अज्ञात

यूँ नज़ाकतसे गराँ[6] सुर्मा है चश्मेयारको।
जिस तरह हो रात भारी मर्दुमे बीमारको॥

—नासिख़

सँभालें बारे-ज़ेवर क्या, तेरा नाज़ुक बदन प्यारी।
कजी रफ़्तारकी कहती है बारे हुस्न है भारी॥

—देवीप्रसाद 'प्रीतम'

सीधे स्वाभाव चल भी नहीं सकते अब तो वह।
फ़ैफ़ेशबाब भी उन्हें एक बार हो गया॥

—आरिफ़ हस्वी

नाज़ुक है न खिचवाऊँगा तस्वीर मैं उसकी।
चेहरा न कहीं अक्सके बदलेमें उतर आये॥

—अर्शद देहलवी

---

[1] कन्धों पै; [2] इच्छाएँ; [3] कपोल; [4] चुम्बन; [5] केशोंको; [6] बोझल।

माशूक=प्रेमपात्र

ग़ज़लके माशूककी खूबियाँ —

रूपकी खान, प्रारम्भमें कमसिन, शर्मीला, नाज़ुक, फिर धीरे धीरे शोख़, बेग्रदब, बवफ़ा, ज़ालिम, बेमुरव्वत, वायदाफ़रामोश, बुत[1], काफ़िर, क़ातिल, हरजाई[2] पर्देदार।

रूप=शोख़ी, ग्रदा

तुम्हारा हुस्न,[3] हुस्नेमाहेग्रनवरसे[4] दुबाला है।
यह कोई हुस्नमें है हुस्न जो बढ़ता हो घटता हो?

—कैसर देहलवी

हुस्नका इन्साफ़ है ग्रहले नज़रके सामने।
ग्राज ले बैठे हैं उनको हम क़मरके[5] सामने॥

—तस्लीम

दरियाए हुस्न ग्रौर भी दो हाथ बढ़ गया।
ग्रँगड़ाई उसने नशेमें ली जब उठाके हाथ॥

—नासिख़

ग्रँगड़ाई भी वह लेने न पाये उठाके हाथ।
देखा जो मुझको, छोड़ दिये मुस्कराके हाथ॥ ॥

—निज़ाम रामपुरी

---

[1] पत्थर-हृदय, [2] छिनाल, [3] रूप, [4] चन्द्रमाके रूपसे; [5] चन्द्रमाके।

शर्ममें भी है तेरी परले सिरेकी शोख़ियाँ ।
आँख नीची करके बुरका रुख़से ऊँचा कर दिया ॥

—अज्ञात

बताओ तो नीची नज़र आज क्यों है ?
यह क्या बार पड़ता है ओछा तुम्हारा ?
मनाएँ तो अब जान देकर मनाएँ ।
क़यामत है यह रूठ जाना तुम्हारा ॥

—आगाशाइर देहलवी

ह वस्लकी शब तुमको अफ़सोस हिजाब इतना ।
किस शरअमें[1] जाइज़[2] है ख़िलवतमें[3] हया करना ?

—नसीम

आपकी प्यारी हया पामाल होकर रह गई ।
और चलिये नाज़से जोबनपै इतराते हुए ॥

—जलील

नाज़ुक—

यही बातें ह जिनकी याद तड़पा देती है दिलको ।
मेरा अंगड़ाइयाँ लेना और उस ज़ालिमका डर जाना ॥

—अकबर इलाहाबादी

कौन कहता ह ज़ुबाँ यारकी लुक़नानी है ।
कसरतेनाज़से[4] ओठोंपै गिरह आनी है ॥

—अज्ञात

---

[1]धर्मशास्त्रमें [2]ठीक [3]एकान्तमें [4]इठलाहटसे ।

शानोंपै[1] जुल्फ़, जुल्फ़में दिल, दिलमें हसरतें[2]।
इतना तो बोझ सरपै, नज़ाकत कहाँ रही ?

—अज्ञात

क्या नज़ाकत है कि आरिज़[3] उनके नीले पड़ गये।
मैंने तो बोसा[4] लिया था ख्वाबमें तसवीरका॥

—अज्ञात

बड़े गुस्ताख़ हैं झुककर तेरा मुँह चूम लेते हैं।
बहुत-सा तूने ज़ालिम गेसुओंको[5] सर चढ़ाया है॥

—अज्ञात

यूँ नज़ाकतसे गराँ[6] सुर्मा है चश्मेयारको।
जिस तरह हो रात भारी मर्दुमे बीमारको॥

—नासिख़

सँभालें बारे-ज़ेवर क्या, तेरा नाज़ुक बदन प्यारी।
कजी रफ़्तारकी कहती है बारे हुस्न है भारी॥

—देवीप्रसाद 'प्रीतम'

सीधे स्वाभाव चल भी नहीं सकते अब तो वह।
कँफ़ेशबाब भी उन्हें एक बार हो गया॥

—आरिफ़ हस्वी

नाज़ुक है न खिंचवाऊँगा तस्वीर मैं उसकी।
चेहरा न कहीं अक्सके बदलेमें उतर आये॥

—अर्शद देहलवी

[1] कन्धों पै; [2] इच्छाएँ; [3] कपोल; [4] चुम्बन; [5] केशोंको; [6] बोझल।

कसरते सज्दासे वह नक्शे कदम।
कहीं पामाल सर न हो जाये॥
—मोमिन

शौख—

या रब ! दिलेरी और वह कहता है दिलरुबैव—
'देखें तो, कोई देखे हमें और न आये दिल"
—अज्ञात

अभी कफन मुर्दे फाड डालें, अभी मजारोंसे सर निकालें।
अभी जो महशरकी चलो चालें, जरा क्यामत बपा करो तुम॥
—कदर बिलग्रामी

मौतसे बदतर बुढ़ापा आयगा।
जानसे अच्छी जवानी जायगी॥
—दाग

मस्जिदमें उसने हमको आँखें दिखाके मारा।
काफिरकी देखो शोखी, घरमें खुदाके मारा॥
—ज़ौक़

आप ही तो बन सँवरकर कर दिया बेखुद हमें।
पूछना फिर, उसपै बन-बनके "तुम्हें क्या हो गया ?"
—तोता बदायूनी

यह शोखी है नई, यह शर्म, दुनियासे निराली है।
मिलाकर आप कहते हैं, "इधर देखो तो अच्छा हो"॥
—बेखुद देहलवी

आप ही जोर करें आप ही पूछें मुझसे—
'यह तो फरमाइये है आज तबीयत कैसी ?"॥
—दाग

कहा जो मैंने कि "दिल चाहता है प्यार करूँ" ।
तो मुस्कराके वह कहने लगे कि "प्यार के बाद" ?

—अकबर इलाहाबादी

जो कहा मैंने कि "प्यार आता है मुझको तुमपर" ।
हँसके कहने लगे "और आपको आता क्या है" ?

—अकबर इलाहाबादी

जब्र दोनोंके कुछ हिसाब भी है ।
इस अदाका कोई जवाब भी है ?

—दाग

वही है इक निगाहेनाज लेकिन अपने मौकेपर ।
कभी नश्तर, कभी नावक, कभी तलवार होती है ॥

—नूह नारवी

तिर्छी नजरोंसे न देखो आशिके दिलगीरको ।
कैसे तीरंदाज हो, सीधा तो कर लो तीरको ॥

—ख्वाजा वजीर

यह भी इक बात है अदावतकी ।
रोजा रक्खा जो हमने दावत की ॥

—अमीर मीनाई

मुझीको सब यह कहते हैं, कि रख नीची नजर अपनी ।
कोई उनको नहीं कहता, न निकलो यूँ अयाँ होकर ॥

—अकबर इलाहाबादी

चोट देकर आजमाते हो दिले आशिक़का सब्र ।
काम शीशेसे नहीं लेता कोई फ़ौलादका ॥

अन्दाज़ अपना देखते हैं आइनेमें वोह।
और यह भी देखते हैं, कोई देखता न हो॥
—निज़ाम

मुझको सुना-सुनाके वोह कहना किसीका हाय!
"जिससे कि जीमें रंज हो उससे कलाम क्या?"
—निज़ाम

यूँ वोह उठ जाएँ सम्भाले हुए दामन अपना।
और मेरे हाथ दुपट्टेका न आँचल आये॥
—अज्ञात

मेरी रगेगुल है कि इक शाहराह है।
ख़ंजर चले, छुरी चले, तेग़ेरवाँ चले॥
—जलील

यह अपने चाहनेवालोंसे आपका बरताव।
यहाँतक आती है आवाज़ लनतरानीकी॥
जो बचपना है तो मेरी तरफ़से फेर लो मुँह।
यह कोई खेल नहीं, मौत है जवानीकी॥
—जावेद लखनवी

यह कब्लअज़मर्ग[1] वावेला, यह बेबाकी तबीयतकी।
अभी ज़िन्दा हूँ मैं, लेकिन उन्हें है फ़िक्र तुरबतकी[2]॥
न खटका उसको दोज़खसे न ख़्वाहिश उसको जन्नतकी।
खुदा रक्खे अलग दुनियासे, है दुनिया मुहब्बतकी॥
तुम्हारी खुशख़रामी[3] सैंकड़ो फ़ितने उठाती है।
क़यामत कह दिया उसको तो मैंने क्या क़यामत की?

---

[1] मृत्युसे पूर्व [2] कब्रकी, [3] बढ़िया चाल।

"बगोले किस तरह उठते हैं उठकर फैल जाते हैं।"
यह कह-कहकर उड़ाई ख़ाक उसने मेरी तुरबतकी ॥
ज़मानेमें हज़ारों नाम किसको याद रहते हैं।
बना लें आप इक फ़हरिस्त अरबाबेमुहब्बतकी[1] ॥

—नूह नारवी

ख़्वाबमें उनको किसीने रात छेड़ा है ज़रूर।
देखते हैं ग़ौरसे मुझको बुलाके सामने ॥

—अज्ञात

बेअदब=उद्दण्ड—

और चल फिर ले ज़रा तन-तनके ऐ बांके जवाँ !
चार दिनके बाद फिर टेढ़ी कमर हो जायगी ॥

—अज्ञात

उनकी ज़बान चलती है तलवारकी तरह !
और हम अदबसे चुप हैं, गुनहगारकी[2] तरह ॥

—हुक्म मदरासी

तेरे सवालपै चुप है, इसे ग़नीमत जान।
कहीं जवाब न दे दें कि "मैं नहीं सुनता" ॥

—शाद

बेवफ़ा=कृतघ्न—

हम भी कुछ ख़ुश नहीं वफ़ा करके।
तुमने अच्छा किया निबाह न की ॥

—मोमिन

---

[1] चाहनेवालोंकी; [2] अपराधीके समान।

ज़ालिम—

मैंने कहा जो उसने ठुकराके चल न ज़ालिम!
हैरतमें आके बोला "क्या आप जी रहे हैं"?

—अकबर इलाहाबादी

किस-किस तरह सताते हैं, ये बुत हमें 'निज़ाम'।
हम ऐसे हैं कि जैसे हमारा ख़ुदा न हो॥

—निज़ाम रामपुरी

सितमगारीकी तालीमें उन्हें दी है ये कह-कहकर—
"कि रोना जिस किसीको देख लेना, मुस्करा देना"॥

—साइल देहलवी

निकला गुबार दिलसे, सफ़ाई तो हो गई;
अच्छा हुआ जो ख़ाकमें तुमने मिला दिया॥

—बर्क़ लखनवी

ज़ालिम! हमारी आख़िरी यह बात याद रख।
"इतना भी दिलजलोंका सताना भला नहीं॥"

—बहर

मिन्नतसे कामयाबीपर मुबारिकबाद देता हूँ।
यह उनकी बदगुमानी है, कि फ़रियादी समझते हैं॥

—अकबर इलाहाबादी

ज़ालिम! तू मेरी सादादिलीपर तो रहम कर।
रूठा था आप तुझसे मैं और आप मन गया॥

—क़ायम चाँदपुरी

मुरव्वत—

हज़ार बार रखा उसने हाथ सीनेपर।
कि मेरे दमके निकलनेका ऐतबार न था॥
—जावेद लखनवी

ायदा फ़रामोश—

साफ़ कह दीजिये "वायदा ही किया था किसने ?"
उज्र क्या चाहिये, झूठोंको मुकरनेके लिये ?
—साक़िब लखनवी

मैंने कहा कि दावये उल्फ़त, मगर ग़लत।
कहने लगे कि "हाँ ग़लत और किस क़दर ग़लत"॥
—नाज़िम

ुत—

तामीर जब कि ख़ानये कावाकी हो चुकी।
जो संग[1] बच रहा था सो उस बुतका दिल बना॥
—अज्ञात

क़ातिल—

हमींको क़त्ल करते हैं, हमींसे पूछते हैं वोह—
"शहीदेनाज बतलाओ मेरी तलवार कैसी है ?"
—अज्ञात

बवक़्ते क़त्ल मक़तलमें कोई हमदम न था अपना।
निगह कुछ देरतक लड़ती रही शमशीरे क़ातिलसे॥
—हफ़ीज़ जालन्धरी

---

[1] पत्थर।

हरजाई—

गिरे होते उलझ कर भास्तोंसे ।
चले भाते हो घबराये कहाँसे ?

—दाग़

आये भी लोग बैठे भी उठ भी खड़े हुए।
मैं जा ही देखता तेरी महफ़िलमें रह गया॥

—आतिश

ग़ैरसे मिलना तुम्हारा सुनके गो हम चुप रहे।
पर सुना होगा कि तुमको इक जहाँने क्या कहा?

—क़ाइम चाँदपुरी

ग़ैरके हमराह वोह आता है मैं हैरान हूँ।
किसके इस्तक़बालको जी तनसे मेरा जाए है॥

जाँ न खा, वस्लेउद्रू सच ही सही पर क्या करूँ?
जब गिला करता हूँ हमदम! वह क़सम खा जाए है॥

—मोमिन

पर्देदार—

नक़ाब डालके, मुँहपर वह बाग़में आये।
कि इनके निकहतेगुल[1] भी दिमाग़में आये॥

—साक़िब लखनवी

सबब खुला यह हमें, उनके मुँह छिपानेका।
उड़ा न ले कोई अन्दाज़ मुस्करानेका॥

—दाग़

---

[1] फूलकी सुगन्ध।

पर्देकी और कुछ वजह अहले जहाँ नहीं।
दुनियाको मुँह दिखानेके क़ाबिल नहीं रहे॥
—अज्ञात

नक़ाब कहती है "मैं परदये क़यामत हूँ।
अगर यक़ीन न हो देख लो उठाके मुझे॥"
—जलील

आँखें बचाके आँसोंके परदेमें आके बैठ।
मैं भी यह चाहता हूँ, तू परदानशीं रहे॥
—नौशा आज़मगढ़ी

आप परदेमें छिपे बैठे हैं, किस दिनके लिये?
खुद अब आइये दुनिया बड़ी मुश्किलमें है॥
—बिस्मिल इलाहाबादी

शमा[1]—परवाना[2]

अब तक तो हज़रते इन्सानके इश्क़का तमाशा देखा, अब तनिक शमा-परवानेका इश्क़ भी देखिये :—

शबेविसाल[3] है बुझवा दो इन चिराग़ोंको।
खुशीकी बज़्ममें[4] क्या काम जलनेवालोंका?
—दाग़

जो जलना ही क़िस्मतमें था, शमअ् होते।
तो पूछे तो जाते किसी अंजुमनमें॥
—सफ़ी लखनवी

---

[1] चिराग़; [2] पतंगा; [3] मिलन-रात्रि; [4] महफ़िलमें।

घूरते हैं सैकड़ों परवाने उरियाँ[1] देखकर।
मारे ग़ैरतके नहीं जाती है महफ़िलमें शमा॥

—अज्ञात

भाता है हमको हाय यह मज़मूँ चराग़से।
रोशन उसीका नाम रहे जो जलाये दिल॥

—असीर

उम्रभर जलता रहा दिन और ख़ामोशीके साथ।
शमअ़को एक रातकी सोज़ेदिलीपर[2] नाज़[3] था॥

—साक़िब लखनवी

ज़रा देख परवाने करवट बदलकर।
सती हो गई शमअ़ महफ़िलमें जलकर॥

—साक़िब लखनवी

रोनेसे हया शमअ़की ज़ाहिर हो तो क्योंकर?
उरियाँ है मगर बीचमें महफ़िलके खड़ी है॥

—साक़िब लखनवी

दौरे फ़लक था जिसको बुझानेकी फ़िक्रमें।
वह शमअ़ रात सुबहसे पहले ही जल गई॥

—साक़िब लखनवी

अरे ओ जलनेवाले! काश जलना ही तुझे आता।
यह जलना कोई जलना है, कि रह जाए धुआँ होकर॥

—यगाना चंगेज़ी

आहसे दिलका दाग़ जलता है।
यह हवामें चराग़ जलता है॥

---

[1] नग्न, [2] दिल जलानेपर [3] अभिमान।

खुद-ब-खुद दिलका दाग जलता है ।
बे जलाए चराग़ जलता है ॥
खानए दिलमें दाग जलता है ।
बन्द घरमें चराग जलता है ॥
दाग़े दिल काम आया मरनेपर ।
क़ब्रमें यह चराग जलता है ॥
बेकसी है ग़ज़बकी मदफ़नपर ।
झिलमिलाकर चराग़ जलता है ॥
शामसे सुबह तक शबे फ़ुरक़त ।
साथ मेरे चराग जलता है ॥
मर रहे हैं पतङ्गे जल-जलकर ।
इसी ग़ममें चराग़ जलता है ॥
आहे मज़लूम गुल करेगी उसे ।
जुल्मका कब चराग़ जलता है ?

—बिस्मिल इलाहाबादी

सहरा=जंगल

जब इश्क जवान हो जाता है और हुस्न कयामत ढाने लगता है तो आशिक अपने माशूककी बेवफाई और बेएतनाईसे तंग आकर घर छोड़ने पर मजबूर हो जाता है, और प्रेमोन्मत्त अवस्थामें जंगलोंकी खाक छानने लगता है —

इश्कका मन्सब लिखा जिस दिन मेरी तकदीरमें।
आहकी नकदी मिली, सहरा मिला जागीरमें॥

—अज्ञात

इन सहराओंमें न जाने कितने असफल प्रेमियोंने अपनी जवानियाँ बसेरी हैं। यहाँ केवल ७-८ प्रेमी-प्रेमिकाओं, तत्सम्बन्धी और जंगलोंमें विचरनेवाले व्यक्तियोंका परिचय दिया जाता है :—

आदम—मुसलमानी धर्मके प्रथम पैगम्बर जो मनुष्य-मात्रके आदि पुरुष माने जाते हैं।

हव्वा—आदमकी पत्नी जो मनुष्यमात्रकी माता मानी जाती है।

मुसलमानी धर्मके अनुसार खुदाने इन दोनोंको माता-पिताके संयोग बिना बनाया था। निर्विकार होनेके कारण ये दोनों जन्नतमें नग्न रहते थे और फल-फूल खाते थे। खुदाने गेहूँ खानेका इन्हें निषेध किया था, परन्तु ये शैतानके बहकावेमें आकर भूल कर बैठे। गेहूँ खाते ही इन्हें वासना सम्बन्धी ज्ञान हो गया, तब तत्काल इन्होंने अपने गुह्य-अंग पत्तोंसे ढक लिये। खुदाको इनकी हरकतका पता चला, तो उसने इन्हें जन्नतसे निकाल दिया, फिर इन्हींके संयोगसे मनुष्यकी सृष्टि हुई।

निकलना ख़ुल्दसे आदमका सुनते आये थे लेकिन।
बहुत बे-आबरू होकर तेरे कूचेसे हम निकले॥
—ग़ालिब

शैतान—मनुष्योंको बहकाकर कुमार्ग-रत और ईश्वर-विमुख करता रहता है। यह पहले ख़ुदाका बहुत बड़ा उपासक था। जब ख़ुदाने आदम बनाया तो, सब फ़रिश्तोंको उसने सजदा करनेका हुक्म दिया। अन्य फ़रिश्तोंने तो हुक्मकी तामील की, मगर इसने यह कहकर मना कर दिया कि—"जब मैं लाखों बरस ख़ुदाको सजदा करता रहा हूँ, तो एक मिट्टीसे बने मामूली पुतलेको मैं सजदा नहीं कर सकता।" ख़ुदाने अपने आदेशकी अवहेलना करनेके कारण इसे शैतान कहकर जन्नतसे बाहर कर दिया। तबसे यह हज़रत प्रतिहिंसाकी भावनाको लिये सारे संसारमें घूम-घूमकर मनुष्योंको कुमार्ग-रत और ईश्वर-विमुख करते फिरते हैं।

ख़िज्र—एक प्रसिद्ध पैग़म्बर जो जल और स्थल-मार्गमें भूले-भटकोंको राह बतलाते रहते हैं:—

कामिलको जो पूछो तो नहीं ख़िज्र भी कामिल।
जीना उसे आता है तो मरना नहीं आता॥
—जोश मलसियानी

ईसा—ईसाई धर्मके प्रवर्त्तक माने जाते हैं। ये बड़े दयालु और दीन-बन्धु थे। लोगोंका विश्वास है कि यह रोगियोंको स्वास्थ्य और मृतकोंको जीवनदान करते थे।

मसीहा तू ठोकर लगाये चलाजा।
मैं मरता रहूँ तू जिलाये चलाजा॥

लैला-मजनूँ—मजनूँका वास्तविक नाम क़ैस था। यह अरबके नज्द नामक प्रान्तका रहनेवाला और लैला नामक एक अरब युवतीपर आसक्त था। इसकी आसक्तिका यह हाल था, कि एक रोज़ क़ैसके

पिता इसे लैलाके पिताके पास इस ख़यालसे ले गये कि इसकी हालतपर तरस खाकर शायद वह इससे लैलाका विवाह कर दे। कैस सजीला और रूपवान युवक था। लैलाका पिता स्वीकृति देना ही चाहता था कि भाग्यकी बात, लैलाका कुत्ता वहाँ आ निकला। कैसको जब यह मालूम हुआ कि यह लैलाका कुत्ता है तो वह बेअख़्तियार उससे लिपटकर प्यार करने लगा। कैसके इस भावावेशको उन्माद समझकर लैलाके पिताने उसे घरसे निकाल दिया। लैलाके मिलनका जब कोई उपाय नहीं रहा, तब प्रेमोन्मत्त कैस जंगलमें निकल गया और वहाँ जीवन-पर्यन्त भटकता फिरा। उसने इतने कष्ट उठाये कि उसके प्रेमकी चर्चा समूचे अरबमें फैल गई। इसके प्रेम आकर्षणसे खिंचकर लैला भी इसे खोजनेपर मजबूर हो गई। वह अपनी ऊँटनीपर सवार होकर कैसको जंगल-जंगल खोजती फिरी, परन्तु मिलन न हो सका। कैस का फूल-सा शरीर विरह-तापसे सूखकर काँटा हो गया, लेकिन वह अविरामगतिसे प्रेम-मार्गमें चलता ही रहा। उसे यह मालूमकर आत्म सन्तोष होता था —

आ रहेगा दश्तमें[1] लैला तेरे नाक़ेके[2] पाँव।
हो गया मजनूँ जो काँटा सूखकर अच्छा हुआ॥

—ज़ौक़

मजनूँ विरह-ताप सहन करते-करते इतना क्षीण और अशक्त हो गया कि हवाके झोंकेसे वह पेड़से जा टकराया। तभी उसके कानमें लैलाके पुकारनेकी आवाज़ आई। लेकिन बेसूद! अब न मजनूँमें प्रत्युत्तर देनेकी शक्ति रह गई थी और न हिलने डुलनेकी ताक़त। जीवनभरकी घोर तपश्चर्याके फलस्वरूप लैला उसको पुकार रही है पर हायरी असमर्थता! वह अपनी प्रेयसीको न तो पुकारकर अपने भाडमें

---

[1] जंगलमें, [2] ऊँटनीके।

उसमें रहनेका समाचार दे सकता है, और न उसके पास तक जा ही सकता है :—

आती है सदायेजरसे[1] नाक़येलैला[2]।
सदहैफ़[3] कि मजनूंका क़दम उठ नहीं सकता ॥

—ज़ौक़

जुलेखा और यूसुफ़—यूसुफ़ हज़रत याक़ूबके पुत्र और मुसलमानोंके एक पैग़म्बर थे। मुसलमानी धर्मके अनुसार संसारका तीन चौथाई सौन्दर्य खुदाने इनको दिया था। इनके भाइयोंने ईर्ष्या-वश इन्हें मिस्रके सौदागरके हाथ बेच डाला था। मिस्रके बादशाहकी रूपवती मलका जुलेखा इनपर आसक्त हो गई थी। इन दोनोंको अपने जीवनमें काफ़ी कष्ट झेलने पड़े थे :—

किसीको कुछ नहीं चलती कि जब तक़दीर फिरती है।
जुलेखा हर गली, कूचेमें बेतौक़ीर[4] फिरती है ॥

—अज्ञात

शीरीं-फ़रहाद—फ़रहाद एक चीनी शिल्पकार था, जो ईरानकी रूप-लावण्यवती शीरींपर आसक्त था। शीरीं भी फ़रहादको हृदयसे चाहती थी। ईरानका बादशाह खुसरो भी शीरींको चाहता था। अतः वह शीरींको बलात् अपने महलमें ले गया। खुसरो शीरींके तनपर तो क़ब्ज़ा कर सका, पर मनपर अधिकार न जमा सका। शीरींके मनमें तो फ़रहाद समाया हुआ था, वह कैसे और किसको उसमें आने देती? अन्तमें खीझकर बादशाहने शीरींसे कहा कि—"यदि प्रेम-परीक्षामें फ़रहाद उत्तीर्ण निकले तो मैं तुझे उसके सुपुर्द कर सकता हूँ।" बादशाहकी

[1] घंटीकी आवाज; [2] लैलाकी ऊँटनीकी; [3] खेद है कि; [4] बेइज़्ज़त।

अभिलाषानुसार परीक्षास्वरूप फरहादने पहाड़को काटकर नहर तक नहर निकाल दी। परन्तु इसी बादशाहने शीरी सौंटानेके बजाय शीरीकी मृत्युकी झूठी खबर फरहादके पास पहुँचवा दी। खबर सुनते ही बेचारे फरहादने अपने हाथका तेशा पत्थरमें मारनेके बजाय अपने सरमें मार लिया और मुद्दी निकाली हुई नहरमें गिरकर दम दे दिया।

३ नवम्बर १९४६ ई०

उद्घाटन

: ३ :

उर्दू-शायरीका विकास, उसके पो।

ग़ज़लके बादशाह

उद्‌घाटन

अमीर ख़ुसरोकी राष्ट्र-भाषा 'हिन्दी-हिन्दवी'का भारतीय वेश 'वली'[1] को पसन्द न आया। उन्होंने अरबी-फ़ारसी मिश्रित जिस भाषाकी बुनियाद डाली, वह प्रारम्भमें 'रेख़्ता' और आगे चलकर सन् १७९७के लगभग 'उर्दू' कहलाई। अठारहवीं शताब्दी 'रेख़्ता' या उर्दू-शायरीकी उन्नतिका सबसे बड़ा युग है। इस युगमें उर्दू-शायरी शैशवको पारकर उस अवस्थामें पहुँच गई थी कि उसके रूप और उभारको देखकर बरबस मुँहसे निकल पड़ता था :—

उर्दू-शायरीका विकास

---

[1] वली—इनकी उपाधि वलीअल्लाह, शम्सउद्दीन नाम और उपनाम वली था। औरंगाबादके रहनेवाले थे। ये दो बार दिल्ली गये। प्रथम औरंगज़ेबके शासनकाल १७०० ईस्वीमें और द्वितीय मुहम्मदशाह के शासनकाल १७२४ ईस्वीमें। प्रथम यात्रामें शाह अल्लाह गुलशनसे इनका परिचय हुआ, जो प्रतिष्ठित वयोवृद्ध शायर थे। वलीसे (हिन्दी बाहुल्य) शेर सुनकर इन्होंने कहा कि "मज़ामीने फ़ारसी क्यों नहीं रेख़्तेमें इस्तेमाल करते ?" दूसरी बार दिल्लीकी यात्रामें वली अपना कलामे-रेख़्ता भी साथ ले गये, जिसकी वहाँ बहुत ख्याति हुई। इसके बाद वली पुनः औरंगाबाद आये और वहीं इन्तक़ाल किया। वलीके कलामके अध्ययनसे मालूम होता है कि प्रारम्भमें वे हिन्दीके शब्द और दक्षिणी मुहावरे अधिक प्रयोगमें लाते थे, किन्तु दिल्ली यात्राके बाद उनके कलाममें उत्तरोत्तर फ़ारसी शब्द और मुहावरे बढ़ते गये और हिन्दी शब्द बहिष्कृत होते गये। उनकी प्रारम्भिक ग़ज़लकी ज़बान यह थी :—

जवाना आयगी जब देखना बहुर खदा होगा ॥

यह भाग और भाग जब वारमात ज्यादा था यग था। इसम पूव—वना आयम नाजा यरग हातिम आरजू और फर्गा वगरह

तेर बिन सभको ए साजन ता घर और दर क्या करना ?

अगर त ना इष्ठ मुझ बन ता यह ससार क्या करना ?

इस नगर म प्राय सभी नाम हिन्दी ह और ज़बान मुहावर दक्षिणा ह। १७०० ईस्वीक बाद शायरआयमक प्रोत्साहनपर वलीने फारसी तरकीबाका प्रयोग भी गत न प्रारम्भ कर दिया उदाहरण स्वरूप —

दखना तुझ कदका ए नाजुक बदन !

बाइस खमयाजए आगोश ह।

दूसरा बार हिन्दी ना आनव बाद उनकी भाषाम काफी परिवतन हो गया और उसम सुथरापन भी आ गया। मसलन —

आगोशम आनकी कहा ताब ह उसको।

करती ह निगह जिस कदे नाजकपे गिरानी।

ए बली रहनको दुनियाम मकामे आशिक।

कचय जल्फ ह आगोशिय तनहाई ह।

वला दिल्ल जानेस पहल जो सिर्फ इस तरह लिखना जानत थ —

तेर आनकी बात इधर निछाय हू म अखियाको

वही दिल्लीस वापिस आनक बाद यह बोली बोलन लग

सहर ह सरवगलजबीकी अदा

(इतिहासिये भाग प ८६—८८ और १७१का भावानुवाद)

उर्दू-शायरीको काफ़ी विकसित कर गये थे। इस युगमें—मीर, सौदा, दर्द, जानजाना, सोज़, क़ाइम, यक़ीन, बक़ा, हिदायत, क़ुदरत और

उर्दू-शायरीके पोषक

जिया जैसे मुनक्के हुए कलाकारोंने उसे चार चाँद लगा दिये। उस समयके शासक और कवि भारतीय भाषासे अनभिज्ञ और अरबी-फ़ारसीके विद्वान थे। अतः स्वभावतः उर्दूमें नित-नये अरबी-फ़ारसी तरकीबों, मुहावरों और शब्दोंका समावेश होने लगा, और उत्तरोत्तर हिन्दीके शब्द मतरूक (त्याज्य) होते गये।

हमने प्रस्तुत पुस्तकका उद्‌घाटन इसी युगसे किया है। क्योंकि उर्दू-शायरीका विकसित रूप यहीसे देखनेको मिलता है। इससे पूर्व 'वली' वग़ैरहकी शायरी अन्वेषकोंके लिये तो महत्त्वपूर्ण हो सकती है; किन्तु हम जिस अणुवीक्षण-यन्त्रसे उसे देखने चले हैं, उसमें वह नहीं आती। बच्चोंके शैशवकी क्रीड़ाएँ उसके अभिभावकोंको तो आनन्द दे सकती हैं; किन्तु वरण करनेवालेको नहीं। वह जिस शबाबको चाहता है, हमने उसीका नक़ाब उठाया है।

इस युगके सैकड़ों शायरोंमेंसे हमने केवल 'मीर' और 'दर्द'को चुना है। हमारी तुच्छ सम्मतिमें यही दो सबसे अधिक उस युगके चमक-

ग़ज़लके बादशाह

दार कलाकार थे। यद्यपि 'सौदा' भी 'मीर'के हमपल्ले थे। पर सौदा क़सीदे और हिजोके उस्ताद थे; मीर और दर्द ग़ज़लके। उर्दू-शायरीकी बिस्मिल्लाह ही ग़ज़लसे हुई है। अतः सबसे पहले ग़ज़लके बादशाह मीर और दर्दका परिचय देना आवश्यक हो जाता है।

यद्यपि आजके इस प्रगतिशील युगमें जबकि नित नये कमालात ज़हूरमें आ रहे हैं, उस अतीत युगकी ओर झाँकनेको जी नहीं चाहता; फिर भी ग़ज़लकी दुनियाका वह स्वर्ण-युग था और आज भी उनकी शायरीका बड़ा प्रभाव है। इन्होंने वलीकी शायरीको इस

तरह सँवारा है कि १५० वर्ष व्यतीत होनेपर भी उनकी बालती है।

उर्दू शायरीका जन्म विलासितामें डूबे हुए बादशाहों-नव महलोंमें उस समय हुआ जब कि उसकी बड़ी बहनें—अरबी, फारसी हुस्नोइश्कसे आँखमिचौनी खेल रही थीं। उर्दू-शायरीने भी अपनी बहनोंका रंग अख्तियार किया और विलासी शासकों तथा रंगीन मि शायरोंके प्रयत्नसे ग़ज़लका जन्म दिया।

यद्यपि ग़ज़लका अर्थ ही इश्किया शायरी है, फिर भी वही धार्मिक दार्शनिक, राजनैतिक और जीवन-सम्बन्धी अनेक अनुभ ममोंनेका शायरोंने स्तुत्य प्रयत्न किया है। ग़ज़लके प्रादुर्भाव समय इस तरहके उपयोगी कलामको यथाशक्य सकलन करनेकी ह रहि रही है।

१

मीर मुहम्मद तक़ी 'मीर'

[सन् १७०९-१८०९ ई०]

'मीर' साहब अपने युगमें उर्दू ग़ज़लके बादशाह माने गये हैं। जैसा आपका उपनाम 'मीर' (सरदार) था, वैसे ही आप कविता-संसारमें चमके भी हैं। अपने जीवनमें ही इतनी ख्याति पायी कि आपके कलामको लोग सौगातके तौरपर दूर-दूर ले जाते थे। आपकी कविता वेदना और आहकी सजीव मूर्त्ति है। आज १५० वर्षके बाद भी जब कि उर्दू-शायरीमें महान परिवर्त्तन हो गया है, मुहावरे, भाव, भाषा और दृष्टि-कोणमें ज़मीन-आसमानका अन्तर आ गया है, कितने ही शब्द और तरकीबें मतरूक (अव्यावहारिक) हो गये हैं, भाव और भाषा भी नित नये परिधान बदलते जा रहे हैं; फिर भी मीर साहबकी कवितामें वही ताज़गी महसूस होती है। 'ग़ालिब, और 'ज़ौक़' जैसे महारथियोंने भी आपका लोहा माना है। फ़र्माते हैं :—

रेख़्तेके तुम्हीं उस्ताद नहीं हो 'ग़ालिब' !
कहते हैं अगले ज़मानेमें कोई 'मीर' भी था ॥

× × × ×

'ग़ालिब' अपना यह अक़ीदा[1] है बक़ौले[2] 'नासिख़' ।
"आप बेबहरा[3] है जो मौतक़िदे[4] 'मीर' नहीं" ॥

× × × ×

---

[1]विश्वास; [2]नासिख़ शाइरके शब्दोंमें; [3]अभागा; [4]मीरका अनुयायी, मीरका प्रशंसक ।

दरबारी इज़्ज़तकी धूम है। सुना है, बादशाह सलामतको उनके बग़ैर चैन नहीं पड़ती—उनके कहनेको कभी नहीं टालते। फिर भी ख़ुदा जाने हम क्यों इस क़दर मुसीबतमें हैं।"

"नहीं, बेटे! आज वे ज़रूर मालामाल होकर आएँगे।"

है कोई ऐसा तंगदिल और बेहया जो अब भी दरवाज़ा खुलवाकर घरमें घुस सके? आह—

मेरी मजबूरियोंको कौन जाने?

इस काल्पनिक चित्रका वे भुक्तभोगी ही अनुभव कर सकते हैं, जो दरिद्रताका वरदान लेकर जनमे और संसारकी समस्त आपत्तियाँ निमंत्रण दिये बिना ही जिनके यहाँ आती रही हों और दुर्भाग्यसे बड़े आदमियोंमें उनकी बैठक शुरू हो गई हो। तब देखिए वह उठक-बैठक मनुष्यताके लिए कैसी अभिशाप सिद्ध होती है? घरमें भुनी भाँग नहीं, मगर मूछोंपर इत्र लगाना ही पड़ता है। दिल अन्दरसे रोनेको कर रहा है, परन्तु बेहया हँसी ओठोंपर लानी ही पड़ती है। तिल-तिल घुलते हुए भी अनेक स्वाँग बनाने पड़ते हैं। ऐसे ही अभागोंके लिए शायद किसीने कहा है—"घरमें बीबी झोंके भाड़, बाहर मियाँ सूबेदार।" मीर साहब शायद ऐसे ही मजबूरोंमेंसे एक थे, जो दिल-ही-दिलमें घुले जाते थे, पर ज़बानपर उफ़ तक न लाते थे। आप आवश्यकतासे अधिक स्वाभिमानी, सन्तोषी, निस्स्वार्थी और कष्टसहिष्णु थे। माँगनेसे मरना बेहतर समझते थे। फ़र्माया है:—

आगे किसूके क्या करें दस्तेतमअ़[1] दराज़[2]।
यह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे॥[3]

---

[1] कामनाका हाथ; [2] पसारना; [3] गोस्वामी तुलसीदासने भी क्या ख़ूब कहा है:—

तुलसी कर-पर कर करो, कर-तर कर न करो।
जा दिन कर-तर कर करो, ता दिन मरन करो॥

समस्त आयु निर्धनतापूर्वक कष्टोंमें काट दी। मगर किसीके सामने हाथ फैलाना तो दरकिनार अन्तर्ज्वालाको घरसे भी बाहर तक न आने दिया। अपनी आन-बानमें कभी बाल न आने दिया। उम्रभर बाँकपन [illegible] निभाई। बकौल अमीर मीनाई —

आशिक़का बाँकपन न गया बादेमर्ग[1] भी।
तख़्ते प ग़ुस्ल[2] जो लिटाया अकड़ गया॥

आख़िर जब तक [illegible] मान प्रतिष्ठा रक्खी [illegible] रखना जब कि [illegible] हो यह [illegible] रहे थे। ऐसी हालतमें तंग आकर मीर साहबने दिल्लीसे प्रस्थान किया

मीर साहब ज़रा कड़वे मिज़ाजके थे। [illegible] शायद पास तक नहीं फटकी थी। दूसरोंकी प्रशंसा करनेसे भी वंचित थे। ज़रा-सी बात उनके दिलको ठेस पहुँचा देती थी। कौन मनुष्य कैसे व्यवहारका अधिकारी है यह वे जानते ही न थे। जो दिलमें आता कह देते थे। इन सब बातोंने भी उनके कष्टोंमें आहुतियाँ दी हैं।

जब दिल्लीसे लखनऊको प्रस्थान किया तो समूची बैलगाड़ीके लिए किराया भी पास न था। अतः एक और यात्रीको साझी बनाया। मार्गमें यात्रीने बातचीत छेड़नी शुरू की तो मीर साहब मुँह फेरकर बैठ गये। थोड़ी देर बाद फिर उसने बातचीतका सिलसिला छेड़ना चाहा तो मीर साहब तेवर बदलकर बोले —

बेशक आपने किराया दिया है। आप गाड़ीमें शौक़से बैठे चलें, मगर बातोंसे क्या तअल्लुक़?

---

[1] मृत्युके पश्चात् [2] स्नानके लिए।

यात्रीनें कहा—"हज़रत, क्या मुज़ाइक़ा है ? रास्तेमें बातोंसे जी बहलता है।"

मीर साहब बिगड़कर बोले—"जी, आपका तो जी बहलता है, मगर मेरी ज़बान ख़राब होती है।"[१]

लखनऊ पहुँचनेपर धूम मच गई। नवाब आसुफ़ुद्दौलाने भी सुना। उन्होंने २०० रु० मासिक नियत कर दिया। मगर दुर्दिनोंने यहाँ भी साथ न छोड़ा। और छोड़ें भी क्योंकर ? बक़ौल 'ग़ालिब' :—

क़ैदेहयातो[२] बन्देग़म[३] अस्लमें दोनों एक हैं।
मौतसे पहले आदमी ग़मसे[४] निजात[५] पाये क्यों ?॥*

मीर साहबकी तुनकमिज़ाजी, रुक्षस्वभाव, दुनियादारीकी अनभिज्ञता यहाँ भी साथ-साथ आई। एक दिन नवाबने ग़ज़लकी फ़र्माइश की। कई रोज़ बाद दरबारमें पहुँचनेपर नवाबने तक़ाज़ा किया तो आपने तेवर चढ़ाकर कहा—"जनाबेआली ! मजमून ग़ुलामकी जेबमें तो भरे ही नहीं कि कल आपने फ़र्माइश की और आज हाज़िर कर दे"[६]

एक दिन नवाबने बुला भेजा। जब पहुँचे तो देखा कि नवाब हौज़के किनारे खड़े हैं। हाथमें छड़ी है। पानीमें लाल-हरी मछलियोंके तैरनेका

---

[१] आबेहयातके लतीफ़े, पृ० ३०

[२] जीवनकी क़ैद; [३] कष्टोंका बन्धन; [४] मुसीबतसे; [५] छुटकारा, मुक्ति।

*बल्कि मरनेके बाद भी चैन मिल सकेगा, 'ज़ौक़' साहबको तो इसमें भी शक है :—

अब तो घबराके यह कहते है कि मर जाएँगे।
मरके भी चैन न पाया तो किधर जाएँगे ?

[६] आबेहयातके लतीफ़े. पृ० ३३

तमाशा देख रहे हैं। इनको देखकर बहुत खुश हुए और बादमें ग़ज़ल सुनानेकी फ़र्माइश की। मीर साहबने सुनाना आरम्भ किया। मगर नवाब साहब हौज़में मछलियोंके साथ खेलनेमें लगे थे और उनका भी ध्यान उधर ही था। आख़िर चार शेर पढ़कर मीर साहब ठहर गये और बोले— 'पढ़ूँ क्या, आप तो मछलियोंसे खेलते हैं। इधर ध्यान दें तो पढ़ूँ।' नवाबने कहा— जो अच्छा शेर होगा खुद ही ध्यान खींचेगा। मीर साहबको यह बात पसन्द न आई और ग़ज़लको जेबमें रखकर घर चले आये और फिर कभी नवाब आसफ़ुद्दौलाके बुलानेपर भी उनके यहाँ नहीं गये।

एक रोज़ मीर साहब बाज़ार गये तो सामनेसे नवाबकी सवारी आ गई। देखते ही नवाब साहबने अत्यन्त स्नेहसे न आनेका कारण पूछा तो मीर साहबने जवाब दिया— बाज़ारमें खड़े-खड़े बात करना सभ्यताके विरुद्ध है।

इसी तरह मीर साहबका जीवन व्यतीत हुआ। सदा मन रखकर बात करनेका ढंग और चापलूसीका तरीक़ा उन्हें न आता। परिणामस्वरूप बगैर रमज़ानके रोज़े रखने पड़ते थे। उन्होंने अपनी शायरीको

---

¹इसी तरहकी एक घटना मीर साहबके समकालीन सौदा साहबकी है। सौदासे बादशाह शाहआलम अपनी ग़ज़लें शुद्ध कराया करते थे। एक दिन बादशाहने ग़ज़लका तक़ाज़ा किया तो सौदाने कोई मजबूरी ज़ाहिर की। बादशाहके पूछनेपर कि रोज़ कितनी ग़ज़लें बना लेते हो कहा— जब तबियत लग जाती है तो दो चार शेर बना लेता हूँ। बादशाह बोले— हम तो पाख़ानेमें बैठे-बैठे चार ग़ज़लें कह लेते हैं। सौदाने हाथ बाँधकर अर्ज़ की— हुज़ूर! वैसी बू भी आती है। कहकर चले आये और फिर कभी न गये। (आबेहयातसे लताइफ़ पृ० १०)

स्वयं हृदयस्पर्शी शब्दोंमें, विस्तारसे वर्णन किया है। बानगी मुलाहिजा हो :—

चार दिवारी सौ जगहसे ख़म, तर तनक हो तो सूखते हैं हम ॥
लोनी लग-लगके झड़ती है माटी, आह, क्या उम्र बेमज़ा काटी ॥
ता गले सब खड़े हैं पानीमें, ख़ाक है ऐसी ज़िन्दगानीमें ॥
घरकी सूरत तो और रोती है, छत भी बेइख़्तियार रोती है ॥
मीरजी इस तरहसे आते हैं, जैसे कंजर कहींको जाते हैं ॥

नवाब आसफ़ुद्दौलाके बाद सआदतअलीख़ाँ राज्याधिकारी हुए। परन्तु मीर साहब फिर भी दरबार न गये। एक रोज नवाबकी सवारी जा रही थी। मीर साहब मस्जिदमें बैठे थे। नवाबका अदब बजा लाने को सब खड़े हो गये। मगर मीर साहब हिले तक नहीं। नवाबने 'इन्शा'से इस अहंकारीका परिचय पूछा तो इन्शाने अर्ज की—"हुजूर, यही मीर साहब हैं जनका ज़िक्र अक्सर दरबारमें रहता है। आज भी शायद भूखे बैठे होंगे, मगर दिमाग़ आस्मानपर है।" नवाबने दरबारमें आकर ख़िलअत मय १०००, रु०के भिजवाई। मगर मीर साहबने उसे वापिस करते हुए कहा—"इसे मस्जिदमें भिजवा दीजिये। मैं इतना मुहताज नहीं।"

नवाबने सुना तो दंग रह गये। मनानेको इंशा भेजे गये। उन्होंने अनेक उतार-चढ़ावकी बातें की। बालबच्चोंकी दयनीय स्थितिकी ओर संकेत किया तो मीर साहबने फ़र्माया—"साहब, वे अपने मुल्कके बादशाह हैं तो मैं भी अपने फ़नका बादशाह हूँ। कोई नावाक़िफ़ इस तरह पेश आता तो मुझे शिकायत न थी। नवाब साहब मुझसे वाक़िफ़, मेरे हालसे वाक़िफ़। इसपर इतने दिनोंके बाद एक दस रुपयेके ख़िदमतगारके हाथ ख़िलअत भेजा। मुझे फ़िक्र-फ़ाक़ा क़ुबूल है मगर यह ज़िल्लत नहीं उठाई जाती।"

मगर इश्क़ भी बातोंके बादशाह थे। मनाकर दरबार ले ही गये। नवाब इनकी इतनी इज्जत करते थे कि अपने सामने बिठाते थे और अपना पेचवान पीनेको देते थे।[१]

मीर साहबके कुल मिलाकर ६ दीवान पाये जाते हैं। बकौल लेखक 'तारीखे अदब उर्दू'—"मीरकी जिन्दगी एक दर्दोअलमकी जिन्दगी है। इसी वजहसे मीरके बेहतरीन और सबसे ज्यादा बाअसर शेर वही हैं जिनमें दर्दोग़मके जज़बातका इज़हार किया गया है। मीरके अशआर ग़मगीन और चुटीले दिलोंपर खास असर करते हैं।....मीरकी दुनिया तारीकी और ग़मसे भरी हुई है, जिसमें कि उम्मीदकी झलक नज़र नहीं आती। उनके तमाम अशआर इस मकूलेके तहतमें हैं "जो कोई इस ग़मकदेमें क़दम रखे उम्मीदको पीछे छोड़ आये।"

---

[१] आबहयातके लतीफ़ पृ० ३९-४०

नाहक़[1] हम मजबूरोंपर यह तुहमत[2] है मुख्तारीको[3] ।
चाहते हैं सो आप करें हैं, हमको अबस[4] बदनाम किया ॥

दिल वोह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके ।
पछताओगे सुनो हो, यह बस्ती उजाड़कर ॥

मर्ग[5] इक मान्दगीका[6] वक़्फ़ा[7] है ।
यानी आगे चलेंगे दम लेकर ॥

कहते तो हो यूं कहते, यूं कहते जो वोह आता ।
सब कहनेकी बातें हैं, कुछ भी न कहा जाता ॥

तड़पे है जब कि सीनेमें उछले हैं दो-दो हाथ ।
गर दिल यही है 'मीर' तो आराम हो चुका ॥

सरापा[8] आरज़ू[9] होनेने बन्दा[10] कर दिया हमको ।
वगर्ना हम ख़ुदा थे, गर दिलेबेमुद्दआ[11] होते ॥

एक महरूम[12] चले 'मीर' हमीं आलमसे[13] ।
वर्ना आलमको ज़मानेने दिया क्या-क्या कुछ ?

हम ख़ाकमें मिले तो मिले, लेकिन ऐ सिपहर[14] !
उस शोख़को[15] भी राह पै लाना ज़रूर था ॥

---

[1] व्यर्थ; [2] दोष, अपराध; [3] स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करनेकी; [4] व्यर्थ; [5] मृत्यु; [6] शिथिलताका; [7] समयकी अवधि, विश्राम-स्थल; [8] सिरसे पैरतक, आदिसे अन्ततक; [9] अभिलाषी; [10] पुजारी, सेवक; [11] वाञ्छा-रहित हृदय; [12] वंचित, बदनसीब; [13] संसारसे; [14] आकाश; [15] चुलबुलेको ।

अहदेजवानी[1] रो-रो काटी, पीरीमें[2] लीं आँखें मूंद ।
यानी रात बहुत थे जागे, सुबह हुई आराम किया ॥

रख हाथ दिलपर 'मीर'के दरियाफ़्त कर लिया हाल है ।
रहता है अक्सर यह जवाँ, कुछ इन दिनों बेताब-सा ॥

सुबह तक शमअ[3] सरको धुनती रही ।
क्या पतंगेने इल्तमास[4] किया ?

दाग़ेफ़िराक़ो[5] हसरतेवस्ल[6], आरज़ूएशौक़[7] ।
मैं साथ ज़ेरेख़ाक[8] भी हंगामा[9] ले गया ॥

शुक्र[10] उसकी जफ़ाका[11] हो न सका ।
दिलसे अपने हमें गिला[12] है यह ॥

शर्तं सलीक़ा[13] है हर इक अम्रमें[14] ।
ऐब भी करनेको हुनर चाहिए ॥

अपने जी ही ने न चाहा कि पिएँ आबेहयात[15] ।
यूं तो हम 'मीर' उसी चश्मेपै[16] बेजार हुए ॥

चमनका नाम सुना था वले[17] न देखा हाय !
जहाँमें हमने क़फ़स[18] ही में ज़िन्दगानी की ॥

---

[1] युवावस्था, [2] वृद्धावस्थामें, [3] चिराग, मोमबत्ती, [4] निवेदन; [5] विरहका दुःख [6] मिलाप या सम्भोगकी इच्छा, [7] लालसाकी अभिलाषा मौज-शौककी ख्वाहिश, [8] मिट्टीके नीचे यानी क़ब्रमें, [9] भीड़ भड़क्का [10] धन्यवाद, [11] अत्याचारका, [12] शिकायत, [13] सिलीक़ा काम करनेका अच्छा ढंग, [14] कामम, घटनामें, [15] जीवन-अमृत, [16] पानीके सोतेपै, [17] मगर, [18] कारावास, पिंजरा ।

ऐसे हैं वे कि जीते हैं सदसाल[1] हम तो 'मीर' !
इस चार दिनकी ज़ीस्तमें[2] बेज़ार[3] हो गये ॥

तुमने जो अपने दिलसे भुलाया हमें तो क्या ?
अपने तईं तो दिलसे हमारे भुलाइये ॥

परस्तिश[4] की यां तक कि ऐ बुत[5] ! तुझे ।
नज़रमें सभूकी ख़ुदा कर चले ॥

यूं कानोंकान गुलने न जाना चमनमें आह ।
सरको पटकके हम सरे दीवार मर गए ॥

सदकारवां[6] वफ़ा[7] है कोई पूछता नहीं ।
गोया मताएदिलके[8] ख़रीदार मर गये ॥

अपने तो होंट भी न हिले उसके रूबरू ।
रंजिशकी वजह 'मीर' वोह क्या बात हो गई ?

'मीर' साहब भी उसके यां थे पर ।
जैसे कोई गुलाम होता है ॥

ऐ शोरेक़यामत[9] ! हम सोते ही न रह जाएँ ।
इस राहसे निकले तो हमको भी जगा देना ॥

मस्तीमें लग़ज़िश[10] हो गई माज़ूर[11] रक्खा चाहिए ।
ऐ अहलेमस्जिद ! इस तरफ़ आया हूँ मैं भटका हुआ ॥

---

[1]सौ वर्ष; [2]जिन्दगीमें; [3]परेशान; [4]उपासना; [5]मूर्त्ति; [6]यात्री-दल; [7]सहृदयता, सुशीलता; [8]हृदय-धनके; [9]प्रलयका शोर; [10]कम्पन, पैरका फिसलना; [11]असमर्थ (यहाँ क्षमा) ।

आनेमें उसके हाल हुआ जाए है तग़ईर[1]।
क्या हाल होगा पाससे जब यार जायगा ?

बेकसी[2] मुद्दत तलक बरसा की अपनी गोर[3] पर।
जो हमारी ख़ाकपरसे होके गुज़रा रो गया॥

आवारगानेइश्क़का[4] पूछा जो मैं निशां।
मुश्तेग़ुबार[5] लेके सबाने[6] उड़ा दिया॥

हम फ़क़ीरोंसे बेअदाई क्या ?
आन बैठे जो तुमने प्यार किया॥

सख़्त काफ़िर था जिसने पहले 'मीर'।
मज़हबेइश्क़ अख़्तियार किया॥

'मीर' बन्दोंसे काम कब निकला ?
मांगना है जो कुछ ख़ुदासे मांग॥

कहता है कौन तुझको याँ यह न कर तू वोह कर।
पर, हो सके तो प्यारे, दिलमें भी टुक जगह कर॥

ताअ़त[7] कोई करे है जब अब्र[8] ज़ोर झूमे ?
गर हो सके तो ज़ाहिद ! उस वक़्तमें गुनह[9] कर॥

क्यों तूने आख़िर-आख़िर उस वक़्त मुंह दिखाया।
दी जान 'मीर'ने जो हसरतसे[10] इक निगह[11] कर॥

---

[1]परिवर्तन, [2]लाचारी, [3]क़ब्र, [4]प्रेमम उन्मत्त इधर-उधर व्यर्थ घूमनेवालोंका, [5]मुट्ठी भर रेत, धूल, [6]हवाने, [7]ईश्वराराधना, [8]बादल, [9]पाप, [10]अभिलाषासे, [11]दृष्टि।

काबा पहुँचा तो क्या हुआ ऐ शेख़ !
सअ़ई[1] (सई) कर, टुक, पहुँच किसी दिल तक ॥

न गया 'मीर' अपनी किश्तीसे ।
एक भी तख़्ता पार साहिल[2] तक ॥

गुलकी जफ़ा[3] भी देखी, देखी वफ़ाएबुलबुल[4] ।
इक मुश्त[5] पर पड़े हैं गुलशनमें जाएबुलबुल[6] ॥

आगे थे इब्तदायेइश्क़में[7] हम ।
हो गये ख़ाक इन्तहा[8] है यह ॥

पहुँचा न उसकी दादको[9] मजलिसमें कोई रात ।
मारा बहुत पतंगने सर शमअ़दान पर ॥

न मिल 'मीर' अबके अमीरोंसे तू ।
हुए हैं फ़क़ीर उनकी दौलतसे हम ॥

काबे जानेसे नहीं कुछ शेख़ मुझको इतना शौक़ ।
चाल वोह बतला कि मैं दिलमें किसीके घर करूँ ॥

नहीं दैर[10] अगर 'मीर' काबा तो है ।
हमारा क्या कोई ख़ुदा ही नहीं ?

लुत्फ़ क्या हर किसूकी चाहके साथ ।
चाह वोह है जो हो निबाहके साथ ॥

---

[1] प्रयत्न, परिश्रम; [2] किनारा; [3] अत्याचार; [4] बुलबुलका त्याग, आत्मविसर्जन; [5] मुट्ठी भर; [6] बुलबुलके स्थानपर; [7] प्रेमके प्रारम्भमें; [8] अन्त; [9] गुणगान करनेको, प्रशंसाको; [10] मन्दिर ।

मैं रोऊँ तुम हँसो हो, क्या जानो 'मीर' साहब।
दिल आपका किसूसे शायद लगा नहीं है॥

काबेमें जाँ-ब-लब[1] थे हम दूरिए-बुतांसे[2]।
आए हैं फिरसे यारो अबके खुदाके यांसे॥

छाती जला करै है, सोज़ेदरूँ[3] बला है।
इक आग-सी रहे है क्या जानिये कि क्या है॥

यारोंने दैरो[4] काबा दोनों बुला रहे हैं।
अब देखें 'मीर' अपना जाना किधर बने है॥

क्या चाल यह निकाली होकर जवान तुमने।
अब जब चलो हो दिलको ठोकर लगा करे है॥

इक निगह करके उसने मोल लिया।
बिक गए आह, हम भी क्या सस्ते॥

मत ढलक मिज़गाँसे[5] मेरे ऐ सरश्केआबदार[6]।
मुफ्त ही जाती रहेगी तेरी मोतीकी-सी आब॥

दूर अब बैठते हैं मजलिसमें।
हम जो तुमसे थे पेशतर नज़दीक॥

२० जून १९५४

---

[1] प्राण होठोंतक आना मरणोन्मुख [2] मूर्तिकी दूरीसे (प्रेमिकाके विछोहमें) [3] दिलकी जलन [4] मन्दिर [5] पलकके बालोंसे, [6] आबदार आँसू।

२

ख़्वाजा मीर 'दर्द'

[जन्म सन् १७१५, मृत्यु सन् १७८३ ई०]

ख़्वाजा मीर 'दर्द' भी मीर साहबके समकालीन हुए हैं। आपका जन्म ई० स० १७१५में दिल्लीमें हुआ और दिल्लीमें ही ६८ वर्षकी आयु (ई० स० १७८३)में समाधि पाई। आप दरबारी आवभगत और रईसोंकी बैठकोंसे दूर भागते थे। अपनी दरगाहमें ही रहते हुए खुदाकी यादमें शेरोशायरी और संगीतमें लीन रहते थे। सन्तोषी और शान्त प्रकृतिके आदमी थे। जब कि दिल्ली उजड़ जानेसे लोग इधर-उधर ठिकाना बना रहे थे, ये दिल्लीमें ही बने रहे। बादशाही मौरूसी जागीरसे और मुरीदोंसे जो आमदनी होती थी, उसीपर सब्र किये रहे। कभी किसीसे धनकी अभिलाषा नहीं की।

ख़्वाजा साहबके हज़ारों मुरीद थे। माहमें दो बार मुशायरा और संगीत-सभा आपके यहाँ होती थी। शाह आलम बादशाह भी उनमें शरीक होनेकी अभिलाषा रखते थे। मगर आप टालते ही रहे। टालनेका शायद यही कारण रहा हो कि आपको बादशाहसे कोई स्वार्थ-साधन तो करना नहीं था। जब इस तरहकी अभिलाषा ही न थी, तो बादशाहके बुलानेमें हज़ारों परेशानियोंका वे क्यों सामना करते? बड़े आदमियोंके स्वागत-सत्कारमें जो कष्ट और ज़िल्लतें उठानी पड़ती हैं, शायद इसीका खयाल करके उन्होंने अपनी आध्यात्मिक शान्तिमें विघ्न न डालना चाहा होगा। फिर भी एक रोज़ मुशायरेमें सूचित किये बिना ही बादशाह तशरीफ़ ले आये। तशरीफ़ जब ले ही आये तो जहाँ उचित स्थान मिला

मैं रोऊँ तुम हँसो हो, क्या जानो 'मीर' साहब।
दिल आपका किसूसे शायद लगा नहीं है॥

काबेमें जाँ-ब-लब[1] थे हम दूरिये-बुताँसे[2]।
आए हैं फिरके यारो अबके खुदाके याँसे॥

छाती जला करे है, सोज़ेदरूँ[3] बला है।
इक आग-सी रहे है क्या जानिये कि क्या है॥

याराने दैरो[4] काबा दोनों बुला रहे हैं।
अब देखें 'मीर' अपना जाना किधर बने है॥

क्या चाल यह निकाली होकर जवान तुमने।
अब जब चलो हो दिलको ठोकर लगा करे है॥

इक निगह करके उसने मोल लिया।
बिक गए आह, हम भी क्या सस्ते॥

मत ढलक मिज़गाँसे[5] मेरे ऐ सरश्केआबदार[6]।
मुफ़्त ही जाती रहेगी तेरी मोती-सी आब॥

दूर अब बैठते हैं मजलिसमें।
हम जो तुमसे थे पेश्तर नज़दीक॥

२० जून १९४४

---

[1] प्राण हाथोंपर आना मरणासन्न [2] मन्ज़िलों दूरीसे (प्रमिकाके विछोहसे) [3] दिलकी जलन [4] मंदिर [5] पलकके बालोंसे [6] आबदार आँसू।

२

ख़्वाजा मीर 'दर्द'

[जन्म सन् १७१५, मृत्यु सन् १७८३ ई०]

ख़्वाजा मीर 'दर्द' भी मीर साहबके समकालीन हुए हैं। आपका जन्म ई० स० १७१५में दिल्लीमें हुआ और दिल्लीमें ही ६८ वर्षकी आयु (ई० स० १७८३)में समाधि पाई। आप दरबारी आवभगत और रईसोंकी बैठकोंसे दूर भागते थे। अपनी दरगाहमें ही रहते हुए, खुदाकी यादमें शेरोशायरी और संगीतमें लीन रहते थे। सन्तोषी और शान्त प्रकृतिके आदमी थे। जब कि दिल्ली उजड़ जानेसे लोग इधर-उधर ठिकाना बना रहे थे, ये दिल्लीमें ही बने रहे। बादशाही मौरूसी जागीरसे और मुरीदोंसे जो आमदनी होती थी, उसीपर सब्र किये रहे। कभी किसीसे धनकी अभिलाषा नहीं की।

ख़्वाजा साहबके हज़ारों मुरीद थे। माहमें दो बार मुशायरा और संगीत-सभा आपके यहाँ होती थी। शाह आलम बादशाह भी उनमें शरीक होनेकी अभिलाषा रखते थे। मगर आप टालते ही रहे। टालने-का शायद यही कारण रहा हो कि आपको बादशाहसे कोई स्वार्थ-साधन तो करना नहीं था। जब इस तरहकी अभिलाषा ही न थी, तो बादशाहके बुलानेमें हज़ारों परेशानियोंका वे क्यों सामना करते? बड़े आदमियोंके स्वागत-सत्कारमें जो कष्ट और ज़िल्लतें उठानी पड़ती हैं, इन सबका ख़याल करके उन्होंने अपनी आध्यात्मिक शान्तिमें विघ्न न डालना चाहा होगा। फिर भी एक रोज़ मुशायरेमें सूचित किये बिना ही बादशाह तशरीफ़ ले आये। तशरीफ़ जब ले ही आये तो जहाँ [illegible]

बैठ गये । फ़क़ीरोंके दरपर बादशाह और गदा सब एक हैं । संयोगसे बादशाहके पाँवमें दर्द होनेके कारण बादशाहने तनिक पाँव फैला दिये । ख्वाजा साहबको यह अच्छा न लगा । बोले—'महफ़िलमें पाँव पसारकर बैठना तहज़ीबके ख़िलाफ़ है ।' बादशाहने अपने दर्दकी कैफ़ियत बताकर मआज़रत चाही तो ख्वाजा साहबने जवाब दिया कि अगर पाँवमें दर्द था तो यहाँ आनेकी आपने तकलीफ़ ही क्या की?[1] इस एक घटनासे ही ख्वाजा साहबके चरित्र और स्वभावका दिग्दर्शन हो जाता है ।

'ज़बान और उर्दूके लिहाज़से ख्वाजा साहब एक निहायत नुमायाँ और मुमताज़ दर्जा रखते हैं । बक़ौल लेखक 'आबेहयात' दर्दने सर बारोंकी आबदारी नश्तरोंमें भर दी है । या बक़ौल अमीर मीनाई दर्दका कलाम मिली हुई बिजलियाँ मालूम होती हैं ।

---

[1] आबेहयात संक्षिप्त पृष्ठ २२।

तुहमतें[1] चन्द अपने ज़िम्मे धर चले।
किसलिए आए थे और क्या कर चले?

शमअ़के[2] मानिन्द हम इस बज़्ममें[3]।
चश्मेनम[4] आए थे, दामनतर[5] चले॥

अपने बन्देपै[6] जो कुछ चाहो सो बेदाद[7] करो।
यह न आजाय कहीं जीमें कि आज़ाद करो॥

वाक़िफ़ न यां किसीसे हम है न कोई हमसे।
यानी कि आ गए हैं, बहके हुए अदमसे[8]॥

---

[1] झूठे कलंक; [2] मोमबत्तीके; [3] गीत या आमोद-प्रमोदके स्थानमें, रंगस्थलमे; [4] आँसूभरे नेत्र; [5] भीगे हुए वस्त्र; [6] सेवकपै, भक्तपै, पुजारीपर; [7] अत्याचार; [8] परलोकसे।

जितनी बढ़ती है, उतनी घटती है।
ज़िन्दगी आप ही आप कटती है॥

तरदामनीपै[1] शेख़[2]! हमारी न जाइयो।
दामन निचोड़ दें तो फ़रिश्ते[3] वज़ू[4] करें॥

दुश्वार होती ज़ालिम, तुझको भी नींद आनी।
लेकिन सुनी न तूने टुक भी मेरी कहानी॥

मुहताज अब नहीं हम नासेह[5]! नसीहतोंके।
साथ अपने सब वोह बातें लेती गई जवानी॥

तेरी गलीमें मैं न चलूं और सबा[6] चले।
यूं ही ख़ुदा जो चाहे तो बन्देकी क्या चले॥

मूरतें क्या-क्या मिली हैं ख़ाकमें।
है दफ़ीना[7] हुस्नका[8] ज़ेरेज़मीं[9]॥

शादीकी और ग़मकी है दुनियामें एक शक्ल।
गुलको शगुफ़्ता[10] दिल कहो या तुम शिकस्ता[11] दिल॥

ऐ आंसुओ! न आवे कुछ दिलकी बात लबपर[12]।
लड़के हो तुम कहीं मत अफ़शाएराज़[13] करना॥

दर्देदिलके वास्ते पैदा किया इन्सानको।
वर्ना ताअ़त[14]के लिए कुछ कम न थे करोबियाँ[15]॥

---

[1]भीगे वस्त्र [2]धर्माचार्य [3]देवता [4]नमाज पढ़नेसे पूर्व शुद्धिके लिए हाथ-पांव आदि धोना [5]उपदेशक [6]हवा, [7]ख़ज़ाना; [8]सौन्दर्यका, [9]पृथ्वीके नीचे [10]खिला हुआ, [11]कुम्हलाया हुआ; [12]ओठोंपर, [13]भेद प्रकट करना, [14]ईश्वराराधनाके [illegible], [15]देवता।

हम तुझसे किस हविस[1] की फ़लक[2]! जुस्तजू[3] करें ?
दिल ही नहीं रहा है जो कुछ आरज़ू[4] करें ।।

क़ासिद[5]! नहीं यह काम तेरा अपनी राह ले ।
उसका पयाम[6] दिलके सिवा कौन ला सके ?

रौंदे है नक़्शेपाकी[7] तरह ख़ल्क़[8] यां मुझे ।
ऐ उम्रेरफ़्ता[9]! छोड़ गई तू कहां मुझे ?

बाहर न आ सकी तू क़ैदेख़ुदीसे[10] अपनी ।
ऐ अक़्ले बेहक़ीक़त,[11] देखा शऊर तेरा !

किनारेसे किनारा कब मिला है बहरका[12] यारो !
पलक लगनेकी लज्जत दीदएपुरआब[13] क्या जाने ?

अर्ज़ो[14] समा[15] कहां तेरी वुस्अतको[16] पा सके ।
मेरा ही दिल है वोह कि जहां तू समा सके ।।

किधर बहकी फिरती है ऐ बेकसी[17] ! तू ।
तेरी जिन्सका[18] यां ख़रीदार मैं हूं ।।

ख़ुदा जाने क्या होगा अंजाम[19] इसका ।
मैं बेसब्र इतना हूं, वोह तुन्दख़ू[20] है ।।

---

[1]तृष्णाकी, इच्छाकी; [2]आकाश; [3]इच्छा; [4]निवेदन; मांग; [5]पत्रवाहक; [6]सन्देश; [7]चरण-चिन्हकी; [8]जगत; [9]बीता हुआ जीवन; [10]अहंकारके बन्धनसे; [11]तथ्यरहित, असलियतसे दूर; [12]दरियाका; [13]आंसू भरे नेत्र; [14]पृथ्वी; [15]आकाश; [16]विशालताको; [17]मजबूरी; [18]वस्तुका;

तूफ़ानेनूह ने तो डुबोई ज़मीं फ़कत।
मैं नगेख़ल्क[1] सारी ख़ुदाई[2] डुबो गया॥

हिजाबेरुख़ेयार[3] थे आप ही हम।
खुली आँख जब कोई परदा न देखा॥

करे क्या फ़ायदा नाचीज़को तक्लीद[4] अच्छोंकी।
कि जम जानेसे कुछ ओला तो गौहर[5] हो नहीं सकता॥

हरदम बुतोंकी सूरत रखता हूँ दिल नज़रमें।
होती है बुतपरस्ती अब तो ख़ुदाके घरमें॥

मुहब्बतने तुम्हारे दिलमें भी इतना तो सर खींचा।
क़सम खाने लगे तब हाय मेरे सरपै धर बैठे॥

क़ासिदसे कहो फिर ख़बर उधर ही को ले जाय।
याँ बेख़बरी आ गई जबतक कि ख़बर आय॥

तू अपने हाथों आप ही पडता है तिफ़र्केमें।
ऐ इम्तियाज़े नादाँ टुक इम्तियाज़ करना॥

अश्कने मेरे मिलाये कितने ही दरियाके पाट।
दामने सहरामें वर्ना इस क़दर कब फेर था॥

चटका अबस[6] नहीं कोई ग़ुंचा चमनमें आह!
ऐ तोसनेबहार[7]! तुझे ताज़याना[8] था॥

---

[1] अधम, [2] सृष्टि, [3] प्रेमिकाके कपोलोंके हयाके परदे, [4] अनुकरण; [5] मोती, [6] व्यर्थ, [7] बहाररूपी घोडे, [8] चाबुक।

जगमें आकर इधर-उधर देखा।
तू ही आया नज़र जिधर देखा॥

जानसे हो गये बदन ख़ाली।
जिस तरफ़ तूने आँखभर देखा॥

नाला, फ़रियाद, आह और ज़ारी।
आपसे हो सका सो कर देखा॥

इन लबोंने न की मसीहाई।
हमने सौ-सौ तरहसे मर देखा॥

सबके याँ तुम हुए करमफ़रमाँ।
इस तरफ़को कभी गुज़र न किया॥

कितने बन्दोंको जानसे खोया।
कुछ ख़ुदाका भी तूने डर न किया॥

आपसे हम गुज़र गये कबके।
क्या है ज़ाहिरमें जो सफ़र न किया॥

कौन-सा दिल है जिसमें ख़ाना ख़राब।
ख़ाना आबाद तूने घर न किया॥

रात मजलिसमें तेरे हुस्नके शोलेके हुज़ूर।
शमअ़के मुँहपै जो देखा तो कहीं नूर न था॥

तमन्ना है तेरी, अगर है तमन्ना।
तेरी आरज़ू है, अगर आरज़ू है॥

किसीको किस तरह इज़्ज़त है जगमें।
मुझे अपने रोनेसे ही आबरू है॥

ग़नीमत है ये दीद वादारियाँ।
जहाँ मुंद गई आँख मैं हूँ न तू है॥

नज़र मेरे दिलकी पडी 'दर्द' किसपर।
जिधर देखता हूँ वही रोबरू है॥

ज़िन्दगी है या कोई तूफ़ान है।
हम तो इस जीनेके हाथो मर चले॥

दोस्तो! देखा तमाशा याँ कि बस।
तुम रहो अब हम तो अपने घर चले॥

साक़िया[1] याँ लग रहा है चल-चलाव।
जब तलक बस चल सके साग़र चले॥

सीनये दिल हसरतोंसे छा गया।
बस हुजूमे यास[1] भी घबरा गया॥

मुद्दत तलक जहाँमें हँसते फिरा किये।
जीमें है खूब रोइये अब बैठकर कहीं॥

साक़ी मेरे दिलकी भी तरफ टुक निगाह कर।
लब तिश्ना मेरी बज़्ममें यह जाम रह गया॥

आ जाये ऐसे जीनेमे अपना तो जी बतग[2]।
आखिर जियेगा कब तलक ऐ खिज्र मर कहीं॥

२२ जून १६४४

---

[1]निराशा, [2]बेज़ार।

संगम
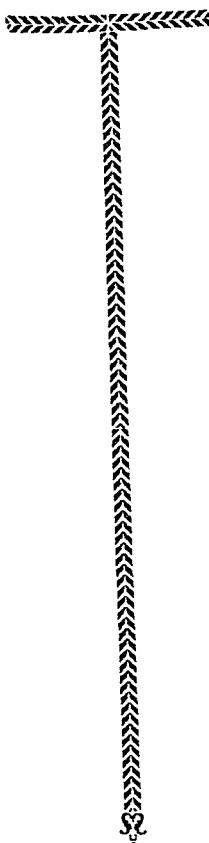
: ४ :

[उर्दू का प्रथम भारतीय विशुद्ध कवि]

३

वलीमुहम्मद 'नज़ीर' अकबराबादी

[१७४० से १८३० ई०]

जहाँ हिन्दू-मुस्लिम संस्कृति और भाषा, भेद-भाव भूलकर समीप-से-समीपतर होती हुई एकाकार हो गईं, ऐसे संगमका शिलारोपण अमीर खुसरोने १३वीं शताब्दीमें किया था; और उनके पीछे कबीर, जायसी, रहीम, आदि अनेक कवियोंने ४०० वर्षके लगातार कठोर परिश्रमसे उस संगमपर भाषा और भावका वोह प्रवाह ला दिया था कि जिसने उसमें एक बार डुबकी लगाई, आनन्दविभोर हो उठा। परन्तु वलीकी रंगीन तबियतको यह न भाया। उसने अपने कला-प्रदर्शनके लिए उस संगमको काटकर एक पृथक् नहर निकाली और प्रयत्न यह किया गया कि उस नहरमें भारतीय संस्कृति, भाव, भाषा रूपी पानी कम-से-कम आये। यही नहीं, उस नहरपर जो उद्यान लगाया गया उसमें आम, जामुन निबुओंके पेड़ोंको काटकर खजूर और ताड़के पेड़ लगाये गये। कोयलकी बोलती बन्द करके बुलबुलको चहकनेके लिए अरबसे लाया गया। भीम और अर्जुनके बुत तोड़कर रुस्तम और सामकी खयाली तसवीर गढ़ी गई। हिमालय-विन्ध्याचल तो नजरोंसे ओझल रहे, पर कोहेतूरको जरूर उठा लाये। पद्मिनी जैसी सुन्दरी और शीलवती नारीको तो भूल गये मगर तुर्की हूर जैसी असतीको न भूले। पृथ्वीराज-संयोगिता, जहाँगीर और नूरजहाँका प्रेम इन्हें लैला-मजनूँ और शीरीं-फ़रहादके आगे याद ही न आया। काश्मीरसे बढ़कर इन्हें मिस्रका बाजार रुचिकर लगा।

इसी कृत्रिम प्रदर्शनीमें मीर, सौदा, दर्द, जुरअत, हसन, इंशा, मसहफ़ी,

नासिख़ और आतिश जैसे कलाकार अपनी कलाका जौहर दिखला रहे थे। नज़ीरने भी यही आँखें खोली। यही शिक्षित-दीक्षित हुए; परन्तु इन्हें यह सकुचित क्षेत्र नही भाया। सामने ही अमीर ख़ुसरो द्वारा स्थापित विशाल सगम दिखलाई दे रहा था। अत नज़ीर वहाँसे भाग निकले और उस शुष्क और उजाड सगमपर आकर नज़ीरने अज़ान भी दी, और शख भी फूँका। तसबीह भी ली, और जनेऊ भी पहना। मुहर्रममें रोये तो होलीमें भडवे भी बने। रमज़ानमें रोज़े रखे और सलूनोपर राखी बाँधनको मचल पडे। शब्बरातपर महताबियाँ छोडी तो दीवालीपर दीप सँजोये। नबी, रसूल, वली, पीर, पैगम्बरके लिए जी भरकर लिखा, तो कृष्ण महादेव, नरसी, भैरो और नानकपर भी श्रद्धाञ्जलि चढाई। गुलोबुलबुलपर कहा तो आम और कोयलको पहले याद रखा। पर्देके साथ बसन्ती साडी भी याद रही। और तो और, गर्मी, बरसात और सर्दीपर भी लिखा। बच्चोंके लिए रीछका बच्चा, कौआ और हिरन, गिलहरीका बच्चा, तरबूज, पतगबाज़ी, बुलबुलोकी लडाई, ककडी, तैराकी, तिलके लड्डूपर लिखने बैठे तो बच्चे बन गये। हरएक बालक गली-कूचोमे गाता फिर रहा है। जवानो और बुड्ढोको नसीहत देने बैठे तो लोग वज्दमे आ गये। मानो कुरान, हदीस, वेद, गीता, उपनिषद् पुराण सब घोलकर पी जानेवाला कोई सिद्ध पुरुष बोल रहा है।

नज़ीर इन सब गुणोके कारण ही ख़ालिस हिन्दुस्तानी शायरके पदपर आसीन है। उन्होने सरल-सुबोध भाषामें जिन विषयोपर लिखा है, उनसे पहले किसीको यह ध्यान भी न आया कि ग़ज़ल, क़सीदे, मसनवी और मर्सियोके सिवा भी अपने चारो तरफ बिखरे हुए हालात, रीति-रिवाज और आवश्यकताओपर भी प्रकाश डाला जा सकता है। इसीलिए हमने नज़ीरको अन्य समकालीन शायरोमे पृथक् आसन दिया है।

मियाँ नज़ीरका जन्म क़रीब सन् १७४०में दिल्लीमें हुआ, और १६ अगस्त सन् १८३०में ६० वर्षकी आयु पाकर आगरेमें समाधि पाई। पिताकी मृत्युके बाद अपनी माँ और नानीको साथ लेकर आगरे आ गये थे, और यहीं बच्चोंको पढ़ाकर गुज़ारा करते थे। नज़ीर सन्तोषी जीव थे। लखनऊ और भरतपुर स्टेटके निमन्त्रणोंपर भी नहीं गये। अत्यन्त मृदुभाषी, हँसमुख, और मिलनसार थे। हिन्दू और मुसलमान सभी इनके प्रेमी थे। सभीसे दिलसे मिलते थे। हर मज़हबके उत्सवोंमें विना भेद-भाव शामिल होते थे। पक्षपात और मज़हवी दीवानगीको पासतक नहीं फटकने देते थे। जव मरे तो हज़ारों हिन्दू भी जनाज़ेके साथ थे। जवानीमें कुछ आशिक़ाना रंगमें भी रहे, और लिखा भी, मगर जल्द सम्हल गये।

नज़ीरके कलाममेंसे मामूली अशआर निकाल दिये जाएँ तो विद्वानोंका मत है कि वे बड़े-बड़े दार्शनिक और उपदेशकोंकी श्रेणीमें सरलतासे बैठाये जा सकते हैं।

नज़ीरके दीवानके कुछ शीर्षकोंमेसे १-१ या २-२ वन्द वतौर नमूना दिये जाते हैं। ऊपर जितने विषयोंका उल्लेख हुआ है, उन सवको देनेके लिये तो एक जुदी पुस्तककी ज़रूरत है। दूसरे, वर्त्तमानमें उर्दू-शायरी जिस बुलन्दीपर पहुँच गई है, उसको देखते हुए भी हमने लोभ संवरण किया है क्योंकि विजलीके प्रकाशके आगे शमाकी अब उतनी क़द्र कहाँ?

(१) कामुकवृद्ध :—

चाहें तो घूर डालें सौ ख़ूबरूको[1] दममें।
और मेले छान मारें वोह ज़ोर है क़दममें॥

---

[1] हसीनोंको।

सीना फड़क रहा है खूबांके[1] दर्दोग़मर्में।
पट्ठोमें वोह कहां है जो गर्मियां है हममें॥
अब भी हमारे आगे यारो! जवान क्या है?

(२) तन्दुरुस्ती और आबरू —

दुनियामें अब उन्हींके तई कहिए बादशाह।
जिनके बदन दुरुस्त है दिनरात सालोमाह॥
जिस पास तन्दुरुस्ती और हुरमतकी[2] हो सिपाह[3]।
ऐसी फिर और कौनसी दौलत है वाह वाह॥
जितने सखुन है सबमें यही है सखुन दुरुस्त—
"अल्लाह आबरूसे रखे और तन्दुरुस्त"॥

(३) कलियुग —

अपने नफेके वास्ते मत औरका नुकसान कर।
तेरा भी नुकसां होयगा इस बात ऊपर ध्यान कर॥
खाना जो खा तो देखकर, पानी जो पी तो छानकर।
यां पांवको रख फूंककर और खौफसे गुजरान कर॥
कलयुग नहीं कर-जुग है यह, यां दिनको दे और रात ले।
क्या खूब सौदा नक्द है, इस हाथ दे उस हाथ ले॥

(४) आटे-दालकी फिक्र —

इस आट-दाल ही का जो आलममें है जहूर[4]।
इससे ही मुहपे नूर है और पेटमें सरूर[5]॥

---

[1] माशूक [2] इज्जतकी आबरूकी, [3] सेना [4] प्रकाश, [5] बोलबाला [5] नशा।

इससे ही आके चढ़ता है चेहरेपै सबके नूर।
शाहोगदा[1] अमीर इसीके हैं सब नजूर॥
यारो ! कुछ अपनी फ़िक्र करो आटेदालकी।

(५-६) रोटियाँ :—

(वर्तमान भूखे भारतका क्या सजीव चित्रण है !)

पूछा किसीने यह किसी कामिल[2] फ़क़ीरसे—
"यह महरोमाह[3] हक़ने बनाये हैं काहेके" ?
वह सुनके बोला, "बाबा ! ख़ुदा तुझको ख़ैर दे।
हम तो न चाँद समझें न सूरज हैं जानते॥
बाबा ! हमें तो यह नजर आती हैं रोटियाँ"॥

रोटी न पेटमें हो तो कोई जतन न हो।
मेलेकी सैर ख़्वाहिशे बाग़ोचमन न हो॥
भूके ग़रीब दिलकी ख़ुदासे लगन न हो।
सच है कहा किसीने कि भूखे भजन न हो॥
अल्लाहको भी याद दिलाती हैं रोटियाँ॥

(७-८) कौड़ी का महत्व :—

कौड़ी बग़ैर सोते थे ख़ाली ज़मीनपर।
कौड़ी हुई तो रहने लगे शहनशीनपर[4]॥
पटके सुनहरे बँध गये जामोंकी चीनपर।
मोतीके लच्छे लग गये घोड़ोंकी ज़ीनपर॥

---

[1] बादशाह-फ़क़ीर; [2] योग्य; [3] चन्द्रसूर्य्य;
[4] शाही मसनदपर।

कौडीके सब जहानमें नक्शोनगीन है।
कौडी नहीं तो कौडीके फिर तीन-तीन हैं॥

गाली व मार खाते हैं कौडीके वास्ते।
शर्मोहया उठाते हैं कौडीके वास्ते॥
सौ मुल्क छान आते हैं कौडीके वास्ते।
मस्जिदको दममें ढाते हैं कौडीके वास्ते॥

कौडीके सब जहानमें नक्शोनगीन है।
कौडी नहीं तो कौडीके फिर तीन-तीन हैं॥

(९) पैसे की इज्जत —

जब हुआ पैसेका ऐ दोस्तो! आकर सयोग।
इशरतें[1] पास हुईं, दूर हुए मनके रोग॥
खायें जब माल, पियें दूध, दही, मोहनभोग।
दिलको आनन्द हुआ भाग गये सारे रोग॥
ऐसी खूबी है जहाँ आना हुआ पैसेका॥

(१०) होली —

मियाँ! तू हमसे न रख कुछ गुबार होलीमें।
कि रूठे मिलते हैं आपसमें यार होलीमें॥
मची है रंगकी कैसी बहार होलीमें।
हुआ है जोरे चमन आश्कार[2] होलीमें॥
अजब यह हिन्दकी देखी बहार होलीमें॥

---

[1] भोगविलास, [2] प्रकट।

(११-१२) दूसरी बहर में होली :—

क़ातिल जो मेरा ओढ़े इक सुर्ख़ शाल आया।
खा-खाके पान ज़ालिम कर होंट लाल आया॥

गोया निकल शफ़क़से[१] बदरेकमाल[२] आया।
जब मुँहपै वह परीरू[३] मलकर गुलाल आया॥
इस दमसे देख उसको होलीको हाल आया॥

ऐशोतरबका[४] साया है आज सब घर उसके।
अब तो नहीं है कोई दुनियामें हमसर[५] उसके॥

अज़माह[६] ता-ब-माही[७] बन्दे हैं बेज़र उसके।
कल वक़्तेशाम सूरज मलनेको मुँहपर उसके॥
रखकर शफ़क़के सरपर तश्तेगुलाल आया॥

(१३-१४) फ़क़ीर की सदा :—

दौलत जो तेरे पास है रख याद तू यह बात।
खा तू भी और अल्लाहको कर राहमें ख़ैरात॥

देनेसे इसीके तेरा ऊँचा रहे फिर हात।
और याँ भी तेरी गुज़रेकी सौ ऐशसे औक़ात॥

और वाँ भी तुझे सैर यह दिखलायेगी बाबा!
दाताकी तो मुश्किल कभी अटकी नहीं रहती।
चढ़ती है पहाड़ोंके ऊपर नाव सख़ीकी[८]॥

---

[१]सन्ध्याकालीन लालीसे; [२]पूर्णिमाका चन्द्रमा; [३]हसीन; [४]भोगविलासका; [५]मुक़ाबिल; [६]चन्द्रमासे; [७]मछलीतक; [८]दानीकी।

श्रौर तूने बुलीलीसे[1] अगर जमा उसे की।
तो याद रख यह बात कि जब आवेगी सख्ती ॥
दुश्कीमें तेरी नाव यह डुबवायेगी बाबा !!

(१५-१६) मृत्युकी आमद :—

यह ग्रस्प[2] बहुत कूदा-उछला, अब कोड़ा मार ज़मीर करो।
जब माल इकट्ठा करते थे अब तनका अपने ढेर करो ॥
गढ़ टूटा, लश्कर भाग चुका, अब म्यानमें तुम शमशीर करो।
तुम साफ लड़ाई हार चुके अब भागनेमें मत देर करो ॥
तन सूखा, कुबड़ी पीठ हुई, घोड़ेपर ज़ीन धरो बाबा।
अब मौत नक्कारा बाज चुका, चलनेकी फ़िक्र करो बाबा ॥

गर अच्छी करमी नेक अमल तुम दुनियामें ले जाओगे।
तो घर अच्छा-सा पाओगे, और सुखसे बैठके खाओगे ॥
ऐसी दौलतको छोड़के तुम जो खाली हाथों जाओगे।
फिर कुछ भी बन नहीं आवेगी, घबराओगे, पछताओगे ॥
तन सूखा, कुबड़ी पीठ हुई, घोड़ेपर ज़ीन धरो बाबा।
अब मौत नक्कारा बाज चुका, चलनेकी फ़िक्र करो बाबा ॥

(१७) खाक का पुतला :—

वोह शख्स थे जो सात विलायतके बादशाह।
हशमतमें[3] जिनकी अर्शसे[4] ऊँची थी बारगाह[5] ॥
मरते ही उनके तन हुए गलियोंकी खाके राह।
अब उनके हालकी भी यही बात है गवाह ॥
जो खाक्से बना है वोह आख़िरको खाक है ॥

---

[1] कंजूसीसे, [2] घोड़ा, [3] वैभवमें, [4] आकाशसे, [5] महल-कचेहरी।

(१८-२१) आदमी नामा :—

दुनियामें बादशाह है सो है वह भी आदमी ।
और मुफ़लिसोगदा[1] है सो है वह भी आदमी ॥
ज़रदार[2] बेनवा[3] है सो है वह भी आदमी ।
नेमत जो खा रहा है सो है वह भी आदमी ॥
टुकड़े जो माँगता है सो है वह भी आदमी ॥

मस्जिद भी आदमीने बनाई है याँ मियाँ !
बनते हैं आदमी ही इमाम[4] और ख़ुतबाख़्वाँ[5] ॥
पढ़ते हैं आदमी ही क़ुरान और नमाज याँ ।
और आदमी ही उनकी चुराते हैं जूतियाँ ॥
जो उनको ताड़ता है सो है वह भी आदमी ॥

याँ आदमीपै जानको वारे है आदमी ।
और आदमीपै तेगको मारे है आदमी ॥
पगड़ी भी आदमीकी उतारे है आदमी ।
चिल्लाके आदमीको पुकारे है आदमी ॥
और सुनके दौड़ता है सो है वह भी आदमी ॥

याँ आदमी नक़ीब[6] हो बोले है बार-बार ।
और आदमी ही प्यादे हैं और आदमी सवार ॥
हुक़्क़ा, सुराही, जूतियाँ दौड़ें बग़लमें मार ।
काँधेपै रखके पालकी हैं दौड़ते कहार ॥
और उसमें जो बैठा है सो है वह भी आदमी ॥

---

[1]दरिद्र और भिक्षु; [2]धनी; [3]चुप; [4]नमाज पढ़ानेवाला; [5]प्रवचन करनेवाले; [6]ढोंढी पीटनेवाला, ख़ुशामदी गीत गानेवाला ।

(२२) राखी :—

मची है हर तरफ़ क्या-क्या सलूनोंकी बहार अब तो।
हर एक गुलरू[1] फिरे है राखी बाँधे हाथमें खुश हो॥

हविस जो दिलमें गुज़री है, कहूँ क्या आह ! मैं तुमसे।
यही आता है जीमें बनके बाम्हन आज तो यारो !
मैं अपने हाथसे प्यारेके बाँधूँ प्यारकी राखी॥

(२३-२६) मुफ़लिसी :—

जब आदमीके हालपै आती है मुफ़लिसी।
किस-किस तरहसे उसको सताती है मुफ़लिसी॥
प्यासा तमाम रोज़ बिठाती है मुफ़लिसी।
भूखा तमाम रात सुलाती है मुफ़लिसी॥
ये दुख वो जाने जिसपै कि आती है मुफ़लिसी॥

मुफ़लिसकी कुछ नज़र नहीं रहती है आनपर।
देता है अपनी जान वोह एक-एक नानपर॥
हर आन टूट पड़ता है रोटीके ख़्वानपर[2]।
जिस तरह कुत्ते लड़ते हैं इक उस्तख़्वानपर[3]॥
वैसा ही मुफ़लिसोंको लड़ाती है मुफ़लिसी॥

हर आन दोस्तोंकी मुहब्बत घटाती है।
जो आश्ना[4] हैं उनकी तो उल्फ़त घटाती है॥

---

[1]हसीन, कमसिन, [2]टुकड़ोंपर; [3]हड्डियोंपर; [4]इष्टमित्र।

अपनेको महर,[1] ग़ैरको चाहत घटाती है।
शर्मोहया व ग़ैरतोहुरमत[2] घटाती है॥
हाँ, नाख़ून और बाल बढ़ाती है मुफ़लिसी॥

× × ×

जिस दिलजलेके ऊपर दिन मुफ़लिसीके आये।
फिर दूर भागे उससे सब अपने और पराये॥

आख़िरको मुफ़लिसीने यह दिन उसे दिखाये।
खाना जहाँ था बँटता वाँ जाके धक्के खाये॥
कम्बख़्तको जो खाना अक्सर मिला तो ऐसा॥

(२७-३३) बनजारानामा :—

टुक हिर्सोहविसको[3] छोड़ मियाँ मत देस-विदेस फिरै मारा।
क़ज़्ज़ाक़[4] अजलका[5] लूटे है दिन-रात बजाकर नक़्क़ारा॥
क्या बधिया, भैंसा, बैल, शुतुर[6] क्या गोनी, पल्ला, सर भारा।
क्या गेहूँ, चावल, मोठ, मटर, क्या आग, धुआँ और अंगारा॥
सब ठाट पड़ा रह जायेगा जब लाद चलेगा बनजारा॥

गर तू है लक्खी बनजारा और खेप भी तेरी भारी है
ऐ ग़ाफ़िल! तुझसे भी चढ़ता यह और बड़ा व्यापारी है॥
क्या शक्कर, मिसरी, क़न्द, गरी क्या साँभर, मीठा खारी है।
क्या दाख़, मुनक़्क़ा, सोंठ, मिरिच क्या केसर, लौंग, सुपारी है॥
सब ठाट पड़ा रह जायेगा जब लाद चलेगा बनजारा॥

---

[1]कृपा; [2]लाज-इज़्ज़त; [3]तृष्णा और अभिलाषा; [4]लुटेरा; [5]मृत्युका; [6]ऊँट।

कुछ काम न आवेगा तेरे यह लाल, ज़मुर्रद[1], सीमोज़र[2]।
सब पूंजी बाटमें बिखरेगी जब आन बनेगी जान ऊपर॥
नौबत नक्कारे-बान-निशां-दौलत-हशमत-फौजें-लश्कर।
क्या मसनद-तकिया, मुल्क मकां क्या चौकी-कुर्सी-तख़्त छतर॥
सब ठाट पड़ा रह जायेगा जब लाद चलेगा बनजारा॥

> मग़रूर न हो तलवारोंपर मत भूल भरोसे ढालोंके।
> सब पटा तोड़के भागेंगे मुंह देख अजलके भालोंके॥
> क्या डब्बे मोती-हीरोंके क्या ढेर खज़ाने मालोंके।
> क्या बुग़चे तार-मुशज्जरके, क्या तख़्ते शाल-दुशालोंके॥
> सब ठाट पड़ा रह जायेगा जब लाद चलेगा बनजारा॥

क्या सख़्त मकां बनवाता है, खम तेरे तनका है पोला।
तू ऊँचे कोट उठाता है वां तेरी गोरने मुंह खोला॥
क्या रती-खन्दक रन्द बड़े, क्या बुर्ज-कँगूरा अनमोला।
गढ़ कोट-रहकला-तोप किला, क्या सीसा-दारू और गोला॥
सब ठाट प॰॰ा रह जायेगा जब लाद चलेगा बनजारा॥

> जब चलते-चलते रस्तेमें यह गौन तेरी ढल जावेगी।
> एक बधिया तेरी मिट्टीपर फिर घास न चरने आवेगी॥
> यह खेप जो तूने लादी है सब हिस्सोंमें बँट जावेगी।
> धी पूत-जँवाई-बेटा क्या, बनजारन पास न आवेगी॥
> सब ठाट पड़ा रह जायेगा जब लाद चलेगा बनजारा॥

जब मरां फिराकर चाबुकको यह बैल बदनका हाँकेगा।
कोई नाज समेटेगा तेरा, कोई गौन सिये और टाँकेगा॥

---

[1]रत्न [2]धनदौलत।

हो ढेर अकेला जंगलमें तू ख़ाक लहदकी फाँकेगा।
उस जंगलमें फिर आह! 'नज़ीर' एक तिनका आन न झाँकेगा ॥
सब ठाट पड़ा रह जायेगा जब लाद चलेगा बनजारा ॥

(३४-३८) कुछ दोहे :—

कूक करूँ तो जग हँसे, और चुपके लागे घाव।
ऐसे कठिन सनेहवा, किस बिध करूँ उपाव ॥
जो मैं ऐसा जानती, प्रीत किये दुख होय।
नगर ढिंढोरा पीटती, प्रीत न कीजो कोय ॥
आह दई कैसी भई, अनचाहतके संग।
दीपकके भावें नहीं, जल-जल मरे पतंग ॥
विरह आग तनमें लगी, जरन लगे सब गात।
नाड़ी छूवत बैद्यके, पड़े फफोला हात।
दिल चाहे दिलदारको, तन चाहे आराम।
दुविधामें दोनों गये, माया मिली न राम ॥

(३९-४२)

हुशयार यार जानो, ये दश्त है ठगोंका।
याँ टुक निगाह चूकी, और माल दोस्तोंका ॥
सब जीते जीके झगड़े हैं सच पूछो तो क्या ख़ाक हुए।
जब मौतसे आकर काम पड़ा सब क़िस्से क़ज़िये पाक हुए ॥
डरती है रूह यारो ! और जी भी काँपता है।
मरनेका नाम मत लो, मरना बुरी बला है ॥
दो चपातीके वरक़में सब वरक़ रोशन हुए।
इक रकाबीमें हमें चौदह तबक़ रोशन हुए ॥[१]

(४३)

जिस काम को जहाँ में तू आया था ऐ 'नज़ीर'!
ख़ानाख़राब ! तुझसे वही काम रह गया।।

(४४)

देखले इस चमनेदहरको दिल भरके 'नज़ीर'!
फिर तिरा काहेको इस बाग़में आना होगा।।

(४५)

थमा न अश्क न नींद आई, ना पलक झपकी।
बसा है जबसे वह ख़ानाख़राब आँखोंमें।।

(४६)

ग़रूरने तो हमारे बहुत ही खींचा सर।
पर उसको हम भी सदा ख़ाकमें मलूए गये।।

ज्योत्स्ना
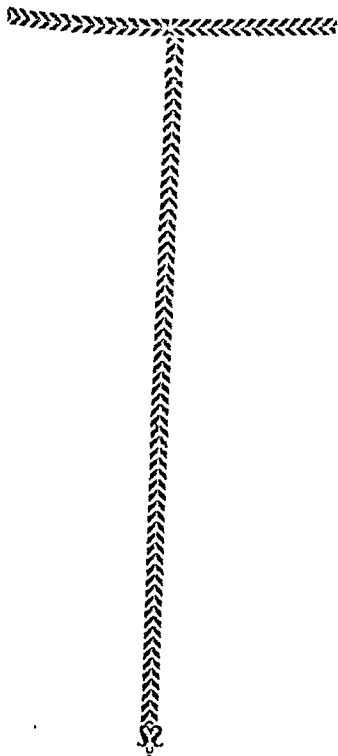
: ५ :

उर्दू-शायरी जवानीकी चौखटपर

[सन् १८०० से १९०० तकके अमर कलाकार]

भरते हैं मेरी आहको वोह ग्रामोफ़ोनमें।
कहते हैं फ़ीस लीजिए और आह कीजिए॥
—'अकबर'

यही दयनीय स्थिति ज़ौक़की थी। बादशाह उन्हें चैन ही नहीं लेने देता था। दिनमें कई-कई गज़लोंके एक-एक या दो-दो मिसरे लिखकर दे देता था और उस्तादकी हैसियतसे उन सब गज़लोंको ज़ौक़को पूरा करनी पड़ती थी। इसपर भी बस होती तो ग़नीमत थी। बादशाहको तो वहशत सवार रहती थी। किसी कुँजड़ेकी आवाज़ सुनी—

मज़ा अंगूरका है रंगतरेमें[1]।

—और बादशाहकी तबियत फड़क उठी। 'भई उस्ताद क्या मिसरा हुआ है। इसपर अभी एक गज़ल तो कहो।' उस्ताद अभी गज़ल कह ही रहे थे कि चूरनवालेका नग़मा जो सुनाई दिया—

तेरे मन चलेका सौदा है खट्टा और मीठा।

—तो फड़क उठे— सुना उस्ताद! कैसा चटपटा मिसरा है। इसपर भी गज़ल कहनी होगी। यह गज़ल हुई तो फ़क़ीरकी सदा आई—

कुछ राहेख़ुदा दे जा, जा तेरा भला होगा।

सदा बादशाहको पसन्द आ गई। इसपर भी गज़ल बनी। तो फिर किसी भिखारीकी आवाज़पर रीझ गए। कोई लड़का गाता हुआ निकल गया तो पूरी गज़ल उसी वक़्त सुननेको बेक़रार हो गए। और उसपर भी तुर्रा यह कि आज शाहज़ादोंकी बाज़ी हुई जिसे पर्चा है उसका जश्न है। कल उनके गुड्डे गुड़ियोंके विवाहका सेहरा लिखना है। परसों सलतनत आनमकी कमियाब फिर रातें आयेंगी। बादशाहने बुखारसे ग़ुस्लेसेहत किया है। इन सबके लिये मसालिसवादियों लिखनी

[1] सन्तरेमें।

है, जो हुस्नपरस्तकी उम्मो यौवनके पाँवमें मोच आ गई है, गुलबदन चाँदनीकी कोमलताको बुखार हो गया है घसीटा मालीको फाँस लग गई है उगालदान साफ करनेवालीकी आँख आ गई है। इन सबके लिये भी मिजाजपुर्सीमें कुछ-न-कुछ लिखना ही है।

इन सब बेहूदगियोंसे जौक आजिज रहते थे। पर करते क्या? लाचार थे। प्रतिष्ठाका मोह उन्हें यह कड़वा घूँट पीनेको मजबूर करता था। आह! इकबालने क्या फर्मा दिया है —

ऐ ताइरेलाहूती[1] ! उस रिज्कसे[2] मौत अच्छी।
जिस रिज्कसे आती हो परवाजमें[3] कोताही[4] ॥

इस रिज्क और सोनेके पिंजरेका मोह विरलोंसे ही छूटता है। जौक अपना निजी कलाम बादशाहको सुनाते न थे। उनके सुप्रसिद्ध शिष्य मौलाना आजाद लिखते हैं—"अगर जौककी गजल किसी तरह बादशाह तक पहुँच जाती तो वह उसी गजलपर खुद गजल कहता था। अब अगर नई गजल कहकर दें और वह अपनी (जौककी) गजलसे पस्त हो तो बादशाह भी बच्चा न था। ७० वर्षका सखुनफहम (काव्य-मर्मज्ञ) था और अगर अपनी गजलसे चुस्त बनाकर दें तो अपने कहेको आप मिटाना भी कोई आसान काम नहीं। लाचार अपनी गजलमें बादशाहका उपनाम 'जफर' डालकर दे देते थे। बादशाहको बड़ा खयाल रहता था कि जौक खुदकी चीजपर जोरेतबा (बुद्धिबल) न खर्च करे। जब उनके शौकको किसी तरफ मुतवज्जह (तल्लीन) देखता तो बराबर अपनी गजलोंका तार बाँध देता कि जो कुछ जोशेतबा (हृदयके भाव उमड़ते) हो इधर ही आ जाएँ।"

---

[1] सीमा-रहित आकाशमें उड़नेवाला पक्षी, [2] रोजीसे, जीविकासे, [3] उड़ानमें; [4] कमी।

यह युग उर्दू-शायरीके लिये नेमत है। इस युगमें 'गालिब', 'ज़ौक़', 'मोमिन' जैसे उस्तादगर पैदा हुए, जिनके शिष्य 'हाली', 'दाग़', 'आज़ाद' भी उस्तादोंके उस्ताद हुए हैं। इन सबने वह जीवन-ज्योति जलाई कि उर्दू-शायरीके निर्जीव शरीरमें जाज्वल्यमान प्राणोंका सचार हो उठा। वर्तमान उर्दू-बज़्ममें इन्हींकी ज्योतिका उजाला है।

४

शेख़ मुहम्मद इब्राहीम 'ज़ौक़'

[सन् १७८९-१८५४ ई०]

शेख़ ज़ौक़ कीचड़में कमलकी तरह उत्पन्न हुए। कमल ही की तरह विकसित हुए, वैसा ही सौरभ फैला। कमलकी तरह बादशाहके सरपर चढ़ाये गये और सर चढ़े हुए कमलकी ही तरह उनका सौरभ दिन-दूना रात-चौगुना फैलनेसे रह गया।

शेख ज़ौक़ एक ग़रीब साधारण सिपाहीके पुत्र थे। अपनी प्रतिभाके बलपर अनेक विघ्न-बाधाओंको रौंदते हुए शाही दरबारमें प्रवेश पाया और वहाँ बहादुरशाह बादशाहके काव्य-गुरुके आसनपर प्रतिष्ठित हुए। एक कविको जितनी अधिक-से-अधिक ख्याति और राजकीय प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए, उतनी उन्हें मिली; पर यही प्रतिष्ठा उनकी कलाके लिये राहु बन गई।

एक बुलबुल जो चुपचाप चमनमें रहकर अपने जीवनको सानन्द व्यतीत कर सकती थी, वही नग़मये पुरदर्द छेड़नेपर बैठे-बिठाये शिकार हो गई :—

> नग़मयेपुरदर्द[1] छेड़ा मैंने इस अन्दाज़से।
> ख़ुद-ब-ख़ुद पड़ने लगी मुझपर नज़र सैयादकी॥

वोह बुलबुल जो आज़ाद रहकर इस शाख़से उस शाख़पर फुदकती हुई चहकती, सोनेके पिंजरेमें बन्द होकर उसे वोह बोल गाने पड़े जो पिंजरेवाला चाहता था।

---

[1] व्यथासे ओतप्रोत संगीत।

नरन ह मेरी ब्राहको वोह प्रामोशनम।
कहने ह फीस लीजिए और ब्राह कीजिए॥

—'अकबर'

मना स्पनाव स्थिति जारका था। बादशाह उन्चन हा नहा लन ना था। जिनम कई-कई गजलाट एक-एक या दोन्दो मिसर लिखद न ना था और उस्नादिका तमिदनम व मत्र गजल जौक़ सान्वका पग करना पन्ना था। इतनेपर भी बम नाना ना गनामन था। बाग्गानका ना वग्गन मवार ग्गना था। किसी लडन्का आवाज़ सुना—

मजा अगूरका ह रगतरम।

—और बान्गाहका तबियत लाग्गार हुई। 'भ उस्ताद का मिसरा हुआ ह। इसपर अभी एक गज़ल ना कग्ना। ग्गनापर अभी गज़ल कर ना रह थ कि चग्नवालका लग्का जा सुनाई दिया—

तेर मन चलका सौदा ह खट्टा और मीठा।

—ना फग्क उठ— सुना ग्म्नाद ! क्या मज़ेदार मिसरा ह! इसपर भी गज़ल कहनी होगा। यह गज़ल हुई तो फक़ीरकी सदा आई—

कुछ राहखुदा दे जा ना तेरा भला होगा।

मना बान्गाहको पसन्द आ गई। इसपर भा गज़ल ना। ग फिर किसी मनिहारकी आवाज़पर राझ गय। कोई लड़का गाना हुआ निकल गया ना पूरा गज़ल उसी वक्त सुननका दरबार हा गय। और उसपर भा नहीं न कि आज शाहजादाका बारा हुन मिर फल न उनका जग्न ह। कल उसके लड़के विवाहका सेहरा निकला ह। परसों सलतनत आलमकी कनियाकै पिल्ल आख खोलग। बादशाहने अक्रामसे ग़ुस्लसेहत किया न इन सबके लिये मबारिकबादियाँ लिखना

---

[1] सन्तरम।

हैं, तो हरमसराकी छम्मो धोबनके पांवमें मोच आ गई है, गुलबदन लौंडीकी कोमलको बुख़ार हो गया है, घसीटा मालीको फाँस लग गई है, उगालदान साफ़ करनेवालीकी आँख आ गई है। इन सबके लिये भी मिज़ाजपुर्सीमें कुछ-न-कुछ लिखना ही है।

इन सब बेहूदगियोंसे ज़ौक़ आजिज़ रहते थे। पर करते क्या? लाचार थे। प्रतिष्ठाका मोह उन्हें यह कास्ट्राइल पीनेको मजबूर करता था। आह! इक़बालने क्या फ़र्मा दिया है :—

ऐ ताइरेलाहूती[1] ! उस रिज़क़से[2] मौत अच्छी।
जिस रिज़क़से आती हो परवाज़में[3] कोताही[4]॥

इस रिज़क़ और सोनेके पिंजरेका मोह विरलोंसे ही छूटता है। ज़ौक़ अपना निजी कलाम बादशाहको सुनाते न थे। उनके सुप्रसिद्ध शिष्य मौलाना आज़ाद लिखते हैं—"अगर ज़ौक़की ग़ज़ल किसी तरह बादशाह तक पहुँच जाती तो वह उसी ग़ज़लपर ख़ुद ग़ज़ल कहता था। अब अगर नई ग़ज़ल कहकर दें और वह अपनी (ज़ौक़की) ग़ज़लसे पस्त हो तो बादशाह भी बच्चा न था। ७० वर्षका सख़ुनफ़हम (काव्य-मर्मज्ञ) था और अगर अपनी ग़ज़लसे चुस्त बनाकर दें तो अपने कहेको आप मिटाना भी कोई आसान काम नहीं। नाचार अपनी ग़ज़लमें बादशाहका उपनाम 'ज़फ़र' डालकर दे देते थे। बादशाहको बड़ा ख़याल रहता था कि ज़ौक़ ख़ुदकी चीज़पर ज़ोरेतबा (बुद्धिबल) न ख़र्च करें। जब उनके शौक़को किसी तरफ़ मुतवज्जह (तल्लीन) देखता तो बराबर अपनी ग़ज़लोंका तार बाँध देता कि जो कुछ जोशेतबा (हृदयके भाव उमड़ते) हों इधर ही आ जाएँ।"

---

[1] सीमा-रहित आकाशमें उड़नेवाला पक्षी; [2] रोज़ीसे, जीविकासे; [3] उड़ानमें; [4] कमी।

ऐसी स्थितिमें जो भी ज़ौक़के नामसे मिलता है और आज भी जो उनको प्रतिष्ठा प्राप्त है, गनीमत है। काश! वे इस बन्धनसे स्वतन्त्र हुए होते तो न जाने उर्दू-साहित्यका खजाना कैसे-कैसे अनमोल मोतियोंसे भर जाता! स्वयं ज़ौक़ दुखी होकर एक जगह कराह उठते हैं :—

'ज़ौक़' मुरत्तिब[1] क्योंकि हो दीवाँ, शिकवयेफ़ुर्सत[2] किससे करें?
बाँधे गलेमें हमने अपने आप 'ज़फ़रके' झगड़े हैं॥

ज़ौक़ कहनेको बादशाहके उस्ताद थे, मगर वेतन नाममात्रको मिलता था। गोया शाही प्रतिष्ठाको ही ओढ़ते, बिछाते और चाटते थे। जब बहादुरशाह युवराज थे और अपने पिता अकबरशाहसे निरस्कृत-से थे, तब उनको ५०० रु० मासिक मिलता था। उसीमेंसे ४ रु० मासिक ज़ौक़ पाते थे। जब बहादुरशाह बादशाह हुए तो ज़ौक़का ३० रु० मासिक वेतन कर दिया गया। ऐरे-ग़ैरे निहाल होने लगे। जिन्हें बात करनेकी तमीज नहीं, मालामाल कर दिये गये। चापलूस और धोखेबाज दोनों हाथोंसे दौलत लूटने लगे। मगर ज़ौक़को उस्तादीकी ज़रींन मसनदपर बिठा देना ही अहसानकी हद समझी गई। खानेको गम और पीनेको आँसू गोया उनके लिये काफ़ी थे। ज़ौक़ने इस उपेक्षासे तंग आकर क्या खूब कहा है —

यूँ फिरे अहलेकमाल[3] आशुफ़्ताहाल[4] अफ़सोस है।
ऐ कमाल अफ़सोस है, तुझपर कमाल अफ़सोस है॥

दुनियाकी नज़रमें उनकी यह इज्ज़त उनके लिये वबालेजान रही होगी। बादशाही शानके मुताबिक रहन-सहनका मेयार और पग-पगपर व्यक्तित्वका खयाल रखना होता होगा। नाई, धोबी, कुम्हार,

---

[1] सम्पूर्ण, [2] अवकाश न मिलनेकी शिकायत, [3] गुणी, [4] फटेहाल दुखी।

मिस्सी, हलवाइयों वगैरह बात-बातमें इनामकी इच्छा रखते होंगे। और बादशाहके उस्ताद हैं तब दुकानदार भी नरमी और बढ़िया चीज़ कैसे दिया न दें ? ज़ौक़के हाथमें आते-आते सवाई-ड्योढ़ी क़ीमत न हुई तो क्या ये शौक़ीनोंके भरोसेपर इतना सामान लिये बैठे हैं ? फिर बहन-बेटियाँ क्यों यूँ ही मान जाएँ। पहलेमें नवाब साहबने ही जब अपनी बहन-भतीजियोंको इतना दिया है तो भला बादशाहके उस्ताद होकर क्या उनसे भी घटिया रहेंगे ? अब ज़ौक़ किसको बताएँ कि भाई ४ रु० से रो-रो करके १०० रु० तनख्वाह हुई है। कहते भी लाज आए और जो सुने उसे यक़ीन न आए; और आए तो बजाय प्यारके नफ़रत आए। हाथीकी सूँड बराबर जल दो आनेपर वह जितना खुश होगा उतने ही शेख़ ज़ौक़ भी रहे होंगे।

ज़ौक़ अत्यन्त दयालु, सहृदय थे। इस सम्बन्धमें मौ० आज़ाद लिखते हैं—"उन्होंने उम्रभर अपने हाथसे जानवर ज़िबह (क़त्ल) नहीं किया। आलमेजवानीका उस्ताद ज़िक्र करते थे कि यारोंमें एक मुजर्रिब नुसख़ा क़ुव्वतेबाह् (ताक़तकी दवा)का बड़ी कोशिशोंसे हाथ आया। शरीक होकर उसके बनानेकी बात ठहरी। एक-एक जुज़ (वस्तु-हिस्सा) बहम पहुँचाना (प्रस्तुत करना) एक-एक शख़्सके ज़िम्मे हुआ। चुनांचे ४० चिड़ियोंका मग़ज़ हमारे सर हुआ। हमने घर आकर उनके पकड़नेका सामान फैला दिया और दो-तीन चिड़े पकड़कर एक पिंजरेमें डाले। उनका फड़कना देखकर ख़याल आया कि इब्राहीम, एक पलके मज़ेके लिये ४० बेगुनाहोंको मारना क्या इन्सानियत है ? यह भी तो आख़िर जान रखते हैं। उसी वक़्त उठा, उन्हें छोड़ा और सब सामान तोड़-फोड़कर यारोंमें जाकर कह दिया कि भई हम उस नुस्ख़ेमें शरीक नहीं होते।

"एक रोज रातके वक़्त टहलते हुए आये और कहने लगे कि मियाँ ! अभी एक साँप गलीमें चला जाता था। एकने कहा—आपने उसे मारा

नहा न किसीकी आवाज़ ही दी। फर्माया कि ख़याल तो मुझे भी आया था, मगर मैंने फिर कहा कि यह भी तो जान रखता है।

एक दफ़ा बरसातका मौसम था। बादशाह कुतुबमें थे। और हमेशा साथ होते थे। उस वक्त आप क़सीदा लिख रहे थे। चिड़ियाँ मालदानमें तिनके रखकर घोंसला बना रही थीं। जो तिनके गिरते थे उनके वे उठानेको इधर उधर आती थीं। एक चिड़िया सरपर आन बैठी। उन्होंने प्रथम उड़ा दिया। थोड़ी देरमें फिर आ बैठी। उन्होंने फिर उड़ा दिया। जब कई दफ़ा ऐसा हुआ तो हँसकर कहा कि इसने सर सरको कबूतरका छतरा बनाया है। एक ख़ास शागिर्दने पूछा और मालूम होने पर कहा कि हमारे सरपर तो नहीं बैठती। उस्ताद ज़ौक़ने कहा—वह क्योंकर जानती है कि यह मुल्ला है। आलिम (विद्वान) है शायर (करामतदश्य) है। अभी कलमा पढ़ेगा और हलाल कर देगा। दीवाना है जो तुम्हारे सरपर आये?

नमाज़के लिये नहाकर वज़ू करते थे और एक लोटा पानीसे बराबर कुल्लियाँ किये जाते थे। एक दिन सबब पूछनेपर फ़र्माया—ख़ुदा जाने क्या-क्या हज़लियात (गन्दी बात) ज़बानसे निकलती हैं और एक ठंडी साँस भरकर यह मतला उसी वक्त पढ़ा —

> पाक रख अपना दहा जिक्रेख़ुदायपाकसे।
> कम नहीं हरगिज़ ज़बाँ मुहमें तेरे मिसवाकसे[१] ॥"

नमाज़के बाद वज़ाइफ़ पढ़ते और फिर दुआएँ शुरू होतीं। दुआएँ अपने लिये ही नहीं ग़रीबोंकी भलाईके लिये भी माँगते थे। आबेहयातमें लिखा है कि उनके दरवाज़ेके सामने मुहल्लेका हलालख़ोर (महतर जमा) रहता था। उन दिनों उसका बैल बीमार था। दुआएँ माँगते-माँगते

कतुब मीनारके रमणीक स्थानमें [१]मुह, [१]दतौनस।

वोह भी याद आगया। कहा कि "इलाही ! जुम्मा हलालखोरका बैल बीमार है; उसे भी शफ़ा दे। बिचारा बड़ा ग़रीब है। बैल मर गया तो वह भी मर जायेगा।"

उक्त चन्द उद्धरणोंसे उनके हृदयका परिचय मिल जाता है। शेख ज़ौक़ बचपनसे ही व्युत्पन्न थे। १९ वर्षकी आयुमें तो अकबरशाह बादशाहने इन्हें 'खाक़ानिएहिन्द' जैसी महान् पदवीसे विभूषित किया था। इससे बड़े-बड़े ध्वजाधारियोंको बहुत मलाल हुआ था। उसके बाद 'मलिक उल्शोरा'की उपाधि भी प्राप्त हुई।

इन्होंने ७५० दीवानोंका अध्ययन किया और उनपर टीकाएँ लिखीं। इसके अतिरिक्त इतिहास, ज्योतिषका बहुत अच्छा ज्ञान था। प्रभावशाली व्याख्यानदाता भी थे।

बक़ौल मुसन्निफ़ 'तारीखे अदबे उर्दू'—"ज़ौक़का बहुत बड़ा कारनामा यह है कि उन्होंने ज़बानको खूब साफ़ किया और उसपर जिला दी। वे महावरात और मिसालके इस्तैमालमें अपना जवाब नहीं रखते। ...उनकी ग़ज़लें ताज़गीयेमज़मून, खूबीयेमहावरात, सादगी और सफ़ाईके लिये मशहूर हैं।....आस्मानेशाइरीपर ज़ौक़ एक दरख़्शाँ (तारा) बनकर चमके और ज़बाने उर्दूके बेहतरीन शोराओंमें उनका शुमार किया जा सकता है।"

ज़ौक़ ई० सन् १७८९में दिल्लीमें उत्पन्न हुए और ६५ वर्षकी आयु पाकर १८५४में स्वर्गासीन हुए। मरनेसे ३ घंटे पूर्व आपने यह शेर कहा था :—

कहते हैं आज ज़ौक़ जहाँसे गुज़र गया।
क्या खूब आदमी था, खुदा मग़फ़रत करे॥

आपके अनेक शिष्य थे, जिनमें मौलवी मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद' और 'दाग़' अत्यन्त प्रसिद्ध हुए हैं।

ऐ 'ज़ौक़' होश गर है तो दुनियासे दूर भाग।
इस मैकदेमें[1] काम नहीं होशयारका॥

दुनियाका ज़रोमाल किया जमा तो क्या 'ज़ौक़'।
कुछ फ़ायदा बेदस्तेरस[2] उठ नहीं सकता॥

सुर्मयचश्मेग्रज़ीज़ाँ[3] न बना मैं ऐ चर्ख़[4]!
क्या बना ख़ाक? गुबारेदिलेग्रहबाब[5] बना॥

आनेसे, मेरे ठहर गए आप वगर्ना।
आनेका इरादा तो कहीं हो ही चुका था॥

मौतने कर दिया नाचार वगर्ना इन्सॉ।
है वह ख़ुदबीं[6] कि ख़ुदाका भी न क़ायल होता॥

उसने जब माल बहुत रद्दोबदलमें मारा।
हमने दिल अपना उठा अपनी बग़लमें मारा॥

मज़कूर[7] तेरी बज़्ममें[8] किसका नहीं आता?
पर ज़िक्र हमारा नहीं आता, नहीं आता॥

क्या जाने उसे वहम है क्या मेरी तरफ़से।
जो ख़्वाबमें[9] भी रातको तनहा[10] नहीं आता॥

साथ उनके हूँ मैं, सायेकी[11] मानिन्द व लेकिन।
उसपर भी जुदा हूँ कि लिपटना नहीं आता॥

---

[1] शराबख़ानेमें [2] दान बिना [3] प्यार स्नेहीके नेत्रोंका सुर्मा [4] आसमान [5] इष्टमित्राके हृदयका मैल [6] घमंडी [7] ज़िक्र [8] वह स्थान जहाँ आमोद प्रमाद हो रंगस्थलमें [9] स्वप्नमें, [10] अकेला [11] परछाईंकी।

क़िस्मतसे ही लाचार हूँ ऐ 'ज़ौक़' वगर्ना।
हर फ़नमें हूँ मैं ताक़[1] मुझे क्या नहीं आता ?

ज़ाहिद[2] शराब पीनेसे काफ़िर[3] हुआ मैं क्यों ?
क्या डेढ़ चुल्लू पानीमें ईमान बह गया ?

देख, छोटोंको है अल्लाह बड़ाई देता।
आसमाँ, आँखके तिलमें है दिखाई देता॥

मुँहसे बस करते न हरगिज़ ये ख़ुदाके बन्दे।
गर हरीसोंको[4] ख़ुदा सारी ख़ुदाई[5] देता॥

तू हमारी ज़िन्दगी, पर ज़िन्दगीकी क्या उमीद ?
तू हमारी जान लेकिन क्या भरोसा जानका ?

जो फ़रिश्ते[6] करते हैं, कर सकता है इन्सान भी।
पर, फ़रिश्तोंसे न हो, वह काम है इन्सानका॥

किसी बेकसको[7] ऐ बेदादगर[8]! मारा तो क्या मारा ?
जो आपी मर रहा हो उसको गर मारा तो क्या मारा ?

बड़े मूज़ीको[9] मारा नफ़्सेअम्माराको[10] गर मारा।
निहंगो[11] अज़दहा[12] ओ शेर नर मारा तो क्या मारा ?

न मारा आपको जो ख़ाक हो अक्सीर बन जाता।
अगर पारेको ऐ अक्सीरगर[13]! मारा तो क्या मारा ?

---

[1] होशियार; [2] भगतजी, परहेज़गार; [3] अधर्मी; [4] लालचियोंको; [5] सृष्टि; [6] देवता; [7] मजबूरको; [8] अत्याचारी; [9] पापीको; [10] इन्द्रिय विषय-वासनाको; [11] मगर मच्छ; [12] अजगर; [13] ताँबे और लोहेका सोना बनानेवाला।

तुफ़ंगोतीर[1] तो जाहिर न था कुछ पास क़ातिलके[*]।
इलाही फिर जो दिलपर ताककर मारा तो क्या मारा ?

पानी तबीब[2] दे है हमें क्या बुझा हुआ।
है दिल ही जिन्दगीसे हमारा बुझा हुआ॥

बेनिशाँ[3] पहले फनासे[4] हो, जो हो तुझको बक़ा[5]।
वर्ना है किसका निशाँ 'ज़ौक़' फ़नाने रक्खा॥

नशा दौलतका बदअतवारको[6] जिस आन चढ़ा।
सरपे शैतानके इक और भी शैतान चढ़ा॥

मौत उसको याद करती है ख़ुदा जाने कि गोर[7]।
यूँ तेरा बीमारेग़म जो हिचकियाँ लेने लगा॥†

रहता है अपना इश्क़में यूँ दिलसे मशवरा।
जिस तरह आश्नासे[8] करे आश्ना सलाह॥

आदमीयत और शै है, इल्म है कुछ और चीज़।
कितना तोतेको पढ़ाया, पर वोह हैवाँ ही रहा॥

---

[1] तोप बन्दूक।

[*] इसी भावका ग़ालिब का शेर है —

इस सादगीपै कौन न मर जाये ऐ ख़ुदा!
लड़ते हैं और हाथमें तलवार भी नहीं॥

[2] वैद्य, हकीम [3] अस्तित्वरहित, [4] मृत्युसे, बरबादीसे, [5] अमरत्व, ज़िन्दगी, [6] ओछे स्वभावीको, [7] क़ब्र, [8] परिचितसे, मित्रसे

†मुझे याद करनेसे यह मुद्दआ था।
निकल जाय दम हिचकियाँ आते आते॥ 'दाग़'

हम ऐसे साहिबेइस्मत[१] परीपैकरपै[२] आशिक़ हैं।
नमाजें पढ़ती हैं हूरें[३] हमेशा जिसके दामनपर॥

दिलको रफ़ीक़[४] इश्क़में अपना समझ न 'जौक़'।
टल जायगा यह अपनी बला तुझपै टालके॥

क्या आये तुम जो आये घड़ी दो घड़ीके बाद।
सीनेमें होगी साँस अड़ी दो घड़ीके बाद॥

राहतोरंज जमानेमें है दोनों लेकिन।
हाँ, अगर एकको राहत है तो है चारको रंज॥

दिखा न जोशोख़रोश इतना ज़ोरपर चढ़कर।
गये जहानमें दरिया बहुत उतर चढ़कर॥

मैं हूँ वोह गुमनाम जब दफ़्तरमें नाम आया मेरा।
रह गया बस मुंशियेक़ुदरत[५] जगह वाँ छोड़कर॥

कहा पतंगेने यह दारेशमअपर[६] चढ़कर।
"अजब मज़ा है जो मर ले किसीके सर चढ़कर"॥

हम उनकी चालसे पहचान लेंगे उनको बुर्क़ेमें।
हजार अपनेको वह हमसे छिपायें सरसे पाँवोंतक॥

सरापा[७] पाक[८] हैं धोये जिन्होंने हाथ दुनियासे।
नहीं हाजत[९] कि वह पानी बहाएँ सरसे पाँवोंतक॥

---

[१] सुशीला; [२] अत्यन्त सुन्दरीपर; [३] अप्सराएँ; [४] मित्र; [५] प्रकृतिकी ओरसे हिसाब रखने वाला बाबू; [६] मोमबत्तीरूपी सूलीपर; [७] अत्यन्त, बिल्कुल; [८] पवित्र; [९] आवश्यकता।

तुफ़ंगअन्दाज़[1] तो ज़ाहिर न था कुछ पास क़ातिलके।
इलाही फिर जो दिलपर ताककर मारा तो क्या मारा ?*

पानी तबीब[2] दे हैं हमें क्या बुझा हुआ।
है दिल ही ज़िन्दगीसे हमारा बुझा हुआ॥

बेनिशाँ[3] पहले फ़नासे[4] हो, जो हो तुझको बक़ा[5]।
यकी है किसका निशाँ 'ज़ौक़' फ़नाने रक्खा॥

नशा दौलतका बदअतवारको[6] जिस आन चढ़ा।
सरपं शैतानके इक और भी शैतान चढ़ा॥

मौत उसको याद करती है ख़ुदा जाने कि ग़ैर[7]।
यूँ तेरा बीमारेग़म जो हिचकियाँ लेने लगा॥†

रहता है अपना इश्क़में यूँ दिलसे मशवरा।
जिस तरह आश्नासे[8] करे आश्ना सलाह॥

आदमीयत और शै है, इल्म है कुछ और चीज़।
कितना तोतेको पढ़ाया, पर वोह हैवाँ ही रहा॥

---

[1] तीर बन्दूक।

* इसी भावका यानक 'ग़ालिब'का शेर है —

इस सादगीपै कौन न मर जाये ऐ ख़ुदा!
लड़ते हैं और हाथमें तलवार भी नहीं॥

[2] वैद्य, हकीम [3] अस्तित्वरहित, [4] मृत्युसे, बरबादीसे, [5] अमरत्व, ज़िन्दगी, [6] ओछेस्वाभावीको, [7] अन्य, [8] परिचितसे मित्रस

† मुझे याद करनसे यह मुद्दआ था।
निकल जाय दम हिचकियाँ आते आते॥ 'दाग़'

हम ऐसे साहिबेइस्मत[1] परीपैकरपै[2] आशिक़ हैं।
नमाज़ें पढ़ती हैं हूरें[3] हमेशा जिसके दामनपर ॥

दिलको रफ़ीक़[4] इश्क़में अपना समझ न 'ज़ौक़'।
टल जायगा यह अपनी वला तुझपै टालके ॥

क्या आये तुम जो आये घड़ी दो घड़ीके वाद।
सीनेमें होगी साँस अड़ी दो घड़ीके वाद ॥

राहतोरंज ज़मानेमें हैं दोनों लेकिन।
हाँ, अगर एकको राहत है तो है चारको रंज ॥

दिखा न जोशोख़रोश इतना ज़ोरपर चढ़कर।
गये जहानमें दरिया वहुत उतर चढ़कर ॥

मैं हूँ वोह गुमनाम जव दफ़्तरमें नाम आया मेरा।
रह गया वस मुंशियेक़ुदरत[5] जगह वाँ छोड़कर ॥

कहा पतंगेने यह दारेशमअपर[6] चढ़कर।
"अजव मजा है जो मर ले किसीके सर चढ़कर" ॥

हम उनकी चालसे पहचान लेंगे उनको वुर्क़में।
हज़ार अपनेको वह हमसे छिपायें सरसे पाँवोंतक ॥

सरापा[7] पाक[8] हैं धोये जिन्होंने हाथ दुनियासे।
नहीं हाजत[9] कि वह पानी वहाएँ सरसे पाँवोंतक ॥

---

[1] सुशीला; [2] अत्यन्त सुन्दरीपर; [3] अप्सराएँ; [4] मित्र; [5] प्रकृतिकी ओरसे हिसाव रखने वाला वावू; [6] मोमवत्तीरूपी सूलीपर; [7] अत्यन्त, बिल्कुल; [8] पवित्र; [9] आवश्यकता।

किया हमने सलाम ऐ इश्क ! तुझको ।
कि अपना हौसला इतना न पाया ॥

खुरशीदवार[1] देखते हैं सबको एक आँख ।
रोशनज़मीर[2] मिलते हर इक नेकोबदसे हैं ॥

असीरी[3] इश्ककी मञ्ज़ूर थी मेरी लड़कपनमें ।
बहाना करके मिन्नतका[4] पिन्हाया तौक़ गरदनमें ॥

बजा[5] कहे जिसे आलम[6] उसे बजा समझो ।
ज़ुबानेखल्कको[7] नक्कारएखुदा[8] समझो ॥

नहीं है कम ज़रेखालिससे[9] ज़रदिए[10] रुखसार ।
तुम ऐसे इश्कको ऐ 'ज़ौक़' कीमिया[11] समझो ॥

कहे एक, जब सुन ले इन्सान दो ।
कि हक़ने ज़ुबाँ एक दी कान दो ॥

कब हक़परस्त[12] ज़ाहिदे जन्नतपरस्त[13] हैं ।
हूरोंप[14] मर रहा है ये शहवतपरस्त[15] हैं ॥

निगहका वार था दिलपर, फड़कने जान लगी ॥ ^
चली थी बर्छी किसीपर किसीके आन लगी ॥

---

[1] सूर्यकी तरह, [2] बुद्धिमान, प्रकाशवान हृदय, [3] क़ैद, [4] प्रार्थनाका बोल कबूलना, [5] उचित, ठीक, [6] दुनिया, लोग, [7] दुनियाकी आवाज़को, [8] ईश्वरीय सन्देश, [9] खालिस सोनेसे [10] कपालोंका पीलापन [11] बना हुआ सोना, [12] सचाईमें विश्वास करने वाला, [13] स्वर्गका अभिलाषी, [14] देवाङ्गनाओंपर, [15] भोगोंकी कामना रखनेवाला ।

दस्तेहिम्मतसे[1] है बाला[2] आदमीका मर्तबा[3]।
पस्तहिम्मत[4] यह न होवे, पस्तक़ामत[5] हो तो हो ॥

याँ लबपै लाख-लाख सख़ुन इज़्तराबमें[6]।
वाँ एक ख़ामुशी तेरी सबके जवाबमें ॥

रिन्दे[7] ख़राब हालको ज़ाहिद ! न छेड़ तू ।
तुझको पराई क्या पड़ी, अपनी नबेड़ तू ॥

ज़ुबाँ खोलेंगे मुझपर बदज़ुबाँ क्या बदशआरीसे[8]।
कि मैंने ख़ाक भर दी उनके मुँहमें ख़ाकसारीसे[9]॥

लाई हयात[10] आये, क़ज़ा[11] ले चली चले ।
अपनी ख़ुशी न आये न अपनी ख़ुशी चले ॥

गुल भला कुछ तो बहारें ऐ सबा[12]! दिखला गये ।
हसरत[13] उन ग़ुंचोंपै है जो बिन खिले मुर्झा गये ॥

तू भला है तो बुरा हो नहीं सकता ऐ 'ज़ौक़' ।
है बुरा वह ही कि जो तुझको बुरा जानता है ॥

और अगर तू ही बुरा है तो वह सच कहता है ।
क्यों बुरा कहनेसे तू उसके बुरा मानता है ?

ऐ शमअ! तेरी उम्रेतबीई[14] है एक रात ।
रोकर गुज़ार या इसे हँसकर गुज़ार दे ॥

---

[1] साहससे; [2] श्रेष्ठ; [3] गौरव; [4] असाहसी, कायर; [5] ठिगना; [6] बेचैनीमें, बेकरारीमें; [7] शराबी; [8] बदतमीज़ीसे; [9] नम्रतासे, मेचावमेंसे; [10] ज़िन्दगी; [11] मृत्यु; [12] हवा; [13] अफ़सोस; [14] जीवन-काल ।

५

मिर्जा असदुल्ला खाँ 'गालिब'

[ई० सन् १७९७ से १८६९ ई० तक]

मिर्जा गालिब उर्दू-शायरीमें अपना सानी नहीं रखते। उनकी शायरी बेजोड़ है। उनका ज़िक्र छिड़नेपर उर्दू-साहित्यिकोंका विनयसे सर झुक जाता है। गालिबने जो कहा है बहुत नपा-तुला [illegible] कहा है। एक-एक अक्षर मोतियोंमें तोलने योग्य है। उस ज़मानेमें जब कि गुलोबुलबुल साकी और शराब का दौर था इसी सीमित क्षेत्रमें उड़ान भरी जा सकती थी। गालिब स्वयं इस पिंजरेमें छटपटाते थे मगर लाचार थे। फर्माया भी है —

> बकद्रे शौक़ नहीं ज़र्फ़े तंगनाएग़ज़ल।
> कुछ और चाहिए वुसअत मेरे बयाके लिए[1]॥

ठीक ही फर्माया है। भला बुलबुलको पिंजरेमें कैसे बन्द किया जा सकता है? मगर फिर भी इस जुहाड़में जितनी बार उन्होंने डुबकी लगाई मोती ही चुने। हुस्नोइश्ककी कैदमें भी वे दार्शनिक और तत्त्ववेत्ता बने रहे। गुलोबुलबुलके अफसानोंमें मनुष्य जीवनके विभिन्न पहलुओंको किस ढंगसे कहा है और साकी और शराबकी रंगीन दास्तानें कहते-कहते दुखती नसोंको किस खूबीसे छुआ है कि वज्द होने लगता है। 'गालिब'

---

[1] यानी जिन भावोंको मैं लाना चाहता हूँ वे इस संकुचित शब्दमें नहीं आ पाते। उनके लिए विशाल क्षेत्रकी आवश्यकता है।

ग़ालिब हैं। वैसा लिखना किसीको नसीब न हुआ। ग़ालिबके समकालीन तथा आधुनिक शायरोंने भी उन भावोंको लाना चाहा, मगर वह सफलता नहीं मिली।

मिर्ज़ा ग़ालिबकी शायरीपर जितनी टीका, भाष्य और तुलनात्मक समालोचनाएँ प्रकाशित हुई हैं, उतनी उर्दू-संसारमें और किसीकी नहीं। ग़ालिब सर्वसम्मतिसे सर्वश्रेष्ठ शायर माने गये हैं। महाभारत और रामायणके पढ़े बग़ैर जैसे हिन्दू धर्मपर नहीं बोला जा सकता, वैसे ही ग़ालिबको अध्ययन किये बिना बज़्मेअदबमें मुँह नहीं खोला जा सकता। यह सन्मान केवल ग़ालिबको ही प्राप्त है कि उनके मिसरेपर गिरह लगाना शायर धृष्ठता समझते हैं। ग़ालिबने फ़ारसीमें अधिक लिखा है। उर्दूमें एक छोटा-सा दीवान है। मगर वह छोटा-सा दीवान किसी कबाड़ियेकी दूकान न होकर एक जौहरीकी वह छोटी-सी दूकान है कि वहाँ जिस चीज़-पर भी नज़र पड़ती है, कलेजेसे लगा लेनेको जी चाहता है। आपके बारेमें डा० सर इक़बालने लिखा है :—

> नुत्क़को[1] सौ नाज़[2] है, तेरे लबेऐजाज़[3]पर।
> महवेहैरत[4] है सुरैया[5] रफ़अते[6] परवाज़[7]पर॥
>
> शाहिदे[8] मज़मू[9] तसद्दुक़[10] है तेरे अन्दाजपर।
> ख़न्दाज़न[11] है ग़ुंचयेदिल्ली[12] गुलेशीराज़पर[13]॥

---

[1] वाक्-शक्तिको; [2] अभिमान; [3] करामाती ओंठ; [4] आश्चर्यान्वित; [5] एक उच्चतम नक्षत्र; [6] बुलन्दी; [7] उड़ान; [8-9] कविताकी देवी; [10] बलि, न्योछावर; [11] परिहास करती हैं; [12] दिल्लीकी कलियाँ (उर्दूके अर्द्ध विकसित रूपसे अभिप्राय है।) [13] शीराज़का फूल (यहाँ फ़ारसीके प्रसिद्ध कवि सादी और हाफ़िज़की परिपक्व कवितासे तात्पर्य है)।

लुत्फ़ेगोयाईमें[1] तेरी हमसरी[2] मुमकिन नहीं।
हो तखैय्युलका[3] न जबतक फ़िक्रेकामिल[4] हमनशीं[5]॥

मिर्ज़ा ग़ालिब शायद जान बूझकर अल्लाह मियाँसे अपने लिये मुसीबतें माँग लाये थे। वरना जो ऐसा महान कवि हो, जिसके इतने अधिक शिष्य हों, दिल्लीका बादशाह, 'रामपुर, लखनऊ और हैदराबादके नवाब जिसके प्रशंसक और हितैषी हों, वह भी जीवन भर चिन्ताओंमें लड़ता रहे, कुछ समझमें नहीं आता। शायद यह बात हो कि —

किसीको कुछ नहीं चलती कि जब तक़दीर फिरती है।

मिर्ज़ाकी ५ वर्षकी आयुमें पिता और ९ वर्षकी आयुमें चचा मर गये। १३ वर्षकी आयुमें शादी हुई किन्तु पत्नीसे अनबन रही। ७ बच्चे हुए। सब उन्हींके सामने मर गये। मुँहमें चाँदीका चम्मच लेकर उत्पन्न हुए, मगर जीवन भर आर्थिक चिन्ताओंमें रोते रहे। शहर कोतवालसे अनबन थी। इसलिये तीन माहकी जेल काटनी पड़ी। मोमबत्तीकी तरह उम्र भर जलते और गलते रहे। स्वानुभव किस ख़ूबीसे फ़र्माया है आपने —

ग़मेहस्तीका[6] 'असद' किससे हो जुज़मर्ग[7] इलाज।
शमअ हर रंगमें जलती है सहर[8] होने तक॥

जब नागहानी मुसीबतोंका पहाड़ टूट पड़ता है, तब शेरोंके जिगर भी पानी हो जाते हैं। बड़े-बड़े आस्तिक नास्तिक हो जाते हैं। हफ़ीज जालन्धरीके समान हर-एक यह कहनेकी हिम्मत नहीं कर सकता —

---

[1] कथनोपकथनके आनन्दमें, [2] बराबरी, [3] कल्पनाशक्तिका, [4] पूर्णरूपेण चिन्तन, [5] साथमें उठने-बैठनेवाला, [6] जीवनके कष्टोंका, [7] मृत्युके अलावा [8] प्रातःकाल।

तू फिर आ गई गर्दिशे आस्मानी।
बड़ी मेहर्बानी, बड़ी मेहर्बानी॥

और गर्दिशे आस्मानी कभी-कभी आये तो स्वागत भी किया जाय, उसे कलेजेसे लगानेको भी दिल चाहे; मगर जो बेहया दामाद या विधवा लड़कीकी तरह बरपर छावनी ही डाल दे, तब आदमीका जी कबतक न ऊबेगा? ऐसी ही कशमकशकी ज़िन्दगीसे बेज़ार होकर मिर्ज़ा ग़ालिबके मुँहसे शायद यह शेर निकला होगा :—

ज़िन्दगी अपनी जब इस शक्लसे गुज़री यारब!
हम भी क्या याद रखेंगे कि ख़ुदा रखते थे* !!

---

*उसके निजी और प्रिय होते हुए भी जब इस दुरवस्थामें रहे, तब यह बात तो हमें जीवन भर स्मरण रहेगी ही कि हम ऐसा हितैषी रखते थे, जिससे कभी हमारा हित न हुआ। वोह ज़माने भरको निहाल करता रहा, मगर हमारी तरफ़से मुँह फेरे बैठा रहा।

आये भी लोग, बैठे भी, उठ भी खड़े हुए।
मैं जा ही देखता तेरी महफ़िलमें रह गया॥

—'आतिश'

जो तेरे दरबारमें आया अभिलाषा पूरी करके चला भी गया; मगर एक हम उपेक्षित हैं कि हमारे लिए तेरे यहाँ कोई जगह ही नहीं। हम यूँही भटकते रहे।

फ़ानीने इसी भावको दूसरे ढंगसे व्यक्त किया है :—

यारब! तेरी रहमतसे मायूस नहीं 'फ़ानी'।
लेकिन तेरी रहमतकी ताख़ीरको क्या कहिए?

कौन कमबख़्त तेरी दयालुता और दीनबन्धुत्वमें सन्देह करता है? हमें तो आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि तू अपनी कृपा-दृष्टि हमारी ओर

मिर्ज़ा ग़ालिब आर्थिक चिन्ताओंसे ग्रसित होते हुए भी स्वाभिमानमें बाल नहीं आने देते थे। अपने व्यक्तित्व और प्रतिष्ठाका सदैव ध्यान रखते थे। 'आबेहयात'में इस तरहकी एक घटनाका उल्लेख मिलता है, जिसका सार निम्नलिखित है —

सन् १८४२में दिल्ली कॉलेजके लिये एक फ़ारसी प्रोफ़ेसरकी आवश्यकता थी। लोगोंने ग़ालिबका नाम सुझाया। बुलाये जानेपर आप पालकीपर सवार होकर सेक्रेटरी साहबके डेरेपर पहुँचे। उनको इत्तला हुई तो मिर्ज़ाको फ़ौरन बुलवाया। मगर यह पालकीसे उतरकर इस इन्तज़ारमें ठहरे रहे कि दस्तूरके मुआफ़िक सेक्रेटरी उन्हें लेनेको आएँगे। जब बहुत देर हो गई और साहबको मालूम हुआ कि इस सबबसे नहीं आये तो वे ख़ुद बाहर चले आये और मिर्ज़ासे कहा कि "जब आप दरबारे गवर्नरीमें तशरीफ़ लायेंगे तो आपका इसी तरह इस्तक़बाल किया जायेगा। लेकिन इस वक्त आप नौकरीके लिये आये हैं, इस मौक़ेपर यह बर्ताव

भी करेगा। परन्तु इतना जो विलम्ब (ताख़ीर) हो रहा है इसको क्या कहा जाय? क्या हम मर मिटेंगे, ख़ाक में मिल जाएँगे तब?

वा बरसो दद कूची मुख़ानी।

मिर्ज़ा ग़ालिब इसी विलम्बजनक आशासे तंग आकर फ़र्माते हैं —

हमने माना कि तग़ाफ़ुल न करोगे लेकिन।
ख़ाक हो जायेंगे हम तुमको ख़बर होनेतक॥

हम यह तो मानते हैं कि आप हमारे कष्टोंकी भनक पड़नेपर उपेक्षा नहीं करेंगे परन्तु हमारे मिट जानेके बाद कानमें भनक पड़ी भी तो क्या पड़ी? बक़ौल इक़बाल —

आख़िरेशब दीदके क़ाबिल थी बिस्मिलकी तड़प।

नहीं हो सकता।" मिर्ज़ा ग़ालिबने कहा—"गवर्नमेण्टकी मुलाज़मतका इरादा इसलिए किया है कि एजाज़ कुछ ज्यादा हो, न कि इसलिए कि मौजूदा एजाज़में भी फ़र्क़ आये।" साहबने कहा—"हम क़ायदेसे मजबूर हैं।" मिर्ज़ाने कहा—"मुझको इस ख़िदमतसे माफ़ रक्खा जाय", और यह कहकर वापिस चले आये।

इसे कहते हैं "जान जाये मगर आन न जाने पाये।" भूखा रहकर एड़ियाँ रगड़-रगड़कर मरना मंजूर, मगर कुत्तोंकी तरह दुम नहीं हिलाई जा सकती*। यह तो १०० रुपल्लीकी कॉलिजकी नौकरी थी, ग़ालिब तो इतने स्वाभिमानी थे कि कावेके दरवाज़ेसे भी फिर आयें, अगर दरवाज़ा खुला हुआ न मिले तो :—

बन्दगीमें भी वोह आज़ादह[1] व ख़ुदबीं[2] हैं कि हम।
उल्टे फिर आये दरेकाबा[3] अगर वा[4] न हुआ॥

मिर्ज़ा ग़ालिब हर तरहकी मुसीबतोंसे घिरे रहनेपर भी अत्यन्त विनोदी और हाज़िरजवाब थे। उनका कहना था कि :—

"दिलमें हज़ार ग़म हों जबींपर शिकन न हो"।

आपके बहुत-से लतीफ़े और हाज़िरजवाबीके उल्लेख उनके सुप्रसिद्ध शिष्य मौलाना हालीने 'यादगारेग़ालिब'में दिये हैं। कुछ संक्षेप करके बतौर नमूने पेश किये जाते हैं।

१—लखनऊकी एक सुहबतमें जब कि मिर्ज़ा वहाँ मौजूद थे, एक रोज़ लखनऊ और दिल्लीकी ज़ुबानपर गुफ़्तगू हो रही थी। एक साहबने

---

*हरचन्द शेर आजिज़ गर तालिबेग़िज़ा हो।
लेकिन न खायगा वोह कुत्तोंके संग रातिब॥

—अकबर

[1]स्वतन्त्र; [2]स्वाभिमानी; [3]कावेका द्वार; [4]खुला हुआ।

मिर्ज़ाने कहा कि 'दिल्लीवाले जिस मौकेपर अपने तई बोलते है, वहाँ लखनऊवाले आपको बोलते है। आपकी रायमें फसीह (ललित, शुद्ध) 'आपको' है, या 'अपने तई' ?" मिर्ज़ाने कहा—"फसीह तो वही मालूम होता है जो आप बोलते है। मगर इसमें दिक्कत यह है कि मसलन आप मेरी निस्बत यह फर्मायें कि मैं आपको फरिश्ता खसायल (देवता स्वरूप) समझता हूँ और मैं आपको इसके जवाबमें अपनी निस्बत यह अर्ज करूँ कि मैं तो आपको कुत्तेसे भी बदतर समझता हूँ, तो शायद बुरा मालूम देगा। मैं तो अपनी निस्बत कहूँगा और आप मुमकिन है कि अपनी निस्बत समझ जायें।" सब हाज़रीन यह लतीफा सुनकर फड़क गए।

२—देहलीमें रथको बाज़ मोअन्निस (स्त्रीलिंग) और बाज़ मुज़क्कर (पुलिंग) बोलते है। किसीने मिर्ज़ा साहबसे पूछा कि हज़रत ! रथ मोअन्निस है या मुज़क्कर ? आपने कहा—भैया ! जब रथमें औरतें बैठी हो तो मोअन्निस और जब मर्द बैठे हो तो मुज़क्कर समझो।

३—सुना है कि जब मिर्ज़ा कर्नल ब्राउनके सामने गये तो उसने इनकी पोशाक देखकर पूछा—"वेल, तुम मुसलमान ?" मिर्ज़ाने कहा—"आधा।" कर्नलने कहा—"इसका क्या मतलब ?" मिर्ज़ाने कहा—"शराब पीता हूँ सूअर नहीं खाता।" कर्नल यह सुनकर हँसने लगा।

४—मौलवी अमीमुद्दीनने मिर्ज़ाके खिलाफ एक पुस्तक लिखी। मगर मिर्ज़ाने कोई जवाब नहीं दिया। किसीने कहा—"हज़रत ! आपने उसका कुछ जवाब नहीं लिखा ?" मिर्ज़ाने कहा—"अगर कोई गधा तुम्हें लात मार दे तो क्या तुम भी उसके लात मारोगे ?"

५—मिर्ज़ाके पास किसीने एक बेहूदा गाली-गलौजसे भरा खत भेजा। उसमें एक जगह मिर्ज़ाको गाली भी लिखी थी। मुस्कराकर कहने लगे कि—"इस उल्लूको गाली देनी भी नहीं आती। बुड्ढे या अधेड़ आदमीको बेटीकी गाली देते हैं ताकि उसको गैरत आए। जवानको जोरूकी गाली देते हैं क्योंकि उसको जोरूसे ज्यादा ताल्लुक होता है।

बच्चेको माँकी गाली देते हैं, कि वह माँके बराबर किसीको प्यार नहीं करता। और यह जो ७२ बरसके बुड्ढेको माँकी गाली देता है, इससे ज्यादा कौन मूर्ख होगा?"

६—एक सुहबतमें मिर्ज़ा 'मीर' तक़ीकी तारीफ़ कर रहे थे। ज़ौक़ भी मौजूद थे। उन्होंने सौदाको मीरपर तरजीह दी। मिर्ज़ाने कहा—"मैं तो आपको मीरी (मीरका प्रशंसक, सरदार) समझता था, मगर अब मालूम हुआ कि आप सौदाई (सौदाके प्रशंसक, पागल) हैं।"

७—एक रोज दीवान फ़ज़लुल्ला ख़ाँ मिर्ज़ाके मकानके पाससे बग़ैर मिले निकल गये। मालूम होनेपर मिर्ज़ाने दीवानको लिखा—"आज मुझको इस क़दर नदामत हुई कि शर्मके मारे ज़मीनमें गड़ा जाता हूँ। इससे ज्यादा क्या नालायक़ी हो सकती है कि आप कभी-कभी तो इस तरफ़से गुजरें और मैं सलामको हाज़िर न रहूँ।" जब यह रुक़्क़ा दीवान-जीके पास पहुँचा, वे निहायत शर्मिन्दा हुए और उसी वक़्त गाड़ीमें सवार होकर मिर्ज़ा साहबसे मिलनेको आये।

८—एक दिन एक साहब रातको मिलने चले आये। थोड़ी देर ठहरकर वे जाने लगे तो मिर्ज़ा खुद अपने हाथमें शमादान लेकर लबेफ़र्श तक आये; ताकि रोशनीमें जूता देखकर पहन लें। मेहमान बोले—"क़िबलाओकाबा, आपने क्यों तकलीफ़ फ़र्माई? मैं अपना जूता आप पहन लेता।" मिर्ज़ाने कहा—"मैं आपका जूता दिखानेको शमादान नहीं लाया, बल्कि इसलिए लाया हूँ कि कहीं आप मेरा जूता न पहन जायें।"

९—ग़दरके बाद जब पेंशन बन्द थी और दरबारमें शरीक होनेकी इजाज़त न हुई थी, तब लेफ़्टिनेण्ट पंजाब मिर्ज़ा साहबसे मिलनेको आये। कुछ पेंशनका ज़िक्र चला तो मिर्ज़ा साहबने कहा—"तमाम उम्रमें एक दिन शराब न पी हो तो काफ़िर और एक दफ़ा भी नमाज़ पढ़ी हो तो गुनहगार। फिर मैं नहीं जानता कि सरकारने मुझे किस तरह बाग़ी मुसलमानोंमें शरीक किया?"

१०—जब मिर्ज़ा क़ैदसे छूटकर आये तो मियाँ काले साहबके मकानमें आकर रहे थे। एक रोज़ मियाँ काले साहबके पास बैठे थे। किसीने आकर क़ैदसे छूटनेकी मुबारिकबाद दी। मिर्ज़ाने कहा—"कौन भड़ुवा क़ैदसे छूटा है? पहले गोरेकी क़ैदमें था, अब कालेकी क़ैदमें हूँ।"

११—कहते हैं एक बार क़िलेके मुशायरेमें जब मिर्ज़ाने यह मक्ता पढ़ा —

> यह मसाइलेतसव्वुफ़[1] यह तेरा बयान 'ग़ालिब'।
> तुझे हम वली[2] समझते, जो न बादाख़्वार[3] होता॥

—तो मुशायरेमें वाह-वाहकी धूम मच गई। बादशाहने मज़ाक़में कहा—"भई हम तो तब भी न समझते।" मिर्ज़ाने फ़ौरन जवाब दिया—"हुज़ूर तो मुझे अब भी वली समझते है।"

बहादुरशाह बादशाहने मिर्ज़ाको 'नजमुद्दौला दबीरुल्मुल्क निज़ामे जंग' उपाधिसे विभूषित किया था और ख़िलअत भी प्रदान की थी, और तैमूर-वंशका इतिहास लिखनेके लिए ५० रु० मासिकपर नियुक्त किया था। उस्ताद ज़ौक़की मृत्युके बाद बादशाह ग़ालिबसे ही अपनी कविताएँ शुद्ध कराने लगे थे। परन्तु मिर्ज़ाको यह कार्य रुचिकर नहीं था। लाचारीसे करते थे। 'यादगारे ग़ालिब'में लिखा है कि—"एक रोज़ मिर्ज़ा दीवानेआममें बैठे थे कि चोबदारने आकर कहा कि बादशाहने ग़ज़ल माँगी है। मिर्ज़ाने उसे ठहरनेको कहा और फौरन ८-६ परचे निकाले जिनपर एक-एक दो-दो मिसरे लिखे हुए थे। दावात-क़लम मँगाकर थोड़ी देरमें ८ या ६ ग़ज़लें बनाकर दे दीं। इन ग़ज़लोंको लिखनेमें बमुश्किल इतनी देर लगी होगी कि जितनी देरमें एक मश्शाक़ उस्ताद चन्द ग़ज़लें गिर्द कहीं-कहीं इस्लाह देकर (शुद्ध करके) ठीक कर दे।

[1] दार्शनिक विचार [2] सिद्धयोगी, [3] मद्यप।

दरिद्रताके कारण मिर्ज़ाके पास कोई पुस्तकालय नहीं था। वे पुस्तकें खरीद ही नहीं सकते थे। इतना विशाल अध्ययन और लेखन-कार्य सब किरायेकी पुस्तकोंसे किया गया। एक बार कलकत्तेमें एक साहबके अनुरोधपर चिकनी सुपारीपर फिलबदी (तुरन्त) ग़ज़ल कही थी।

उक्त उदाहरणोंसे प्रकट होता है कि उनकी स्मरण-शक्ति तीव्र और कविताका अभ्यास बहुत बढ़ा हुआ था।

मिर्ज़ा जैसा दार्शनिक और पवित्र हृदयवाला मनुष्य मद्यप भी था, बात सच होते हुए भी विश्वास करनेको जी नहीं चाहता। जो स्वयं कोयला है वह कालिमाके अतिरिक्त संसारको और देगा ही क्या? पर जिससे प्रकाश मिले, उसे कोयला कौन कहेगा? हृदय स्वच्छ और प्रकाशवान हुए बिना वह कैसे ज्योति फेंक सकेगा?

कभी-कभी सांसारिक वेदनाओंसे तंग आकर मनुष्य आत्महत्या कर लेता है, निर्जन स्थानोंमें भागता फिरता है; जैसा कि ग़ालिब स्वयं लिखते हैं:—

रहिये अब ऐसी जगह चलकर जहाँ कोई न हो।
हमसख़ुन[1] कोई न हो, और हमज़ुबाँ[2] कोई न हो॥
बेदरोदीवार-सा इक घर बनाना चाहिये।
कोई हमसाया[3] न हो और पासबाँ[4] कोई न हो॥
पड़िये गर बीमार तो कोई न हो तीमारदार[5]।
और अगर मर जाइए तो नौहाख़्वाँ[6] कोई न हो॥

कष्टों, अपमानों और वेदनाओंको भूलनेके लिये मनुष्य दुर्भाग्यसे मद्यकी

---

[1]अपने जैसा बोल कहनेवाला; [2]अपनी जैसी भाषा बोलनेवाला; [3]पड़ोसी; [4]रक्षक; [5]परिचर्य्या करनेवाला; [6]रोनेवाला।

मिर्ज़ा इतने तंगदस्त होते हुए भी फ़ैयाज थे। भिखारी उनके घरसे ख़ाली हाथ बहुत कम जाता था। एक बार जनाब लेफ़्टिनेण्टके दरबारमें ख़िलअत मिली। लेफ़्टिनेण्टके चपरासी और जमादार क़ायदेके अनुसार घरपर इनाम लेने आये। मिर्ज़ा साहब को पहले ही इनाम देनेकी बात याद थी। अतः आपने दरबारसे आते ही ख़िलअत बाज़ारमें बेचने भेज दी और इतने चपरासियोंको अलग मकानमें बिठवा दिया और जब बाजारसे ख़िलअतकी क़ीमत आई तो उन्हें इनाम देकर रुख़सत किया।

मिर्ज़ा ग़ालिब स्वयं एक महान् कवि थे; परन्तु दूसरे कवियोंकी हृदय-ग्राही कविताओंकी भी मुक्तकंठसे प्रशंसा करते थे। चाहे वह उनके प्रतिद्वन्द्वीकी ही क्यों न लिखी हों। हाँ, किसीको ख़ुश करनेके लिये वह वाह-वा नहीं करते थे। जो हृदयपर असर करे उसीपर झूमते थे। उस्ताद ज़ौक़से उनकी चश्मक रहती थी, फिर भी उनके इस शेरको सुनकर झूमने लगे, सर धुनने लगे और बार-बार पढ़वाते रहे। मिर्ज़ाने अपने उर्दू ख़तोंमें इस शेरका यथास्थान वर्णन किया है। यहांतक कि जहाँ उत्तम शेरका उदाहरण दिया है, वहाँ-वहाँ इस शेरका जरूर उल्लेख किया है। वह शेर ये हैं :—

अब तो घबराके यह कहते हैं कि मर जाएँगे।
मरके भी चैन न पाया तो किधर जाएँगे?

इसी तरह मोमिन ख़ाँका :—

पीनेके पात्रों)को कहाँ-कहाँ लिये फिरें? अतः हमने यह दोनों हिसाब इस तरह पूरे किये कि पात्रोंको बेचकर शराब पी ली। ऐसा करनेसे शराब पीनेको मिल गई और पात्रके ढोते रहनेकी परेशानीसे भी बच गये।

तुम मेरे पास होते हो गोया[1]।
जब कोई दूसरा नहीं होता ॥

जब उक्त शेर सुना तो बहुत तारीफ़ की और कहा कि—"वाह! मोमिन ख़ाँ मेरा सारा दीवान ले लेना और सिर्फ़ यह शेर मुझको दे देना!" गुण-ग्राहकताकी हद हो गई।

मिर्ज़ा साहबके शिष्य बेशुमार थे। उनमें मौलाना अल्ताफ़ हुसैन 'हाली' अत्यन्त प्रसिद्ध हुए हैं, जिनका उल्लेख इसी पुस्तकमें अन्यत्र किया गया है।

मिर्ज़ा ग़ालिब २७ दिसम्बर १७९७ ई०में उत्पन्न हुए और ७२ वर्षकी आयुमें दिल्लीमें सन् १८६९में समाधि पाई।

---

[1]वार्तालाप भाव। भावार्थ यह है कि एकान्तमें अपनी प्रेयसीका ही ध्यान रहता है और उससे मनःपुत्र वार्तालाप चलता है। जब कोई आ जाता है तो ध्यान टूट जाता है।

पयामके सम्पादकका कथन है कि "ग़ालिबने अपनी आँखोंसे तैमूरके आख़िरी चिराग़को गुल होते हुए देखा था। उसने १८५७के ग़दरके बादका हिन्दोस्तान भी देखा था। इतने बड़े परिवर्तनको अपनी आँखोंसे देखनेवाले ग़ालिब लाल क़िलेके आख़िरी शमअके खामोश हो जानेका दाग़ अपने सीनेमें रखता है तो हम शायरके हालातसे उसके शेरके हक़ीक़ी मायने हासिल करनेमें हक़बजानिब हैं। खूनेदिलके यह क़तरे ग़ालिबके दीवानके सुफ़ेहातपर (पृष्ठोंमें) सुर्ख मोतियोंकी तरह बिखरे हुए हैं। कितना ही ज़माना बिगड़ जाय, जबतक हम अपने देशके इतिहासको बिल्कुल भुला न दें, हमारी नज़रमें उन क़तरोंकी सुर्खी मान्द नहीं हो सकती। वोह इस उजड़ी हुई दिल्लीमें बैठकर कहता है":—

दिलमें ज़ौक़ेवस्लो यादेयार तक बाक़ी नहीं।
आग इस घरमें लगी ऐसी कि जो था जल गया॥

यानी अब हमारे हृदयमें ज़ौक़ेवस्ल (यारके मिलनकी अभिलाषा)-और यारकी याद तक बाक़ी नहीं है। क्योंकि हमारे हृदय-रूपी घरमें एसी आग लगी है कि सर्वस्व भस्मीभूत हो गया। इतने बड़े विध्वंसकी बात ग़ालिबने किस खूबी और सादगीसे कही है कि क़ानून-की ज़दमें भी न आएँ और सर्वसाधारण ज़ौक़ेवस्लके चक्करमें ही पड़े रहें।

था जिन्दगीमें मौतका खटका लगा हुआ।
उड़नेसे पेश्तर भी मेरा रंग ज़र्द था॥

× × ×

किससे महरूमिये क़िस्मतकी शिकायत कीजे।
हमने चाहा था कि मर जाएँ सो वह भी न हुआ॥

(हम किससे अपनी बदकिस्मतीकी शिकायत करें? जीवनमें हमने जो भी अभिलाषा की वोह कभी पूरी न हुई। और तो और, हमने मृत्यु चाही वह भी न आई।)

ख़मोशीमें निहाँ ख़ूँगुश्ता लाखों आरज़ूएँ हैं।
चिराग़ेमुर्दा हूँ मैं बेज़बाँ गोरेग़रीबाँका॥

(मेरी ख़ामोशीमें लाखों मिटी हुई अभिलाषाएँ (ख़ूँगुश्ता आरज़ूएँ) छुपी हुई हैं। मैं क़ब्रके बुझे हुए चिराग़के मानिन्द हूँ। ख़ामोश आदमीको बेज़बान कहते हैं और चिराग़की लौको ज़बानकी उपमा देते हैं। तो बुझे हुए चिराग़को बेज़बान आदमीके मानिन्द समझा गया है, और उसी तरह मरी हुई अभिलाषाओंको मरे हुए आदमीकी क़ब्रसे उपमा दी गई है।)

दरपै पड़नेको कहा और कहके कैसा फिर गया।
जितने अर्सेमें मेरा लिपटा हुआ बिस्तर खुला॥

की मेरे क़त्लके बाद उसने जफ़ासे[1] तौबा[2]।
हाय! उस ज़ूदपशेमाँका[3] पशेमाँ[4] होना॥

कहूँ किससे मैं कि क्या है? शबेग़म[5] बुरी बला है।
मुझे क्या बुरा था मरना, अगर एक बार होता॥

हुए हम जो मरके रुसवा[6] हुए क्यों न ग़र्क़ेदरिया।
न कभी जनाज़ा उठता, न कहीं मज़ार[7] होता॥

---

[1] अत्याचारसे, [2] प्रतिज्ञा [3] शीघ्र लज्जित होनेवालेका, [4] शर्मिन्दा, [5] दुःखोंकी रात्रि [6] बदनाम; [7] क़ब्र।

मैं और बज़्मेमयसे यूँ तिश्नाकाम आऊँ !
गर मैंने की थी तौबा, साक़ीको क्या हुआ था ?

(बड़े आश्चर्य और दुखकी बात है कि मैं भी मधुशालासे यूँ ही प्यासा अभिलषित (तिश्नाकाम) चला आऊँ ! यदि मैंने शराब न पीनेकी क़सम भी खाली थी तो मधुबालाको क्या हुआ था ? उसने जबरन क्यों न पिला दी ? कई बार जीवनमें आदमी रूठ जाता है, मगर दिलमें वह यही चाहता है कि जिससे वह रूठा है, वह उसे मना ले और ज़ोर जबर्दस्ती उसके मानको भंग कर दे। इससे रूठनेवालेको आनन्द भी आता है और उसके मानकी आन भी रह जाती है। और यदि कोई रूठने-वालेको उपेक्षित कर दे, उसे मनाए नहीं तो उसके हृदयको बड़ी ठेस लगती है और इसका उसे बहुत ज्यादा मलाल रहता है)

घर हमारा जो न रोते भी तो वीराँ होता।
बहर गर बहर न होता तो बयाबाँ होता॥

(हम इतने रोये कि घर आँसुओंसे दरिया बन गया है। न रोते तो उजाड़ (वीराँ) बना रहता। मतलब ये है कि हम ऐसे अभागे हैं कि हर हालतमें बेचैन रहेंगे)

पकड़े जाते हैं फ़रिश्तोंके लिखे पर नाहक़।
आदमी कोई हमारा, दमेंतहरीर भी था ?

(मिर्ज़ा हँसीमें ईश्वरको उलाहना देते हैं कि हमारे जुर्मके सुबूतके लिये किसीकी गवाही होनी आवश्यक थी। केवल फ़रिश्तोंके कहनेसे पकड़ लेना ठीक नहीं हुआ)

शमअ़ बुझती है तो उसमेंसे धुआँ उठता है।
शोलयेइश्क़ सियहपोश हुआ मेरे बाद॥

(हम किससे अपनी बदकिस्मतीकी शिकायत करें ? जीवनमें हमने जो भी अभिलाषा की वह कभी पूरी न हुई । और तो और, हमने मृत्यु चाही वह भी न आई ।)

ख़मोशीमें निहाँ ख़ूँगुश्ता लाखों आरज़ूएँ हैं ।
चिराग़ेमुर्दा हूँ मैं बेज़बाँ गोरेग़रीबाँका ॥

(मेरी ख़ामोशीमें लाखों मिटी हुई अभिलाषाएँ (ख़ूँगुश्ता आरज़ूएँ) छुपी हुई हैं । मैं क़ब्रके बुझे हुए चिराग़के मानिन्द हूँ । ख़ामोश आदमीको बेज़बान कहते हैं और चिराग़की लौको ज़बानकी उपमा देते हैं । तो बुझे हुए चिराग़को बेज़बान आदमीके मानिन्द समझा गया है, और उसी तरह मरी हुई अभिलाषाओंको मरे हुए आदमीकी क़ब्रमें उपमा दी गई है ।)

दरपै पड़नेको कहा और कहके कैसा फिर गया ।
जितने अर्सेमें मेरा लिपटा हुआ बिस्तर खुला ॥

की मेरे क़त्लके बाद उसने जफ़ासे[1] तौबा[2] ।
हाय ! उस ज़ूदपशेमाँका[3] पशेमाँ[4] होना ॥

कहूँ किससे मैं कि क्या है ? शबेग़म[5] बुरी बला है ।
मुझे क्या बुरा था मरना, अगर एक बार होता ॥

हुए हम जो मरके रुसवा[6] हुए क्यों न ग़र्क़ेदरिया ।
न कभी जनाज़ा उठता, न कहीं मज़ार[7] होता ॥

× × ×

---

[1] अत्याचारसे, [2] प्रतिज्ञा, [3] शीघ्र लज्जित होनेवालेका; [4] शर्मिन्दा, [5] दुःखोंकी रात्रि, [6] बदनाम; [7] क़ब्र ।

मैं और बज़्मेमयसे यूँ तिश्नाकाम आऊँ !
गर मैंने की थी तौबा, साक़ीको क्या हुआ था ?

(बड़े आश्चर्य और दुखकी बात है कि मैं भी मधुशालासे यूँ ही प्यासा अभिलपित (तिश्नाकाम) चला आऊँ ! यदि मैंने शराब न पीनेकी क़सम भी खाली थी तो मधुबालाको क्या हुआ था ? उसने जबरन क्यों न पिला दी ? कई बार जीवनमें आदमी रूठ जाता है, मगर दिलमें वह यही चाहता है कि जिससे वह रूठा है, वह उसे मना ले और ज़ोर ज़बर्दस्ती उसके मानको भंग कर दे। इससे रूठनेवालेको आनन्द भी आता है और उसके मानकी आन भी रह जाती है। और यदि कोई रूठने-वालेको उपेक्षित कर दे, उसे मनाए नहीं तो उसके हृदयको बड़ी ठेस लगती है और इसका उसे बहुत ज़्यादा मलाल रहता है)

घर हमारा जो न रोते भी तो वीराँ होता ।
बहर गर बहर न होता तो बयाबाँ होता ॥

(हम इतने रोये कि घर आँसुओंसे दरिया बन गया है। न रोते तो उजाड़ (वीराँ) बना रहता। मतलब ये है कि हम ऐसे अभागे हैं कि हर हालतमें बेचैन रहेंगे)

पकड़े जाते हैं फ़रिश्तोंके लिखे पर नाहक़ ।
आदमी कोई हमारा, दमेंतहरीर भी था ?

(मिर्ज़ा हँसीमें ईश्वरको उलाहना देते हैं कि हमारे जुर्मके सुबूतके लिये किसीकी गवाही होनी आवश्यक थी। केवल फ़रिश्तोंके कहनेसे पकड़ लेना ठीक नहीं हुआ)

शमअ़ बुझती है तो उसमेंसे धुआँ उठता है ।
शोलयेइश्क़ सियहपोश हुआ मेरे बाद ॥

(चिराग़के बुझनेपर जो उठता है उसे धुआँ मत समझो। अपितु चिराग़के जल मरनेके शोकमें उसके हृदयकी आगने काला वस्त्र पहना है। इसी तरह मेरे ग़ममें मेरा सीलयेदस्त (प्रेम-अग्नि) स्याहपोश हुआ है। मतलब यह है कि मैं चिराग़की तरह उम्रभर जलता रहा हूँ)

घर जब बना लिया तेरे दरपर कहे बग़ैर।
जानेगा अब भी तू न मेरा घर कहे बग़ैर ?
कहते हैं जब रही न मुझे ताक़तेसख़ुन।
"जानूँ किसीके दिलकी मैं क्योंकर कहे बग़ैर ?"
राज़ेमाशूक़ न रुसवा हो जाये।
वर्ना मर जानेमें कुछ भेद नहीं ॥

(मर जानेमें कोई खास भेद नहीं। मगर माशूक़का भेद न खुल जाय कहीं वह बदनाम न हो जाय, इसी खयालसे नहीं मरते हैं। आत्म-हत्या करनेसे कुटुम्बी और मित्रोंकी काफ़ी बदनामी होती है। फिर माशूक़को तो लोग स्पष्ट ही कहेंगे कि इसकी उपेक्षाओं और अत्याचारोंसे तंग आकर प्रेमी मर गया। ना बाबा! हम उसकी यह ज़िल्लत कराना पसन्द नहीं करेंगे)

कहते हैं जीते हैं उम्मीदपै लोग।
हमको जीनेकी भी उम्मीद नहीं ॥

(समस्त संसार आशापर अवलम्बित है। आशा नष्ट हुई कि सब नष्ट हुआ। 'जबतक श्वास, तबतक आस।' मिर्ज़ा फ़र्माते हैं कि सुनते हैं लोग उम्मीदके भरोसे जीते हैं, मगर हम क्या करें ? हम तो इतने निराश रहे हैं कि हमें तो जीनेकी भी आशा नहीं।' (इस ज़मीनमें इससे बेहतर शेर निकालना मुश्किल है।)

रौमें है रख़्शेउम्र कहाँ देखिए थमे।
ना हाथ बागपर है न पा है रकाबमें ॥

(सवारकी बेअख़्तियारी और घोड़ेका उसके क़ाबूसे बाहर हो जाना चाबुकसवारकी दयाजनक स्थितिका कैसा करुण चित्र है ! यह जीव रूपी सवार शरीर रूपी ऐसे ही बेक़ाबू उद्दण्ड घोड़ेपर सवार है, और उसपर भी तुर्रा यह कि न हाथमें लगाम है और न रकाबमें पाँव ही हैं। फिर भगवान् ही बेली है। न जाने कहाँ यह घोड़ा थमेगा और कहाँ गिरेगा ?)

छोड़ा न रश्कने कि तेरे घरका नाम लूँ।
हर इकसे पूछता हूँ कि जाऊँ किधरको मैं ?

(आशिक़को इस क़दर वहम है कि वह मारे रश्क (ईर्ष्या) के लोगोंसे माशूक़के घरका पूरा अता-पता देकर उसके घरका मार्ग नहीं पूछता। उसे यही खटका लगा हुआ है कि कहीं ऐसा न हो कि नाम-निशाँ बता देनेसे कोई और भी वहाँ पहुँच जाय। इसलिये वह सिर्फ़ लोगोंसे यही पूछता है—"क्यों साहब ! मुझे अब किधर जाना चाहिए ?" और इसका जवाब भला कोई क्या दे ? अतः आशिक़ यूँ ही भटकते फिरते हैं और बदगुमानीकी वजहसे माशूक़के घरका ठीक-ठीक उल्लेख करके पता नहीं पूछते। भटकते फिरना और विरह-व्यथा सहना तो मंजूर मगर ग़ैरोंको पता बताना मंजूर नहीं)*

---

*इस बदगुमानीपर किसी साहबका एक शेर याद आया :—

बवक़्ते अलविदा उस दिलरुबाको।
न सौंपा बदगुमानीसे ख़ुदाको ॥

(माशूक़ने विदा होते समय उसको ख़ुदा हाफ़िज़ (ईश्वर रक्षक हो)

गया हूँ। मगर मैं तो इस कारण से चुप रहा कि अब क्या तकरार की जाय, क्यों दिलकी बात कही जाय? यह कुछ न देता तो अच्छा था; या देना था तो मेरे मनके मुताबिक़ देना था। हम शर्मकी वजहसे चुप रहे, और उसने हमारी चुप्पीका मतलब ही और समझा।)

दिलेनाज़ुकपै उसके रहम आता है मुझे 'ग़ालिब'।
न कर सरगर्म उस काफ़िरको उलफ़त आज़मानेमें॥

(उसे मेरे प्रेमकी परीक्षा लेनेके लिये उत्तेजित न करो। कहीं ऐसा न हो कि वह आवेगमें आकर मुझे मार डाले; और फिर उसका दिल सदैव इस करनीपर पछताता रहे। इसलिये मुझे उसके कोमल हृदयका ख़याल करके यह कहना पड़ रहा है कि उसे उत्तेजित न करें। उसके नाज़ुक दिलका ख़याल आता है, वर्ना मुझे अपनी जानकी कोई चिन्ता नहीं।)

नज़र लगे न कहीं उसके दस्तोबाज़ूको।
ये लोग क्यों मेरे ज़ख़्मेजिगरको देखते हैं?

× × ×

मैंने कहा कि "बज़्मेनाज़ चाहिये ग़ैरसे तिही"।
सुनकर सितमज़रीफ़ने मुझको उठा दिया कि यूँ॥

(मैंने तो उस सितमज़रीफ़से (जो अत्याचारको अत्याचार न समझकर मनबहलाव या हँसी समझे; मुँहपर रंगके साथ तेज़ाब छिड़क दे, मगर वह उसे होली ही समझा करे) रक़ीबको (प्रतिद्वन्द्वीको) ग़ैर समझकर कहा था कि आपकी महफ़िल ग़ैरसे ख़ाली होनी चाहिए। उसने यह सुनकर मुझे ही महफ़िलसे यह कहकर उठवा दिया कि "यहाँ सिर्फ़ तू ही ग़ैर नज़र आता है।" सितमज़रीफ़की हद हो गई।)

न लुटता दिनको तो कब रातको यूँ बे ख़बर सोता।
रहा खटका न चोरीका दुआ देता हूँ रहज़नको[1]॥

× × ×

ख़ुशी क्या खेतपर मेरे अगर सौ बार अब्र आवे।
समझता हूँ कि ढूँढे है अभीसे बर्क़ ख़िरमनको॥

(मेरे खेतपर बादल सौवार भी छाय या बरसें तो मुझे ख़ुशी नहीं, क्योंकि मैं जानता हूँ बादलोंमें छुपी बिजली मेरे झोंपड़ेको ढूँढती फिर रही है। मतलब है कि जिसे ज़ाहिरमें सुख समझा जाता है, वह दुखका सन्देश है।)

आशिक़ हुए हैं आप भी इक और शख़्सपर।
आख़िर सितमकी कुछ तो मकाफ़ात चाहिये॥

(देखिये न, कुछ बात तो बनी। आप (माशूक़) भी किसीपर आशिक़ हुए तो। अब आपको मालूम तो होगा कि आशिक़ोंके दिलपर क्या बीतती है; उनकी उपेक्षा करने, विरह-अग्निमें जलाने और सतानेसे आशिक़ोंको कितना कष्ट होता है? इसका अनुभव अब आपको होगा, जब आपका माशूक़ वोह व्यवहार करेगा जो आप हमसे बरतते थे। आख़िरकार कुछ तो सितमकी मकाफ़ात (अत्याचारका बदला) चाहिए)*

सीखे हैं महरुख़ोंके लिए हम मुसव्वरी।
तक़रीब कुछ तो बहरेमुलाक़ात चाहिए॥

(चित्रकारी, (शायरी, गायन, वादन, शतरंज, चौसर आदि) कला हमने चन्द्रमुखियोंके लिये ही सीखी है, ताकि किसी न किसी कलाके सहारे

---

[1] लुटेरेको।

* "वोह का जाने पीर पराई।
जाके फटी न पैर बिवाई॥"

हमारा वहाँतक आना-जाना हो सके। क्योंकि वहाँतक रसाई होनेके लिये कुछ न कुछ तो गुण होने ही चाहिए।)

अपनी गलीमें मुझको न कर दफ़्न बादेक़त्ल।
मेरे पतेसे ख़ल्क़को क्यों तेरा घर मिले?

(तू मुझे क़त्ल करे यह तो बड़ी ख़ुशीकी बात है मगर क़त्ल करनेके बाद अपनी गलीमें मुझे दफ़न न करना। यही मेरी आख़िरी ख्वाहिश है, क्योंकि मैं नहीं चाहता कि मेरे जैसे प्रसिद्ध आदमीकी क़ब्र तेरे कूचेमें बने। मेरी प्रसिद्धिके कारण लोगोंको जहाँ मेरी क़ब्रका पता लगे, वहाँ तेरा निवास-स्थान भी मालूम हो। मेरे बाद तेरे कूचेमें और लोग आएँ-जाएँ यह मैं नहीं सहन कर सकता। यह मिर्जाका अछूता और नया खयाल है। वर्ना आशिक़की एक इच्छा यह भी रहती है कि मरनेपर वह यारके कूचेमें दफ़नाया जाय)

'ग़ालिब' तेरा अहवाल सुना देंगे हम उनको।
वे सुनके बुला लें यह इजारा नहीं करते॥

हमको उनसे वफ़ाकी है उम्मीद।
जो नहीं जानते वफ़ा क्या है?

पिन्हाँ था दामेसख़्त क़रीब आशियानेके।
उड़ने न पाये थे कि गिरफ़्तार हम हुए॥

(मतलब यह है कि होश सम्हालने भी न पाये थे कि मुसीबतोंने घर लिया। उड़ने पाये भी नहीं और गिरफ़्तार कर लिये गये।)

छोड़ी 'असद' न हमने गदाईमें दिल लगी।
साइल हुए तो आशिक़े अहलेकरम हुए॥

(हमने गदाई (फ़क़ीरी)में भी हँसमुख स्वभाव न छोड़ा। फ़क़ीर हुए पर दिल्लगीसे बाज़ न आये। हम साइल (फ़क़ीर) भी रहे और

आशिक़ भी रहे। यानी जिसके दरके फ़कीर हुए उसी दातारके आशिक भी हुए। इस शेरमें कई खूबी है। एक तो यह कि जो परमात्मा (अहले-करम) हमें देता है हम उसके उपासक हैं, प्रेमी हैं, आशिक हैं। दूसरे यह कि हम जिसपर आशिक़ हैं उसके दरवाज़ेपर फ़कीर बनकर दीदार कर आते हैं। तीसरे यह कि वह हमारा दाता है तो क्या हुआ, हम भी तो उसके आशिक हैं)

दाग़ेफ़िराक़े[1] सुहबतेशबकी[2] जली हुई।
इक शमअ़ रह गई है सो वह भी ख़मोश है॥

इक हंगामेपै मौकूफ़[3] है घरकी रौनक।
नोहयेग़म[4] ही सही नग़मयेशादी[5] न सही॥

उनके देखेसे जो आ जाती है मुँहपर रौनक।
वोह समझते हैं कि बीमारका हाल अच्छा है॥

हमको मालूम है जन्नतकी हक़ीक़त लेकिन।
दिलके ख़ुश रखनेको 'ग़ालिब' ये ख़याल अच्छा है॥

मुन्हसिर मरनेपै हो जिसकी उम्मीद।
ना उम्मीदी उसकी देखा चाहिये॥

सफ़ीना जब कि किनारेपै आ लगा 'ग़ालिब'।
ख़ुदासे क्या सितमोजौरे नाख़ुदा कहिये॥

(छोड़ भी, अब किसीकी क्या शिकायत और क्या गिला? जब कि

---

[1] विरहका चिन्ह।
[2] रात्रिकालीन उत्सव। [3] मुनहसिर।
[4] शोकमें रुदन।
[5] विवाह उत्सवपर नृत्य-गान।

सफ़ीना (जीवन रूपी नौका) जैसे-तैसे पार लग ही गया, तब रास्तेमें नाख़ुदा (मल्लाह) द्वारा किये गये अत्याचारोंका अब क्या उल्लेख करें ? हमारी नाव तो जैसे-तैसे पार लग ही गई। सतानेवालोंको क्या लाभ हुआ, यह वही जानें। अब हम क्यों व्यर्थमें शिकायत करके हल्के बनें ?)

न सुनो, गर बुरा कहे कोई।
न कहो, गर बुरा करे कोई॥

रोक लो, गर ग़लत चले कोई।
बख़्श दो गर ख़ता करे कोई॥

× × ×

बक रहा हूँ जुनूँमें क्या-क्या कुछ।
कुछ न समझे ख़ुदा करे कोई॥

(कभी-कभी मनुष्य दुखके आवेगको न रोक सकनेके कारण व्यथाके प्रवाहमें बह जाता है। वह नहीं चाहता कि हृदयके कोनेमें छुपे हुए दुख-दर्द किसीको दिखाये। मगर जब आवेग तेज़ होता है, तब वह नहीं सम्हल पाता और बहक जाता है। मगर बहता हुआ आदमी जिस तरह चाहता है किनारेसे आन लगे, उसी तरह जोशेजुनूँ (उन्मादके जोश)में बहकने-वाला यह चाहता है कि ईश्वर करे मेरी बात किसीकी समझमें न आये)

जब तवक़्क़ोह ही उठ गई 'ग़ालिब'।
क्यों किसीका गिला करे कोई॥

है कुछ ऐसी ही बात जो चुप हूँ।
वर्ना क्या बात कर नहीं आती॥

हाथ उठानेकी शक्ति न रही तो न सही, अभी आँखोंमें देखनेकी शक्ति तो है। पी नहीं सकता, मगर देखनेका ही आनन्द उठा सकता हूँ। इसलिए साग़र और मीना सामने ही रहने दिये जायँ। मगर भाव बहुत ऊँचे हैं। जीवन-संग्राममें सहस्रों ऐसे थक चुके हैं कि न लड़ सकते हैं न भाग ही सकते हैं। मगर धर्मके प्यासे एक बूँद पड़े हुए, आँखोंमें रोशनी लिये हुए क्या आत्माके सामनेसे ओझल हो जाते हैं? क्या अपने कर्तव्यसे विमुख हो जाएँ? नहीं।)

हस्तीके मत फ़रेबमें आ जाइयो 'असद'।
आलम तमाम हल्क़ये-दामेख़याल है॥

(इस जीवन अथवा संसारके जाल (फ़रेब)में कभी नहीं आना चाहिए। यह तो आत्मा-रूपी पक्षीको फँसानेके लिए जाल (हल्क़ये-दामेख़याल) है।)

क़तअ कीजै न तअल्लुक़ हमसे।
कुछ नहीं है तो अदावत ही सही॥

×   ×   ×

लाज़िम नहीं कि ख़िज्रकी हम पैरवी करें।
माना कि एक बुज़ुर्ग हमें हमसफ़र मिले॥*

(यह माना कि एक वयोवृद्ध 'ख़िज्र' हमें मार्गमें मिल गये हैं, जो हमारी ही तरह भ्रमण कर रहे हैं। मगर उनका अनुकरण करना हमारा कर्त्तव्य नहीं। हमें किसीकी नक़ल न करके अपना नवीन, स्वतन्त्र,

---

*वोह पाये शौक़ दे कि जुहत आश्ना न हो।
पूछूँ न ख़िज्रसे भी कि जाऊँ किधरको मैं?
—'फ़ानी'

मौलिक मार्ग चुनना चाहिए। स्वावलम्बनका कितना ऊँचा भाव है ? क्योंकि इसका मतलब अनुभव किये हमको संसारमें घूमते हुए भूले-भटकोंको रास्ता बताते हैं। गोया उनकी ड्यूटी ही मार्ग बतलाना है। फिर भी गालिब कहते हैं कि उनसे क्या हम मार्ग पूछें ? क्या हम उनके पीछे चलें ? और क्या उनके बताये मार्गका अनुसरण करें ? क्या इससे हमारे स्वावलम्बनमें बाधा न आयेगा ? ५-६ वर्ष पूर्व श्रद्धेय पं० अर्जुनलाल सेठीने (सर्वज्ञदेव उनकी स्वर्गीय आत्माको सुख-शान्ति, उनके जीवित 'प्रकाश'को प्रकाश दे) ऐसा ही प्रसंग छिड़नेपर निम्न-लिखित हिन्दीका दोहा जिस भावावेशमें सुनाया था कि आज भी वह दृश्य नजरके सामने चमकता-सा आ गया है —

"लीक-लीक गाड़ी चले, लीकहि चले कपूत।
लीक छोड़ तीनों चलें, शायर, सिंह, सपूत॥"

२७ जून १९४८

६

हकीम मुहम्मद मोमिन खाँ 'मोमिन'

[सन् १८०० से १८५१ ई० तक]

मोमिन साहब 'ग़ालिब' और 'ज़ौक़'के समकालीन थे। ये अपने ढंगके निराले थे। न किसीके दरबारमें जाते थे, न किसीकी चापलूसीमें कुछ लिखते थे। आरम्भमें हिकमत की, फिर ज्योतिषका अच्छा अभ्यास किया। यहाँतक कि अपनी मृत्युके बारेमें कह दिया था कि ५ रोज़ या ५ माह या ५ वर्षमें चोला छूट जायेगा। और यही हुआ भी। कोठेपरसे गिरनेके कारण कहे हुए दिनसे ठीक ५ माहके बाद असार संसारसे उठ गए। शतरंजके चतुर खिलाड़ियोंमेंसे एक थे।

कपूरथला महाराजने २५० रु० मासिकपर अपने यहाँ बुलाना चाहा। मगर मोमिन इसलिये नहीं गये कि इतना ही वेतन वहाँ एक गवैयेको भी मिलता था।

मोमिन रंगीन स्वभावी, हँसमुख, सौन्दर्य-उपासक और वज़हदार थे। उनके कलाममें दार्शनिकता नहीं मिलेगी। उनके अपने लिखनेका ढंग भी जुदा है। कहते हैं कि पढ़ते भी करुणोत्पादक ढंगसे थे। मोमिनके कलाममें नाज़ुकख़याली, भावोंकी तराश ख़ूब है। आशिक़ाना रंगके माहिर उस्ताद समझे जाते हैं। उर्दू-साहित्यके सुप्रसिद्ध आलोचक अल्लामा नियाज़ फ़तहपुरी लिखते हैं—"अगर मेरे सामने उर्दूके तमाम शुअरा (शायरों) मुतक़द्दमीन (प्राचीन) और मुताख़रीन (आधुनिक)का कलाम रखकर बाइसतसनायेमीर (मीरको छोड़कर) मुझको सिर्फ़ एक दीवान हासिल करनेकी इजाज़त दी जावे तो मैं बिला ताम्मुल

कह दूगा कि मुझ कुलियात मोमिन द दो और बाकी सब उठा ले जाओ ? [1]

इनका जन्म १८०० ई० दिल्लीमें हुआ। और सन् १८५१में दिल्लीमें ही मृत्यु हुई।

कलामे मोमिन —

म मानूगा नसीहत, पर न सुनता म तो क्या करता ?
कि हर हर बातपर नासेह[2] तुम्हारा नाम लेता था॥

छुटकर कहाँ असीरमुहब्बतकी[3] जिन्दगी।
नासेह यह बन्देग़म[4] नहीं कैदेहयात[5] है॥

मजूर हो तो वस्लसे बढकर सितम नहीं।
इतना रहा हूँ दूर कि हिजराका ग़म नहीं॥*

इस नक्शपाके[6] सजदेन[7] क्या-क्या किया जलील[8]।
म कूचयरकीबमें[9] भी सरके बल गया॥

जान दे चारागर[10] शबहिजरामें[11] मत बुला।
वह क्यो शरीक हो मेरे हाल तबाहमें ?

---

[1] इन्तिकादियात हिस्सा अव्वल पृ० २१ [2] उपदेशक [3] प्रमकी कैदी [4] कष्टोका बन्धन [5] जीवन-कद।

*नियम है कि आदतके खिलाफ हर बात नागवार गुजरती है। इसलिए अगर मुझपर तुम अत्याचारका अभ्यास करना चाहते हो तो मिलनसे बढकर और क्या सितम होगा क्योकि मैं विरह-व्यथाका इतना आदी हो गया हू कि मिलन अब मुझे आदतके खिलाफ बुरा मालूम होगा।

[6] चरण चिह्नो [7] नमस्कारने झुकनने [8] बदनाम बइज्जत, [9] प्रतिद्वंद्वीकी गलीमें [10] वैद्य [11] विरह रात्रिमे।

ग़ैरोंपै खुल न जाय कहीं राज़ देखना।
मेरी तरफ़ भी ग़मज़एग़म्माज़[1] देखना॥

फँसे गिले[2] रक़ीबके[3], क्या ताने उक़रबा[4]।
तेरा ही दिल न चाहे तो बातें हज़ार हों॥

बहरे अयादत[5] आये वोह, लेकिन क़ज़ाके साथ।
दम ही निकल गया मेरा आवाज़ेपाके[6] साथ॥

माँगा करेंगे अबसे दुआ हिज्रेयारकी[7]।
आख़िर तो दुश्मनी है असरको दुआके साथ॥*

न बिजली जल्वाफ़र्मा[8] है, न सैयाद[9]।
करें हम क्या निकलकर आशियाँसे[10]?

बर्क़का[11] आस्मानपर है दिमाग़।
फूँककर मेरे आशियानेको॥

क्या सुनाते हो कि है हिज्रमें जीना मुश्किल?
तुमसे बेरहमपै मरनेसे तो आसाँ होगा॥

---

[1]माशूक़ाना अदाओंको आँखोंसे प्रकट करनेवाला; [2]शिकायत; [3]प्रतिद्वन्द्वीके; [4]इष्ट-मित्रोंके; [5]बीमारीका हाल पूछनेके लिये; [6]पगध्वनिके; [7]प्रेमिकाके विरहकी।

*ख़ूब था पहलेसे होते जो हम अपने बदख़्वाह।
कि भला चाहते हैं और बुरा होता है॥

[8]उपस्थित; [9]चिड़ीमार; [10]घोंसलेसे; [11]बिजलीका।

संगेसौदा जुनूंमें लेते हैं।
अपना हम मक़बरा बनानेको ॥*

यास[1], देखो कि ग़ैरसे कह दी।
बात अपनी उम्मीदवारीकी ॥

दोनोंका एक हाल है यह मुद्दआ[2] हो काश।
वो ही ख़त उसने भेज दिया क्यों जवाबमें ?

ख़ुदाकी याद दिलाते थे नज़अमें[3] अहबाब[4]।
हज़ार शुक्र कि उस दम वोह बदगुमाँ न हुआ ॥

हाय तुम जो बज़्मेग़ैरमें आँखें चुरा गये।
खोये गये हम ऐसे कि अग़ियार[5] पा गये ॥

हँसते जो देखते हैं किसीको किसीसे हम।
मुँह देख-देख रोते हैं, किस बेकसीसे हम ?

कुछ क़फ़समें इन दिनों लगता है जी।
आशियाँ अपना हुआ बरबाद क्या ?

वक़्तेबदने[6] वोह डराया है कि काँप उठता हूँ।
तू कभी लुत्फ़की बातें भी अगर करता है ॥

---

*संगसौदा एक किस्मका काला पत्थर जो हल्का और अन्दरसे खोखला होता है। संगसौदा इसलिए लाते हैं कि हमारे जुनूं (दीवानगी)की याद रहे क्योंकि सौदा शायद दीवानेको है। कब्रपर सौदा पत्थर लगा हुआ देखकर हर एक समझ लेगा कि इसमें कोई सौदाई दफ़नाया गया है।

[1]निराशा [2]तात्पर्य [3]मृत्यु-कालमें, [4]इष्ट मित्र, [5]ग़ैर, [6]दुर्दिन।

दमबदम रोना हमें, चारों तरफ़ तकना हमें।
या कहीं आशिक़ हुए, या होगया सौदा[1] हमें॥

अगर ग़फ़लतसे वाज आया जफ़ा[2] की।
तलाफ़ी[3] की भी जालिमनें तो क्या की?

जफ़ासे थक गये तो भी न पूछा—
"कि तूने किस तवक़्क़ोहपर[4] वफ़ा[5] की?"

किसीनें गर कहा मरता है 'मोमिन'।
कहा "मैं क्या करूँ? मर्ज़ी ख़ुदाकी"॥

ग़ैरसे सरगोशियाँ[6] कर लीजिए फिर हम भी कुछ।
आर्ज़ूहायेदिले[7] रश्कआश्ना[8] कहनेको हैं॥

मजलिसमें मेरे ज़िक्रके आते ही उठे वोह।
बदनामिये उश्शाक़का एजाज तो देखो†॥

ख़ुशी न हो मुझे क्योंकर क़ज़ाके आनेकी।
ख़बर है लाशपै उस बेवफ़ाके आनेकी॥

---

[1]उन्माद; [2]अत्याचार; [3]प्रायश्चित्त; [4]आशापर; [5]भलाई; [6]कानाफूसी; [7]हृदयकी अभिलाषा; [8]प्रतिद्वन्द्वीकी ईर्ष्या।

†मजलिसमें बदनाम प्रेमीका किसीने ज़िक्र किया तो माशूक़ घृणाके कारण उठ खड़ा हुआ। प्रेमी अपने दिलको तसल्ली देता है कि उसका खड़ा होना नफ़रतकी वजहसे नहीं, बल्कि आशिक़ोंकी बदनामीको उसने ताज़ीम दी है।

उलझा है पाँव यारका जुल्फ़ेदराज़में[1]।
लो आप अपने दाममें[2] सैयाद आ गया ॥

तुम मेरे पास होते हो गोया।
जब कोई दूसरा नहीं होता ॥

गये वोह ख़्वाबसे उठ, ग़ैरके घर आख़िरेशब।
अपने नालोंने दिखाया यह असर आख़िरेशब ॥

सुबह दम वस्लका वादा था यह हसरत देखो।
मर गये हम दमेआग़ाज़ेसहर[3] आख़िरेशब ॥

खोलिये आह, फ़लक! रुतबेका ऐज़ाज़[4] तो देख।
अव्वलेमाहमें चाँद आये नज़र आख़िरेशब ॥

समझके और ही कुछ मर चला मैं ऐ नासेह[5]!
कहा जो तूने 'नहीं जान जाके आनेकी' ॥

मेरे घर भी चलते-फिरते एक दिन आ जायगा।
दो मुबारिकबाद अबको यार हरजाई[6] मिला ॥

छोड़ बुतख़ानेको 'मोमिन' सजदा[7] काबेमें न कर।
ख़ाकमें ज़ालिम! न यूँ क़दरेजबींसाई[8] मिला ॥

---

[1]लम्बे बालोंमें, [2]जालमें, [3]प्रात:कालसे पूर्व, [4]इज़्ज़त, सम्मान।
[5]नसीहत देनेवाला, [6]प्रत्येक स्थानपर जानेवाला (चरित्र भ्रष्ट);
[7]नमस्कार, [8]मस्तक झुकानेके गौरवको।

जिदसे वोह फिर रक़ीबके[1] घरमें चला गया।
ऐ रश्क[2]! मेरी जान गई तेरा क्या गया?

आपकी कौन-सी बढ़ी इज़्ज़त?
मैं अगर बज़्ममें ज़लील हुआ॥

ख़ाक होता न मैं तो क्या करता?
उसके दरका ग़ुबार होना था॥

मत कह शबेविसाल कि ठंडा न कर चिराग़।
ज़ालिम! जला है मेरी तरह उम्रभर चिराग़॥*

उस शोलारूने[3] ताकि पसेमर्ग[4] भी जलूं।
जलवाए दुश्मनोंसे मेरी गोरपर[5] चिराग़॥

नाकामियोंसे काम रहा उम्रभर हमें।
पीरीमें[6] यास[7] थी जो हविस[8] थी शबाबमें[9]॥

उम्र सारी तो कटी इश्क़ेबुतांमें[10] 'मोमिन'!
आख़िरी वक़्तमें क्या ख़ाक मुसलमाँ होंगे?

शबेफ़िराक़में भी ज़िन्दगीपै मरता हूँ।
कि गो ख़ुशी नहीं मिलनेकी पर मलाल तो है॥

---

[1]प्रतिद्वन्द्वीके; [2]ईर्ष्या।

*शबेविसाल है गुल कर दो इन चिराग़ोंको।
ख़ुशीकी बज़्ममें क्या काम जलनेवालोंका?

[3]कान्तिवानने; [4]मृत्युके पश्चात् [5]क़ब्रपर; [6]वृद्धावस्थामें; [7]निराशा; [8]तृष्णा; [9]यौवनमें; [10]मूर्त्ति-पूजामें।

खाकमें मिल जाए यारब ! बेकसीकी आबरू ।
गैर मेरी नाशके हमराह[1] रोता जाय है ॥

अब तो मर जाना भी मुश्किल है तेरे बीमारको ।
जोफ़के[2] बाइस[3] कहाँ दुनियासे उट्ठा जाय है ?

नासहा[4] ! दिलमें तू इतना तो समझ अपने कि हम ।
लाख नादाँ[5] हुए, क्या तुझसे भी नादाँ होंगे ?

मिन्नतेहज़रते ईसा न उठाएँगे कभी ।
जिन्दगीके लिए शर्मिन्दये अहसाँ होंगे ?*

बात नासेहसे करते डरता हूँ ।
कि फुगाँ बे असर न हो जाये ! †

गला हम काट लेंगे आप, तेरे रश्कसे अपना ।
उदूको[6] कत्ल कीजे फिर हमारा इम्तहाँ कीजे ॥‡

---

[1]अर्थीके साथ-साथ [2]निर्बलताके [3]कारण, [4]हे नसीहतकार, [5]नासमझ [6]प्रतिद्वन्द्वीका ।

*यानी जिन्दगी जैसी बेहकीकत चीज़के लिये क्या ईसाके अहसानसे शर्मसार होंगे ? कतई नहीं । (ईसा मुर्दोंमें जीवन डाल देता था, ऐसी धारणा प्रचलित है ।)

†नासेह (उपदेशक)की बात बेअसर होती है । कहीं ऐसा न हो कि इसकी मनहूस संगतसे मेरी वाणीमें भी असर न रहे ।

‡रश्कसे यह मुराद है कि हम यह भी गवारा नहीं कि तुम हमें छोड़कर उदूको हलाल करो । इसलिए उदूका कत्ल किया तो हम अपना खुद गला काटकर मर जाएँगे । (मगर इसमें चाल ये है कि तैशमें आकर माशूक दुश्मनका सफाया कर दे तो फिर आशिकका काम बने ।)

.हैं दिलमें ग़ुबार उसके, घर अपना न करेंगे।
.हम ख़ाकमें मिलनेकी तमन्ना न करेंगे ॥*

बेवफ़ाईका उदूकी है गिला।
लुत्फ़में भी वे सताते हैं मुझे ॥†

३० जून १९४४
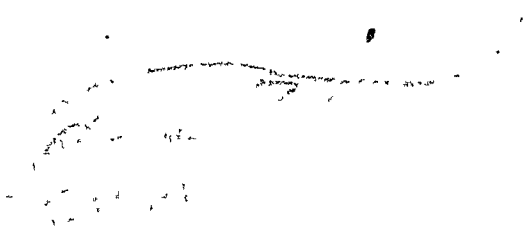
*प्यारेके दिलमें हमारी तरफ़से गुबार है। ऐसी सूरतमें हम उसके दिलमें घर करना पसन्द न करेंगे; क्योंकि ऐसा करना ख़ाकमें मिलने-जैसा होगा। (गुबारका अर्थ यूँ तो मैल है मगर गुबार और ख़ाककी तसबीह देकर मोमिनने शेरको चमका दिया है)

†यानी आशिक़ उदूका जिक्र बुराईके वर्णनमें भी नहीं सुनना चाहता, उसकी इच्छा तो ये है कि उसके सिवा माशूक़को किसी गैरका खयाल ही न आये। उसे तो ग़ैरसे इतनी ईर्ष्या है कि उसकी ख्वाहिश रहती है कि माशूक़को क़त्ल करना है तो मुझे करे, बुराई करना है तो मेरी करे। मगर उदूको तो ख्वाबमें भी मनमें न लाये।

व्यवहार किया जो एक शायरको शायरके साथ और बहादुरको बहादुरके साथ करना चाहिए। आपने मिर्ज़ा दाग़को जो पत्र लिखा था, हम उसे 'मज़ामीनेचकबस्त'से यहाँ उद्धृत करते हैं :—

मेरे पुराने यार ग़मगुसार हज़रते 'दाग़' सलामत,

ख़ुदा रोज-ब-रोज आपके एजाज़ (इज्जत)को बढ़ाये और इस फ़नमें चमकाये। मुल्कको आपकी क़दर हो या न हो, मेरी नज़रमें तो जिस क़दर है आपका दिल बख़ूबी जानता होगा। आप हासदीने (ईर्ष्यालुओं) कोतहअन्देश (संकीर्णविचारकों)का कुछ ख़याल न करें। अरबाबे कमाल (गुणी) ख़सूसन वोह जिनसे ज़माना मुआफ़क़त करता है (आदर देता है)का महसूद (ईर्षित) होना सरमायेनाज़ व फ़क्र है। ख़ुदा हासिद होनेसे महफ़ूज़ रखे।

यादआवरीका मिन्नतपज़ीर
अमीर फ़क़ीर

इसे कहते हैं शराफ़त और इन्सानियत। वाह! क्या ऊँचे भाव हैं। "गुणियोंको ईर्ष्यालुओंकी ईर्ष्यापर अभिमान होना चाहिए और स्वयं उन्हें ईर्ष्यासे बचना चाहिए।"

मुंशी अमीर मीनाई और मिर्ज़ा दाग़ समकालीन और एक दूसरेके प्रतिद्वन्द्वी रहे हैं। दोनों ही अपने ज़मानेमें बहुत बड़े ग़ज़्ज़ाल (ग़ज़ल लिखनेवाले) थे; और अक्सर हमतरह मिसरोंपर ग़ज़ल लिखते थे। दोनोंने यक्साँ रंगमें तबा आज़माई की है। दोनोंने रामपुर, हैदराबादमें इज़्ज़त पाई। एक लखनवी ज़बानके माहिर थे तो दूसरे देहलवी ज़बानमें कामिल। दोनोंने बकसरत शागिर्द पाये और दोनोंने ख़ूब ख्याति प्राप्त की। शायरीके मैदानमें दोनोंने ख़ूब हुनर दिखलाये मगर एक दूसरेपर चोट नहीं की।

अमीर मीनाई बीमार हुए तो मिर्ज़ा दाग़ उनके यहाँ रोज़ाना सेवा-

सुपुर्दपाको जाते थे। मुनीरजीकी मृत्युपर मिर्ज़ा दाग़को बड़ा सदमा पहुँचा और उन्होंने ये तारीख़ कही —

वाये[1] वैला[2] चल बसा दुनियासे वोह।
जो मिरा हमफ़न था मेरा हमसुख़न[3]॥

मुस्तफ़ाग्राबादसे[4] आया दकन[5]।
यह सफ़र था उस मुसाफ़िरका अख़ीर॥

क्या कहूँ, क्या-क्या हुईं बीमारियाँ।
क्या लिखूँ तफ़सीले[6] अमराज़ेकसीर[7]॥

गो बज़ाहिर था अमीर अहमद लक़ब[8]।
दर हक़ीक़त बातनन पाया फ़क़ीर॥

है दुआ भी 'दाग़'की तारीख़ भी।
फ़िरदौसे-आली[9] पाए जन्नतमें 'अमीर'[10]॥

कलामे अमीर —

ख़बरदार ऐ मुसाफ़िर! ख़ौफ़की जा[11] राहेहस्ती है।
ठगोंका बैठका है जाबजा चोरोंकी बस्ती है॥

'अमीर' उस रास्तेसे जो गुज़रते हैं वो लुटते हैं।
मुहल्ला है हसीनोंका कि क़ज़्ज़ाक़ोंकी[12] बस्ती है॥

मेरे तुम्हारे बीचमें आता है बार-बार।
कम्बख़्त पाँव भी नहीं थकते मलालके॥

---

[1] हाय, [2] अफ़सोस, [3] मेरे जैसी ज़बाँवाला, [4] रामपुरसे; [5] हैदराबाद, [6] विस्तारसे, [7] बीमारियोंकी अधिकता, [8] नाम, [9] ऊँचामर्तबा, [10] यानी हिजरी सन् १३१८ इन अक्षरोंसे अमीरकी मृत्युकी तारीख़ बनती है, [11] जगह, [12] लुटेरोंकी।

आई सहर[1] इधर कि उधर शाम हो गई।
दो-दो घड़ीके होने लगे दिन विसालके[2]॥

मिट्टी जो देने आये हो तो दो हँसी-ख़ुशी।
फेंको भी अब ग़ुबारको दिलसे निकालके॥

उनको आता है प्यारपर ग़ुस्सा।
हमको ग़ुस्सेपै प्यार आता है॥

वो कहते हैं कि हम आँखोंमें सबको ताड़ लेते हैं।
मुहब्बत सारी दुनियाको इसी काँटेपै तुलती है॥*

मैं जाग रहा हूँ हिज्रकी[3] शब[4]।
पर मेरे नसीब सो रहे हैं॥

किस तरह फ़रियाद[5] करते हैं बतादो क़ायदा।
ऐ असीरानेक़फ़स[6] मैं नौ[7] गिरफ़्तारोंमें हूँ॥†

इस सरामें मुसाफ़िर नहीं रहने आया।
रह गया थकके अगर आज तो कल जाऊँगा॥

---

[1]प्रातःकाल, सुबह; [2]मिलन, सम्भोगके।
*इसी भावका द्योतक अकबर इलाहाबादीका शेर है :—

ख़ुदा जाने मेरा क्या वज़्न है उनकी निगाहोंमें ?
सुना है आदमीको वोह नज़रमें तोल लेते हैं॥

[3]विरहकी; [4]रात्रि; [5]अर्ज़, प्रार्थना; [6]वन्दियों; [7]नया।
†इसी रंगमें चकवस्तका शेर है :—

नया बिस्मिल हूँ मैं वाक़िफ़ नहीं रस्मेशहादतसे।
बता दे तू ही ऐ ज़ालिम! तड़पनेकी अदा क्या है ?

सुश्रूषाको जाते थ। मुंशीजीकी मृत्युपर मिर्ज़ा दागको बड़ा सदमा पहुँचा और उन्होंने य तारीख कही —

> वाये[1] वैला[2] चल बसा दुनियासे बोह।
> जो मिरा हमफ़न था मेरा हमसफ़ीर[3]॥
>
> मुस्तफ़ाबादसे[4] आया दक्न[5]।
> यह सफ़र था उस मुसाफ़िरका अख़ीर॥
>
> क्या कहूँ, क्या-क्या हुई बीमारियाँ।
> क्या लिखूँ तफ़सीले[6] अमराज़ेकसीर[7]॥
>
> गो बज़ाहिर था अमीर अहमद लक़ब[8]।
> दर हक़ीक़त बातनन पाया फ़क़ीर॥
>
> है दुआ भी 'दाग़'की तारीख़ भी।
> फ़िरदौसआली[9] पाए जन्नतमें 'अमीर'[10]॥

कलामे अमीर —

> ख़बरदार ए मुसाफ़िर! ख़ौफ़की जा[11] राहेहस्ती है।
> ठगोंका ठठका है जाबजा चोरोंकी बस्ती है॥
>
> 'अमीर' उस रास्तेसे जो गुज़रते हैं वो लुटते हैं।
> मुहल्ला है हसीनोंका कि बज़्ज़ाक़ोंकी[12] बस्ती है॥
>
> मेरे तुम्हारे बीचमें आता है बार बार।
> कम्बख़्त पाव भी नहीं थकते मलालके॥

---

[1] हाय [2] अफ़सोस [3] मेरे जैसा ज़बाँवाला, [4] रामपुरसे, [5] हैदराबाद [6] विस्तारसे, [7] बीमारियोंकी अधिकता, [8] नाम [9] ऊँचामकाम [10] यानी हिजरी सन् १३१८ इन अक्षराम अमीरकी मृत्युकी तारीख बनती है, [11] जगह, [12] लुटेरोंकी।

ऐ रूह ! क्या बदनमें पड़ी है बदनको छोड़ ।
मैला बहुत हुआ है अब इस पैरहनको[1] छोड़ ॥

किया यह शौक़ने अन्धा मुझे न सूझा कुछ ।
वगर्ना रब्तकी[2] उससे हज़ार राहें थीं ॥

वोह मज़ा दिया तड़पने कि यह आरज़ू है यारब !
मेरे दोनों पहलुओंमें दिले बेक़रार होता ॥

जो निगाह की थी ज़ालिम ! तो फिर आँख क्यों चुराई ?
वही तीर क्यों न मारा जो जिगरके पार होता ?*

सूरत तेरी दिखाके कहूँगा यह रोजेहश्र[3]—
"आँखोंका कुछ गुनाह न दिलका क़ुसूर था ॥"

जुदा हैं दुख़्तेरज़का[4] नाम हर सुहबतमें ऐ साक़ी !
परी है मयकशोंमें[5] हूर है परहेज़गारोंमें ॥

मिलाकर ख़ाकमें भी हाय ! शर्म उनकी नहीं जाती ।
निगह नीची किये वोह सामने मदफ़नके[6] बैठे हैं ॥

उल्फ़तमें बराबर है वफ़ा हो कि जफ़ा हो ।
हर बातमें लज़्ज़त है अगर दिलमें मज़ा हो ॥

---

[1]लिबासको; [2]मेल बढ़ानेकी ।

*कोई मेरे दिलसे पूछे, तेरे तीरेनीमकशको ।
ये ख़लिश कहाँसे होती, जो जिगरके पार होता ॥
—ग़ालिब

[3]प्रलयवाले दिन जब इन्साफ़ होगा; [4]अंगूरकी लड़की, शराबका; [5]शराबियोंमें; [6]क़ब्रके ।

है जवानी खुद जवानोंका सिंगार।
सादगी गहना है इस सिनके लिए॥

करीब है यार रोज़े महशर[1] छुपेगा कुश्तोंका[2] खून क्योंकर?
जो चुप रहेगी ज़बाने खंजर लहू पुकारेगा आस्तींका॥*

उठाऊँ सख्तियाँ लाखों, कड़ी बात उठ नहीं सकती।
मैं दिल रखता हूँ शीशेका जिगर रखता हूँ पत्थरका॥

गर्द उड़ी आशिक़की तुरबतसे,[3] तो झुँझलाकर कहा—
"वाह! सर चढ़ने लगी पांवोंकी ठुकराई हुई"॥

फ़ना[4] कैसी, बक़ा[5] कैसी, जब उसके आशना[6] ठहरे।
कभी इस घरमें आ निकले कभी उस घरमें जा ठहरे॥

मुस्कराकर वोह शोख़ कहता है—
"आज बिजली गिरी कहीं न कहीं"॥

शोरेमहशर[7]! 'अमीर' को न जगा।
सो गया है ग़रीब सोने दे॥

वोह दुश्मनीसे देखते हैं, देखते तो हैं।
मैं शाद[8] हूँ कि हूँ तो किसीकी निगाहमें॥

---

[1]प्रलय, [2]बलि किये हुओंका;

*इस शेरका मिस्टर जस्टिस महमूदने अपने एक फ़ैसलेमें बतौर सनदके लिखा था।

[3]क़ब्रसे, [4]मृत्यु, [5]जिन्दगी;

[6]मेहमान, प्रेमी, [7]प्रलयका शोर;

[8]प्रसन्न।

ऐ बर्क़ ! तू बता कभी तड़पी, ठहर गई।
याँ उम्र कट गई है इसी इज़्तराबमें॥

आख़िरमें दोनों उस्तादोंकी हमतरह ग़ज़लोंका इन्तख़ाब 'मज़ामीने चकबस्त'से उद्धृत करके यहाँ दिया जाता है, जिससे दोनोंकी ज़बान और मज़ाक़ेसख़ुनका रंग मालूम हो सके।

दाग़ :—

जबतक किसीकी चाह न थी क्या ग़रूर था ?
मेरा ही दिल बग़लमें मेरे रश्के हूर था।

वाइज़[1] ! तेरे लिहाज़से हम सुनके पी गये।
क्या नागवार ज़िक्रे शरावेतहूर[2] था॥

क्यों तूने चश्मेलुत्फ़से देखा ग़ज़ब किया ?
क़ुरबान उस निगाहके जिसमें ग़रूर था॥

अमीर :—

मोक़ूफ़ जुर्म ही पै करमका[3] ज़हूर[4] था।
बन्दा[5] अगर क़ुसूर न करता, क़ुसूर था॥

आया बड़ा मज़ा मुझे मजलिसमें वाज़की।
वाइज़ था मस्तेज़िक्रे शरावेतहूर था॥

नीची रक़ीबसे[6] न हुई आँख उम्र भर।
झुकता मैं क्या ? नज़रमें तुम्हारा ग़रूर था॥

---

[1]उपदेशक; [2]पवित्र शरावका वर्णन;
[3]दयालुताका, महर्बानीका; [4]प्रदर्शन, दार-मदार;
[5]सेवक; [6]प्रतिद्वन्द्वीसे।

आये जो मेरी लाशपै वोह तञ्जसे[1] बोले—
"अब हम हैं खफा तुमसे कि तुम हमसे खफा हो ?"

आँखें खोलीं भी बन्द भी कीं।
वोह शक्ल न सामनेसे सरकी ॥

वाये किस्मत जो सबकी सुनता है।
वोह भी आशिक की इल्तजा न सुने ?

खुदीसे बेखुदी में आ जो शौके हकपरस्ती है।
जिसे तू नेस्ती समझा है ऐ ग़ाफ़िल ! वो हस्ती है ॥

बढ़, ऐ आहेरसा ! अब किगरेपर अर्शके पहुँचो।
बुलन्दीको बुलन्दी जानना हिम्मतकी पस्ती है ॥

न शाखेगुल ही ऊँची है न दीवारे चमन बुलबुल !
तेरी हिम्मतकी कोताही, तेरी क़िस्मतकी पस्ती है ॥

वस्ल हो जाय यहीं हश्रमें क्या रक्खा है ?
आजकी बातको क्यों कलपै उठा रक्खा है ?

तुझसे माँगूं मैं तुझीको कि सभी कुछ मिल जाय।
सौ सवालोंसे यही एक सवाल अच्छा है ॥

न चूक वक्तको पाकर कि है यह वोह माशूक।
कभी उम्मीद नहीं जिसमें जाके आनेकी ॥

शबेवस्लत करीब आने न पाये कोई खिलवतमें।
अदब हमसे जुदा ठहरे, हया तुमसे जुदा ठहरे ॥

---

[1] तानसे।

ऐ मर्ग ! तू कहाँ थी कहाँ, ठहर गई।
यों उम्र कट गई है इसी इन्तज़ारमें ॥

यहाँ इन दोनों उस्तादोंकी हमतरह ग़ज़लोंका उनवान 'मज़ामीने मयकदा'से शुरूअ करके यहाँ दिया जाता है, जिससे दोनोंकी ज़बान और मज़मूनोंका रंग मालूम हो सके।

दाग़ :—

अबतक किसीकी याद न थी क्या ग़रूर था ?
मेरा ही दिल बग़लमें मेरे रश्के हूर था।

वाइज़[1] ! तेरे लिहाज़से हम सुनके पी गये।
क्या नागवार ज़िक्रे शराबेतहूर[2] था ॥

क्यों तूने चश्मेलुत्फ़से[3] देखा ग़ज़ब किया ?
क़ुर्बान उस निगाहके[4] जिसमें ग़ुरूर था ॥

अमीर :—

मौक़ूफ़ जुर्म ही पै करमका[3] ज़हूर[4] था।
बन्दा[5] अगर क़ुसूर न करता, क़ुसूर था ॥

आया बड़ा मज़ा मुझे मजलिसमें वाइज़की।
वाइज़ था मस्तेज़िक्रे शराबेतहूर था ॥

नीची रक़ीबसे[6] न हुई आँख उम्र भर।
झुकता मैं क्या ? नज़रमें तुम्हारा ग़ुरूर था ॥

---

[1]उपदेशक; [2]पवित्र शराबका वर्णन;
[3]दयालुताका, महत्तताका; [4]प्रदर्शन, दार-मदार;
[5]सेवक; [6]प्रतिद्वन्द्वीसे।

दाग़ —

हम बोसा लेके उनसे अजब चाल कर गये।
यूँ बख़्शवा लिया कि यह पहला क़ुसूर था॥

अमीर —

लिपटा मैं बोसा लेके तो बोले कि "देखिये—
यह दूसरी ख़ता है वह पहला क़ुसूर था"॥*

दाग़ —

यूँ तो बरसा न पिलाऊँ न पिऊँ ऐ ज़ाहिद[1]!
तौबा करते ही बदल जाती है नीयत मेरी॥

अमीर —

तौबाकी जानको बिजली है चमक बिजलीकी।
बदली आते ही बदल जाती है नीयत मेरी॥

दाग़ —

क्या फ़लक[2] टूट पड़ा बादेफ़ना[3] भी मुझपर।
बैठी जाती है दबी जाती है, तुरबत मेरी॥

---

*एक दाग़ और अमीर हैं कि अपराध पर-अपराध करते हैं और फिर किस शानसे क्षमा याचना करते हैं और एक मिर्ज़ा ग़ालिब हैं कि जागते हुए तो क्या सोते हुए भी और वोह भी पाँवके बोसा लेनेका साहस नहीं कर पाते। फ़र्माते हैं —

ले तो लूँ सोतेमें उसके पावका बोसा मगर।
ऐसी बातोंसे वह काफ़िर बदगुमाँ हो जायगा॥

[1]परहेज़गार भगतजी, [2]आस्मान,
[3]मृत्युके पश्चात्।

अमीर :—

ग़मज़्दा रोती है बहुत उसको उठाले कोई ॥
बैठ जाये न कहीं कच्ची है तुरबत[1] मेरी ॥

दाग़ :—

शरीर शोख़, निगह बेक़रार, चितवन शोख़ ।
तुम अपनी शक्ल तो पैदा करो ह्यादे लिए ॥

अमीर :—

ख़ुदाकी शान ! जो शोख़ीसे आशना ही न थी ।
तरस रही है वही आँख अब ह्याके लिए ॥

दाग़ :—

ज़बाँसे गर किया भी वादा तूने तो यक़ीं किसको !
निगाहें साफ़ कहती हैं कि देखो यूँ मुकरते हैं ॥

अमीर :—

तसल्ली ख़ाक हो वादोंसे उनके, चितवनें उनकी ।
इशारोंसे यूँ कहती हैं कि देखो यूँ मुकरते हैं ॥

दाग़ :—

वोह और हैं जो पीते हैं मौसमको देखकर ।
आती रही बहारमें तौबाशिकन[2] हवा ॥

अमीर :—

वाइज़का[3] था लिहाज़ तो फ़स्लेख़िज़ाँ[4] तलक ।
लो आ गई बहारमें तौबाशिकन हवा ॥

---

[1]क़ब्र; [2]प्रतिज्ञा तोड़नेवाली; [3]उपदेशकका; [4]पतझड़ ।

दाग़ —

हिर्सो[1] हविसो[2] ताबो[3] तवाँ[4] 'दाग़' जा चुके।
अब हम भी जानेवाले हैं सामान तो गया॥

अमीर —

बाक़ी है 'अमीर' अब तो फ़क़त जानका जाना।
होशो विरदो[5] ताबो तवाँ जा चुके कबके॥*

३ जुलाई १९५४

---

[1]लालसा [2]तृष्णा [3]चैन [4]बल [5]अवन।

*तुलनात्मक अशआर देनेके कारण ५१ नम्बरकी बन्दिश नहीं रक्खी गई।

८

नवाब मिर्ज़ा खाँ 'दाग़'

[सन् १८३१ से १९०५ ई० तक]

अहसन'के शब्दोंमें—"दाग़ न सूफ़ी[1] थे न मुफ़्ती[2]। वे सिर्फ़ एक शाइर थे और शाइर भी ग़ज़लके। और ग़जल भी ऐसी कि जिसमें शोख़ी,[3] शरारत, जली-कटी, ताने, रश्क,[4] बदगुमानी, छेड़-छाड़, लाग-डाँट, छीन-झपट और उरियानीके[5] सिवा कुछ नहीं।"

मौलाना हामिदहुसैन क़ादरी फ़र्माते हैं—"दाग़ने दिल्लीके लाल-क़िलेमें होश सम्हाला। शाही बेगमातसे जबान सीखी। शहजादोंके साथ इल्म और अदब हासिल किया। उस्ताद 'ज़ौक़'से फ़न्नेशाइरीमें फ़ैज़ पाया। क़िलेके मुशायरोंमें शरीक हुए। ख़ुद बादशाहसे दादे सख़ुन ली। दाग़ २५ सालकी उम्रतक क़िलेमें रहे।....दाग़का शीरीं बयान औ लुत्फ़ेज़बान ऐसा है कि इब्तदासे[6] अबतक किसी शायरको नसीब नहीं हुआ। जिद्दतेअदा इस क़दर है कि बजुज़ ग़ालिब व मोमिनके कोई उनका हमपल्ले नहीं। शोख़ियेमज़मून इतनी कि उनसे बढ़कर कहीं नज़र नहीं आती। ग़ज़लकी ख़ूबीके लिए जरूरी है कि अलफ़ाज़ फ़सीह[7] हों, बन्दिश चुस्त व सही हो। मुहावरातका इस्तेमाल मौज़ूं व बरमहल हो। तर्ज़ेअदामें जिद्दत हो। दाग़के यहाँ ये सब चीज़ें बेहतर-से-बेहतर हैं,

---

[1]सूफ़ी धर्मके अनुयायी, त्यागी; [2]फ़तवा देनेवाला, धर्माचार्य; [3]चुलबुलापन; [4]ईर्ष्या; [5]नग्नताके; [6]प्रारम्भसे; [7]सरल।

तारीख़ें लोगोंने लिखीं । डा० सर इक़बालने भी अपने उस्तादकी मृत्युपर नौहा लिखा । नमूनेके तौरपर दो शेर मुलाहिज़ा हों :—

"थी हक़ीक़तसे[1] न ग़फ़लत फ़िक्रकी परवाज़में[2] ।
आँख ताइरकी[3] नशेमनपर[4] रही परवाज़में ॥

हू-ब-हू खींचेगा लेकिन इश्क़की तसवीर कौन ?
उठ गया नावकफ़िगन[5], मारेगा दिलपर तीर कौन ?"

दाग़के चार दीवान प्रकाशित हो चुके हैं । यूँ तो भारत भरमें आपके शिष्यों और शिष्योंके शिष्योंका जाल-सा पुरा हुआ है । एक तरहसे यह युग ही दाग़के अनुयायियोंका है । उनमें नवाब साइल देहलवी, बेखुद देहलवी, स्वर्गीय आग़ाशाइर देहलवी, नूह नारवी, अहसन मारहरवी, इक़बाल, सीमाब अकबराबादी, उल्लेखनीय हैं ।

"ख़ुदा बख़्शे बहुत-सी ख़ूबियाँ थीं मरनेवालेमें ।"

कलामेदाग़—

इस गिरफ़्तारीपर अपनी मैं निसार[6] ।
लो, वे करते हैं निगहबानी[7] मेरी ॥

कितना वाबजह[8] है ख़याल उसका ।
बेकसीमें[9] भी आये जाता है ॥

इतनी ही तो बस कसर है तुममें—
कहना नहीं मानते किसीका ॥

---

[1]वास्तविकतासे; [2]उड़ानमें; [3]पक्षीकी; [4]घोंसलेपर; [5]तीरन्दाज़; [6]बलिदान, न्योछावर; [7]निगरानी; [8]ठीक, ड्यूटीका पाबन्द; [9]लाचारीमें ।

ग़श खाके 'दाग़' यारके क़दमोंपे गिर पड़ा।
बेहोशने भी काम किया होशियारका॥

मंज़िलेमक़सूद[1] तक पहुँचे बड़ी मुश्किलसे हम।
ज़ोफ़ने[2] अक्सर बिठाया, शौक़ अक्सर ले चला॥

आँखें बिछाएँ हम तो उदूकी[3] भी राहमें।
पर क्या करें कि तुम हो हमारी निगाहमें॥

शिरकतेग़म[4] भी नहीं चाहती ग़ैरत[5] मेरी।
ग़ैरकी होके रहे, या शबेफ़ुरक़त मेरी॥

मुंसिफ़ी[6] हो तो ग़ज़ब, नामुंसिफ़ी हो तो सितम।
उसने मेरा फ़ैसला मौक़ूफ़ मुझपर रख दिया॥

ख़ुदा करीम[7] है यूँ तो मगर है इतना रश्क[8]।
कि मेरे इश्क़से पहले तुझे जमाल[9] दिया॥

वही हम थे कि जो रोतोंको हँसा देते थे।
अब वही हम हैं कि थमता नहीं आँसू अपना॥

कल छुड़ा लेंगे ऐ ज़ाहिद! आज तो साक़ीके हाथ।
रहन इक चुल्लूपै हमने हौज़े कौसर[10] रख दिया॥

तुमको आशुफ़्ता मिज़ाजोंकी ख़बरसे क्या काम?
तुम सँवारा करो बैठे हुए गेसू[11] अपना॥

---

[1]निर्दिष्ट स्थान [2]निर्बलताने, [3]प्रतिद्वन्द्वीकी, [4]दुखमें साझीदार [5]स्वाभिमान, [6]न्याय, [7]दयालु, न्यायी, [8]अरमान, [9]सौन्दर्य, [10]जन्नतकी शराबका हौज़, [11]बाल।

खूब पर्दा है कि चिलमनसे लगे बैठे हैं।
साफ़ छिपते भी नहीं, सामने आते भी नहीं॥

राहरवे राहे मुहब्बत[1] का ख़ुदा हाफ़िज़[2] है।
इसमें दो-चार बहुत सख़्त मुक़ाम आते हैं॥

मुझसे बेहतर मेरा ख़याल रहा।
कि तेरे दिलमें माहजमाल[3]! रहा॥

बशरने[4] ख़ाक पाया, लाल पाया या गुहर[5] पाया।
मिज़ाज अच्छा अगर पाया तो सब कुछ उसने भर पाया॥

ख़ातिरसे या लिहाज़से मैं मान तो गया।
झूठी क़समसे आपका ईमान तो गया॥

ग़ैरको रूपमें भेजा है जलानेको मेरे।
नामाबर[6] उनका नया भेस बदलकर आया॥

दोस्तीके पर्देमें कौन दुश्मनी करता?
उनकी मेहरबानी है, जो हैं मेहरबाँ अपना॥

यह मज़ा था दिल्लगीका कि बराबर आग लगती।
न तुझे क़रार होता न मुझे क़रार होता॥

ख़ुदाकी क़सम उसने खाई है आज।
क़सम है ख़ुदाकी मज़ा आ गया॥

---

[1]प्रेममार्गके पथिकका; [2]रक्षक।
[3]चन्द्रमुखी; [4]मनुष्यने; [5]मोती।
[6]पत्रवाहक।

आईना तसवीरका तेरी न लेकर, रख दिया।
बोसा लेनेके लिए क़ाबेमें पत्थर रख दिया॥

ज़िन्दगीमें पाससे दम भर न होते थे जुदा।
क़ब्रमें तनहा मुझे यारोंने क्योंकर रख दिया?

बात क्या चाहिए, जब मुफ़्तकी हुज्जत ठहरी।
इस गुनहपर मुझे मारा कि गुनहगार न था॥

पूछे कोई मिज़ाज तो अल्लाहरे ग़रूर!
कहते नहीं कि शुक्र है परविदंगारका॥

अपनी तो ज़िन्दगी है तग़ाफ़ुलकी[1] वजहसे।
वोह जानते हैं ख़ाकमें हमने मिला दिया॥

समझो पत्थरकी तुम लकीर उसे।
जो हमारी ज़बानसे निकला॥

ख़ुशीसे कहते हैं 'यह भी मेरा ही आशिक़ था'।
वोह देखते हैं नई जिस मज़ारकी[2] सूरत॥

मेरे ही वास्ते बैठा है पासबाँ[3] दरपर।
मिले जो राहमें कहते हैं "आइये घरपर"॥

बेजुस्तजू[1] मिलेगा न ऐ दिल! सुराग़ेदोस्त[2]।
तू कुछ तो करदकर[3], तेरी हिम्मतको क्या हुआ?

---

[1]उपेक्षाकी [2]क़ब्रकी, [3]दरबान।
[1]प्रयत्न किये बिना [2]मित्रका पता।
[3]प्रयत्नकर।

दस्तेहविस[1] बढ़ाकर क्यों मर्तबा घटाया ?
समझो न यह ज़ुलेखा दामन है पारसाका[2] ॥

कहाँ सैयाद, कैसा बाग़बाँ, किसपर गिरी बिजली ?
चमनमें आतिशेगुलने हमारा आशियाँ फूँका ॥

हो गई बारेगिराँ[3] बन्दा-नवाज़ी[4] तेरी ।
तू न करता अगर अहसान तो अहसाँ होता ॥

पर न बाँधे पाँव बाँधा बुलबुले नाशादका ।
खेलके दिन हैं लड़कपन है अभी सैयादका ॥

हो असर इतना तो सोज़े नालओ फ़रियादका ।
हम तमाशा देख लें घर फूँककर सैयादका ॥

रिन्दाने बेरियाकी[5] है सुहबत किसे नसीब ?
ज़ाहिद भी हममें बैठके इन्सान हो गया ॥

जिसमें लाखों बरसकी हूरें हों ।
ऐसी जन्नतको क्या करे कोई ॥

ऐ फ़लक ! दे हमको पूरा ग़म तो खानेके लिए ।
वह भी हिस्सा कर दिया सारे ज़मानेके लिए ॥

यहाँ सुबहे पीरीसे पहले ही 'दाग़' !
जवानी चिराग़ेसहर[6] हो गई ॥

कहीं दुनियामें नहीं इसका ठिकाना ऐ 'दाग़' !
छोड़कर मुझको कहाँ जाय मुसीबत मेरी ?

---

[1]अभिलाषाका हाथ; [2]शीलवानका; [3]बोझ; [4]कृपा;
[5]निष्कपटकी; [6]प्रातःकालीन दीपक ।

रहनी है कब यह रेजवानी तमाम उम्र ?
मानिन्द बूयेगुल इधर आई उधर गई ॥

जो तुम्हारी तरह तुमसे कोई झूठे वादे करता।
तुम्हीं मुन्सिफीसे कह दो, तुम्हें एतबार होता ?

जो आशिक़ोंमें खाक हुआ, कीमिया हुआ।
कहता था आज खाकमें कोई मिला हुआ॥

वाए ग़फ़लत कि अब किया हमने।
जो हमें पहले काम करना था॥

जो हो सकता है उससे वह किसीसे हो नहीं सकता।
मगर देखो तो फिर कुछ आदमीसे हो नहीं सकता॥

मयख़ानेके क़रीब थी मस्जिद भलेको 'दाग़'!
हर शख्स पूछता था कि "हज़रत इधर कहाँ ?"

दिलका क्या हाल कहूँ सुबहको जब उस बुतने—
लेके अँगड़ाई कहा नाज़से—"हम जाते हैं" ॥

आता है मुझको याद सवाले विसाल पर।
कहना किसीका हाय ! वोह मुँह फेरकर 'नहीं' ॥

खबर सुनकर मेरे मरनेकी वोह बोले रक़ीबोंसे—
"खुदा बख्शे बहुत-सी खूबियाँ थीं मरनेवालेमें" ॥

ग़ज़ब है देखना, उस सादगीपर मर गये लाखों।
कहा था किसने बन बैठे वोह मेरे सोग्वारोंमें ?

६ जुलाई १९४४

नव प्रभात

: ६ :

उर्दू-शायरीमें अभूतपूर्व परिवर्तन
१८५७के विप्लवके पश्चात् युगान्तरकारी शायर

आकाशपर चढ़कर बदलीकी आड़में छिपा हुआ चाँद रंगीन मिजाजों-की रंगरेलियाँ देख रहा था कि उसकी यह हरकत सूर्यने देखी तो लाल हो गया, और चाँदने मारे शर्मके मुँह छिपा लिया, तभी ऊषा-कालीन मृदु पवनने थपकियाँ देकर उन्हें जगाया :—

ले चुके अँगड़ाइयाँ, ऐ गेसुओवालो[1]! उठो !
नूरका तड़का हुआ, ऐ शबके मतवालो ! उठो !!

—'बर्क़' देहलवी

मगर रातभर जो मयखाने और बज़्मेयारमें जगे हों, उनपर नसीमे बहारीका[2] यह ठहोका क्या खाक असर करता ? उसी तरह मस्तेख्वाब पड़े रहे; परन्तु जो दिव्यद्रष्टा हैं, वे आनेवाली आपत्तियोंको सात पर्दोंमेंसे भी देख लेते हैं :—

जो है पर्देमें पिन्हाँ[3] चश्मेबीना[4] देख लेती है !
ज़मानेकी तबीयतका तक़ाज़ा देख लेती है !!

—'इक़बाल'

वे कैसे चुप रह सकते थे ? इसलिए उनमेंसे एकने बाआवाज़ बुलन्द कहा :—

कुछ कर लो नौजवानो ! उठती जवानियाँ हैं !

—'हाली'

मगर मदमाते सोनेवालोंके लिए यह बिल्कुल नई सदा थी। उनके

---

[1]ज़ुल्फ़ोंवालो; [2]प्रातःकालीन पवनका; [3]छुपा हुआ; [4]दिव्यदृष्टि।

कान इसके मानूस (अभ्यस्त) न थे। उन्होंने अभीतक 'मीर' और 'दर्द'का नग़मयेपुरदर्द[1] सुना था। 'ज़ौक़' और 'ग़ालिब' से दार्शनिक और हुस्नोइश्क़का दर्स[1] लिया था। 'मोमिन'की आशिकाना गुलकारियाँ देखी थीं। 'अमीर' और 'दाग़'के चुटीले अशआर सुने थे। उन्होंने आनन्दको किरकिरी करनेवाली आवाज़ काहेको सुनी थी? लिहाज़ा सुनी-अनसुनी करके जम्हाइयाँ और अँगड़ाइयाँ लेते हुए पड़े रहे। मगर इन लोगोंको चैन कहाँ? सोनेवाले भले ही ख़ुर्राटे लेते रहें, इन जागनेवालोंको तो प्रलयकी शीघ्रगामी चालका पता था। इसलिए उनमेंसे एक नौजवानने रोषभरे स्वरसे पुकारा :—

> अगर अब भी न समझोगे तो मिट जाओगे दुनियासे !
> तुम्हारी दास्ताँ[1] तक भी, न होगी दास्तानोंमें !!
>
> —'इक़बाल'

तो दूसरे साथीने पानीके छींटे देते हुए भल्लाकर शोर मचाया, कि अगर अब भी न चेते तो —

> मिटेगा दीन[1] भी और आबरू[1] भी जाएगी !
> तुम्हारे नामसे दुनियाको शर्म आएगी !!
>
> —'चकबस्त'

लोग हड़बड़ाकर उठे तो देखा अँधेरा मिट चुका है। सूर्यकी प्रखर रश्मियाँ चारों ओर छा रही हैं। चाँद पुरानी दुनियाको लेकर मलिन हो गया है। सूर्य अपने साथ नवप्रभात लाया है। वह युग समाप्त हो गया,. जब लोग अकर्मण्य बने भाग्यके भरोसे हाथ-पर-हाथ धरे सोचा करते थे —

---

[1]व्यथा-गीत

क़िस्मतमें जो लिखा है, वह आयेगा आपसे !
फैलाइए न हाथ, न दामन पसारिए !!
—'आतिश'

या भरी बहारमें बैठे हुए बहारको रोते थे। मानों रोना ही उनके जीवनका ध्येय था :—

क़वाए लालओगुलमें[1] झलक रही थी ख़िज़ाँ[2] !
भरी बहारमें रोया किये बहारको हम !!
—'अज्ञात'

अब नवीन कर्मयुग आया है। इसमें लोगोंको कहते हुए सुना :—

अहलेहिम्मत[3] मंज़िलेमक़सूद[4] तक आ ही गये !
बन्दयेतक़दीर[5] क़िस्मतका गिला[6] करते रहे !!
—'चकबस्त'

यह बज़्मेमय[7] है याँ कोताहदस्तीमें[8] है महरूमी[9] !
जो बढ़कर ख़ुद उठाले हाथमें, मीना[10] उसीका है !!
—'शाद' अज़ीमाबादी

अब ईश्वरके सहारे बैठे रहनेका भी युग गया, जिस ज़मानेमें बैठकर ज़ौक़ने कहा था :—

अहसान नाख़ुदाका[11] उठाए मेरी बला !
किश्ती ख़ुदापै छोड़ दूँ, लंगरको तोड़ दूँ !!

---

[1]फूलोंके पर्देमें; [2]पतझड़; [3]साहसी लोग; [4]लक्ष्य निश्चित ध्येय; [5]भाग्यवादी लोग; [6]शिकायत; [7]मधुशाला; [8]हाथ पीछे रखनेमें; [9]वंचित होना; [10]मद्य-पात्र; [11]केवटका।

वह ज़माना भी लद गया। अब इस युगमें बाहुबलके होते हुए ईश्वरका सहारा क्यों?

सम्हल सके तो सम्हालो उमीदकी किश्ती!
ख़ुदाको देख चुके, ज़ोरे-नाख़ुदा मालूम!!
—'एजाज़'

लोगोंने इस सुनहरे प्रभात और नवजागरणको देखा और सुना। मगर बकौल 'ज़ौक़'—

छुटती नहीं है मुंहसे, ये काफ़िर लगी हुई!

वोह शीतल चाँदनी और वोह हुस्नोइश्क़की छेड़-छाड़, वह बरसाती हवाएँ और वह साक़ीका मयख़ानेमें फ़ैज़ेआम एकबारगी लोग कैसे भूल जाते? परन्तु लोग भूल या न भूलें, प्रकृतिका कठोर नियंत्रण सब कुछ भुला देता है। शराबकी नहरें, माशूक़ोंकी अदाएँ और आशिक़ोंकी आहें सब धरी ही रह गई कि प्रकृतिने वह ताण्डव नृत्य किया कि जो शाइर कूचएयारमें आवारा फिरा करते थे, वही रोटियोंकी तलाशमें इधर-उधर दौड़ने लगे। 'बज़्मेयार' और 'मयख़ाने' की सारी सरगर्मियाँ चौपट हो गई!

अबतककी उर्दू-शायरीका विश्लेषण करनेसे ज्ञात होता है, जैसा कि 'नये अदबी रुजहानात'के सुयोग्य लेखकका कहना है कि "अबसे पहले उर्दूकी तवज्जह अवाम (जनता) की तरफ़ कभी नहीं रही। ग़रीबोंके मुताल्लिक़ कुछ नहीं कहा गया। क़ौमकी शीराज़ाबन्दी (संगठन) में हमारी शायरीने कोई मदद नहीं दी, न कोई पयाम (सन्देश) दिया। न राहेअमलमें लाने (कर्त्तव्यशील बनने) की फ़िक्र की। हालाँकि अदब (साहित्य) के लिए इस मैदानमें आना ज़रूरी था। मनज़रनिगारी (प्रकृति-वर्णन) और अपने मुक़ामी असरात (स्थानीय घटनाओं) से ज़्यादातर गुरेज़ रहा है। अगर 'नज़ीर' अकबराबादी और 'अनीस' व 'दबीर'

तवज्जह न करते, तो शायद यह अनासर (विषय) हमेशाके लिए क़दीम (भूतकालीन) शायरीसे मफ़क़ूदा (गुम) ही रहते।" (पृष्ठ ३२)

उर्दू-संसारकी इन त्रुटियों और वर्त्तमान युगकी आवश्यकताओंको जिन दिव्यद्रष्टाओंने अनुभव किया उनमें 'आज़ाद' 'हाली' 'अकबर' 'इक़बाल' और 'चकवस्त' मुख्य हैं। अगले पृष्ठोंमें इनका जीवनपरिचय और शायरीका चमत्कार देखनेको मिलेगा।

१० जुलाई १९४४

९

शम्सउल-उलेमा मौलवी मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद'

[१८२९ से १९१० ई० तक]

मौलाना आज़ादका उर्दू-साहित्यमें वही स्थान है जो बाबू हरिश्चन्द्र भारतेन्दुका हिन्दी-समाजमें है। मुसन्निफ 'तारीखे अदबे उर्दू' के शब्दोंमे—"आज़ादकी खिदमत और एहसानात ज़बाने उर्दूपर बेहद हैं। उर्दू-शायरीमें इस रंगका बानी (प्रतिष्ठापक) और उसमें एक नई रूह फूँकनेवाला अगर कोई शिख्सीयत कहा जा सकता है तो वह मौलाना आज़ाद हैं।"

मौलाना आज़ाद दिल्लीमें पैदा हुए थे। आप शेख जौकके शिष्य थे। ऐसे शिष्य भाग्यवान उस्तादोंको ही नसीब होते हैं। सन् १८५७ के गदरकी लूट-मारमें 'आज़ाद' भी घरबार छोड़कर भागे, मगर उस्तादका दीवान सीनेसे लगाकर। सब सामान छोड़ा मगर उस्तादका कलाम न छोड़ा। उसे दुनियावी सब नेमतोंसे श्रेष्ठ समझा। मनमें सोचा कि दुनियावी और चीज़ें तो फिर भी मयस्सर हो सकती हैं, मगर स्वर्गीय उस्तादका कलाम नष्ट हुआ तो फिर हाथ मलनेके सिवा और कोई चारा न रह जायेगा। आज़ादने 'दीवानेज़ौक' और 'आबेहयात' जैसी अपनी अमर रचनाओंमे इस श्रद्धा और भक्तिसे अपने उस्तादका उल्लेख किया है कि लोग उनपर अतिशयोक्तिका दोष लगानेसे बाज़ नहीं आए।

'आज़ाद' ने अपने उस्तादके साथ सैकड़ों बड़े-बड़े मुशायरे देखे थे। १८५७ के विद्रोहके बाद दिल्ली छोड़नेपर इधर-उधर भटकनेके बाद एक हिन्दू मित्रकी सहायतासे लाहौर कालेजमें प्रोफेसर हो गए। वहाँ

आपने पठन-क्रमके लिए फ़ारसी रीडर, उर्दू रीडर, उर्दू-क़ायदा वग़ैरह किताबें लिखीं और उस वक़्तकी उर्दू-शायरीकी कमियों और वर्त्तमान युगकी आवश्यकताओंको अनुभव करते हुए १५ अगस्त सन् १८६७ ई० में आज़ादने लाहौरमें 'अंजुमने उर्दू' की स्थापना की जिसका उद्देश्य था—उर्दूशायरीमें व्यर्थकी अतिशयोक्ति और उपमाओंको निकाल बाहर करना। मुशायरोंमेंसे मिसरा तरह (समस्या-पूर्त्ति) की प्रथाको उठाना, और उसके एवज़में स्वतंत्र नैतिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, प्राकृतिक सौन्दर्य आदि विषयोंपर लिखवानेकी परिपाटी डालना।

'आज़ाद' ने अंजुमनकी स्थापना करके ही अपने कर्त्तव्यकी इति-श्री नहीं समझी, अपितु स्वयं इस तरहकी शायरी करनी प्रारम्भ कर दी। परिणाम-स्वरूप थोड़े ही दिनोंमें उर्दू-शायरीका काया-कल्प हो गया। आज जिस उन्नत-शिखरपर हम उर्दू गद्य-पद्यको देख रहे हैं, उसके विकासका अधिकांश श्रेय आजादको है।

'आजाद' पद्यसे गद्यको अधिक तरजीह देते थे। यही कारण है कि उन्होंने अपनी अधिक शक्ति गद्यके विकासपर खर्च की और उसमें 'आबेहयात', 'नैरंगेख़याल', 'सख़ुनदाने फ़ारस', 'दरबारे अकबरी' और 'निगारस्तान' जैसी अमर रचनाएँ भेंट कीं। १८९९ ई० में उनकी शायरीका संकलन 'नज़्मे आजाद' भी प्रकाशित हुआ।

दुर्भाग्यसे कुछ मानसिक चिन्ताओंके कारण सन् १८८९ में उनका मस्तिष्क विकृत हो गया और इस कष्टसाध्य रोगसे १९१० ई० में मृत्यु होनेपर मुक्ति पाई। वर्त्तमानमें उर्दू शायरीका जितना विकास हुआ है उस मियारपर 'आज़ाद' की शायरी नहीं है, न वे एक शायरकी हैसियतसे प्रसिद्ध ही हैं। वे तो उर्दू शायरीके पुरातन दृष्टिकोणको बदलनेवाले और गद्यके सिद्धहस्त लेखक थे। प्रसङ्गवश उनका उल्लेख करना आवश्यक था। नमूनेके तौरपर 'हुब्बेवतन' शीर्षक नज़्मका एक संक्षिप्त उद्धरण यहाँ दिया जाता है।

हुब्बेवतन[1]

दिल्ली कि जो हमेशासे कानेकमाल[2] है ।
जो बाकमाल इसमें हैं वह बेमिसाल हैं ॥
इक शख़्स वां सितारनवाज़ोंकी[3] जान था ।
पर, जानसे अज़ीज़ था दिल्लीको जानता ॥
आया दकनसे ख़िलअतो-ज़र उसके वास्ते ।
और नक़्द बहरे ज़ादे सफ़र उसके वास्ते ॥
हरचन्द मुंह तो दिल्लीसे मोड़ा न जाता था ।
पर हाथसे यह माल भी छोड़ा न जाता था ॥
मतलब यह है कि बाद बहुत क़ीलोक़ालके[4] ।
असबाब सारा राहेसफ़रका सम्भालके ॥
दिल्लीको यह भी छोड़के सूये[5] दकन[6] चले ।
पर, जैसे कोई छोड़के बुलबुल चमन चले ॥
पहुंचे मगर अभी थे दरेराजघाटपर[7] ।
जो दफ़अतन्[8] नज़र पड़ी दरियाके पाटपर ॥
दरियाकी लहरें देखके लहरगया उनका दिल ।
और दिल्ली छोड़ते हुए भर आया उनका दिल ॥
मुंह फेरकर निगाह ज्योंही शहरपर पड़ी ।
जलवा दिखाती जामएमसजिद नज़र पड़ी ॥

---

[1]देश-प्रेम, [2]गुणियोंकी खान, [3]सितार-वादकोंकी; [4]सोच-विचारके [5]तरफ़, [6]दक्खिनकी, [7]दिल्लीमें जमनाके एक घाटका नाम; [8]अकस्मात ।

तब वह पयाम्बर[1] कि जो आया दकनसे था।
और उनको ले चला वह छुड़ाकर वतनसे था॥

देखा निगाहे यासते और उससे यह कहा—
'पीछे चलेंगे पहले मगर यह तो दो बता॥

ऐसी तुम्हारे शहरमें जमुना है या नहीं'!
मुंह देखकर वह उनका हँसा और कहा 'नहीं'॥

फिर सूये शहर किया इशारा और यह कहा—
'मसजिद भी इस तरहकी दिखा दोगे वाँ भला'?

'है अपनी तर्ज़में यह निराली जहानसे।
उतरी ज़मींमें जिसकी शबीह[2] आसमानसे'॥

यह बात उसकी सुनते ही चीं बरजबीं[3] हुए।
और बोले 'ख़ैर है कि रवाना नहीं हुए॥

जमुना नहीं है जामयेमसजिद जहाँ नहीं।
सुनते भी हो मियाँ! हमें जाना वहाँ नहीं॥

अपने दकनको आप रवाना शिताब[4] हों।
पर इस चमनको छोड़के हम क्यों ख़राब हों॥

और गाड़ी अपनी तू भी मियाँ गाड़ीवान फेर।
गर अब फिरे न याँसे तो क़िस्मतका जान फेर॥

हम अपनी दिल्ली छोड़ दकनको न जाएँगे।
गर याँ बहुत न खायेंगे थोड़ा ही खाएँगे'॥

× × ×

---

[1]सन्देशवाहक; [2]नक़्शा, मस्जिदका चित्र; [3]मस्तिष्कमें बल पड़ गए; [4]शीघ्र, तुरन्त।

ऐसे ही नंगे हुब्बे वतन बदनसीब हैं।
घरमें मुसाफ़िरों-से, जो बदतर ग़रीब हैं॥
कहते हैं, 'दुख उठाना हो या दर्द सहना हो।
थोड़ा सा खाना हो पै बनारसमें रहना हो'॥
अब मैं तुम्हें बताऊँ कि हुब्बे वतन है क्या।
यह क्या चमन है और यह हवाये चमन है क्या॥

× × ×

मानो यूरपके मुल्कमें दो ताजदार थे।
दोनोंके अहले मुल्क मगर जाँनिसार थे॥
सरहदपै कुछ फ़िसाद था, पर ऐसा पड़ गया।
दोनोंमें इत्तफ़ाक़का नक़्शा बिगड़ गया॥
आख़िरको थे जो वाकिफ़े असरारे सल्तनत।
समझे बहम यह मसलहते कारे सल्तनत॥
दो जाँनिसारे मुल्क रवाना इधर करें।
और अपने दो इधरको वह गरमे सफ़र करें॥
ता चारों जिस जगह कि बहम एकबार हों।
सरहदेमुल्कके वहीं क़ायम मिनार हों॥
जाँबाज़ इस तरफ़के मगर जान तोड़कर।
ऐसे उड़े कि पीछे हवाको भी छोड़कर॥
इक हिस्सा तय न रस्ता हरीफ़ाने[1] था किया।
यह तीन हिस्से बढ़ गये औ उनको जा लिया॥
लेकिन हरीफ़ शर्तके मैदांको छोड़के।
बोले यह अहदे क़ौलोक़रार अपना तोड़के॥

---

[1]शत्रुगण।

'दो अपने-अपने मुल्कके जो जाँनिसार हों।
फिर अबकी दो तरफ़से रवां एकबार हों॥

पर, इतनी बात पहले हरइक शख़्स जान ले।
और यह इरादा ख़ूब तरह दिलमें ठान ले॥

यानी जो शर्त जीतके ख़ुरसन्द[1] होयगा।
सरहदपै वह ज़मीनका पैवन्द होयगा'॥

जाँबाज आये थे जो अभी राह मारके।
हुब्बुलवतनके[2] जोशमें बोले पुकारके—

'जो शर्त अब लगाई है तुमने यही सही।
और बात जो कि होनी है फिर वह अभी सही॥

पर बीचमें न हील हवालेकी आड़ दो।
सरहद हमारी हो चुकी बस हमको गाड़ दो'॥

हासिल यह है कि दोनों उसी जापै अड़ गये।
जीते-के-जीते मुल्कको सरहदपै गड़ गये॥

१२ जुलाई १६४४

[1]प्रसन्न; [2]देश-भक्तिके।

१०

मौलाना अल्ताफ हुसन 'हाली'

[इ० मन १८४० म १९१६ तक]

मौलाना हाला मिर्जा गालिबक शिष्य थ परन्तु गुरु और शिष्यक जीवनम दृष्टिकोणमे महान विषमता मिलती ह। गालिब मुस्लिम वशम उत्पन्न अवश्य हुए किन्तु न उन्होंने कभी नमाज पढ़ी और न रोजा रक्खा। सामाजिक रीति रिवाजम हमेशा भागत रह और धार्मिक निषेधक खिलाफ उम्र भर शराब पी। जो भी लिखा सार्वजनिक दृष्टिकोणको लेकर लिखा और मनुष्यके नाते लिखा। गालिबके कलामम साम्प्रदायिकता नहीं आई। उनके हिन्दू और मुसलमान सभी वर्गके शिष्य थ शिष्यो मित्र थ। यही कारण है कि मिर्जाके बादके लोग हिन्दू मित्र काम आए

गालिब दार्शनिक कवि थ और रिन्द (मद्यप) थ। हाली मौलवी नामसे और जातिसे थ। हाली पहले मुसलमान थ बादमें कुछ और। उन्होंने धर्मानुकूल आचरण रक्खा। शराब छुई तक नहीं। इस्लामकी गुणानवाद करन और मुसलमानोंको उठानमे सारी उम्र व्यतीत कर दी और एक कौमके सुधारकी जो करना चाहिए वह करके दिखा दिया। हालीक हृदयमे मुसलमानोंकी दुर्दशाके कारण एक दर्द था जिससे व बचैन रहते थ कौमकी दयनीय स्थिति देखकर हालीसे इसके सिवाय नहीं गाया गया। बागको लुटरोंसे घिरा हुआ देख बुलबुल नगमा भरकर छाती फाड़कर चीख उठा और उसने फिर वोह विप्लव-गान गाया कि बागवाँ तो जागे। गुलची और सय्याद भी सकतेम आगए।

गालिबने उर्दू-शायरीके पुराने ढर्रेको दार्शनिकता और मौलिक विचारोंका पुट देकर उसे एक सजीव भावपूर्ण काव्य बनाया, तो हालीने उर्दू-शायरीका 'ओवरहॉलिङ्ग' करके उसकी काया ही पलट दी। हालीसे पूर्व या तो अक्सर आशिकाना गजलें लिखी जाती थी या बड़े आदमियोंकी चापलूसीमें कसीदे। अपनी दुर्दशाका वर्णन किस ढङ्गसे हो सकता है, घरमें आग लगी होनेपर सितार बजानेके अतिरिक्त, आत्म-रक्षाके लिए शोरोगुल भी किस तरह मचाया जा सकता है, इसका न किसीको होश था, न हालीसे पहले किसीको ख़याल ही आया। इश्कमे आहे भरना, किसी माशूक़की जुदाईमें जूते चटख़ाते हुए घूमनेके अलावा भी शायरीमें और कुछ कहा जा सकता है, यह कोई जानता ही न था। यह हालीके मस्तिष्ककी उपज है कि उसने तबाहीसे बचानेका राग गाया। स्वयं हालीने उस वक़्तकी शायरीके सम्बन्धमे अपने बारेमें लिखा है :—

"शायरीकी बदौलत चन्द रोज झूठा आशिक बनना पड़ा। एक ख़याली माशूककी चाहमें दस्तेजुनूँ (उन्माद-मार्ग) की वह ख़ाक उड़ाई कि क़ैस व फ़रहादको गर्द कर दिया। कभी नालये नीमशबी (रात्रिमें बिलखते हुए) से रुबेमसकन (ईश्वरासन) को हिला डाला, कभी चश्मे-दरियावार (आँसुओं) से तमाम आलमको डुबो दिया। आहोफ़ुग़ाँके जोरसे करोबियोंके कान बहरे हो गए। शिकायतोंकी बौछारसे जमाना चीख़ उठा। तानोंकी भरमारसे आसमान चलनी हो गया। जब रश्कका तलातुम (ईर्ष्याका वेग) हुआ तो सारी ख़ुदाईको रकीब (प्रतिद्वन्द्वी) समझा। यहाँ तक कि आप अपनेसे बदगुमान हो गए।....बारहा तेगेअब्रू (भवें-रूपी तलवार) से शहीद हुए और बारहा एक ठोकरसे जी उठे। गोया जिन्दगी एक पैरहन (वस्त्र) था कि जब चाहा उतार दिया और जब चाहा पहन लिया। मैदानेकयामतमें अक्सर गुजर हुआ। बहिश्त व दोजख़की अक्सर सैर की। बादानोशी (शराब पीने)—पर तो ख़ुम-के-ख़ुम लुँढा दिए और फिर भी सैर (सन्तुष्ट) न हुए।....

हैं) उसका परिणाम आज दृष्टिगोचर है। सैकड़ो शायर अपना रङ्ग बदलकर इसी रङ्गमे रङ्ग गए। और आज जो मुसलमानोमे जागृति दीख पड़ती है उसके श्रेयके प्रथम अधिकारी हाली ही है।

अर्जुनको रण-क्षेत्रमे मोह-तन्द्रासे जगानेमे जो कार्य गीताने किया, वही कार्य मुसलमानोके लिए 'मुसद्दसे हाली' ने किया। गालिबकी जीवित अवस्थामे उनके शिष्योंमे हालीका प्रमुख स्थान नही था, न इनसे गालिब-को कुछ विशेष आशाएँ ही थी। पर, आगे चलकर हालीने खूब ख्याति पायी और उस्तादका नाम भी खूब चमकाया। हालीने गुरु-दक्षिणा-स्वरूप बहुत परिश्रम करके 'यादगारे गालिब' लिखी है।

यद्यपि काव्यकी दृष्टिसे हाली उच्च श्रेणीके कवियोंमें नही आते हैं, परन्तु उन्होने क्रान्तिका चिराग लेकर एक नवीन मार्ग खोज निकाला है और अपने पीछे लोगोंको चलनेके लिए उत्साह दिखलाकर वे स्वयं अना-यास आगे निकल गए है।

हाली सन् १८४० मे पानीपतमे पैदा हुए और ७६ वर्षकी आयु पाकर सन् १९१६ मे पानीपतमे समाधि पाई। हालीके कई ग्रन्थ भिन्न-भिन्न भाषा-ओमे अनूदित हो चुके है। 'मनाजाते बेवा' का तो १० भाषाओमे (संस्कृतमें भी) अनुवाद हुआ है। इनकी रुबाइयोका अनुवाद अङ्ग्रेजीमे भी छप चुका है। इनके ग्रन्थ विश्वविद्यालयोंमे पढ़ाए जाते है। सन् १९०४ मे गवर्नमेंटने इन्हे 'शम्स उल उलेमा' जैसी प्रतिष्ठित पदवीसे विभूषित किया था।

मुसद्दसके २९४ बन्दोंमेसे ३३ बन्द यहाँ इस तरहसे दिए जा रहे हैं, जिससे हर कौम लाभ उठा सके और क्रमानुसार भी मालूम दे।

क्षेत्र विस्तृत है। इसमे अपने देशकी घटनाओंका उल्लेख किया जा सकता है, युद्धका सजीव वर्णन किया जा सकता है। अत आजाद, हाली, इकबाल, चकबस्तने भी अपने विचार प्रकट करनेके लिए नज्मको ही चुना और उसमे कमाल पैदा करके छोड़ा।

मुसद्दस

किसीने यह बुक़रातसे जाके पूछा—
'मरज़ तेरे नज़दीक मुहलक[1] हैं क्या-क्या ?'
कहा—'दुख, जहाँमें नहीं कोई ऐसा,
कि जिसकी दवा हक़ने[2] की हो न पैदा ॥
मगर वह मरज़ जिसको आसान समझें।
कहे जो तबीब उसको हज़ियान[3] समझें ॥

सबब या अलामत गर उनको सुझाएँ,
तो तशख़ीसमें सौ निकालें ख़ताएँ।
दवा और परहेज़से जी चुराएँ,
यूँही रफ़्ता-रफ़्ता मरज़को बढ़ाएँ ॥
तबीबोंसे[4] हरगिज़ न मानूस[5] हों वे।
यहाँ तक, कि जीनेसे मायूस[6] हों वे ॥'

यही हाल दुनियामें उस क़ौमका है,
भँवरमें जहाज़ आके जिसका घिरा है।
किनारा है दूर और तूफ़ाँ बपा है,
गुमाँ है यह हरदम, कि अब डूबता है ॥
नहीं लेते करवट मगर अहले-किश्ती।
पड़े सोते हैं बेख़बर अहले-किश्ती ॥

आगे क़ौमकी दशाका वर्णन करते हुए उन्हें सचेत होनेके लिए कहते हैं —

---

[1]घातक, [2]ईश्वरने, [3]व्यर्थ बकवास, [4]हकीमों, चिकित्सकों। [5]हिल मिल (भावार्थ—हकीमोंका कहा न मानें), [6]निराश।

गनीमत है सेहत अलालतसे[1] पहले,
फ़राग़त[2] मशागलकी कसरतसे[3] पहले।
जवानी बुढ़ापेकी ज़हमतसे[4] पहले,
इक़ामत[5] मुसाफ़िरकी रहलतसे[6] पहले॥
फ़क़ीरीसे पहले ग़नीमत है दौलत।
जो करना है करलो कि थोड़ी है मुहलत॥

भूतकालीन बुजुर्गोंकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं :—

किफ़ायत जहाँ चाहिए, वाँ किफ़ायत,
सख़ावत[7] जहाँ चाहिए, वाँ सख़ावत।
जँची और तुली दुश्मनी और मुहब्बत,
न बेवजह उल्फ़त, न बेवजह नफ़रत।
झुका हक़से जो, झुक गए उससे वोह भी।
रुका हक़से जो, रुक गए उससे वोह भी॥

वर्तमान दशाका वर्णन करते हुए आपने फ़र्माया है :—

वोह संगीं महल और वोह उनकी सफ़ाई,
जमी जिनके खण्डरपै है आज काई।
वोह मरक़द[8] कि गुम्बद थे जिनके तिलाई[9],
वोह मावद[10] जहाँ जल्वागर थी खुदाई॥
ज़मानेने गो उनकी बरकत उठाली।
नहीं कोई वीराना पर उनसे ख़ाली॥

× × ×

---

[1]बीमारीसे; [2]फ़ुर्सत; [3]कार्याधिकतासे। [4]परेशानीसे, मुसीबतसे; [5]स्थिरता; [6]मृत्युसे; [7]दान। [8]मक़बरा; [9]स्वर्णमय; [10]उपासना-गृह।

बुरे उनपे वक्त आके पड़ने लगे अब,
वोह दुनियामें बसके उजड़ने लगे अब।
भरे उनके मेले बिछुड़ने लगे अब।
बने थे वोह जैसे, बिगड़ने लगे अब॥

हरी खेतियाँ जल गईं लहलहाकर।
घटा खुल गई, सारे आलमपै छाकर॥

× × ×

वगर्ना हमारी रगोंमें, लहूमें,
हमारे इरादोंमें औ जुस्तजूमें।
दिलोंमें, ज़बानोंमें और गुफ़्तगूमें,
तबीयतमें, फ़ितरतमें, आदतमें ख़ूमें॥

नहीं कोई ज़र्रा नजाबतका[1] बाक़ी।
अगर हो किसीमें तो है इत्तफ़ाक़ी[2]॥

हमारी हर इक बातमें सिफ़्लापन[3] है,
कमीनोंसे बदतर हमारा चलन है।
लगा नामेआबाको[4] हमसे गहन है,
हमारा क़दम नंगे अहले वतन है॥

बुज़ुर्गोंकी तौक़ीर[5] खोई है हमने।
अरबकी शराफ़त डुबोई है हमने॥

---

[1] [illegible]मनसाम्नका भद्रताका।
[2] सयोगवश।
[3] कमीनापन
[4] बुजुर्गोंके नामका।
[5] इज्जत।

न कौमोंमें इज़्ज़त न जल्सोंमें वक़अत[1],
न अपनोंमें उल्फ़त न ग़ैरोंसे मिल्लत।
मिज़ाजोंमें सुस्ती, दिमाग़ोंमें नख़वत[2],
ख़यालोंमें पस्ती, कमालोंमें नफ़रत॥
अदावत निहाँ[3] दोस्ती आश्कारा[4]।
ग़रज़की तवाज़ो[5] ग़रज़का मुदारा[6]॥

न अहलेहुकूमतके[7] हमराज़[8] हैं हम,
न दरबारियोंमें सरअफ़राज़[9] हैं हम।
न इल्मोंमें शायाने-एजाज़[10] हैं हम,
न सनअतमें[11] हुरमतमें[12] मुमताज़[13] हैं हम॥
न रखते हैं कुछ मंज़िलत[14] नौकरीमें।
न हिस्सा हमारा है सौदागरीमें॥

तनज़्ज़ुलने[15] की है बुरी गत हमारी,
बहुत दूर पहुँची है नकबत[16] हमारी।
गई गुज़री दुनियासे इज़्ज़त हमारी,
नहीं कुछ उभरनेकी सूरत हमारी॥
पड़े हैं इक उम्मीदके हम सहारे।
तवक़्क़ो[17] पे जन्नतकी जीते हैं सारे॥

* * *

---

[1]आवभगत, आदर; [2]घमंड; [3]गुप्त; [4]प्रकट; [5]सत्कार।
[6]आवभगत; [7]शासनसत्ताकी; [8]विश्वस्त।
[9]उच्चपदासीन; [10]आदरके योग्य; [11]कारीगरीमें।
[12]आचरणमें; [13]श्रेष्ठ; [14]आदर;
[15]गिरावटने। [16]गरीबी, दुर्दशा; [17]अभिलाषा।

वोह बेमोल पूंजी कि है अस्ल दौलत,
वोह शाइस्ता[1] लोगोंका गंजेसआदत[2]।
वोह आसूदा[3] क़ौमोंका रासुलबिज़ाअत[4],
वोह दौलत कि है 'वक्त' जिससे इबारत।।
नहीं उसकी वक्अत नज़रमें हमारी।
युंही मुफ्त जाती है बरबाद सारी।।

अगर सांस दिन-रातके सब गिनें हम,
तो निकलेंगे अन्फास[5] ऐसे बहुत कम।
कि हो जिनमें कलके लिए कुछ फराहम[6],
युंही गुजरे जाते हैं दिन रात पैहम।।
नहीं कोई गोया खबरदार हममें।
कि यह सांस आखिर है अब कोई दममें।।

वोह कौमें जो सब राहें तय कर चुकी हैं,
ज़खीरे[7] हर इक जिन्सके भर चुकी हैं।
हर इक बोझ बार अपने सर धर चुकी हैं,
हुई तब हैं जिन्दा, कि जब मर चुकी हैं।।
इसी तरह राहेतलबमें हैं पोया[8]।
बहुत दूर अभी उनको जाना है गोया।।

---

[1]नम्र [2]नेकीका कोष।
[3]खुशहाल [4]स्थायी सम्पत्ति।
[5]अनमोल वस्तु [6]श्वास।
[7]जमा, [8]भंडार।
[9]वोह चाल जो न दाइम शामिल हो न धार चलनम।

किसी वक़्त जी भरके सोते नहीं वोह,
कभी सैर मेहनतसे झ़ोते नहीं वोह।
बज़ाअ़तको[1] अपनी डुबोते नहीं वोह,
कोई लमहा बेकार खोते नहीं वोह॥
न चलनेसे थकते, न उकताते हैं वोह।
बहुत बढ़ गए और बढ़े जाते हैं वोह॥

मगर हम, कि अब तक जहाँ थे, वहीं हैं,
जमादातकी[2] तरह बारेज़मीं[3] हैं।
जहाँमें है ऐसे, कि गोया नहीं हैं,
ज़मानेसे कुछ ऐसे फ़ारिग़नशीं[4] हैं॥
कि गोया ज़रूरी था जो काम करना।
वोह सब कर चुके, एक बाक़ी है मरना॥

*   *   *

जो गिरते हैं, गिरकर सम्हल जाते हैं वोह,
पड़े ज़द तो बचकर निकल जाते हैं वोह।
हर इक साँचेमें जाके ढल जाते हैं वोह
जहाँ रंग बदला, बदल जाते हैं वोह॥
हर इक वक़्तका मक़तज़ी[5] जानते हैं।
ज़मानेका तेवर वोह पहचानते हैं॥

×   ×   ×

---

[1]पूँजी, धनको।
[2]बेजान चीज़ोंकी।
[3]पृथ्वीके बोझ।
[4]निश्चिन्त, अकर्मण्य।
[5]माँग, मूल्य, उपयोग।

जमानेका दिन-रात है ये इशारा,
कि है आदतोंमें मेरी याँ गुजारा।
नहीं पैरवी जिनको मेरी गवारा,
मुझे उनसे करना पड़ेगा किनारा॥
सदा एक ही रुख नहीं नाव चलती।
चलो तुम उधरको, हवा है जिधरको॥

*   *   *

मशक्कतको, मेहनतको जो आर[1] समझें,
हुनर और पेशेको जो ख्वार समझें।
तिजारतको, खेतीको दुश्वार समझें,
फ़िरङ्गीके पैसेको मुरदार[2] समझें॥
तन आसानियाँ चाहें, और आबरू भी।
वोह कौम आज डूबेगी गर कल न डूबी॥

*   *   *

अन्य कौमोंकी उन्नति बताते हुए —

उरूज[3] उनका जो तुम अयाँ देखते हो,
जहाँमें उन्हें कामराँ[4] देखते हो॥
मुती[5] उनका सारा जहाँ देखते हो,
उन्हें बरतरअज़[6]आसमाँ देखते हो॥
समर[7] है यह उनकी जवाँमर्दियोंके।
नतीजे हैं आपसमें हमदर्दियोंके॥

---

[1]शरम मङ्गठनम [2]व्यर्थ, अग्राह्य त्याज्य, [3]उन्नति।
[4]सफल [5]आधीन।
[6]आकाशसे ऊँचा [7]फल।

तत्कालीन शायरोंका उल्लेख करते हुए आपने फ़र्माया है :—

वोह शेर और क़सायदका[1] नापाक दफ़्तर,
अफ़ूनतमें[2] सण्डाससे जो है बदतर।
जमीं जिससे है जलजलेमें बराबर,
मलक[3] जिससे शर्माते हैं आस्मांपर॥
हुआ इल्मों दीं जिससे ताराज[4] सारा।
वोह इल्मोंमें इल्मेग्रदब है हमारा॥

बुरा शेर कहनेकी गर कुछ सज़ा है,
अबस[5] झूठ बकना अगर नारवा[6] है।
तो वोह महकमा, जिसका क़ाज़ी ख़ुदा है,
मुक़र्रर जहाँ नेकोबदकी सज़ा है॥
गुनहगार वाँ छूट जाएँगे सारे।
जहन्नुमको भर देंगे शायर हमारे॥

ज़मानेमें जितने क़ुली और नफ़र[7] हैं,
कमाईसे अपनी वो सब बहरावर[8] हैं।
गवैये अमीरोंके नूरेनज़र हैं,
डफ़ाली[9] भी ले आते कुछ माँगकर हैं॥
मगर इस तपेदिक़में जो मुब्तिला है।
ख़ुदा जाने वोह किस मरजकी दवा है॥

---

[1]क़सीदोंका; [2]दुर्गन्धमें।
[3]देवता; [4]नष्ट।
[5]व्यर्थ; [6]अनुचित।
[7]नौकर; [8]ओतप्रोत।
[9]खंजरी (डफ़ली) बजाकर गाने और भीख माँगनेवाले।

जो सक़्के न हों, जीते जाएँ गुज़र सब,
हो मैला जहाँ, गुम हो धोबी अगर सब।
बने दमपं, गर शहर छोड़ें नफर सब,
जो युड जाएँ मेहतर, तो गन्दे हों घर सब॥
पै कर जाएँ हिजरत[1] जो शायर हमारे।
कहें मिलके 'खसकम जहाँ पाक'[2,3] सारे॥

तवायफ़को अज़बर[4] हैं दीवान उनके,
गवैयोंपै बेहद हैं अहसान उनके।
निकलते हैं तकियोंमें[5] अरमान उनके,
सनाख्वाँ[6] हैं इबलीसो[7] शैतान उनके॥
कि अख़्लोपै पर्दे दिये डाल उन्होंने।
हमें कर दिया फ़ारिग-उल्बाल[8] उन्होंने॥

तत्कालीन स्थिति —

शरीफोंकी औलाद बेतरबियत है,
तबाह उनकी हालत, बुरी उनकी गत है।
किसीको कबूतर उड़ानेकी लत है,
किसीको बटेरें लड़ानेकी धत है।
चरस और गाँजेपै शैदा है कोई।
मदक और चण्डूका रसिया है कोई॥

---

[1]प्रवास।
[2]गन्दगी दूर हुई,[3]वातावरण शुद्ध हुआ, [4]कण्ठस्थ।
[5]ऐसी जगह जहाँ गाना बजाना होता रहे।
[6]प्रशंसक, [7]शैतान।
[8]बेकार, निठल्ला।

हुई उनको बचपनमें यूँ पासबानी[1],
कि क़ैदीको जैसे कटे ज़िन्दगानी।
लगी होने जब कुछ समझ-बूझ स्यानी,
चढ़ी भूतकी तरह सरपर जवानी॥
बस अब घरमें दुश्वार थमना है उनका।
अखाड़ोंमें, तकियोंमें रहना है उनका॥

नशेमें मयेइश्क़के चूर हैं वे,
सफ़ेफ़ौजेमिज़गाँमें[2] महसूर[3] हैं वे।
ग़मे चश्मो अबरूमें रंजूर[4] हैं वे,
बहुत हालसे दिलके मजबूर हैं वे॥
करें क्या, कि है इश्क़ तीनतमें[5] उनकी।
हरारत भरी है तबीयतमें उनकी॥

अगर माँ है दुखिया, तो उनकी बलासे,
अपाहज हैं बाबा तो उनकी बलासे।
जो है घरमें फ़ाक़ा, तो उनकी बलासे,
जो मरता है कुनबा,[6] तो उनकी बलासे॥
जिन्होंने लगाई हो लौ दिलरुबासे।
ग़रज फिर उन्हें क्या रही मासिवासे[7]?

न ग़ालीसे, दुश्मनसे जो जी चुराएँ,
न जूतीसे, पैज़ारसे[8] हिचकिचाएँ।

---

[1]देख-रेख; [2]कटाक्ष-सैनिकोंकी पंक्तिमें।
[3]घिरे हुए।
[4]पीड़ित, दुखी; [5]स्वभावमें, खसलतमें; [6]कुटुम्ब, परिवार;
[7]अन्यलोगोंसे; [8]चप्पलसे।

जो मेलोमें जाएँ, तो लुचपन दिखाएँ,
जो महफ़िलमें बैठें, तो फ़ितने उठाएँ ॥
लरज़ते हैं ओबाश[1] उनकी हँसीसे।
गुरेज़ाँ[2] हैं रिन्द[3] उनकी हमसायगीसे[4] ॥

जहाज़ एक गरदाबमें फँस रहा है,
पड़ा जिससे जोखोंमें छोटा-बड़ा है।
निकलनेका रस्ता न बचनेकी जा है,
कोई उनमें सोता, कोई जागता है ॥
जो सोते हैं वोह मस्तेख़्वाबेगिराँ[5] हैं।
जो बेदार[6] हैं उनपै ख़न्दाज़नाँ[7] हैं ॥

कोई उनसे पूछे, कि ऐ होशवालो!
किस उम्मीदपर तुम खड़े हँस रहे हो?
बुरा वक़्त बेड़ेपै आनेको है जो,
न छोड़ेगा सोतोंको और जागतोंको ॥
बचोगे न तुम और साथी तुम्हारे।
अगर नाव डूबी तो डूबोगे सारे ॥

---

[1] कमीन लुच्चे।
[2] भागते।
[3] शराबी।
[4] पड़ोसमें सज्जनसे।
[5] घोर स्वप्नमें लीन।
[6] जागते।
[7] हँस रहे।

ज़मीमा

१६२ बन्दोंमेंसे केवल ८ बन्द महज़ नमूनेके तौरपर पेश हैं:—

बस ऐ ना उम्मीदी ! न यूँ दिल बुझा तू,
झलक ऐ उमीद ! अपनी आख़िर दिखा तू।
ज़रा नाउमीदोंको ढारस बँधा तू,
फ़सुर्दा[1] दिलोंके दिल आकर बढ़ा तू॥
तेरे दमसे मुर्दोंमें जानें पड़ी हैं।
जली खेतियाँ तूने सर-सब्ज़ की हैं॥

× × ×

बहुत डूबतोंको तिराया है तूने,
बिगड़तोंको अक्सर बनाया है तूने।
उखड़ते दिलोंको जमाया है तूने,
उजड़ते घरोंको बसाया है तूने॥
बहुत तूने पस्तोंको[2] बाला[3] किया है।
अँधेरेमें अक्सर उजाला किया है॥

× × ×

बहुत हैं अभी, जिनमें ग़ैरत है बाक़ी,
दिलेरी नहीं पर हमैय्यत[4] है बाक़ी!
फ़क़ीरीमें भी बूएसरवत[5] है बाक़ी,
तिहीदस्त[6] हैं पर मुरव्वत[7] है बाक़ी॥

[1]बुझे हुए; [2]गिरे हुओंको; [3]उठाया; [4]शर्म।
[5]वैभव, सम्पन्नताकी गंध; [6]ख़ाली हाथ, निर्धन; [7]लिहाज़।

मिटे पर भी पिन्दारे[1] हस्ती वही है।
मकाँ गर्म है, आग गो बुझ गई है॥

समझते हैं इज़्ज़तको दौलतसे बेहतर,
फ़क़ीरीको ज़िल्लतकी शुहरतसे बेहतर।
गलीमेंकनाअतको[2] सरवतसे[3] बेहतर।
उन्हें मौत है बारेमिन्नतसे[4] बेहतर॥
सर उनका नहीं दर-बदर झुकनेवाला।
वह खुद पस्त[5] हैं, पर निगाहें हैं बाला[6]॥

× × ×

अयाँ[7] सब यह अहवाल[8] बीमारका है,
कि तेल उसमें जो कुछ था, सब जल चुका है।
मुआफ़िक़ दवा है न कोई ग़िज़ा है,
इज़्मेहलाले बदन[9] है ज़वाले[10] क़वा[11] है॥
मगर है अभी यह दिया टिमटिमाता।
बुझा जो कि है याँ, नज़र सबको आता॥

× × ×

जो चाहें पलट दें यहो सबकी काया,
कि एक-एकने मुल्कोको है जगाया।

---

[1]आत्माभिमान, [2]सन्तोष रूपी कमलीको।
[3]धन-वैभवकी अधिकतासे श्रेष्ठ समझते हैं।
[4]खुशामद या निवेदनके बोझसे, [5]छोटे।
[6]ऊँची, [7]प्रकट, [8]अवस्था, [9]उपहासास्पद।
[10], [11]शक्तियोंका ह्रास।

अकेलोंने हैं क़ाफ़लोंको बचाया,
जहाज़ोंको हैं ज़ोरकूँने तिराया ॥
यूँही काम दुनियाका चलता रहा है।
दियेसे दिया यूँ ही जलता रहा है ॥

× × ×

मगर बैठ रहनेसे चलना है बेहतर,
कि है अहलेहिम्मतका अल्लाह यावर[2]।
जो ठण्डकमें चलना न आया मयस्सर,
तो पहुँचेंगे हम धूप खा-खाके सरपर ॥
यह तकलीफ़ ओ राहत है सब इत्तफ़ाक़ी।
चलो अब भी है वक़्त चलनेका बाक़ी ॥

बशरको है लाजिम कि हिम्मत न हारे,
जहाँतक हो काम आप अपने सँवारे।
ख़ुदाके सिवा छोड़ दे सब सहारे,
कि हैं आरज़ी ज़ोर, कमज़ोर सारे ॥
अड़े वक़्त तुम दाएँ-बाएँ न झाँको।
सदा अपनी गाड़ीको तुम आप हाँको ॥

कुछ फुटकर रचनाएँ:—

बैठे बेफ़िक्र क्या हो, हमवतनो !
उठो, अहले वतनके दोस्त बनो ॥

---

[1]संगठित शक्तिने; [2]हिमायती, संरक्षक।

मर्द हो तो किसीके काम आओ।
वर्ना खाओ, पियो, चले जाओ॥

*　　*　　*

जागनेवालो ! ग़ाफ़िलोंको जगाओ।
तैरनेवालो ! डूबतोंको तिराओ॥
तुम अगर हाथ-पाँव रखते हो।
लँगड़े-लूलोंको कुछ सहारा दो॥

*　　*　　*

होगी न क़द्र जानकी कुर्बां किए बग़ैर।
दाम उठेंगे न जिन्सके अर्ज़ां किए बग़ैर॥

*　　*　　*

अपनी नज़रमें भी याँ अब तो हक़ीर हैं हम।
बेग़ैरतीकी यारो! अब ज़िन्दगानियाँ हैं॥
खेतोंको दे लो पानी अब बह रही है गङ्गा।
कुछ कर लो नौजवानो! उठती जवानियाँ हैं॥

×　　×　　×

मुसीबतका इक-इकसे अहवाल कहना।
मुसीबतसे है यह मुसीबत ज़ियादा॥
कहीं दोस्त तुमसे न हो जाएँ बदज़न।
जताओ न अपनी मुहब्बत ज़ियादा॥
जो चाहो फ़क़ीरीमें इज़्ज़तसे रहना।
न रक्खो अमीरोंसे मिल्लत ज़ियादा॥
फ़रिश्तेसे बेहतर है इन्सान बनना।
मगर इसमें पड़ती है मेहनत ज़ियादा॥

*　　*　　*

नफ़ासत भरी है तबीअतमें उनकी।
नज़ाकत, सो दाख़िल है आदतमें उनकी॥
दवाओंमें मुश्क उनके उठता है ढेरों।
वोह कपड़ोंमें इत्र अपने मलते हैं सेरों॥

* * *

ऐ माओ ! बहनो ! बेटियो ! दुनियाकी ज़ीनत तुमसे है।
मुल्कोंकी बस्ती हो तुम्हीं, क़ौमोंकी इज़्ज़त तुमसे है॥
तुम घरकी हो शहज़ादियाँ, शहरोंकी हो आबादियाँ।
ग़मगीं दिलोंकी शादियाँ, दुख-सुखमें राहत तुमसे है॥

नेकीकी तुम तस्वीर हो, इफ़्फ़तकी[1] तुम तदबीर हो।
हो दीनकी तुम पासबाँ,[2] ईमाँ सलामत तुमसे है॥
मर्दोंमें सतवाले थे जो, सत् अपना बैठे कबके खो।
दुनियामें ऐ सतवन्तियो, ले-देके अब सत् तुमसे है॥

मूनिस[3] हो ख़ाविन्दोंकी[4] तुम, ग़मख़्वार फ़र्ज़न्दोंकी[5] तुम।
तुम बिन हैं घर वीरान सब, घर भरमें बरकत तुमसे है॥
तुम आस हो बीमारकी, ढारस हो तुम बेकारकी।
दौलत हो तुम नादारकी,[6] उसरतमें[7] इशरत[8] तुमसे है॥

२० जुलाई १९८४

---

[1]पवित्रताकी; [2]रक्षक; [3]सहायक; [4]पतियोंकी; [5]पुत्रोंकी। [6]निर्धनकी; [7]निर्धनतामें; [8]आराम।

सैयद अकबरहुसेन 'अकबर' इलाहाबादी

[सन् १८४६ से १९२१ ई० तक]

जिस तरह अकबर बादशाह मुस्लिम बादशाहोंमें एक आदर्श, तेजस्वी, प्रतापी, यशस्वी और ख्याति-प्राप्त शासक हुआ है, जिस प्रकार वह अपने शासन-सञ्चालन और व्यक्तित्वका एक पृथक 'स्टैण्डर्ड' स्थापित कर गया है, उसी तरह 'अकबर' इलाहाबादी भी उर्दू-शायरीमें हास्य-रसके प्रथम आविष्कारक हैं। गुलोबुलबुलके झमेलेमें ही उन्होंने शायरी सीखी। जलवा आमवर हुस्न और इश्क़की पुरअसर कहानियाँ सुनीं। आशियाँ और क़फ़समें बन्द रहनेको उनके लिए सामान प्रस्तुत हुए। साक़ी और मयखानेने उन्हें अपनी ओर बरबस खींचना चाहा, पर वह दामन बचाकर साफ़ निकल गए। बक़ौल 'असग़र' —

दैरो[1] हरम[2] भी कूचयेजानाँमें[3] आये थे।
पर शुक्र है, कि बढ़ गये दामन बचाके हम॥

जिस तरह अपने पूर्ववर्ती शायरोंके सुन्दर-से-सुन्दर कलाम होनेपर भी उनमें शृङ्गार रसकी अधिकता और समयकी आवश्यकताओंसे कोरी होनेके कारण हालीने शायरीकी दिशा ही बदल दी, उसी तरह अकबरने भी अपना एक पृथक ही दृष्टिकोण स्थापित किया। अकबरके पूर्ववर्ती शायर विरहमें जहाँ आँसूके दरिया बहाते थे —

---

[1]मन्दिर [2]मस्जिद, [3]प्रेयसीके मार्गमें (अभिप्राय है प्रेम-मार्गमें)।

ऐसा नहीं जो यारको लावे ख़बर मुझे।
ऐ सैले[1] अश्क तू ही बहा ले उधर मुझे॥

वहाँ अकबरने इस तरह हास्यकी निर्मल धारा बहाई :—

दिल लिया है हमसे जिसने दिल्लगीके वास्ते।
क्या तअ़ाज्जुब है, जो तफ़रीहन हमारी जान ले॥

जहाँ मेंहदीके पत्तेपर लोग सन्देश भेजते थे :—

बर्गेहिनाप[2] लिक्खेंगे हम दर्दे दिलकी बात।
शायद कि रफ़्ता-रफ़्ता लगे गुल-बदनके हात॥

वहाँ अकबरने लिखा :—

क़ासिद मिला जब उनसे, वे खेलते थे पोलो।
ख़त रख लिया यह कहकर, अच्छा सलाम बोलो॥

जब दूसरे शायर ग़मको कलेजा खिलाते थे, जङ्गलोंमें भटकते फिरते थे, जीनेसे मरना बेहतर समझते थे, सभीपर अकर्मण्यता छाई हुई थी, तब अकबरने अपने जुदागाना रङ्ग (हास्य-रस) का आविष्कार करके बता दिया, कि हर समय मनहूस सूरत बनाये रखना ठीक नहीं। अगर मुहर्रममें रोना ज़रूरी है, तो होलीमें हँसना भी आवश्यक है। मगर वह हँसी बेहयाओं या शोहदोंकी तरह नहीं, जिससे सभ्यता और बुद्धि भी दूर भागे। हास्य ऐसा हो, कि माँ-बहन भी आनन्द ले सकें, शत्रु भी बिना हँसे न रह सके। जो कहना है वह कह भी दिया जाय, मगर ओठों-पर हँसीकी गुलकारियाँ बनी रहें।

हाली मौलवी थे, अकबर जज। हाली मौलवी होते हुए भी अङ्ग-रेज़ी शिक्षाके हिमायती थे। वे कौंसिलों और सरकारी नौकरियोंमें

---

[1]आँसुओंकी बाढ़; [2]मेंहदीके पत्तेपर।

भी रहे और कुछ मशहूर कलाम भी रहे, ताकि जिन्हे याद है वे कतई यह भी न समझ लें कि हमारी दृष्टि ही उधर न पड़ी या हम उस मजाकसे अनभिज्ञ हैं। चूँकि हर ग़ज़लगोके ५१-५१ ही शेर देनेका संकल्प है, इसीका ध्यान रखकर सब तरहके नमूने देनेका प्रयत्न किया गया है।

अकबर १६ नवम्बर, सन् १८४६ में इलाहाबाद जिलेके एक गाँवमें उत्पन्न हुए और ९ सितम्बर, १९२१ को इलाहाबादमे जन्नत-नशीन हुए। आप ११ वर्षकी आयुमें ही कविता करने लगे थे। सन् १८६९ मे वे नायब तहसीलदार हुए। सन् १८७३ मे प्रयाग हाईकोर्टकी परीक्षा पास करके कुछ दिनो वकालत की। १८८० मे मुन्सिफ हुए। फिर सब-जज हुए। वर्षो स्थानापन्न सेशन-जज भी रहे। १८९८ मे खानबहादुरकी उपाधि भी मिली; मगर सरकारी डिगरियोंको वे मनुष्यताका कलङ्क समझते थे। फ़र्माते है :—

> नेशनल[1] वक़अतके[2] गुम होनेका है 'अकबर'को ग़म।
> ऑफ़िशल इज्जतका उसको कुछ मजा मिलता नहीं॥

१९०३ में वे पेन्शन लेकर इशरत मञ्जिल बनवाकर रहने लगे। मगर सांसारिक आपदाओंने इस हँसोड़का भी पीछा न छोड़ा। ७ वर्ष तक मोतियाबिन्दसे पीडित रक्खा। १९१० में पत्नी छीन ली, फिर जवान बेटेका सदमा पहुँचाया।

अकबर अत्यन्त खुशमिजाज और हँसोड थे। सरकारी अफसर होते हुए भी निहायत सादगी-पसन्द और निरभिमानी थे। हर आदमीसे जोमें मिलते। जैसा कि आप हास्य अपनी कविताओंमें बखेरते थे, उसी तरह पारस्परिक बातचीतमे भी हाज़िरजवाबी और हँसीका फ़व्वारा छोड़ते थे। एक बार लॉर्ड कर्जनने अपने भाषणमे हिन्दुस्तानियोंको

---

[1]राष्ट्रिय; [2]प्रतिष्ठाके।

झूठा कहा। अकबरने अखबारमें पढ़ा तो तत्काल उनके मुँहसे निकला :—

झूठे हैं हम तो आप हैं झूठोंके बादशाह !

एक बार एक सज्जन मिलने आए तो उन्होंने अपना विज़िटिङ्ग कार्ड अकबरके पास भेजते समय नामके आगे पेन्सिलसे बी० ए० और बना दिया; क्योंकि वे कार्ड छप जानेके बाद बी० ए० हुए थे। अकबरने भी उसी कार्डकी पीठपर यह शेर लिखकर भिजवा दिया और मुलाक़ात नहीं की :—

शेख़जी घरसे न निकले और लिखकर दे दिया—
"आप बी० ए० पास हैं तो बन्दा बीबी पास है॥"

ीतिविषयक :—

रोना है तो इसीका, कोई नहीं किसीका ।
दुनिया है और मतलब, मतलब है और अपना ॥

*   *   *

अय वरहमन ! हमारा-तेरा है एक आलम ।
हम ख्वाब देखते हैं, तू देखता है सपना ॥

*   *   *

अजलसे[1] वे डरें, जीनेको जो अच्छा समझते हैं ।
यहाँ हम चार दिनकी जिन्दगीको क्या समझते हैं ?

ऊँचा नीयतका अपनी जीना[2] रखना ।
अहबाबसे[3] साफ़ अपना सीना रखना ॥

गुस्सा आना तो 'नेचुरल' है 'अकबर' ।
लेकिन है शदीद[4] ऐब कीना[5] रखना ॥

*   *   *

जो देखी हिस्ट्री इस बातपर कामिल यक़ीं आया ।
उसे जीना नहीं आया, जिसे मरना नहीं आया ॥

*   *   *

सवाब[6] कहता है मिल जाऊँगा, कर उनकी मदद ।
छिपा हुआ मैं ग़रीबोंकी भूख-प्यासमें हूँ ॥

*   *   *

---

[1]मृत्युसे; [2]सीढ़ी; [3]इष्टमित्रोंसे; [4]भयानक, भारी ।
[5]द्वेष, वदलेकी भावना; [6]पुण्य, धर्म ।

हर चन्द बगोला[1] मुज़्तर[2] है, इक जोश तो उसके अन्दर है।
इक वज्द[3] तो है इक रक्स[4] तो है, बेचैन सही, बरबाद सही॥

* * *

सकूनेक़ल्बकी[5] दौलत कहाँ दुनियाएफ़ानीमें[6]?
बस इक ग़फ़लत-सी आ जाती है, और वोह भी जवानीमें॥

* * *

गिरे जाते हैं हम खुद अपनी नज़रोंसे, सितम ये है।
बदल जाते तो कुछ रहते, मिटे जाते हैं, ग़म ये है॥

* * *

खुशी मफ़्क़ूद है जहाँमें, हमारे घर न सही।
मलूल[7] क्यों रहें दुनियाके इन्तज़ाममें हम?

* * *

बहरेहस्तीमें[8] हूँ मिसालेहुबाब[9]।
मिट ही जाता हूँ, जब उभरता हूँ॥

* * *

अपनी मिनक़ारोंसे हल्क़ा कस रहे हैं जालका।
तायरोंपर[10] सहर[11] है, सैयादके इक़बालका॥

* * *

---

[1]रेगिस्तानमें चक्कर खाती हुई वायु, बवण्डर, [2]परेशान, [3]तन्मयता। [4]नाच [5]हृदयकी शान्ति, सुख चैनकी, [6]असार संसारमें, [7]रंजीदा, उपक्षिप्त, [8]जीवनरूपी दरियामें, [9]बुलबुलेकी नाईं। [10]पक्षियोंपर [11]जादू।

हकीम और वैद्य यकसाँ हैं, अगर तशखीस[1] अच्छी हो ।
हमें सेहतसे मतलब है, बनफ़्शा हो, या तुलसी हो ॥

* * *

हास्य-रसके भी कुछ नमूने हाज़िर हैं :—

तमाशा देखिये बिजलीका, मग़रिब[2] और मशरिक़में[3] ।
कलोंमें है वहाँ दाखिल, यहाँ मज़हबपे गिरती है ॥

* * *

तिफ़्लमें[4] बू आए क्या, माँ-बापके अतवारकी ।
दूध तो डिब्बेका है, तालीम है सरकारकी ॥

* * *

कर दिया 'कर्ज़न'ने जन, मर्दोंकी सूरत देखिये ।
आबरू चेहरेकी सब, फ़ैशन बनाकर पोंछ ली ॥

* * *

मग़रबी[5] ज़ौक़[6] है, और वज़हकी पाबन्दी भी ।
ऊँटपर चढ़के थियेटरको चले हैं हज़रत ॥

* * *

जो जिसको मुनासिब था गरदूँने[7] किया पैदा ।
यारोंके लिए ओहदे, चिड़ियोंके लिए फन्दे ॥

* * *

---

[1]निदान; [2]पश्चिम (यूरोप); [3]पूरबमें (भारतमें); [4]बालकमें ।
[5]पश्चिमी; [6]शौक़; [7]आकाशने ।

पाकर ख़िताब नाचका भी ज़ौक[1] हो गया।
'सर' हो गये, तो 'बॉल'का[2] भी शौक़ हो गया॥

*　　*　　*

बोला चपरासी जो मैं पहुँचा ब-उम्मीदे सलाम—
"फाँकिये ख़ाक आप भी, साहब हवा खाने गये"॥

*　　*　　*

ख़ुदाकी राहमें अब रेल चल गई 'अकबर'!
जो जान देना हो, अंजनसे कट मरो इक दिन॥

*　　*　　*

क्या ग़नीमत नहीं ये आज़ादी?
साँस लेते हैं, बात करते हैं!

*　　*　　*

तङ्ग इस दुनियासे दिल दौरेफ़लकमें आगया।
जिस जगह मैंने बनाया घर, सड़कमें आगया॥

पुरानी रोशनीमें औ नईमें, फ़र्क़ इतना है।
उसे किश्ती नहीं मिलती, इसे साहिल[3] नहीं मिलता॥

*　　*　　*

दिलमें अब नूरेख़ुदाके दिन गये।
हड्डियोंमें फ़ॉस्फ़ोरस देखिये॥

*　　*　　*

---

[1]शौक़, [2]अंग्रेज़ी नाच, [3]किनारा।

मेरी नसीहतोंको सुनकर वो शोख़ बोला—
"नेटिवको क्या सनद है, साहब कहे तो मानूं ॥"

* * *

नूरेइस्लामने समझा था मुनासिब पर्दा।
शमएख़ामोशको[1] फ़ानूसकी हाजत क्या है ?

* * *

मेरे सय्यादकी तालीमकी है धूम गुलशनमें।
यहां जो आज फँसता है, वो कल सैयाद होता है ॥

* * *

बेपरदा नज़र आईं, जो कल चन्द बीबियां,
'अकबर' ज़मींमें ग़ैरते क़ौमीसे गड़ गया।
पूछा जो उनसे—"आपका परदा कहां गया" ?
कहने लगीं, कि "अक़्लपे मरदोंकी पड़ गया" ॥

* * *

तालीम लड़कियोंकी ज़रूरी तो है मगर,
ख़ातूनेख़ाना[2] हों, वे सभाकी परी न हों।
जी इल्मों[3] मुत्तक़ी[4] हों, जो हों उनके मुन्तज़िम[5]।
उस्ताद अच्छे हों, मगर 'उस्ताद जी' न हों ॥

* * *

---

[1] बुझे हुए दीपकको; [2] सद्गृहस्थ, सुशीला।
[3] विद्वान; [4] सदाचारी; [5] प्रबन्धक, कारिन्दे।

तालीमेदुख़्तरांसे[1] ये उम्मीद है ज़रूर।
नाचे दुल्हन ख़ुशीसे ख़ुद अपनी बरातमें॥

* * *

फिरङ्गीसे कहा, पेन्शन भी लेकर बस यहीं रहिये।
कहा—"जीनेको आये हैं, यहाँ मरने नहीं आये॥"

* * *

हम ऐसी कुल किताबें क़ाबिले-ज़ब्ती समझते हैं—
कि जिनको पढ़के, लड़के बापको ख़ब्ती समझते हैं॥

* * *

क़द्रदानोंकी तबीयतका अजब रङ्ग है आज।
बुलबुलोंको है ये हसरत, कि वे उल्लू न हुए॥

* * *

बर्क़के लैम्पसे आँखोंको बचाये अल्लाह।
रौशनी आती है, और नूर चला जाता है॥

* * *

कौन्सिलमें सवाल होने लगे।
क़ौमी ताक़तने जब जवाब दिया॥

* * *

हरमसराकी[2] हिफ़ाज़तको तेग़ ही न रही।
तो काम देंगी यह चिलमनकी तीलियाँ कबतक?

* * *

---

[1] लड़कियोंकी शिक्षामें, [2] अन्तःपुरकी।

ख़ुदाके फ़ज़लसे बीबी-मियाँ, दोनों मुहज़्ज़ब हैं ।
हिजाब उनको नहीं आता, इन्हें ग़ुस्सा नहीं आता ॥

* * *

मालगाड़ीपै भरोसा है जिन्हें ऐ 'अकबर' !
उनको क्या ग़म है गुनाहोंकी गिराँबारीका ?

* * *

ख़ुदाकी राहमें बेशर्त करते थे सफ़र पहले ।
मगर अब पूछते हैं, रेलवे इसमें कहाँ तक है ?

* * *

मय भी होटलमें पियो, चन्दा भी दो मस्जिदमें ।
शेख़ भी ख़ुश रहे, शैतान भी बेज़ार न हो ॥

* * *

ऐशका भी ज़ौक़, दींदारीकी शुहरतका भी शौक़ ।
आप म्यूज़िक-हॉलमें क़ुरआन गाया कीजिये ॥

* * *

गुलेतस्वीर किस ख़ूबीसे गुलशनमें लगाया है ।
मेरे सैयादने बुलबुलको भी उल्लू बनाया है ॥

* * *

मछलीने ढील पाई है, लुक़मेपै शाद है ।
सैयाद मुतमइन है, कि काँटा निगल गई ॥

* * *

क्योंकर खुदाके अर्शके कायल हो यह अज़ीज़ ?
जुगराफ़ियेमें अर्शका नक़्शा नहीं मिला ॥

*　　　*　　　*

जवालेक़ौमकी इब्तदा वही थी कि जब—
तिजारत आपने की तर्क, नौकरी कर ली।

*　　　*　　　*

क़ौमके ग़ममें डिनर खाते हैं हुक्कामके साथ।
रंज लीडरको बहुत हैं, मगर आरामके साथ ॥

*　　　*　　　*

जान ही लेनेकी हिकमतमें तरक्क़ी देखी।
मौतका रोकनेवाला कोई पैदा न हुआ ॥

*　　　*　　　*

तालीमका शोर ऐसा, तहज़ीबका ग़ुल इतना।
बरकत जो नहीं होती, नीयतकी ख़राबी है ॥

*　　　*　　　*

तुम बीबियोंको मेम बनाते हो, आजकल।
क्या ग़म जो हमने मेमको बीबी बना लिया ?

*　　　*　　　*

नौकरोंपर जो गुज़रती है, मुझे मालूम है।
बस करम कीजे, मुझे बेकार रहने दीजिये ॥

१२

डॉक्टर सर शेख़ मुहम्मद 'इक़बाल'

[सन् १८७५ से १९३७ ई० तक]

वर्तमान युगके प्रवर्त्तक आज़ाद और हाली उर्दू-शायरीमें एक क्रान्ति लानेमें सफल हुए। शायरीमें आशिक़ाना ग़ज़लोंके अतिरिक्त क़ौमोंके उत्थान-पतनका भी दिग्दर्शन हो सकता है, छोटी-छोटी शिक्षाप्रद बातें भी नज़्म हो सकती हैं, यह नक़्श तो ज़हननशीन करनेमें वे कामयाब हुए, पर यही नक़्श रङ्ग भर देनेपर मुँहबोलती तसवीर भी बन सकती है, यह उनके बसका काम नहीं था। इसके लिए बड़े सुलझे हुए चित्रकारोंकी आवश्यकता थी। और सौभाग्यसे उर्दू-शायरीको दो ऐसे चित्रकार मिले कि उनकी कूचीने उर्दू-शायरीको ऊषाका अनुपम सौन्दर्य दे दिया। उनकी इस कलापर उर्दूको ही नहीं, समूचे भारत-वर्षको अभिमान है। वे अमर चित्रकार इक़बाल और चकबस्त थे।

आज़ाद और हालीकी शायरीमें सचाई, सादगी, और नवीनता थी। इक़बाल और चकबस्तने उसमें कल्पना, भाव, भाषा और उपमाके ऐसे रंग भरे कि लोग सकतेमें आगए। प्रकृति-वर्णन और दार्शनिकताका नवीन सम्मिश्रण करके चार चाँद लगा दिए। देशकी दुर्दशाका चित्र खींचकर पत्थर-हृदय पिघला दिए। दीन-दुखियोंकी ओर से सबसे पहले वोह दर्दीली सदा दी कि कलेजा मुँहको आने लगा। क़ौमोंकी दयनीय स्थितिका वर्णन किया, तो लोग फुफ्फा मारकर रो पड़े। सङ्गठन और स्वतंत्रताके वोह मन्त्र फूँके कि शत्रुओंके हृदय दहल गए।

'इक़बाल' का इक़बाल[1] आस्मानेशायरीपर सबसे अधिक चमका है। वे अन्तर्राष्ट्रिय ख्याति-प्राप्त शायर थे। उन्हें शायरीकी बदौलत जर्मन सरकारने 'डाक्टरेट' और भारत सरकारने 'सर' जैसी सर्वोच्च उपाधिसे विभूषित किया था। भारतीय सपूतोंमें रवीन्द्रनाथ ठाकुरके बाद इक़बाल ही हैं, जिन्हें शायरीकी बदौलत इतनी प्रतिष्ठा मिली।

इक़बाल सन् १८७५ में स्यालकोट (पंजाब) में पैदा हुए। वे बचपनसे ही मेधावी थे। स्कूल-जीवनमें ही शेर कहने लगे। एम० ए० की परीक्षामें यूनिवर्सिटी भरमें प्रथम आए। १९०५ में बैरिस्टरीकी सनद लेने इङ्गलैण्ड गए और वहाँसे १९०८ में सफलता प्राप्त करके लाहौरमें आकर वकालत करने लगे।

इकबाल शायरकी हैसियतसे जनताके सामने सबसे पहले १८९९ में आए, जब कि उन्होंने एक वार्षिकोत्सवपर 'नालयेयतीम' कविता पढ़कर लोगोंको चकित कर दिया था। इसके एक वर्ष बाद सहपाठियोंके आग्रहपर 'हिमालय' नामक कविता पढ़ी तो लोग आत्मविभोर हो उठे और इस उदीयमान युवककी ओर ललचाई नज़रोंसे देखने लगे। इक़बालकी ख्याति तभीसे दिन-दूनी रात-चौगुनी फैलती चली गई।

इकबालकी शायरीके तीन दौर हैं। पहला विलायत जानेसे पूर्व १८९९ से १९०५ तक। दूसरा विलायत-प्रवास १९०५ से १९०८ तक। तीसरा भारत आनेपर १९०८ से जीवन पर्यन्त १९३७ तक।

पहला दौर

इस दौरमें इक़बाल केवल भारतीय नज़र आते हैं। भारतीयहित उनका ईमान, हिन्दु-मुस्लिम प्रेम उनका मज़हब, स्वतन्त्रता और सङ्गठन

---

[1] भाग्य।

उनका देश और वतनका राग उनकी [illegible] । उन्होंने तरानेमें हैं:—

यूनानियोंको जिसने हैरान कर दिया था।
सारे जहाँको जिसने इल्मोहुनर दिया था॥
मिट्टीको जिसकी हक़ने ज़रका असर दिया था।
तुर्कोंका जिसने दामन हीरोंसे भर दिया था॥
मेरा वतन वही है, मेरा वतन वही है॥

नन्हें लड़कोंकी जिह्वापर बैठकर गाते हैं:—

सारे जहाँसे अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा।
हम बुलबुलें हैं इसकी यह गुलसिताँ हमारा॥
मज़हब नहीं सिखाता आपसमें बैर रखना।
हिन्दी हैं हम, वतन है हिन्दोस्ताँ हमारा॥
कुछ बात है जो हस्ती मिटती नहीं हमारी।
सदियों रहा है दुश्मन दौरे ज़माँ हमारा॥

और तो और, परिन्दोंकी फ़रियाद बनकर कहते हैं:—

जबसे चमन छुटा है यह हाल हो गया है,
दिल ग़मको खा रहा है ग़म दिलको खा रहा है।
गाना इसे समझकर ख़ुश हों न सुननेवाले,
दुखते हुए दिलोंकी फ़रियाद यह सदा है॥
आज़ाद मुझको कर दे ओ क़ैद करनेवाले!
मैं बेज़बाँ हूँ क़ैदी तू छोड़कर दुआ ले॥

मज़हबी दीवाने, मुल्ले-पण्डित, जो गाय और बाजा, हलाल और झटका, मन्दिर और मस्जिदके झगड़ोंको खड़ा करके देशोन्नतिमें बाधक बनते हैं, उनको आड़े हाथ लेते हुए फ़र्माते हैं:—

सच कह दूँ ऐ बिरहमन ! गर तू बुरा न माने ।
तेरे सनमकदोंके[1] बुत हो गये पुराने ॥
अपनोंसे बैर रखना तूने बुतोंसे सीखा ।
जङ्गोजदल[2] सिखाया वाइजको भी खुदाने ॥

तङ्ग आके मैंने आखिर देरोहरमको[3] छोड़ा ।
वाइजका वाज़[4] छोड़ा, छोड़े तेरे फ़िसाने ॥

पत्थरकी मूरतोंमें समझा है तू ख़ुदा है ।
ख़ाकेवतनका मुझको हर ज़र्रा देवता है ॥

आ, ग़ैरियतके[5] पर्दे इकबार फिर उठा दें ।
बिछुड़ोंको फिर मिला दें, नक्शेदुई मिटा दें ॥

सूनी पड़ी हुई है मुद्दतसे दिलकी बस्ती ।
आ इक नया शिवला इस देशमें बना दें ॥

दुनियाके तीरथोंसे ऊँचा हो अपना तीरथ ।
दामानेआस्मांसे उसका कलस मिला दें ॥

हर सुबह उठके गायें मनतर वोह मीठे मीठे ।
सारे पुजारियोंको मय प्रीतकी पिला दें ॥

शक्ती भी, शान्ती भी भक्तोंके गीतमें है ।
धरतीके बासियोंकी मुक्ती पिरीतमें है ॥

'आफ़ताबसुबह' कवितामें कितने विशाल हृदयका परिचय मिलता है—

---

[1] मन्दिरोंके
[2] लड़ाई झगड़ा ।
[3] मंदिर मस्जिदको
[4] उपदेश ।
[5] गैरपनके ।

शौक़ेआज़ादीके दुनियामें न निकले हौसले,
ज़िन्दगी भर क़ैदे ज़ंजीरे तअल्लुक़में रहे।
ज़ेरोबाला[1] एक है तेरी निगाहोंके लिए,
आरज़ू कुछ है इसी चश्मेतमाशाकी मुझे॥

आँख मेरी औरके ग़ममें सरश्क[2]आबाद हो।
इम्तियाज़े[3] मिल्लतो[4] आईंसे[5] दिल आज़ाद हो॥

सदमा आ जाये हवासे गुलकी पत्तीको अगर,
अश्क बनकर मेरी आँखोंसे टपक जाये असर।
दिलमें हो सोज़ेमुहब्बतका[6] वोह छोटासा शरर[7],
नूरसे[8] जिसके मिले राज़ेहक़ीक़तकी[9] ख़बर॥

शाहिदेक़ुदरतका[10] आईना हो दिल, मेरा न हो।
सरमें जुज़[11] हमदर्दिए इन्सां, कोई सौदा न हो॥

'सर सैयदकी लोहेतुरबत' कवितामें किस ख़ूबीसे अमनकी भीख माँगते हैं:—

वा[12] न करना फ़िर्क़ाबन्दीके लिए अपनी ज़बाँ,
छिपके है बैठा हुआ हंगामएमहशर[13] यहाँ।
वस्लके[14] सामान पैदा हों तेरी तहरीरसे,
देख कोई दिल न दुख जाये तेरी तक़रीरसे॥

महफ़िलेनौमें पुरानी दास्तानोंको न छेड़।
रंगपर जो अब न आएँ उन फ़िसानोंको न छेड़॥

---

[1] नीच-ऊँच; [2] आँसुओंसे भरी; [3] भेद-भावसे; [4] मजहब; [5] क़ानूनसे; [6] प्रेमाग्निका; [7] चिनगारी; [8] प्रकाशसे; [9] वास्तविकताकी; [10] प्राकृतिक सौन्दर्यकी देवीका; [11] सिवा, केवल; [12] खोलना; [13] प्रलयका तूफ़ान; [14] मेल-मिलापके।

'तसवीरेदर्द' में तो इक़बाल सचमुच कराह उठे हैं —

निशाने बर्गेगुल तक भी न छोड़ इस बाग़में गुलचीं,
तेरी क़िस्मतसे रज़्म आराइयाँ[1] हैं बाग़बानोंमें ॥

छुपाकर आस्तीमें बिजलियाँ रक्खी हैं गर्दूंने।
अनादिल बाग़के ग़ाफ़िल न बैठें आशियानोंमें ॥

सुन ऐ ग़ाफ़िल! सदा[2] मेरी यह ऐसी चीज़ है जिसको,
वज़ीफ़ा जानकर पढ़ते हैं ताइर[3] बोस्तानोंमें[4] ॥

वतनकी फ़िक्र कर नादाँ! मुसीबत आनेवाली है,
तेरी बरबादियोंके मशविरे हैं आस्मानोंमें ॥

न समझोगे तो मिट जाओगे ऐ हिन्दोस्ताँवालो!
तुम्हारी दास्ताँ तक भी न होगी दास्तानोंमें!!

जो हैं परदोंमें पिन्हाँ चश्मेबीना देख लेती है।
ज़मानेकी तबीयतका तक़ाज़ा देख लेती है॥

× × ×

किया रफ़अतकी[5] लज़्ज़तसे न दिलको आशना तूने।
गुज़ारी उम्र पस्तीमें मिसाले नक़्शेपा तूने॥

फ़िदा करता रहा दिलको हसीनोंकी अदाओंपर।
मगर देखी न इस आईनेमें अपनी अदा तूने॥

दिखा वोह हुस्ने आलम सोज़, अपनी चश्मेपुरनमको।
जो तड़पाता है परवानेको, रुलवाता है शबनमको॥

---

[1] लड़ाई झगड़े, [2] आवाज़, [3] पक्षी, [4] बाग़ोंमें।
[5] उच्चताकी।

शजर[1] है फ़िर्क़ा-आराई[2] तअस्सुब[3] है समर[4] इसका।
ये वोह फल है कि जन्नतसे निकलवाता है आदमको॥

फिरा करते नहीं मजरूहेउल्फ़त[5] फ़िक्रे-दरमाँमें[6]।
ये ज़ख़्मी आप कर लेते हैं पैदा अपनी मरहमको॥

मुहब्बतके शररसे दिल सरापा नूर होता है।
ज़रा-से बीजसे पैदा रियाज़ेतूर[7] होता है॥

दवा हर दुखकी है मजरूहे तेग़ेआरज़ू रहना।
इलाजे ज़ख़्म है आज़ादे अहसाने रफ़ू रहना॥

पर्मे क्या दीदएगिरियाँ[8] वतनकी नौहाख़्वानीमें[9]।
इबादत चश्मेशाइरकी है हरदम बावज़ू रहना॥

बनाएँ क्या समझकर शाख़ेगुलपर आशियाँ अपना।
चमनमें आह! क्या रहना, जो हो बेआबरू रहना॥

न रह अपनोंसे बेपरवाह इसीमें ख़ैर है अपनी।
अगर मंज़ूर है दुनियामें ओ बेगानाख़ू[10]! रहना॥

मुहब्बत हीसे पाई है शफ़ा बीमार क़ौमोंने।
किया है अपने बख़्तेख़ुफ़्तहको बेदार क़ौमोंने॥

शमअपर कहते हुए उसकी किस ख़ूबीपर नज़र जाती है:—

---

[1]पेड़; [2]जात-पाँतका भेद; [3]पक्षपात [4]फल।
[5]प्रेमके घायल; [6]चिकित्साकी चिन्तामें; [7]प्रकाशका पर्वत; [8]आँसू; [9]व्यथा वर्णन करनेमें, [10]अपरिचित-जैसा, निर्मोही।

इक बीं तेरी नज़र सिफ़ते[1] आशिकाने राज़[2],
मेरी निगाह मायए[3] आशोबे[4] इम्तियाज़[5]।

काबेमें बुतक्दमें है यकसाँ तेरी ज़िया[6],
मैं इम्तियाज़[7] दैरोहरममें फँसा हुआ॥

है शान आहकी तेरे दूदेसियाहमें[8]।
पोशीदा कोई दिल है तेरी जलवागाहमें॥

एक आरज़ूमें अपने दिलकी बात किस ख़ूबीसे प्रकट की है -

दुनियाकी महफ़िलोंसे उकता गया हूँ यारब!
क्या लुत्फ़ अंजुमनका जब दिल ही बुझ गया हो॥

शोरिशसे भागता हूँ दिल ढूँढता है मेरा।
ऐसा सुकूत जिसपर तक़रीर भी फ़िदा हो॥

मरता हूँ ख़ामुशीपर, यह आरज़ू है मेरी—
दामनमें कोहके[9] इक छोटा सा झोंपड़ा हो॥

हो हाथका सिरहाना सब्ज़ेका हो बिछौना।
शरमाए जिससे जलवत[10] ख़िलवतमें[11] वोह अदा हो॥

मानूस[12] इस क़दर हो सूरतसे मेरी बुलबुल।
नन्हें से दिलमें उसके खटका न कुछ मेरा हो॥

रातोंके चलनेवाले रह जाएँ थकके जिस दम।
उम्मीद उनकी मेरा टूटा हुआ दिया हो॥

---

[1] बिजलीकी-सी दृष्टिके समान, [2-5] प्रेमपात्रकी भावनासे रत्नाभ दृष्टि [6] रोशनी [7] तुलना एवं विभेदमें [8] काले धुएँमें, [9] पहाड़के [10] जन वातावरण [11] एकान्त, भीड़, महफ़िल [11] एकान्तमें [12] परिचित अभ्यस्त।

बिजली चमकके उनको कुटिया मेरी दिखा दे।
जब आस्मांपै हरसू बादल घिरा हुआ हो॥
फूलोंको आए जिस दम शबनम वज़ू कराने।
रोना मेरा वज़ू हो, नाला मेरी दुआ हो॥
हर दर्दमन्द दिलको रोना मेरा रुला दे।
बेहोश जो पड़े हैं, शायद उन्हें जगा दे!

इसी दौरके कुछ और नमूने :—

हुस्न हो क्या ख़ुदनुमां[1] जब कोई माइल[2] ही न हो।
शमअ़को जलनेसे क्या मतलब, जो महफ़िल हो न हो॥

× × ×

कब ज़बां खोली हमारी लज़्ज़तेगुफ़्तारने।
फूंक डाला जब चमनको आतिशेपैकारने॥

× × ×

यह दौर नुक्ताचीं[3] है कहीं छुपके बैठ रह।
जिस दिलमें तू मकीं[4] है वहीं छुपके बैठ रह॥

× × ×

तू अगर अपनी हक़ीक़तसे ख़बरदार रहे।
न सियहरोज रहे फिर न सियहकार रहे॥

× × ×

अजब वाइज़की दींदारी[5] है यारब!
अदावत है उसे सारे जहांसे॥

---

[1]आत्मप्रदर्शक; [2]प्रशंसक, गुण-ग्राही; [3]आलोचक; [4]विराजमान; [5]धार्मिकता, धर्मोन्माद।

कोई अब तक न यह समझा कि इन्सां—
कहां जाता है, आता है कहांसे ?

बड़ी बारीक हैं वाइज़की चालें।
लरज़ जाता है आवाज़ेअज़ांसे ॥

× × ×

लाऊँ वोह तिनके कहाँसे आशियानेके लिए।
बिजलियाँ बेताब हों जिनको जलानेके लिए ॥

दिलमें कोई इस तरहकी आरज़ू पैदा करूँ।
लौट जाए आस्मां मेरे मिटानेके लिए ॥

पास था नाकामिए सैयादका ऐ हमसफ़ीर !
वर्ना मैं, और उड़के आता एक दानेके लिए !

× × ×

है तलब बेमुद्दआ[1] होनेकी भी इक मुद्दआ।
मुर्गेदिल दामेतमन्नासे रिहा क्योंकर हुआ ?

× × ×

न पूछो मुझसे लज़्ज़त खानुमा बरबाद रहनेकी।
नशेमन सैकड़ों मैंने बनाकर फूंक डाले हैं ॥

नहीं बेगानगी[2] अच्छी रफ़ीक़ेराह[3] मंज़िलसे[4]।
ठहर जाएँ शरर[5] ! हम भी तो आख़िर मिटनेवाले हैं ॥

× × ×

अगर कुछ आशना[6] होता मज़ाक़ेजिबहसाईसे[7]।
तो संगे आस्तानेकाबा[8] जा मिलता जबीनोंमें ॥

---

[1]निरभिलाष, [2]परायापन, [3]अंदेशा, [4-5]यात्राके साथीसे; [6]चिनगारी, [7]परिचित; [8]मस्तक टेकनेके आनन्दसे; [9]वोह काबेका पत्थर जिसे हर हाजी बोसा देता है, मस्तक टेकता है।

कभी अपना भी नज्ज़ारा किया है तूने ऐ बुलबुल !
कि लैलाकी तरह तू ख़ुद भी है महमिलनशीनोंमें[1] ॥
मुझे रोकेगा तू ऐ नाख़ुदा ! क्या ग़र्क़ होनेसे ।
कि जिनको डूबना हो डूब जाते हैं सफ़ीनोंमें[2] ॥
किसी ऐसे शररसे फूँक अपने ख़िरमनेदिलको[3] ।
कि ख़ुरशीदे[4] क़यामत भी हो तेरे ख़ोशहचीनोंमें[5] ॥

× × ×

बिठाके अर्शपै रक्खा है तूने ऐ वाइज़ !
ख़ुदा वोह क्या है जो बन्दोंसे अहतराज़[6] करे ॥
मेरी निगाहमें वोह रिन्द ही नहीं साक़ी !
जो होशियारी-ओ-मस्तीमें इम्तयाज़[7] करे ॥
कोई यह पूछे कि वाइज़का क्या बिगड़ता है ।
जो बेअमलपै[8] भी रहमत वोह बेनियाज़[9] करे ॥

× × ×

है मेरी ज़िल्लत[10] ही कुछ मेरी शराफ़तकी दलील ।
जिसकी ग़फ़लतको मलक[11] रोते हैं वोह ग़ाफ़िल हूँ मैं ॥
बज़्मेहस्ती ! अपनी आराइश[12] पै तू नाज़ाँ[13] न हो ।
तू तो इक तसवीर है महफ़िलकी और महफ़िल हूँ मैं ॥

× × ×

मजनूँने शहर छोड़ा तू सहरा[14] भी छोड़ दे ।
नज्ज़ारेकी हविस हो तो लैला भी छोड़ दे ॥
वाइज़ ! कमालेतर्कसे[15] मिलती है याँ मुराद ।
दुनिया भी छोड़ दी है तो उक़बा[16] भी छोड़दे ॥

---

[1]ऊँटकी पीठपर पर्देदार हौदेमें बैठनेवालियोंमें [2]नौकाओंमें; [3]दिलरूपी कुटियाको; [4]सूरज; [5]प्रशंसकोंमें; [6]परहेज़; [7]भेद-भाव; [8]चरित्रहीनपर; [9]मुक्त हृदयसे; [10]बेइज्ज़ती; [11]देवता; [12]सजावट; [13]अभिमानी; [14]जंगल; [15]त्यागकीसे; पराकाष्ठासे; [16]परलोक ।

तकलीदकी[1] रविशसे तो बेहतर है ख़ुदकशी।
रस्ता भी ढूँढ, ख़िज्रका[2] सौदा भी छोड़ दे॥
है आशिक़ीमें रस्म अलग सबसे बैठना।
बुतख़ाना भी, हरम भी, कलीसा भी छोड़ दे॥
सौदागरी नहीं, यह इबादत[3] ख़ुदाकी है।
ऐ बेख़बर जज़ाकी[4] तमन्ना भी छोड़ दे॥
अच्छा है दिलके साथ रहे पासबानेअक़्ल[5]।
लेकिन कभी-कभी उसे तनहा भी छोड़ दे॥
जीना वोह क्या जो हो नफ़सेग़ैरपर[6] मदार।
शुहरतकी ज़िन्दगीका भरोसा भी छोड़ दे॥

दूसरा दौर

(१६०५ से १६०८ विलायत प्रवास तक)

इस दौरमें उन्होंने बहुत कम लिखा है। इसका एक तो कारण यह था कि बैरिस्टरीकी पढ़ाईसे अवकाश कम मिलता था। दूसरे उन दिनों फ़ारसीकी ओर अधिक ध्यान था। अवकाश मिलनेपर फ़ारसीमें ही तबा आज़माई करते थे। उर्दू कलामके चन्द नमूने मुलाहिज़ा हों —

भला निभेगी तेरी हमसे क्योंकर ऐ वाइज़!
कि हम तो रस्मेमुहब्बतको आम करते हैं॥
मैं उनकी महफ़िलइशरतसे काँप जाता हूँ।
जो घरको फूँकके दुनियामें नाम करते हैं॥[1]

× × ×

---

[1]नक़ल अनुकरणकी [2]भूले भटकोंको मार्ग बतानेवाला एक फ़रिश्ता, [3]उपासना [4]फल प्राप्तिकी, [5]बुद्धि रक्षकके तौरपर, [6]पराश्रयपर अवलम्बित।

गुज़र गया अब वोह दौर साक़ी, कि छुपके पीते थे पीनेवाले।
बनेगा सारा जहान मयख़ाना, हर कोई बादह्ख़्वार[1] होगा।
तुम्हारी तहज़ीब अपने ख़ंजरसे आप ही ख़ुदकशी करेगी।
जो शाख़ेनाज़ुकपै आशियाना बनेगा, नापाएदार[2] होगा।
ख़ुदाके बन्दे तो हैं हज़ारों, बनोंमें फिरते हैं मारे-मारे।
मैं उसका बन्दा बनूँगा जिसको, ख़ुदाके बन्दोंसे प्यार होगा।

तीसरा दौर

(१६०८ में विलायतसे आनेके बाद जीवन पर्यन्त १९३७ तक)
इस दौरमें इक़बाल साम्प्रदायिक रङ्गमें रंग गये हैं, और अधिकांश केवल मुस्लिम दृष्टिकोणको लेकर लिखा है। आपके 'शिकवा' और 'जवाबेशिकवा' दो अत्यन्त प्रसिद्ध मुसद्दस हैं, जिन्होंने मुसलमानोंमें तो जीवन-ज्योति जलाई ही, पर उर्दू-शायरीमें भी एक नवीन अध्याय उपस्थित कर दिया। मुसलमानोंने ख़ुदाके लिए क्या-क्या कार्य किए और ख़ुदाने उसके उपलक्ष्यमें क्या व्यवहार किया, यही चित्रण इक़बालने ३१ बन्दोंमें किया है। नमूनेके ८ बन्द मुलाहिज़ा हों :—

शिकवा

हमसे पहले था अजब तेरे जहाँका मंज़र[3],
कहीं मस्जूद[4] थे पत्थर कहीं माबूद[5] शजर[6]।
ख़ूगरे[7] पैकरे[8] महसूस[9] थी इन्साँकी नज़र,
मानता फिर कोई अनदेखे ख़ुदाको क्योंकर?
तुझको मालूम है लेता था कोई नाम तेरा?
क़ुव्वते बाज़ूए मुस्लिमने किया काम तेरा॥

---

[1]मद्यप; [2]कमज़ोर; [3]दृश्य; [4]पूज्य; [5]पूज्य।
[6]पेड़; [7-8-9]ईश्वरको साकार देखनेकी अभ्यस्त।

बस रहे थे यहीं सलजूक[1] भी तूरानी[2] भी,
अहले-चीं चीनमें, ईरानमें सासानी[3] भी।
इसी मामूरेमें[5] आबाद थे यूनानी भी,
इसी दुनियामें यहूदी भी थे नुसरानी भी॥
पर तेरे नामपै तलवार उठाई किसने?
बात जो बिगड़ी हुई थी वोह बनाई किसने?

थे हमीं एक तेरे मार्काआराओंमें[6],
खुश्कियोंमें कभी लड़ते कभी दरियाओंमें।
दीं अज़ानें कभी यूरपके कलीसाओंमें,
कभी अफ़रीक़ाके तपते हुए सेहराओंमें॥
शान आँखोंमें न चुभती थी जहाँदारोंकी।
कलमा पढ़ते थे हम छाँओंमें तलवारोंकी॥

हम जो जीते थे, तो जंगोंकी मुसीबतके लिए,
और मरते थे तेरे नामकी अज़मतके[7] लिए।
थी न कुछ तेग़ज़नी अपनी हुकूमतके लिए,
सरबक्फ़[8] फिरते थे क्या दहरमें[9] दौलतके लिए?
क़ौम अपनी जो ज़रोमालेजहाँपर[10] मरती।
बुतफ़रोशीके एवज़ बुतशिकनी क्यों करती?*

१-४ जातियोंके नाम ५दुनियामें ६साहसी सैनिकोंमें, ७गौरव प्रतिष्ठाके ८हथेलीपर सर लिए हुए ९संसारमें १०सांसारिक सम्पत्तिपर।

* महमूद गज़नवीने जब सोमनाथके मन्दिरपर अधिकार कर लिया तो वहाँके पुजारियोंने मन्दिरको बचानेके लिए कई लाख रुपयेका प्रलोभन दिया किन्तु महमूद गज़नवीने रुपये न लेकर मूर्तिको तोड़ डाला। इसी ऐतिहासिक घटनाकी ओर संकेत करते हुए इक़बाल फ़र्माते हैं कि मुसलमान सांसारिक सम्पत्तिके लिए आक्रमण करते तो मूर्तियाँ बेचनेके बजाय उनका विध्वंस क्यों करते?

टल न सकते थे अगर जंगमें अड़ जाते थे,
पाँव शेरोंके भी मैदाँसे उखड़ जाते थे।
तुझसे सरकश[1] हुआ कोई तो बिगड़ जाते थे,
तेग़ क्या चीज है हम तोपसे लड़ जाते थे॥

नक़्श तौहीदका[2] हर दिलपै बिठाया हमने।
जेरे ख़ंजर भी यह पैग़ाम सुनाया हमने॥

*   *   *

सुफ़ये दहरसे बातिलको[3] मिटाया हमने,
नौए इन्साँको ग़ुलामीसे छुड़ाया हमने।
तेरे काबेको जबीनोंसे[4] बसाया हमने,
तेरे क़ुरआनको सीनेसे लगाया हमने॥

फिर भी हमसे यह गिला है कि वफ़ादार नहीं।
हम वफ़ादार नहीं, तू भी तो दिलदार नहीं॥

उम्मतें[5] और भी हैं उनमें गुनहगार भी हैं,
इज्ज़वाले[6] भी हैं मस्तेमयेपिन्दार[7] भी हैं।
उनमें काहिल भी हैं, ग़ाफ़िल भी हैं हुशियार भी हैं,
सैकड़ों हैं कि तेरे नामसे बेज़ार[8] भी हैं॥

रहमतें हैं तेरी अग़ियारके[9] काशानोंपर[10]।
बर्क़[11] गिरती है तो बेचारे मुसलमानोंपर॥

बुत सनमख़ानोंमें कहते हैं, "मुसलमान गए"
है ख़ुशी उनको कि काबेके निगहबान गए।

---

[1]विद्रोही; [2]एक ईश्वरवादका; [3]आदिभौतिकवादको; [4]साष्टांग प्रणाम कर-करके, सजदेमें मस्तक रगड़-रगड़कर; [5]सम्प्रदायें; [6]नम्र; [7]घमण्डके नशेमें चूर; [8]ऊबे हुए, तंग; [9]विरोधियोंके; [10]महलोंपर; [11]बिजली।

मंजिलेदहरसे ऊँटोंके हुदीख़्वान गए,
अपनी बग़लोंमें दबाए हुए कुरआन गए ॥

ख़न्दाज़न[1] कुफ़्र[2] है, अहसास तुझे है कि नहीं ?
अपनी तौहीदका कुछ पास[3] तुझे है कि नहीं ?

. . . .

कभी हमसे कभी ग़ैरोंसे शनासाई है।
बात कहनेकी नहीं,—तू भी तो हरजाई है ॥

इस शिकवेके सम्बन्धमें प्रोफ़ेसर 'एजाज़' साहब लिखते हैं :—

"इक़बालने निहायत बेबाकीके साथ अपनी मुसीबतो और दुश्वारियोंका गिला ख़ुदासे किया है। बरबादियोंकी तफ़सील बनाई और सबका ज़िम्मेदार भी उसको ठहराया। इस्लामका अहसान भी उसपर जताया और फिर उसकी बेमेहरीका गिला भी किया....इस नये रुजहानने बताया कि जो कुछ कहना हो और जिससे कहना हो, ख़्वाह वोह कोई हो, अगर जोशे सदाक़त और ख़ुलूसनीयत है तो उसकी हशमत व सतवतसे दबकर ख़ामोश नहीं हो जाना चाहिए। इक़बालका शिकवा इस मारकेमें ग़ालिबन पहली नज़्म है। शेरियत और अन्दाज़ेबयानके लिहाज़से भी बेमिसाल है, और ग़ाज़ादियेगुफ़्तारका सग बुनियाद भी।.... शिकवेमें ही उर्दू-शायरीने फ़रियादका पहलू बदलना सीखा और आइन्दा चलकर बड़े-से-बड़े हाकिम व साहिबे जब्रोअख़्तियारसे क़ल्बेबरमले गुफ़्तगू करनेकी सलाहियत पाई*।"

जवाबेशिकवा

यह उक्त शिकवेका जवाब इक़बालने ख़ुदाकी ओरसे ३९ बन्दोंमें

---

[1]नास्तिकता मुस्करा रही है, [2]ख़याल; [3]मेल-मिलाप

*नए अदबी रुजहानात, पृष्ठ ५०–५१।

लिखा है। उसमें ग़ैबसे कहलवाया है कि मुसलमान पहलेसे मुसलमान ही न रहे कि उन्हें कुछ दिया जाय। हाँ, अगर वे चाहें तो सच्चे मुसलमान बनकर ले सकते हैं। इस नज़्ममें ख़ूबी यह है कि इक़बाल जो मुसलमानोंमें त्रुटियाँ देखते हैं और उनको दूर करनेके लिए जो सुधार चाहते हैं, वह स्वयं अपने मुँहसे न कहकर, ईश्वरीय सन्देशके रूपमें पेश करते हैं और वह भी अनोखे ढंगसे। यानी पहले मुसलमानोंकी ओरसे 'शिकवे' में उनकी मुसीबतोंकी शिकायत करते हैं और उन शिकायतोंका जो जवाब ईश्वरकी ओरसे इक़बालको मिलता है वही 'जवाबे-शिकवा' में नज़्म है। यानी प्रत्यक्ष रूपमें हालीकी तरह मुसलमानोंको न तो ग़ैरत दिलाते हैं, न किसी व्याख्यानदाताकी तरह फटकारते हैं, न अकबरकी तरह चुटकी लेते हैं; बल्कि मुसलमानोंकी तरफ़से शिकायत करनेपर जो उन्हें फटकार सुननी पड़ी है, उसे वह सकुचाते हुए ज़ाहिर करते हैं। इक़बालके इस सुधारके नवीन उपायने मन्त्रमुग्ध जादूका काम किया है। वे जो कुछ कहना चाहते थे, कह भी दिया, मगर किस ख़ूबीसे?

'हो जाएँ ख़ून लाखों लेकिन लहू न निकले।'

जवाबेशिकवाके तीन बन्द मुलाहिज़ा हों:—

जिनको आता नहीं दुनियामें कोई फ़न तुम हो,
नहीं जिस क़ौमको परवाए-नशेमन[1] तुम हो।
बिजलियाँ जिसमें हों आसूदा[2] वोह ख़िरमन[3] तुम हो,
बेच खाते हैं जो इसलाफ़के[4] मदफ़न[5] तुम हो॥

हो निको[6] नाम जो क़ब्रोंकी तिजारत करके।
क्या न बेचोगे जो मिल जाएँ सनम पत्थरके?

---

[1]अपने घरकी चिन्ता; [2]सन्तुष्ट; [3]झोंपड़ा; कुटिया; [4]बाप-दादाके; [5]क़ब्रिस्तान; [6]प्रसिद्ध।

मुनफअत[1] एक है इस कौमकी, नुकसान भी एक,
एक ही सबका नबी,[2] दीन भी, ईमान भी एक।

हरमेपाक[3] भी, अल्लाह भी, कुरआन भी एक,
कुछ बड़ी बात थी होते जो मुसलमान भी एक?

फिर्काबन्दी है कहीं और कहीं जातें हैं।
क्या ज़मानेमें पनपनेकी यही बातें हैं?

× × ×

अक्ल है तेरी सिपर[4] इश्क़ है शमशीर तेरी,
मेरे दरवेश![5] खिलाफत है जहाँगीर[6] तेरी।

मासिवा अल्लाहके[7] लिए आग है तकबीर[8] तेरी,
तू मुसलमाँ हो तो तकदीर है तदबीर तेरी॥

की मुहम्मदसे वफा तूने तो हम तेरे हैं।
यह जहाँ चीज़ है क्या, लोहो क़लम तेरे हैं॥

दुआ

या रब! दिलेमुस्लिमको वोह ज़िन्दा तमन्ना दे।
जो क़ल्बको गरमा दे, जो रूहको तड़पा दे॥

भटके हुए आहूको[9] फिर सूएहरम[10] ले चल।
इस शहरके खूगरको[11] फिर वुसअतेसहरा[12] दे॥

---

[1]लाभ, [2]पैग़म्बर, [3]पवित्र मस्जिद, [4]ढाल, [5]भिक्षु (धर्मरत मुसलमानसे तात्पर्य है), [6]विश्वव्यापी, [7]नास्तिकों, [8]अल्लाहु अकबरका इस्लामी नारा, [9]हिरनको, [10]मस्जिदकी ओर, [11]अभ्यस्तको, [12]जङ्गलका विशाल क्षेत्र।

बेख़बर ! तू जौहरेआईनए[1] अय्याम[2] है ।
तू ज़मानेमें ख़ुदाका आख़िरी पैग़ाम है ॥
* * *

तू ही नादां चन्द कलियोंपर क़नाअत[3] कर गया ।
वर्ना गुलशनमें इलाजे तंगिएदामाँ[4] भी है ॥
* * *

आँख जो कुछ देखती है लबपै आ सकता नहीं ।
महवेहैरत[5] हूँ यह दुनिया क्यासे क्या हो जाएगी ॥

फूल

तुझे क्यों फ़िक्र है ऐ गुल ! दिले सदचाक[6] बुलबुलकी ।
तू अपने पैरहनके[7] चाक[8] तो, पहले रफ़ू कर ले ॥
तमन्ना आबरूकी हो, अगर गुलज़ारे हस्तीमें ।
तो काँटोंमें उलझकर ज़िन्दगी करनेकी ख़ू[9] कर ले ॥
सनोबर[10] बाग़में आज़ाद भी है, पावगिल[11] भी है ।
इन्हीं पाबन्दियोंमें हासिल आज़ादीको तू कर ले ॥
नहीं यह शानेख़ुद्दारी[12] चमनसे तोड़कर तुझको ।
कोई दस्तारमें[13] रख ले, कोई जेबेगुलू[14] कर ले ॥

इस दौरके कुछ और नमूने:—

ज़िन्दगी इन्साँकी है मानिन्दे मुर्ग़े ख़ुशनवा ।
शाख़पर बैठा कोई दम चहचहाया, उड़ गया ॥
× × ×

---

[1]-[2]संसार रूपी शीशेकी चमक; [3]सन्तोष; [4]दामनकी संकीर्णता; [5]आश्चर्यान्वित; [6]विदीर्ण; [7]-[8]लिबासके छिद्रोंको; [9]अभ्यास; [10]चीड़का पेड़ [11]मिट्टीमें फँसा हुआ; [12]स्वाभिमानकी प्रतिष्ठा; [13]पगड़ीमें; [14]गलेकी शोभा ।

ख़ाकमें तुझको मुक़द्दरने मिलाया है अगर ।
तू असाउफ़्तादसे[1] पैदा मिसाले दाना कर ॥
इस चमनमें पैरवेबुलबुल[2] हो या तल्मीज़ेगुल[3] ।
या सरापा नाला बन जा या नवा[4] पैदा न कर ॥

इक़बालने निम्न अशआर लिखकर साबित किया है कि आत्मा ही परमात्मा बननेकी क्षमता रखती है और उन लोगोंको सचेत किया है जो परमात्माको ही कर्त्ता-धर्त्ता और भाग्यविधाता समझकर दुखोंके शिकार बने हुए भी कहते रहते हैं —

शिकवा न बेशोकमका, तक़दीरका गिला है ।
राज़ी हैं हम उसीमें, जिसमें तेरी रज़ा है ॥

इक़बाल इस अन्धविश्वास और अकर्मण्यताको दूर करनेके लिए फ़र्माते हैं —

आश्ना[5] अपनी हक़ीक़तसे हो ऐ दहक़ाँ[6] ज़रा ।
दाना तू, खेती भी तू, बाराँ भी तू, हासिल भी तू ॥
आह किसकी जुस्तजू आवारा रखती है तुझे ।
राह तू, रहरव[7] भी तू, रहबर[8] भी तू, मंज़िल भी तू ॥
काँपता है दिल तेरा अन्देशए तूफ़ाँसे क्या ?
नाख़ुदा[9] तू, बहर[10] तू, कश्ती भी तू, साहिल[11] भी तू ॥
वाए नादानी ! कि तू मोहताजेसाक़ी हो गया ।
मय भी तू, मीना भी तू, साक़ी भी तू, महफ़िल भी तू ॥

---

[1]बिन जाते-बोए खेतसे, [2]बुलबुलका अनुयायी, [3]फूलका शिष्य; [4]स्वर, आवाज़ [5]परिचित, [6]किसान, [7]यात्री, [8]मार्ग-दर्शक, [9]मल्लाह, [10]समुन्दर, दरिया, [11]किनारा ।

पेग़म्बर ! तू जौहरेआईनए[1] अय्याम[2] है।
तू ज़मानेमें ख़ुदाका आख़िरी पैग़ाम है॥

* * *

तू ही नादाँ चन्द कलियोंपर क़नाअ़त[3] कर गया।
वर्ना गुलशनमें इलाजे तंगिएदामाँ[4] भी है॥

* * *

आँख जो कुछ देखती है लबपै आ सकता नहीं।
महवेहैरत[5] हूँ यह दुनिया क्यासे क्या हो जाएगी॥

फूल

तुझे क्यों फ़िक्र है ऐ गुल ! दिले सदचाक[6] बुलबुलकी।
तू अपने पैरहनके[7] चाक[8] तो, पहले रफ़ू कर ले॥
तमन्ना आबरूकी हो, अगर गुलज़ारे हस्तीमें।
तो काँटोंमें उलझकर ज़िन्दगी करनेकी ख़ू[9] कर ले॥
सनोबर[10] बाग़में आज़ाद भी है, पाबगिल[11] भी है।
इन्हीं पाबन्दियोंमें हासिल आज़ादीको तू कर ले॥
नहीं यह शानेख़ुद्दारी[12] चमनसे तोड़कर तुझको।
कोई दस्तारमें[13] रख ले, कोई जेबेगुलू[14] कर ले॥

इस दौरके कुछ और नमूने:—

ज़िन्दगी इन्साँकी है मानिन्दे मुर्ग़े ख़ुशनवा।
शाख़पर बैठा कोई दम चहचहाया, उड़ गया॥

× × ×

---

[1]—[2]संसार रूपी शीशेकी चमक; [3]सन्तोष; [4]दामनकी संकीर्णता; [5]आश्चर्यान्वित; [6]विदीर्ण; [7]—[8]लिबासके छिद्रोंको; [9]अभ्यास; [10]चीड़का पेड़ [11]मिट्टीमें फँसा हुआ; [12]स्वाभिमानकी प्रतिष्ठा; [13]पगड़ीमें; [14]गलेकी शोभा।

तेरा ऐ फ़ंस ! क्योंकर हो गया सोज़ेदरूँ[1] ठण्डा ?
कि लैलामें तो हैं अब तक वही अन्दाज़े लैलाई ॥

× × ×

एक भी पत्ती अगर कम हो तो वोह गुल ही नहीं।
जो ख़िज़ाँ नादीदह[2] बुलबुल हो, वोह बुलबुल ही नहीं ॥

× × ×

दीदएबीनामें[3] दाग़ग़म चिराग़े सीना है।
रूहको सामानेज़ीनत[4] आहका आईना है ॥

× × ×

हादसातेग़मसे[5] है इन्साँकी फ़ितरतको[6] कमाल[7]।
ग़ाज़ह[8] है आईनएदिलके लिए गर्देमलाल[9] ॥
ग़म जवानीको जगा देता है लुत्फ़ेख़्वाबसे।
साज़ यह बेदार[10] होता है इसी मिज़राबसे[11] ॥

× × ×

हैं जज़्बेबाहमीसे कायम निज़ाम सारे।
पोशीदा है यह नुक़्ता तारोंकी ज़िन्दगीमें ॥

× × ×

हो सदाक़्तके[13] लिए जिस दिलमें मरनेकी तड़प।
पहले अपने पैकरेख़ाकीमें[14] जाँ पैदा करे ॥

× × ×

---

[1]इश्ककी आग [2]पतझड़से अनभिज्ञ, [3]देखनेवाली आंखमें, [4]शृंगारका साधन, [5]रंज और दुखकी घटनाओंसे, [6]स्वभाव, प्रकृति, [7]पूर्णता, [8]पाउडर, [9]रंजो ग़मकी गर्द, [10]जागृत, [11]सितार बजानेके लिए एक यन्त्र जो उँगलीमें पहना जाता है, [12]पारस्परिक मेल मिलापसे सगठनसे [13]सच्चाईके, [14]मिट्टीसे बने हुए शरीरमें।

यह घड़ी महशरकी[1] है तू अरसएमहशरमें[2] है।
पेश कर ग़ाफ़िल अमल कोई अगर दफ़्तरमें है॥

× × ×

इस शरांबेरंगोबूको गुलसिताँ समझा है तू।
आह, ऐ नादाँ क़फ़सको आशियाँ समझा है तू॥

× × ×

अपने सहरामें[3] बहुत आहू[4] अभी पोशीदा[5] हैं।
बिजलियाँ बरसे हुए बादलमें भी ख़्वाबीदा[5] हैं॥

× × ×

सबक़ फिर पढ़ सदाक़तका, अदालतका[6], शुजाअतका[7]।
लिया जाएगा तुझसे काम दुनियाकी अमामतका[8]॥

× × ×

उक़ाबी[9] शानसे झपटे थे जो बेबालोपर निकले।
सितारे शामको ख़ूनेशफ़क़में[10] डूबकर निकले॥
हुए मदफ़ूनेदरिया[11] ज़ेरे, दरिया तैरनेवाले।
तमाँचे मौजके खाते थे जो, बनकर गुहर[12] निकले॥
ग़ुबारे[13] रहगुज़र[14] हैं कीमियापर[15] नाज़ था जिनको।
जबीनें[16] ख़ाकपर रखते थे जो अक्सीरगर निकले॥
हमारा नर्म[17] रौ[18] क़ासिद पयामेज़िन्दगी लाया।
ख़बर देती थीं जिनको बिजलियाँ वोह बेख़बर निकले॥

---

[1]प्रलयकी; [2]वह स्थान जहाँ किये हुए कर्मोंका न्याय होगा; [3]जङ्गलमें; [4]हिरन; [5]सुप्त; [6]न्याय करनेका; [7]सूर-वीरताका; [8]नेतृत्वका; [9]गिद्धपक्षी; [10]सूर्यास्त-समयकी लालिमामें; [11]दरियामें दफ़्न; [12]मोती; [13]धूल; [14]रास्तेकी; [15]जड़ी-बूटियोंसे सोना बनानेपर; [16]मस्तक; [17-18]सुस्त चलनेवाला।

जहाँमें अहलेईमाँ¹ सूरतेख़ुरशीद² जीते हैं।
इधर डूबे उधर निकले, उधर डूबे इधर निकले॥

× × ×

कभी ऐ हक़ीक़तेमुन्तज़िर³ नज़र आ लिबासेमिजाज़में⁴।
कि हज़ारों सजदे तड़प रहे हैं, मेरी जबीनेनियाज़में⁵॥
जो मैं सरबसजदा⁶ हुआ कभी, तो ज़मींसे आने लगी सदा।
"तेरा दिल तो है सनमआशना, तुझे क्या मिलेगा नमाज़में?"

की तर्क तगोदौ क़तरेने, तो आबरुएगोहर⁷ भी मिली।
आवारगिए फ़ितरत भी गई, और कश्मकशे दरिया भी गई॥

हास्य-रस

इक़बालने मज़ाहिया रङ्गमें भी तबाआज़माई की है, परन्तु इस रंगमें वे अकबरको न पा सके। यह उनकी तबियतके अनुकूल भी न था। भला जिन हृदयमें शोले दहकते हों वहाँ हास्यका क्या गुज़र? फिर भी समय-समयपर मुँहका ज़ायक़ा बदलनेके लिए तफ़रीहन जो फ़र्माया है उसके चन्द अशआर मुलाहिज़ा फ़र्माइए—

वाइज़ साहब भी तो परदेके कोई हामी नहीं।
मुफ़्तमें कॉलिजके लड़के उनसे बदज़न हो गए॥
वाज़में फ़र्मा दिया कल आपने यह साफ़-साफ़—
"पर्दा आख़िर किससे हो जब मर्द ही ज़न हो गए॥"

× × ×

---

¹वस्तु-तत्त्वके ज्ञाता ²सूर्यकी भाँति, ³ईश्वरीय प्रेमका प्रकाशक ⁴सांसारिक प्रेमीके भेषमें ⁵प्रेमी-मस्तिष्कमें, ⁶ईश्वरके सम्मुख नतमस्तक, ⁷मोतीकी प्रतिष्ठा।

यह कोई दिनकी बात है ऐ मर्दे होशमन्द !
ग़ैरत न तुझमें होगी न ज़न ओट चाहेगी ॥
आता है अब वह दौर कि औलादके एवज़ ।
कौंसिलकी मेम्बरीके लिए वोट चाहेगी ॥

× × ×

बनते हैं हिन्दके जो ख़रीदार ही फ़क़त ।
आग़ा भी लेके आते हैं अपने वतनसे हींग ॥

× × ×

इन्तिहा भी इसकी है, आख़िर ख़रीदें कब तलक ?
छतरियाँ, रूमाल, मफ़लर, पैरहन जापानसे ॥
अपनी ग़फ़लतकी यही हालत अगर क़ायम रही ।
आएँगे ग़स्साल काबुलसे, कफ़न जापानसे ॥

× × ×

इस दौरसे सब मिट जाएँगे, हाँ बाक़ी वह रह जाएगा ।
जो क़ायम अपनी राहपे है, और पक्का अपनी हठका है ॥
ऐ शाख़े बिरहमन ! सुनते हो, क्या अहले बसीरत कहते हैं ?
गर्दूने कितनी बलन्दीसे, इन क़ौमोंको दे पटका है ॥
या बाहम प्यारके जल्से थे, दस्तूरे मुहब्बत क़ायम थे ।
या बहसमें उर्दू-हिन्दी है, या क़ुर्बानी या झटका है ॥

क़ानूने वक़्फ़के लिए लड़ते थे शेखजी ।
पूछो तो वक़्फ़के लिए है जायदाद भी ?

जान जाए हाथसे जाए न सत ।
है यही इक बात हर मजहबका तत ॥

चट्टे-बट्टे एक ही थैलीके हैं "
साहूकारी, बिगवादारी सल्तनत ॥

उठाकर फेंक दो बाहर गलीमें।
नई तहज़ीबके अण्डे हैं गन्दे ॥

इलेक्शन, मेम्बरी, कौन्सिल, सदारत।
बनाए ख़ूब आज़ादीने फन्दे ॥

मस्जिद तो बना दी शब भरमें, ईमांकी हरारतवालों।
मन अपना पुराना पापी है, बरसोंमें नमाज़ी बन न सका।
तर आँखें तो हो जाती हैं, पर क्या लज़्ज़त इस रोनेमें।
जब ख़ूनेजिगरकी आमेज़शसे, अश्क पियाज़ी बन न सका ॥
'इक़बाल' बड़ा उपदेशक है, मन बातोंमें मोह लेता है।
गुफ़्तारका यह ग़ाज़ी तो बना, किरदारका ग़ाज़ी बन न सका ॥

१५ अगस्त १९४४

इक़बाल' की कविताओंके उर्दू-फ़ारसीमें एक दर्जनसे अधिक संकलन प्रकाशित हो चुके हैं। हमने उनकी सर्वप्रथम कृति केवल 'बाँगेदरा'-से ही उक्त कलामका संकलन किया था। इसको देखकर हिन्दी-उर्दू-साहित्यकी गतिविधिसे अच्छी तरह परिचित हमारे अनन्य मित्र श्री सुमतप्रसाद जैनने सम्मति दी कि इकबालकी 'बालेजिबरील' का उद्धरण दिये बिना इक़बालका परिचय अधूरा रह जायगा। अतः उनकी सम्मतिसे बालेजिबरीलका भी कुछ नमूना दिया जा रहा है। जो इक़बाल, विलायत जानेसे पूर्व देशभक्त, प्रेम-सन्देश-वाहकके रूपमें जनताके समक्ष आते हैं और मादक स्वरमें गाकर लोगोंकी हृदय-तंत्रीको झंकृत कर देते हैं:—

हर दर्दमन्द दिलको रोना मेरा रुला दे।
बेहोश जो पड़े हैं शायद उन्हें जगा दे॥

सदमा आ जाये हवासे गुलकी पत्तीको अगर।
अश्क बनकर मेरी आँखोंसे टपक जाए असर॥

वस्लके असबाब पैदा हों तेरी तहरीरसे।
देख कोई दिल न दुख जाए तेरी तक़रीरसे॥

वतनकी फ़िक्र कर नादाँ! मुसीबत आनेवाली है।
तेरी बरबादियोंके मशवरे हैं आस्मानोंमें॥

न समझोगे तो मिट जाओगे ऐ हिन्दोस्ताँवालो!
तुम्हारी दास्ताँ तक भी न होगी दास्तानोंमें॥

मुहब्बतसे ही पाई है शिफ़ा बीमार क़ौमोंने।
किया है अपने बख़्तेख़ुफ़्ताको बेदार क़ौमोंने॥

सारे जहाँसे अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा ।
हम बुलबुलें हैं इसकी यह गुलसिताँ हमारा ॥
मज़हब नहीं सिखाता आपसमें बैर रखना ।
हिन्दी हैं हम, वतन है हिन्दोस्ताँ हमारा ॥
शक्ती भी, शान्ती भी भगतोंके गीतमें है ।
धरतीके बासियोंकी मुक्ती पिरीतमें है ॥

वही इकबाल' केवल तीन वर्ष विलायत रह आनेके बाद देशोत्थान, मानव प्रेम और मनुष्य-सेवाके मादक गीत गाते-गाते मुस्लिम साम्राज्य-वाद, नवलीग हिजाज और सम्प्रदायवादके विषैले तीर छोड़ने लगते हैं —

या रब ! दिलेमुस्लिमको वह ज़िन्दा तमन्ना दे ।
जो क़ल्बको गरमा दे, जो रूहको तड़पा दे ॥

× × ×

हमनशीं ! मुस्लिम हूँ मैं तौहीदका हामिल हूँ मैं ।

× × ×

तुझको मालूम है लेता था कोई नाम तेरा ?
कुव्वतेबाज़ूए मुस्लिमने किया काम तेरा ॥
पर तेरे नामपर तलवार उठाई किसने ?
बात जो बिगड़ी हुई थी, वह बनाई किसने ?

× × ×

चीनोअरब हमारा, हिन्दोस्ताँ हमारा ।
मुस्लिम हैं हम, वतन है सारा जहाँ हमारा ॥
तेग़ोंके सायेमें हम पलकर बड़े हुए हैं ।
ख़ंजर हिलालका है क़ौमी निशाँ हमारा ॥

केवल तीन वर्ष गुहब्बतेफ़िरगमें रहकर शायरोंने गुलशन हिन्दोस्तां कुछ-से-कुछ बन बैठा। बक़ौल अकबर:—

मेरे सैयादकी तालीमकी है धूम गुलशनमें।
वहाँ जो आज फँसता है, वोह कल सैयाद होता है॥

इक़बाल-जैसे परिस्कृत मस्तिष्क और विशाल हृदयवाले राष्ट्रकविको यकायक सम्प्रदायवादके दलदलमें फँसते देख लोग कराह उठे:—

हिन्दी होनेपर नाज़ जिसे कलतक था, हिजाज़ी बन बैठा।
अपनी महफ़िलका रिन्द पुराना, आज नमाज़ी बन बैठा॥
महफ़िलमें छुपा है क़ैसेहज़ीं, दीवाना कोई सहरामें नहीं।
पैग़ामेजूनूं जो लाता था, इक़बाल वोह अब दुनियामें नहीं॥
ऐ मुतरिब! तेरे तरानोंमें अगली-सी अब वोह बात नहीं।
वोह ताज़गीयेतख़यील नहीं, बेसाख़्तगीयेजज़्बात नहीं॥

—आनन्दनारायण मुल्ला

इक़बाल सम्प्रदायवादके ब्यूहमें बैठकर कभी तो मुसलमानोंको बाज़ पक्षीकी तरह आक्रमणकारी होनेका मंत्र देते हैं, कभी तलवार उठानेका आदेश देते हैं और कभी ग़ैर मुस्लिमोंपर टूट पड़नेका फ़तवा देते हैं। जिन्हें सुनकर मुस्लिम जनता रणोन्मत्त हो उठती है।

पाकिस्तानका अंकुर विलायत-प्रवासमें सबसे प्रथम इकबालके ही मस्तिष्कमें अंकुरित हुआ। जिन्नाने जब इक़बालके मुँहसे पाकिस्तानी-नारा सुना तो खिलखिलाकर हँस पड़े और फ़र्माया कि इक़बाल शायर हैं, इसलिए वे ख़याली दुनियामें रहते हैं और आस्मानमें उड़ान लेते हैं; परन्तु उन्हें क्या पता था कि एक दिन इक़बालका जादू स्वयं उनके सर चढ़कर बोलेगा।

इक़बालके कलामका मुस्लिम जनता क़ुरानकी तरह तलावत करती है। इक़बालने जो रूह फूँकी और सम्प्रदायवादका विष वमन किया है, उसके आगे जिन्नाकी हज़ार स्पीचें मान्द हैं।

यहाँ हम बानगीके तौरपर कुछ उस तरहका कलाम दे रहे हैं जिससे गैर मुस्लिम भी लाभ उठा सकें। फिर भी सम्प्रदायवादकी झाँकी यत्र-तत्र मिलेगी।

तूने यह क्या गजब किया ? मुझको ही फ़ाश[1] कर दिया।
मैं ही तो एक राज़[2] था सीनयेकायनातमें[3] ॥

× × ×

तेरे शीशेमें मय[4] बाकी नहीं है ?
बता, क्या तू मेरा साकी नहीं है ?
समन्दरसे मिले प्यासेको शबनम[5] !
बख़ीली[6] है, यह रज्जाकी[7] नहीं है !

× × ×

इसी कौकबकी[8] ताबानीसे है तेरा जहाँ रोशन।
जवाले[9] आदमे[10] ख़ाकी[11] ज़ियाँ[12] तेरा है या मेरा ?

× × ×

बागे बहिश्तसे मुझे हुक्मे सफ़र दिया था क्यों ?
कारेजहाँदराज़ है अब मेरा इन्तज़ार कर ॥
रोज़हिसाब जब मेरा पेश हो दफ़्तरेअमल।
आप भी शर्मसार हो मुझको भी शर्मसार कर !

× × ×

---

[1] प्रकट [2] भेद, [3] संसारके हृदयमें, [4] शराब, [5] ओस [6] कंजूसी [7] उदारहृदयता, दानशीलता, [8] चमकदार तारेकी [9, 10, 11] खाकके पुतलेरूपी मनुष्यका पतन, [12] हानि, नुकसान।

तेरी दुनिया जहानेमुर्ग़ोमाही[1],
मेरी दुनिया फ़ुग़ानेसुबहगाही[2],
तेरी दुनियामें मैं महकूमो[3]मजबूर[4]
मेरी दुनियामें तेरी पादशाही[5]!

× × ×

मतायेबेबहा[6] है दर्दोसोज़े[7] आर्ज़ूमन्दी[8]।
मुक़ामे बन्दगी[9] देकर न लूं शाने ख़ुदावन्दी[10]॥
तेरे आज़ादबन्दोंकी न यह दुनिया न वह दुनिया।
यहाँ मरनेकी पाबन्दी वहाँ जीनेकी पाबन्दी॥
गुज़र औक़ात कर लेता है यह कोहोबयाबाँमें[11]।
कि शाहींके[12] लिए ज़िल्लत है कारेआशियाँबन्दी[13]॥

× × ×

तेरी बन्दापरवरीसे[14] मेरे दिन गुज़र रहे हैं।
न गिला है दोस्तोंका न शिकायतेज़माना॥

ख़िरद[15] वाक़िफ़ नहीं है नेकोबदसे,
बढ़ी जाती है ज़ालिम अपनी हदसे।
ख़ुदा जाने मुझे क्या हो गया है,
ख़िरद बेज़ार दिलसे, दिल ख़िरदसे॥

---

[1]पक्षियों और मछलियोंकी दुनिया; [2]प्रातःकालीन रुदन; [3]आधीन; [4]असमर्थ; [5]बादशाही; [6]अनमोल धन; [7]दर्द और तपिस; [8]अभिलाषा; [9]उपासनाका अधिकार; [10]ईश्वरत्वका गौरव; [11]पर्वतों-वनोंमें; [12]बाज़ पक्षीके; [13]घोंसला बनानेकी चिन्ता; [14]दीन-बन्धुत्वसे; [15]अक़्ल।

इश्क़की एक जस्तने[1] तय कर दिया किस्सा तमाम।
इस ज़मीनोआस्मांको बेकरां[2] समझा था मैं॥

× × ×

ख़ुदाई अहतमामे[3] ख़ुश्कोतर[4] है,
ख़ुदावन्दा[5]! ख़ुदाई दर्देसर है।
वलेकिन बन्दगी! इस्तग़फ़ार अल्लाह,
यह दर्देसर नहीं दर्देजिगर है॥

× × ×

यही आदम है सुलतां बहरोबरका[6]!
कहूँ क्या माजरा इस बेबसरका[7]।
न ख़ुदबीं[8] ना ख़ुदाबीं[9] ना जहांबीं[10],
यही शहकार[11] है तेरे हुनरका?

× × ×

अपने भी ख़फ़ा मुझसे हैं बेगाने भी नाख़ुश।
मैं ज़हरेहलालको कभी कह न सका क़न्द॥
हर हालमें मेरा दिले बेक़ैद है ख़ुर्रम[12]।
क्या छीनेगा ग़ुंचेसे कोई ज़ौक़े शकरख़न्द[13]!

× × ×

---

[1]छलांगने [2]असीम [3]जल तथा स्थलका व्यवस्था, [4]बादशाह [5]जलथलका [6]दृष्टि हीनका [7]स्वयंको जाननेवाला, [8]ईश्वरको पहचाननेवाला [9]संसारको समझनेवाला [10]सर्वश्रेष्ठ कृति [11]प्रसन्न [12]मुस्कराहटका शौक़।

तेरा इमाम[1] वेहुजूर[2] तेरी नमाज वेसरूर[3]।
ऐसी नमाजसे गुजर ऐसे इमामसे गुजर[4] ॥

× × ×

अपने मनमें डूबकर पाजा सुराग़ेजिन्दगी।
तू अगर मेरा नहीं बनता न बन, अपना तो बन ॥
शिकायत है मुझे या रब! खुदावन्दानेमकतबसे[5]।
सबक़ शाहीं[6] बच्चोंको दे रहे हैं खाकबाजीका[7]!

× × ×

दिलकी आजादी शहंशाही, शिकम[8] सामानेमौत।
फ़ैसला तेरा तेरे हाथोंमें है दिल या शिकम?
ऐ मुसलमाँ! अपने दिलसे पूछ, मुल्लासे न पूछ।
होगया अल्लाहके बन्दोंसे क्यों खाली हरम[9]?

× × ×

वह आँख कि है सुरमयेअफ़रंगसे[10] रोशन।
पुरकार[11] सखुनसाज[12] है! नमनाक नहीं है ॥
बिजली हूँ, नजर कोहोबयाबाँ[13] पै है मेरी।
मेरे लिए शायाँ[14] खसोखाशाक[15] नहीं है ॥

---

[1]नमाज पढानेवाला; [2]ईश्वर-आस्थाविहीन; [3]श्रद्धारहित; [4]भाग, बेकार है; [5]शिक्षकोंसे; [6]बाजपक्षी; [7]जमीनपर रहनेका; [8]पेटकी चिन्ता; [9]मस्जिद; [10]अंग्रेजियतके सुरमेसे; [11]चालाक; [12]वक्तृत्वसे ओतप्रोत; [13]पर्वतों-जंगलों; [14]गौरव योग्य; [15]घासफूसका घोंसला।

आलम हैं फ़क्त मोमनेजाँबाज़की[1] मीरास[2]।
मोमिन नहीं जो साहबेलौलाक[3] नहीं है!

×   ×   ×

हुजूम क्यों है ज़ियादा शराबख़ानेमें।
फ़कत यह बात कि पीरेमुग़ाँ[4] है मर्देखलीक़[5] ॥

अगर हो इश्क़, तो है कुफ़्र भी मुसलमानी।
न हो तो मर्देमुसलमाँ भी काफ़िरो ज़न्दीक़[6] ॥

×   ×   ×

काफिर है मुसलमाँ तो न शाही न फ़कीरी।
मोमिन है तो करता है फ़कीरीमें भी शाही!

काफिर है तो शमशीरपै करता है भरोसा।
मोमिन है तो बेतेग़ भी लड़ता है सिपाही!

काफिर है तो है ताबएतक़दीर[7] मुसलमाँ।
मोमिन है तो वह आप है तक़दीरेइलाही[8] ॥

×   ×   ×

ख़ुदावन्दा! यह तेरे सादादिल बन्दे किधर जाएँ?
कि दरवेशी[9] भी ऐय्यारी है सुलतानी[10] भी ऐय्यारी ॥

---

[1]वीर मुसलमानकी जागीर, [2]समस्त विश्वको अपना समझनेवाला, [3]शराबख़ानेका मालिक, [4]मिलनसार, [5]नास्तिक और अनेक ईश्वरवादी, [6]भाग्य आधीन, [7]ईश्वरीय भाग्य, [8]साधुता, [9]बादशाही।

मुझे तहज़ीबेहाज़िरने अता[1] की है वह आज़ादी।
कि ज़ाहिरमें तो आज़ादी है बातिनमें[2] गिरफ़्तारी॥

× × ×

हुई न आम जहाँमें कभी हकूमतेइश्क़।
सबब यह है कि मुहब्बत ज़मानासाज़ नहीं॥

× × ×

कहीं सरमायए महफ़िल थी मेरी गर्मगुफ़्तारी[3]।
कहीं सबको परेशाँ कर गई मेरी कमआमेज़ी[4]॥

जलालेपादशाही[5] हो कि जमहूरी[6] तमाशा हो।
जुदा हो दीं सियासतसे तो रह जाती है चंगेज़ी॥

× × ×

फ़ारिग़ तो न बैठेगा, महशरमें जुनूँ अपना।
या अपना गिरेबाँ चाक या दामनेयज़दाँ[7] चाक॥

× × ×

हर गुहरने[8] सदफ़को[9] तोड़ दिया।
तू ही आमादयेज़हूर[10] नहीं॥

× × ×

ख़ुदी वह बहर[11] है जिसका कोई किनारा नहीं।
तू आबजू[12] उसे समझा अगर तो चारा नहीं॥

---

[1]दान दी है; [2]वास्तवमें; [3]वाक्पटुता; [4]कमबोलना; [5]एकतंत्रशासन; [6]प्रजातंत्र; [7]ईश्वरका परिधान; [8]मोतीने; [9]सीपको; [10]प्रकाशमें आनेको प्रस्तुत; [11]दरिया; [12]नहर।

ग़जब है एमकरमम बुलोल है फ़ितरत ।
कि तालनाबम[1] आतिश तो है शरारा[2] नहीं ॥

× × ×

हर इक मुकामसे आगे मकाम है तेरा ।
हयात जौक़सफ़रके सिवा कुछ और नहीं ॥

× × ×

किसे नहीं है तमन्नायसरवरी लेकिन ।
खुदीकी मौत हो जिसमें यह सरवरी क्या है?

× × ×

मैं तुझको बताता हूं तक़दीरउमम क्या है ?
शमशीरोसनाँ अव्वल ताऊसो रुबाब आख़िर ॥
मयख़ानय यूरुपके दस्तूर निराले हैं ।
लाते हैं सरूर अव्वल देते हैं शराब आख़िर ॥

× × ×

यह बंदगी ख़ुदाई वह बंदगी गदाई ।
या बंदयख़ुदा बन या बंदयज़माना ॥

× × ×

---

[1]कृपाक हीन हुए भी कजन अग्नि निमल लालम [2]अग्नि चिनगारी [3]ज़िंदगी यात्राक शौक़ नेतृत्वकी लालसा अपने अस्तित्वकी नमनमानाकी भाग्य [5]तलवार और भाला राग्रीमिगासन वाद्ययन्त्र [6]फ़कीरी ।

ग़ाफ़िल न हो ख़ुदीसे कर अपनी पासबानी[1]।
शायद किसी हरमका[2] तू भी है आस्तानी[3]॥

× × ×

ख़िरदमन्दोंसे[4] क्या पूछूँ कि मेरी इब्तदा[5] क्या है ?
कि मैं इस फ़िक्रमें रहता हूँ मेरी इन्तहा[6] क्या है ?
ख़ुदीको कर बुलन्द इतना कि हर तक़दीरसे पहले।
ख़ुदा बन्देसे ख़ुद पूछे बता तेरी रज़ा[7] क्या है ?
नवायेसुबहगाहीने[8] जिगर ख़ूँ कर दिया मेरा।
ख़ुदाया जिस ख़ताकी यह सज़ा है वह ख़ता क्या है ?

× × ×

ऐ तायरेलाहूती[9] ! उस रिज़्क़से[10] मौत अच्छी।
जिस रिज़्क़से आती हो परवाज़में[11] कोताही[12]॥

× × ×

यह मिसरा लिख दिया किस शोख़ने महराबेमस्जिदपर—
"यह नादाँ गिर गये सिजदोंमें जब वक़्ते क़याम आया"॥
चल ऐ मेरी ग़रीबीका तमाशा देखनेवाले।
वह महफ़िल उठ गई जिसदम तो मुझतक दौरेजाम आया॥

× × ×

---

[1]चौकसी; [2]मसजिदका; [3]रहनेवाला; [4]अक़्लमन्दोंसे; [5]शुरुआत; [6]आख़ीर; [7]इच्छा; [8]प्रातः कालीन संगीतने; [9]ईश्वरत्वकी क्षमता रखनेवाले पक्षी! [10]जीविकासे; [11]उड़ानमें, विकासमें; [12]कमी।

मुझे फ़ितरत, नवापर[1] पै-ब-पै[2] मजबूर करती है।
अभी महफ़िलमें है शायद कोई दर्दआशना बाक़ी ॥

× × ×

यक़ीं पैदा कर ऐ नादाँ! यक़ींसे हाथ आती है।
वह दरवेशी कि जिसके सामने झुकती है फ़गफ़ूरी[3]॥

× × ×

मीरोंमें, फ़क़ीरोंमें, शाहोंमें, गुलामोंमें।
कुछ काम नहीं बनता बेजुरअते रिन्दाना ॥

× × ×

जिस खेतसे दहक़ाँको[4] मयस्सर नहीं रोज़ी।
उस खेतके हर ख़ोशयेगन्दुमको[5] जला दो ॥

उक़ाबी[6] रूह जब बेदार होती है जवानोंमें।
नज़र आती है उनको अपनी मंज़िल आस्मानोंमें ॥

नहीं तेरा नशेमन क़सरेसुलतानीके गुम्बदपर।
तू शाहीं है! बसेराकर पहाड़ोंकी चटानोंमें ॥

× × ×

है शबाब अपने लहूकी आगमें जलनेका नाम।
सख़्तकोशीसे[7] है तलख़ेज़िन्दगानी[8] अंगबीं[9] ॥

---

[1]गायन, [?]मुँह खोलनेपर [2]हर वक़्त बराबर, [3]चीनके एक प्रसिद्ध बादशाहकी सल्तनत तात्पर्य है राजकीय सत्तासे [4]किसानको, [5]अनाजको, [6]गिद्ध पक्षी, [7]कठिन परिश्रम, [8]जीवनकी कड़वाहट, [9]शहद (मधुर हो जाती है)।

जो कबूतरपर झपटनेमें मज़ा है ऐ पिसर !
वह मज़ा शायद कबूतरके लहूमें भी नहीं ॥

× × ×

उस मौजके मातममें रोती है भँवरकी आँख ।
दरियासे उठी लेकिन साहिलसे न टकराई ॥

× × ×

कहते हैं, अरबी जबानका मशहूर शायर अब्दुल्ला मुअर्री निरामिष भोजी था। उसके एक मित्रने छकानेके ख़यालसे उसे भुना हुआ तीतर भेजा। मृतक तीतरको देखकर मुअर्रीने उससे पूछा कि तुझे मालूम है कि किस दोषके कारण तेरी यह दुरवस्था हुई है। उन्हीं भावोंको इक़बालने इस तरह क़लमबन्द किया है:—

अफ़सोस सद अफ़सोस कि शाहीं[1] न बना तू।
देखे न तेरी आँखने फ़ितरतके इशारे ॥

तक़दीरके क़ाजीका यह फ़तवा है अजलसे—
"है जुर्मे जईफ़ीकी सजा मर्गेमफ़ाजात[2] ॥"

× × ×

हमामो[3] कबूतरका भूखा नहीं मैं।
कि है जिन्दगी बाजकी जाहिदाना[4] ॥

झपटना, पलटना, पलटकर झपटना।
लहू गर्म रखनेका है इक बहाना ॥

---

[1]बाज पक्षी; [2]अकालमृत्यु; [3]कबूतर, निरीह पक्षी; [4]परहेजगारी।

यह पूरब यह पच्छिम, चकोरोंकी दुनिया।
मेरा नीलगूँ आस्माँ बेकिनारा[1]॥

परिन्दोंकी दुनियाका दरवेश[2] हूँ मैं।
कि शाहीं बनाता नहीं आशियाना॥

इकबालने भारतीयोंको विशेषकर मुसलमानोंको जागृत करनेके लिए जो शेर कहे हैं वे मन्त्रोंकी तरह प्रभावशाली और मूल्यवान हैं। १९३८में आपकी मृत्यु होनेपर भारतमें विशेषकर उर्दू-संसारमें गमका कोहराम मच गया। यूनिवर्सिटी, कालेज, हाईस्कूल बन्द हुए। उर्दू-पत्रोंने विशेषाङ्क निकाले। आपकी शायरीपर हज़ारों तनक़ीदात्मक लेख लिखे गए और लिखे जा रहे हैं। इक़बाल मिर्ज़ा दाग़के शिष्य थे और दाग़को भी इस शिष्यपर बेहद नाज़ था।

६ मार्च १९४७

---

१ अनन्त। २ साधु।

१३

पण्डित व्रजनारायण 'चकवस्त'

[सन् १८८२ से १९२६ तक]

आवश्यकता आविष्कारकी जननी है । समयकी आवश्यकतानुसार अनेक परिवर्त्तन होते रहते हैं । जीती हुई बाज़ी हारकर १८५७ के विद्रोहके बाद समूचा भारत सन्तप्त और भयभीत हो उठा । पादरियोंके नित्य नये प्रचार, अङ्गरेज़ी सभ्यता और शिक्षाके प्रसारको वेगसे बढ़ता हुआ देखकर लोगोंको भय होने लगा कि राज्य गया तो गया, कहीं प्राणोंसे भी अधिक प्रिय धर्म, संस्कृति और भाषाका भी सफ़ाया न कर दिया जाय । इसी आशङ्कासे घबराकर हिन्दू, जैन, सिक्ख, मुसलमान, आदि हर सम्प्रदायमें इनकी रक्षाके लिए आन्दोलन उठ खड़ा हुआ । सिंह जितना ही अधिक आलसी होता है , गोली लगनेपर उतना ही अधिक विक्षुब्ध भी हो उठता है । दरियामें पर्वत-चट्टान गिरनेसे जितना अधिक गहरा गड्ढा होता है, उतने ही अधिक वेगसे चारों ओरका पानी दौड़कर उस क्षतिको पूरा करता है । भारतके हर क़ौम और हर मजहबके लोग मर्दानावार खड़े हो गए और बड़ी लगनके साथ अपने-अपने दायरेमें व्याख्यानों, लेखों, और कविताओं द्वारा धर्मपर मर मिटनेका प्रचार करने लगे । स्कूल और कॉलेजके मुक़ाबिलेमें विद्यालय और अरबी मदर्से भी खोले गए । अङ्गरेज़ी सभ्यता और फ़ैशनसे दूर रहनेके लिए भी काफ़ी कहा गया । चूँकि घरकी फूटके कारण ही यह दुर्दिन देखने पड़े । इसलिए हिन्दू-मुस्लिम एकताकी भी आवश्यकता महसूस हुई । अकबर इलाहाबादीकी शायरीमें दीन(धर्म)पर अमल करनेकी ताकीद,

कहे हुए मर्सिये इस अम्रकी शहादतके लिए बहुत काफ़ी हैं। जब किसी ख़ास रहनुमाका इन्तक़ाल होता था तो उसका मातम निहायत जोशके साथ अपनी शायरीमें करते थे।..इस सिलसिलेमें चकबस्त आप अपनी मिसाल हैं। उर्दू-शायरीमें इस लिहाज़से उनका कोई हरीफ़ नज़र नहीं आता'।"

डॉ० सर तेजबहादुर सप्रू लिखते हैं:—

"..........I have known the poet intimately for the last twenty-five years and admired him for his high ideals in literature and life, and have enjoyed some of the best moments of my life in reading his poetry..........If Iqbal is more spiritual and mystical than Chakbast, that is probably due to his Philosophy of life—on the other hand, if Chakbast is more elegant in form, and shows greater pathos, if he appeals more to human feeling than to intellect, it is because of his environments in Lucknow........Brij Narain Chakbast's merits as a poet and artist are universally acknowledged by his contemporaries; and succeeding generations will recognise him as a great pioneer of a new school of poetry."

"××× पिछले २५ वर्षसे कवि (चकबस्त) से मेरा घनिष्ठ परिचय है। मैंने सदा ही उन्हें उनके साहित्य और जीवनके ऊँचे आदर्शोंके लिए सराहा है तथा जिन क्षणोंमें मैंने उनकी कवितायें पढ़कर आनन्द

'नये अदबी रुजहानात, पृष्ठ ९५–१००।

उठाया है, उसे मैं चकबस्तके सर्वोत्तम शेर मानता हूँ। × × × यदि इकबाल चकबस्तकी अपेक्षा अधिक आध्यात्मिक और रहस्यवादी थे तो वह इसलिए कि उनके जीवनकी फ़िलासफ़ी ही ऐसी है—दूसरी ओर यदि चकबस्तकी शायरीमें शब्द और शैलीकी सुन्दरता है और उसमें अधिक करुणा है यदि वह आदमीके मस्तिष्कके बजाय उसके हृदयको प्रभावित करती है तो इसका कारण है कविका लखनऊका वातावरण। × × × कवि और कलाकारके रूपमें चकबस्तमें जो गुण हैं उन्हें उनके समकालीन एकमतसे स्वीकार करते हैं और आनेवाली पीढ़ियाँ उन्हें कविताके नये युगका महान प्रवर्तक मानती हैं'।[1]

चकबस्त सन् १८८२ में फ़ैज़ाबादमें उत्पन्न हुए और बचपनमें ही अपने असली वतन लखनऊ आ गये। १९०८ में कैनिङ्ग कालेजसे बी० ए० और कानूनकी डिग्री प्राप्त करके लखनऊमें ही वकालत प्रारम्भ की जहाँ थोड़े ही अर्सेमें आप प्रथम श्रेणीके वकीलोंमें शुमार होने लगे। चकबस्तको शेरोशायरीका शौक बचपनसे ही था। कहा जाता है कि उन्होंने ९ वर्षकी उम्रमें ही ग़ज़ल कही थी। आप विद्यार्थी अवस्थामें भी लिखते रहे। कालेजके मुशायरोंमें पदक व पुरस्कार भी प्राप्त करते रहे। आप ख्यातिसे दूर भागते थे। यहाँ तक कि अपना उपनाम (तख़ल्लुस) भी नहीं रक्खा। पारिवारिक नाम 'चकबस्त' के नामसे ही लिखते रहे। आपने अपना कोई उस्ताद नहीं बनाया।

तारीख़ अदब उर्दूके विद्वान लेखक लिखते हैं कि— चकबस्तकी ज़बान निहायत साफ़ शुस्ता और शीरीं है। कलाममें लखनऊका रङ्ग है। मगर वहनरात निम्म और आला दर्जेकी एक ख़ास ख़ुसूसियत यह भी है कि मतालिब हिन्दी अल्फ़ाज़ कलाममें मिलाकर कलामकी शीरीनी और असरको दुबाला कर देते हैं। बसबब आला अङ्गरेज़ी

---

[1]सुबहे वतनकी भूमिकासे।

दानोंके चकबस्त मशरक़ी और मग़रबी दोनों किस्मकी तनक़ीदों (आलोचनाओं) से बख़ूबी आगाह थे। इसी वजहसे उनकी रायें अदबी (साहित्यिक) मुआमलातमें बहुत जँची-तुली मुन्सिफ़ाना और ग़ैर जानिबदाराना थीं। कभी किसीकी तारीफ़ या तनक़ीद आँख बन्द करके या मुआसिरोंके साथ नहीं करते थे। जैसा कि ख़ुद कहते हैं:—

उलझ पड़ूँ किसी दामनसे मैं वोह ख़ार नहीं।
वोह फूल हूँ जो किसीके गलेका हार नहीं॥

उनके मज़ामीन 'दाग़', 'अनवार' और उर्दू-शायरीपर निहायत आला दर्जेके हैं और बड़ी वाक़फ़ियत और मालूमातका पता देते हैं। नसरमें भी मिस्ल नज़्मके उनका पाया बहुत बुलन्द था।"[1]

चकबस्त वास्तवमें देशके वकील थे। इक़बाल भी उनके समकालीन थे। मगर इक़बाल राष्ट्र-भेरी बजाते-बजाते अजान देने लगे और चकबस्तने जो बिगुल उठाया उसे मरते-दम तक बजाते रहे। जब क़ौमी जहाज़को बचानेके लिए हाली और अकबरने आवाज़ बुलन्द की तो दो नौजवान ख़्वाबेग़फ़लतसे चौंके और उन्होंने लपककर उन बूढ़े हाथोंसे चप्पू अपने हाथोंमें लेकर इस ख़ूबीसे हाथ मारे कि जहाज़ चट्टानसे टकरानेसे बाल-बाल बच गया। मगर अफ़सोस, तूफ़ान बढ़ता ही गया। ये बहादुर नौजवान जितना ही ज़्यादा जानपर खेलते गये, समुद्र उतना ही अधिक क्षुब्ध होता चला गया। इक़बाल उम्रमें बड़ा था, वह काफ़ी थक गया था। उसने समूचे जहाज़को बचता न देख पानीमें कश्ती डालदी और जो भी बच सकें ग़नीमत है, यह सोचकर वह कश्तीमें मुसलमानोंको उतारने लगा और अपनी इस सूझमें सफल भी हुआ। मगर चकबस्तसे यह न हुआ। उसके चश्मेमें दाढ़ी और चोटी न दिखाई देकर केवल

[1] 'ज़मीमये तारीख़े अदबे उर्दू, पृ० १५–१६।

मनुष्यके व्याकुल बनकर दिखाई दिये। मनुष्यता उनकी जाति और देश-सेवा उनका धर्म था। वह अपनी धुनमें डटा ही रहा जब तक कि वह चूर चूर होकर समाप्त नहीं हो गया।

१८ जनवरी, १९२६ को उनके स्वर्गवाससे समस्त उर्दू-संसारमें शोक छा गया। लखनऊकी अदालतें बन्द कर दी गईं। शोक-सभाएँ की गईं। व्याख्यानोंके अतिरिक्त प्रसिद्ध शायरोंने नौहे पढ़े, तारीख़ें कहीं। 'मगहूर' साहबने तो उनके इस मिसरेपर ही तारीख़ कहकर सारोंको रुला दिया—

उनके ही मिसरेसे तारीख़ है हमराह अजल।
'मौत क्या है, इन्हीं अजज़ाका परेशाँ होना'*॥

१—ख़ाके हिन्द (भारतकी रज)

* * *

अगलीसी ताज़गी[1] है फूलोंमें और फलोंमें।
करते हैं रक्स[2] अबतक ताऊस[3] जङ्गलोंमें॥
अबतक वही कड़क है बिजलीकी बादलोंमें।
पस्ती-सी[4] आ गई है, पर दिलके हौसलोंमें॥

गुल[5] शमए अंजुमन[6] है, गो अंजुमन[7] वही है।
हुब्बेवतन[8] नहीं है, ख़ाकेवतन[9] वही है॥

---

*इस मिसरेसे १३४४ हिजरी सन् उनके स्वर्गवासका बनता है,
[1]नवीनता [2]नृत्य, [3]मोर, [4]निरुत्साहता
[5]बुझा हुआ, [6]महफ़िलका चिराग़, [7]महफ़िल,
[8]स्वदेश प्रेम [9]स्वदेशकी मिट्टी।

बरसोंसे हो रहा है बरहम[1] समाँ[2] हमारा।
दुनियासे मिट रहा है नामों निशाँ हमारा॥
कुछ कम नहीं अजलसे[3] ख्वाबेगराँ[4] हमारा।
इक लाशे बेकफ़न है हिन्दोस्ताँ हमारा॥
इल्मोकमाल[5] ओ ईमाँ बरबाद हो रहे हैं।
ऐशोतरबके[6] बन्दे[7] ग़फ़लतमें सो रहे हैं॥

ऐ सूरे[8] हुब्बेक़ौमी[9]! इस ख्वाबसे[10] जगा दे।
भूला हुआ फ़साना[11] कानोंको फिर सुना दे॥
मुर्दा तबीयतोंकी[12] अफ़सुर्दगी[13] मिटा दे।
उठते हुए शरारे[14] इस राखसे दिखा दे॥
हुब्बेवतन[15] समाए आँखोंमें नूर[16] होकर।
सरमें खुमार[17] होकर, दिलमें सुरूर[18] होकर॥

* * *

है जूयेशीर[19] हमको नूरेसहर[20] वतनका।
आँखोंकी रोशनी है जल्वा[21] इस अंजुमनका॥

---

[1]अस्त-व्यस्त; [2]हाल; [3]मृत्युसे; [4]गहरी नीद; [5]विद्या और कार्य-कुशलता; [6]भोग-विलासके; [7]दास; [8]नरसिंहा बाजा; [9]जातीय प्रेम; [10]नींदसे; [11]कहानी; [12]कुम्हलाये हृदयोंकी; [13]कुम्हलाहट; [14]चिनगारियाँ; [15]स्वदेश-प्रेम; [16]प्रकाश; [17]उतरा हुआ नशा; [18]चढ़ता हुआ नशा; [19]दूधकी नदी; [20]प्रभातका प्रकाश; [21]आलोक।

है रश्केइरम[1] ज़र्रह[2] इस मंज़िलेकुहनका[3]।
तुलता है बर्गेगुलसे[4] काँटा भी इस चमनका॥
गर्दोग़ुबार[5] याँका ख़िलअत[6] है अपने तनको।
मरकर भी चाहते हैं ख़ाकेवतन[7] कफ़नको॥

२—वतन का राग

*   *   *

वतनपरस्त[8] शहीदोंकी[9] ख़ाक लाएँगे।
हम अपनी आँखका सुर्मा उसे बनाएँगे॥
ग़रीब माँके लिए दर्द दुख उठाएँगे।
यही पयामेवफ़ा[10] क़ौमको सुनाएँगे॥
तलब फ़िज़ूल है काँटोंकी फूलके बदले।
न लें बहिश्त[11] भी हम होमरूलके बदले॥

*   *   *

ख़म हुए हैं मुहब्बतसे जिनकी क़ौमके घर।
वतनका पास[12] है उनको सुहागसे[13] बढ़कर॥
जो ग़मख़्वार[14] हैं हिन्दोस्ताँके लख़्तेजिगर[15]।
यह माँके दूधसे लिक्खा है उनके सीनेपर[16]॥

---

[1]स्वर्गको लज्जित करनेवाला, [2]बालुकण, [3]प्राचीनघरका, [4]फूलकी पत्तीसे [5]मिट्टी, धूल, [6]पोशाक, [7]स्वदेश-रज, [8]देशभक्त, [9]प्राण समर्पित करनेवालोंकी, [10]कृतज्ञताभरा संदेश, [11]स्वर्ग, [12]खयाल, [13]सौभाग्य, [14]दुःखभागी, [15]कलेजा टुकड़, [16]छातीपर।

तलब फ़िज़ूल है काँटोंकी फूलके बदले।
न लें बहिश्त भी हम होमरूलके बदले॥

*　　*　　*

यह जोशेपाक[1] ज़माना दबा नहीं सकता।
रगोंमें ख़ूँकीहरारत[2] मिटा नहीं सकता॥
ये आग वो है जो पानी बुझा नहीं सकता।
दिलोंमें आके यह अरमान[3] जा नहीं सकता॥

तलब फिज़ूल है काँटोंकी फूलके बदले।
न लें बहिश्त भी हम होमरूलके बदले॥

पयामे-वफ़ा

*　　*　　*

हो चुकी क़ौमके मातममें[4] बहुत सीनाज़नी[5]।
अब हो इस रंगका संन्यास[6] यह है दिलमें ठनी॥
मादरेहिन्दकी[7] तस्वीर हो सीनेपै बनी।
बेड़ियाँ पैरमें हों और गलेमें कफ़नी॥

हो यह सूरतसे अयाँ[8] आशिक़ेआज़ादी[9] हैं।
कुफ़्ल[10] है जिनकी ज़बाँपर यह वह फ़रियादी हैं॥

आजसे शौक़ेवफ़ाका[11] यही जौहर[12] होगा।
फ़र्श काँटोंका हमें फूलोंका बिस्तर होगा॥

---

[1]पवित्र उत्साह; [2]रक्तकी गर्मी; [3]कामना; [4]दुःख, शोकमें; [5]छाती पीटना; [6]दीक्षित होना, रंगमें रंगना; [7]भारतमाताकी; [8]प्रकट; [9]स्वतन्त्रताके प्रेमी; [10]ताला; [11]सद्व्यवहारकी लगनका; [12]गुण।

फूल हो जाएगा छातीपै जो पत्थर होगा।
कैदख़ाना जिसे कहते हैं, वही घर होगा॥
सन्तरी देखके इस जोशको शरमायेंगे।
गीत ज़ंजीरकी झनकारपै हम गायेंगे॥

* * *

फ़रियादे-क़ौम

* * *

लुटे हैं यूँ कि किसीकी गिरहमें दाम नहीं।
नसीब[1] रातको पड़ रहनेका मुक़ाम नहीं॥
यतीम बच्चोंके खानेका इन्तज़ाम नहीं।
जो सुबह ख़ैरसे[2] गुज़री उमीदेशाम नहीं॥
अगर जिये भी तो कपड़ा नहीं बदनके लिए।
मरे तो लाश पड़ी रह गई कफ़नके लिए॥

नसीब चैन नहीं भूख-प्यासके मारे।
हैं किस अज़ाबमें[3] हिन्दोस्तानके प्यारे॥
तुम्हें तो ऐशके सामान जमा हैं सारे।
यहाँ बदनसे रवाँ[4] हैं लहूके फ़व्वारे॥
जो चुप रहें तो हवा क़ौमकी बिगड़ती है।
जो सर उठायें तो कोड़ोंकी मार पड़ती है॥

* * *

---

[1]प्राप्त, भाग्यमें, [2]कुशलसे, [3]विपत्तिमें, [4]जारी।

अगर दिलोंमें नहीं अब भी जोश गैरतका[1] ।
तो पढ़ दो फ़ातहा[2] क़ौमीवक़ारोइज़्ज़तका[3] ॥
वफ़ाको[4] फूंक दो मातम[5] करो मुहब्बतका ।
जनाजा[6] लेके चलो क़ौमोदीनोमिल्लतका[7] ।
निशां मिटा दो उमङ्गोंका और इरादोंका ।
लहूमें ग़र्क़[8] सफ़ीना[9] करो मुरादोंका[10] ॥

*   *   *

भँवरमें क़ौमका बेड़ा है हिन्दियो ! हुशियार ।
अँधेरी रात है, काली घटा है और मँझधार ॥
अगर पड़े रहे ग़फ़लतकी नींदमें सरशार[11] ।
तो जेरेमौजेफ़ना[12] होगा आबरूका[13] मजार[14] ॥
मिटेगी क़ौम यह बेड़ा तमाम डूबेगा ।
जहांमें भीष्मो अर्जुनका नाम डूबेगा ॥

*   *   *

रहेगा माल, न हमराह[15] जायगी दौलत ।
गई तो क़ब्र तलक साथ जायगी जिल्लत[16] ॥
करो जो एक रुपयेसे भी क़ौमकी ख़िदमत ।
तुम्हारी जातसे हो इक यतीमको[17] राहत ॥

---

[1]लज्जाका; [2]तिलांजलि देना; [3]जातीय प्रतिष्ठाका; [4]नेकीको; [5]शोक, (यहाँ त्याग); [6]अरथी; [7]जातीय धर्म और मेल-जोलका; [8]डुबाना; [9]नाव; [10]अभीष्ट मनोरथोंका; [11]मस्त, बेहोश; [12]मृत्युकी लहरोंके नीचे; [13]प्रतिष्ठाका; [14]क़ब्र; भावार्थ यह हमारी प्रतिष्ठाका अन्त हो जायगा; [15]साथ; [16]बदनामी; [17]अनाथको ।

मिले हिजाबकी[1] चादर किसीकी अस्मतको[2]।
कफ़न नसीब[3] हो शायद किसी मैयतको[4]॥

जो दबके बैठ रहे सर उठाओगे फिर क्या ?
उदूएक़ौमको[5] नीचा दिखाओगे फिर क्या ?

रहेगा कौल यही उनसे उनकी माओंका—
"लहू रगोंमें तुम्हारी है बेहयाओंका" ॥

मिटा जो नाम तो दौलतकी जुस्तजू[6] क्या है ?
निसार[7] हो न वतनपर, तो आबरू क्या है ?
लगा दे आग न दिलमें तो आरज़ू[8] क्या है ?
न जोश खाय जो ग़ैरतसे वह लहू क्या है ?

फ़िदा[9] वतनपै जो हो, आदमी दिलेर है वोह।
जो यह नहीं तो फ़क़त हड्डियोंका ढेर है वोह॥

५—फूलमाला

(कन्याओंको सम्बोधन करते हुए)

रविशेख़ामपै[10] मर्दोंकी न जाना हरगिज़।
दाग़ तालीममें[11] अपनी न लगाना हरगिज़॥
नाम रक्खा है नुमायशका[12] तरक्क़ी व रिफ़ार्म[13]।
तुम इस अन्दाज़के[14] धोखेमें न आना हरगिज़॥

---

[1]लाजकी, [2]पाकदामनीको, [3]प्राप्त, [4]लाशको; [5]जातीय शत्रुको, [6]तलाश, खोज, [7]न्योछावर, [8]कामना, इच्छा, [9]आसक्त, [10]कच्चे ढगपर, [11]शिक्षामें [12]दिखलावेका, [13]उन्नति व सुधार, [14]ढगके।

रंग है जिनमें मगर बूएवफ़ा[1] कुछ भी नहीं।
ऐसे फूलोंसे न घर अपना सजाना हर्गिज़ ॥

नक़्ल यूरपकी मुनासिब है मगर याद रहे।
ख़ाकमें ग़ैरतेक़ौमी[2] न मिलाना हर्गिज़ ॥

ख़ुदपरस्तीको[3] लक़ब[4] देते हैं आज़ादीका।
ऐसे इख़लाक़पै[5] ईमान न लाना हर्गिज़ ॥

रङ्गोरोग़न[6] तुम्हें यूरपका मुबारिक, लेकिन।
क़ौमका नक़्श न चेहरेसे मिटाना हर्गिज़ ॥

जो बनाते हैं नुमाइशका खिलौना तुमको।
उनकी ख़ातिरसे यह ज़िल्लत[7] न उठाना हर्गिज़ ॥

रुख़से[8] पर्देको हटाया तो बहुत ठीक किया।
पर्दएशर्मको[9] दिलसे न उठाना हर्गिज़ ॥

नक़्द इख़लाक़का[10] हम नलकी तरह हार चुके।
तुम हो दमयन्ति, यह दौलत न लुटाना हर्गिज़ ॥

गो[11] बुज़ुर्गोंमें तुम्हारे न हो इस वक़्तका रङ्ग।
इन ज़ईफ़ोंको[12] न हँस-हँसके रुलाना हर्गिज़ ॥

होगा परलय जो गिरा आँखसे इनके आँसू।
बचपनेसे न यह तूफ़ान उठाना हर्गिज़ ॥

---

[1]गुणोंकी गन्ध;　[2]जातीय लज्जा;
[3]स्वच्छन्दताको;　[4]पदवी;
[5]शिष्टाचारपर;　[6]पाउडर इत्यादि;
[7]बदनामी;　[8]चेहरेसे;　[9]लाजके पर्देको;
[10]शिष्टाचारका;　[11]यद्यपि;　[12]वृद्धोंको।

— ६ —

क्या कहूँ कौन हवा सरमें भरी रहती है।
अपिए आठ पहर बेख़बरी रहती है॥

— ७ —

अपने ही दिलका पियाला पिये मदहोश हूँ मैं।
झूठी पीता नहीं मग़रिबकी[1] वह मयनोश[2] हूँ मैं॥

— ८ —

आबरू[3] क्या है, तमन्नाएवफ़ामें[4] मरना।
दीन[5] क्या है, किसी कामिलकी[6] परस्तिश[7] करना॥

— ९ —

गुल न हो दिलके शिवालेमें हुस्नेसीरतका[8] चिराग़।
बेगुनाहोंके लहूका न हो तलवारमें दाग़॥
रास्ता है यही क़ौमोंकी तबाहीके लिए।
ख़ून मासूमका[9] दोज़ख़[10] है सिपाहीके लिए॥

— १० —

वह ख़ुदग़रज़ है जो दौलतपै जान देते हैं।
वही हैं मर्द जो विद्याका दान देते हैं॥

---

[1]पश्चिम (यूरोप) की, [2]शराबी, [3]प्रतिष्ठा, इज़्ज़त, [4]नर्कोंकी अभिलाषाम, [5]धर्म, [6]सिद्ध पुरुषकी, [7]उपासना सेवा [8]सदाचरणका, [9]निरपराधका, [10]नरक।

— ११ —

क़ौमी मुसद्दस

गुनाह क़ौमके धुल जाएँ अब वोह काम करो।
मिटे कलङ्कका टीका वह फ़ैज़ेआम[1] करो॥
निफ़ाक़ो[2] जुहलको[3] बस दूरसे सलाम करो।
कुछ अपनी क़ौमके बच्चोंका इन्तज़ाम करो॥
जो तुमने अब भी न दुनियामें काम कर जाना।
तो यह समझ लो कि बेहतर है इससे मर जाना॥

अगर जो ख़्वाबसे[4] अब भी न तुम हुए बेदार[5]।
तो जान लो कि है इस क़ौमकी चिता तैयार॥
मिटेगा दीन[6] भी और आबरू[7] भी जाएगी।
तुम्हारे नामसे दुनियाको शर्म आएगी॥
अगर हो मर्द न यूँ उम्र रायगाँ[8] काटो।
ग़रीब क़ौमके पैरोंकी बेड़ियाँ काटो॥

यह कारेख़ैर[9] वोह हो नाम चारसू[10] रह जाय।
तुम्हारी बात ज़मानेके रूबरू[11] रह जाय॥
जो ग़ैर हैं उन्हें हँसनेकी आरज़ू[12] रह जाय।
ग़रीब क़ौमकी दुनियामें आबरू रह जाय॥

---

[1]व्यापक दान; [2]द्वेष; [3]मूर्खताको;
[4]स्वप्नसे; [5]जागृत; [6]धर्म;
[7]प्रतिष्ठा; [8]व्यर्थ; [9]भला कार्य;
[10]चारों तरफ़; [11]समक्ष; [12]अभिलाषा।

– १२ –

मज़हबेशायर

पीता हूँ वह मय, नशा उतरता नहीं जिसका।
ख़ाली नहीं होता है वह पैमाना है मेरा॥
जिस जा[1] हो ख़ुशी, है वह मुझे मंज़िलेराहत[2]।
जिस घरमें हो मातम[3], वह ग़मख़ाना[4] है मेरा॥
जिस गोशएदुनियामें[5] परस्तिश[6] हो वफ़ाकी।
काबा है वही और वही बुतख़ाना है मेरा॥

– १३ –

जुनूने[7] हुब्बेवतनका मज़ा शबाबमें[8] है।
लहूमें फिर यह रवानी[9] रहे रहे, न रहे।
जो दिलमें ज़ख़्म लगे हैं वह ख़ुद पुकारेंगे।
ज़बाँकी सैफ़बयानी[10] रहे रहे, न रहे॥

– १४ –

मिटनेवालोंको वफ़ाका[11] यह सबक़ याद रहे।
बेड़ियाँ पैरमें हो, और दिल आज़ाद रहे॥

---

[1]जिस स्थानमें सुखद स्थान,
[3]शोक रोना-धोना [4]शोकगृह,
[5]संसारके कोनेमें [6]पूजा,
[7]देशभक्तिका उन्माद [8]युवावस्थामें,
[9]जोश बहाव [10]कथन शक्ति,
[11]वफ़ाका।

दिल वह दिल है जो सदा सब्तसे[1] नाशाद[2] रहे।
लब[3] वह लब है जो न शर्मिन्दये[4] फ़रियाद रहे॥

ख़ुशनवाईका[5] सबक़ मैंने क़फ़समें[6] सीखा।
क्या कहूँ और, सलामत मेरा सैयाद[7] रहे॥

मुझको मिल जाय चहकनेके लिए शाख़ मेरी।
कौन कहता है कि गुलशनमें न सैयाद रहे॥

जज़्बए क़ौमसे[8] ख़ाली न हो सौदाएशबाब[9]।
वह जवानी है जो इस शौक़में बरबाद रहे॥

— १५ —

यह बेकसी[10] भी अजब बेकसी है दुनियामें।
कोई सताए हमें हम सता नहीं सकते॥

चिराग़ क़ौमका रौशन है अर्शपर[11] दिलके।
इसे हवाके फ़रिश्ते[12] बुझा नहीं सकते॥

— १६ —

दरेतदबीरपर[13] सर फोड़ना शेवा[14] रहा अपना।
वसीले[15] हाथ ही आये न क़िस्मत आज़माईके॥

---

[1]सहन-शक्तिसे [2]उदास, रंजीदा; [3]होठ;
[4]आत्म-निवेदन करनेसे शर्म आना, स्वार्थकी बात करते हुए सकुचाना; [5]मधुर वाणीका; [6]पिंजरेमें; [7]शिकारी चिड़ीमार;
[8]जातीय प्रेमसे; [9]जवानीका नशा; [10]लाचारी;
[11]आस्मानपर; [12]देवता; [13]पुरुषार्थकी चौखटपर;
[14]कर्त्तव्य; आदत, ढंग; [15]साधन।

— १७ —

अगर दर्देमुहब्बतसे न इन्सां[1] आशना[2] होता।
न मरनेका सितम[3] होता, न जीनेका मजा होता॥
हजारों जान देते हैं बुतोंकी[4] बेवफाईपर[5]॥
अगर इनमेंसे कोई बावफा[6] होता तो क्या होता?
हविस[7] जीनेकी है यूं उम्रके बेकार कटनेपर।
जो हमसे जिन्दगीका हक अदा होता तो क्या होता?
यह मरना बेहिजाबाना[8] निगाहें[9] कहर[10] करती हैं।
मगर हुस्नेहयापरवरका[11] आलम[12] दूसरा होता॥
जबांके जोरपर हंगामाआराईसे[13] क्या हासिल[14]?
वतनमें एक दिल होता, मगर दर्दआशना[15] होता॥

— १८ —

अहले[16]हिम्मत मंजिलेमकसूद[17] तक आ ही गये।
बन्दएतकदीर[18] किस्मतका गिला[19] करते रहे॥

— १९ —

निफाक[20] गबरू[21]मुसलमां का यूं मिटा आखिर।
यह बुतको भूल गये, वह खुदाको भूल गये॥

---

[1]मनुष्य, परिचित, [3]दुख रंज, [4]माशूक, प्रेमिकाकी; [5]कृतघ्नतापर, [6]भलामानस, कृतज्ञ, [7]तृष्णा, [8]बेपर्दा, बेशर्म, [9]आँखें, [10]गजब, [11]लज्जायुक्त सौन्दर्यका, [12]दृश्य; [13]फिसाद उठानेसे, [14]लाभ [15]दुखमें सहानुभूति रखनेवाला, [16]साहसी पुरुष, [17]अभीष्ट स्थान, [18]प्रारब्धको ही सब कुछ समझनेवाले; [19]शिकायत, [20]झगडा, [21]आतिशपरस्त, [22]मूर्ति (पूजा)] को।

— २० —

बाग़बाने यह अनोखा सितम[1] ईजाद[2] किया।
आशियाँ[3] फूंकके पानीको बहुत याद किया॥

दरेज़िन्दाँपै[4] लिखा है किसी दीवानेने—
"वही आज़ाद है जिसने इसे आबाद किया"॥

जिसपर अहबाब[5] बहुत रोए, फ़क़त इतना था।
घरको वीरान किया, क़ब्रको आबाद किया॥

इसको नाक़दरिये[6] आलमका सिला[7] कहते हैं।
मर चुके हम तो ज़मानेने बहुत याद किया॥

— २१ —

राहतमें[8] भी अज़ीज़[9] है राहतकी आरज़ू[10]।
दिल ढूंढ़ता है सिलसिलयेइन्तज़ारको[11]॥

— २२ —

कुछ दाग़ गुनाहोंके[12] हैं कुछ अश्केनदामत[13]।
इबरतका[14] मुरक़्क़ा[15] है मेरे दामनेतरमें[16]॥

---

[1]अत्याचार; [2]आविष्कार; [3]घोंसला;
[4]कारावासके द्वारपर; [5]मित्र, कुटुम्बी;
[6]गुणीके प्रति संसारकी उपेक्षा; [7]बदला;
[8]चैन, सुखसे; [9]सुप्रिय; [10]अभिलाषा;
[11]प्रतीक्षाका छोर, मार्ग; [12]पापोंके;
[13]प्रायश्चित्त (शरमिन्दगी) के आँसू;
[14]नसीहत, शिक्षाका; [15]तसवीर; [16]भीगे वस्त्रोंमें।

— २३ —

यह ग़लत है कि हमें तर्ज़े फ़ुग़ाँ[1] याद नहीं।
अब यह आलम[2] है कि गुंजाइशे फ़रियाद[3] नहीं॥
जब कोई ज़ुल्म नया करते हैं, कहते हैं—
"अगले वक्तोंके हमें तर्ज़े सितम[4] याद नहीं"॥

— २४ —

मुझसे रोशन इन दिनों दैरो[5] हरमका[6] नाम है।
पाएबुतपर[7] है जबीं[8] कफ़पर[9] ख़ुदाका नाम है॥
देखना है हुस्नके[10] जल्वे[11] तो बुतख़ानेमें[12] आ।
तेरे काबेमें तो बस वाइज़[13]! ख़ुदाका नाम है॥
फ़र्ज़ है पीकर मुकरना, पारसाईके[14] लिए।
जो सरे बाज़ार पीता है वही बदनाम है॥
मेरे मज़हबमें है वाइज़! तर्केमयनोशी[15] हराम[16]।
छोड़कर पीता हूँ फिर, तौबा[17] इसीका नाम है॥

— २५ —

मुफ़लिसी मेरी मुहब्बतकी कसौटी बन गई।
हिम्मते अहबाबके[18] जौहर नुमायाँ[19] हो गये॥

---

[1]रोनेका ढंग [2]हालत, दशा, [3]प्रार्थनाकी ज़रूरत, [4]अत्याचारके तरीक़े, [5]मन्दिर, [6]मसजिदका, [7]मूर्तिके चरणोंपर, [8]मस्तक [9]हाथपर [10]सौंदर्य, [11]प्रकाश, करामात, [12]मन्दिरमें, [13]व्याख्याता, [14]नेकचलनीके, [15]शराबका त्याग, [16]पाप, [17]प्रतिज्ञा, प्रायश्चित्त, [18]मित्रोंकी हिम्मतके, [19]प्रकट।

— २६ —

दर्दे दिल, पासेवफ़ा,[1] जज़्बए ईमाँ[2] होना।
आदमीयत है यही, औ यही इन्साँ होना॥
ज़िन्दगी क्या है? अनासिरका निज़ामे तरतीब।
मौत क्या है? इन्हीं अजज़ाका परीशाँ होना॥

— २७ —

दुनियासे ले चला है जो तू हसरतोंका[3] बोझ।
काफ़ी नहीं है सरपै गुनाहोंका[4] बार[5] क्या?
बादेफ़ना[6] फ़िज़ूल है नामोनिशाँकी फ़िक्र।
जब हम नहीं रहे तो रहेगा मज़ार[7] क्या?

— २८ —

आशना[8] हों, कान क्या इन्सानकी फ़रियादसे?
शैख़को[9] फ़ुर्सत नहीं मिलती ख़ुदाकी यादसे॥

— २९ —

उसे यह फ़िक्र है हरदम नई तर्ज़ेजफ़ा[10] क्या है?
हमें यह शौक़ है देखें सितमकी[11] इन्तहा[12] क्या है?
गुनहगारोंमें[13] शामिल हैं गुनाहोंसे नहीं वाक़िफ़।
सज़ाको जानते हैं हम, ख़ुदा जाने ख़ता क्या है?
नया बिस्मिल[14] हूँ मैं वाक़िफ़ नहीं रस्मेशहादतसे[15]।
बता दे तू ही ऐ ज़ालिम! तड़पनेकी अदा क्या है?

---

[1]प्रीतिका बर्त्ताव; [2]ईमानदारीका गुण; [3]अभिलाषाओंका; [4]पापोंका; [5]बोझ; [6]मृत्युके बाद; [7]क़ब्र; [8]परिचित; [9]धर्माचार्यको; [10]अत्याचार-का ढंग; [11]अत्याचारकी; [12]अन्त, हद; [13]अपराधियोंमें; [14]अर्धमृतक, वेदनासे तड़पनेवाला; [15]मरनेके, न्यौछावर होनेके रीति-रिवाजसे।

– ३३ –

ग़ुरूरो जुहलने[1] हिन्दोस्ताँको लूट लिया।
बजुज़[2] निफ़ाक़के[3] अब ख़ाक भी वतनमें नहीं॥

– ३४ –

गुलोंने बाग़ छोड़ा तंग आकर जौरेगुलचींसे।
चमन वीरान होता है, ख़बर ले बाग़बाँ अपनी॥

– ३५ –

जिसे है फ़िक्र मरहमकी, उसे क़ातिल समझते हैं।
इलाही ख़ैर हो, यह ज़ख़्म अच्छा हो नहीं सकता॥
कमालेबुज़दिली है पस्त होना अपनी आँखोंमें;
अगर थोड़ीसी हिम्मत हो तो फिर क्या हो नहीं सकता?
उभरने ही नहीं देती यहाँ बेमायगी[4] दिलकी,
नहीं तो कौन क़तरा है जो दरिया हो नहीं सकता?

– ३६ –

फ़नाका[5] होश आना, जिन्दगीका दर्देसर जाना।
अजल[6] क्या है खुमारेबादएहस्ती[7] उतर जाना॥

– ३७ –

शिरकतेग़मकी[8] अज़ीज़ोंसे[9] तमन्ना[10] क्या हो।
इम्तहाँ[11] इनकी वफ़ाका मुझे मंजूर नहीं॥

---

[1]घमण्ड और नादानीने; [2]सिवाय; [3]द्वेषके; [4]बेसामानी; [5]नाश, बरबादीका; [6]मृत्यु; [7]ज़िन्दगीकी शराबका नशा; [8]दुख बँटानेकी; [9]स्नेही मित्रोंसे; [10]आशा; [11]परीक्षा।

— ३८ —

अबको तो शामेग़मकी[1] सियाही कुछ और है।
मंजूर है तुझे मेरे परवरदिगार क्या?॥

— ३९ —

मेरे अहबाब पेश आते हैं मुझसे बेवफाईसे।
वफादारीमें शायद कर रहे हैं इम्तहाँ मेरा॥

— ४० —

जिन्दगी नाम था जिसका उसे खो बैठे हम।
अब उमीदोंकी फकत जलवागरी[2] बाकी है॥

२८ अगस्त १९४४

[1]रजकी सन्ध्याकी,　　[2]चमत्कार।

जागरण

: ७ :

सन् १९१४-१८के महासमरके बाद राजनैतिक ेत

साम्राज्य-विरोधी, मज़दूर-किसान-हितैषी शायर

जागरण

सन् १९१४-१८के महासमरके बाद राजनैतिक चेतना

जिस तरह १८५७ के विद्रोहके झटकेसे भारतवासियोंकी तन्द्रा दूर हुई, और अनेक परिवर्त्तनोंके साथ उर्दू-शायरीने भी अपना परिधान बदला, उसी तरह १९१४–१८के गत महासमरके पश्चात् भारतमें जागरणके चिह्न दिखाई देने लगे। महासमरके कारण विश्वका नक़्शा ही बदल गया। कोई देश मुँहके बल औंधा पड़ा और कोई सीना तानकर खड़ा होनेमें समर्थ हो गया। कुछ देश पराधीनताके बन्धनमें जकड़े गये और कुछने स्वतन्त्रता देवीका वरदान पाया। कितने ही लोग मटियामेट हो गये और कितने ही मालामाल बन बैठे। अखिल विश्वमें एक अभूतपूर्व परिवर्त्तन हो उठा। नीदमें कुम्भकर्णको मात करनेवाले भारतकी भी आँखें खुलीं। लाखों लालोंकी बलि देनेपर भी उसे अँगूठा दिखाया गया। युवती स्त्रियाँ भरी जवानीमें माँगका सिंदूर धो बैठीं। वृद्धाएँ निपूती हो गईं। दुधमुँहे बच्चे बिलखते हुए अनाथ हो गये। भारतके धन-जनकी पूर्णाहुति दी गई। परिणाम-स्वरूप इसके शासक अजेय बन बैठे और यह मुँह देखता ही रह गया। इतने महान त्याग और उपकारके एवज़में पारितोषिक-रूपमें कुछ देनेके बजाय गिड़गिड़ाते भारतपर 'रौलट ऐक्ट' लादकर उल्टा उसकी पीठमें लात मार दी। रोटीके बदले गोली खानेको मिली। इस कृतघ्नताके अपमानको भारतीय सहन न कर सके। और सहन करते भी कैसे ? भारतवासी भी आखिर मनुष्य थे। मनुष्य तो मनुष्य, दबाव पड़नेपर तो पाँवोंकी ठुकराई हुई मिट्टी भी सरपर आ जाती है—

गर्द उडी आशिककी तुर्बतसे तो झुँझलाकर कहा—
"वाह ! सर चढने लगी पाँवोंकी ठुकराई हुई ॥"
—अज्ञात

अत सारे भारतमें एक कोहराम मच गया। महात्मा गांधीने आगे बढकर धोमेपर चोट जमाई, और उनके नेतृत्वमें सामूहिक आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। ६ अप्रैल १९१९ को समग्र भारतमें विरोध-स्वरूप विराट हडताल हुई। उस रोज लाखोंने उपवास किये। मल्लाहो, कुलियों और तांगेवालोंने भी काम नही किया। विरोध-प्रदर्शन करनेके लिए जनसमूह उमड पडा। शान्त किन्तु आर्त्तस्वरूप अपनी वेदना व्यक्त करनेको मुँह खोला तो निहत्थोंपर गोलियोंकी बौछार हुई। इतने भयानक दमनके बाद भी आन्दोलन उग्रतर होता गया। मुसलमान भी टर्कीके कारण क्षुब्ध थे। अत हिन्दू-मुस्लिम सगठित हो गये और उनकी वेदना असहयोग आन्दोलनके रूपमें फूट पडी। सारे भारतमें जागरणके चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे। काग्रेसद्वारा कॉलिजो, कौंसिलो, अदालतों और विदेशी वस्तुओंके बहिष्कारका प्रस्ताव पास होते ही अनेक वकीलोंने वकालत छोडकर हजारो विद्यार्थियोंने कॉलिजमें निकलकर, कौंसिल मेम्बरोंने कौंसिलोंको धता बताकर आन्दोलनको प्रचण्ड रूप देनेमें सक्रिय भाग लिया। जनसाधारणने विदेशी वस्त्र, शराब आदिका ऐसा बहिष्कार किया कि लकाशायर डाँवाडोल हो गया। आन्दोलनको कुचलनेके लिए गोलियाँ चलाई गईं, जलखाने भरे गये, घर-बार नीलाम किये गये, परन्तु आन्दोलन उभरता ही गया।

साहित्यपर देशकी परिस्थिति और समयका बडा भारी प्रभाव पडता है। अत इस युगान्तर उत्पन्न करनेवाली स्थितिमें उर्दू-शायरी कैसे अछूती रह सकती थी? घरमें आग लगनेपर मादकसगीत कैसे गाया जा सकता था? अत उर्दू-शायरोंने भी अपना रुख बदला। देशके ननाम्रोंक बलिदान और त्यागके ऊपर नज़्में लिखी जाने लगीं। पद्य-

१४

शब्बीर हसन ख़ाँ 'जोश' मलीहाबादी

[जन्म सन् १८९६]

इस युगके शायरोंमें 'जोश' का नाम सबसे पहले आता है। १८५७के विद्रोहके बाद 'आज़ाद' और 'हाली' के प्रयत्नसे उर्दू-शायरी जम्हाइयाँ और करवट-सी लेती हुई मालूम होती है। 'इकबाल' और 'चकबस्त' के प्रयत्नसे उसकी नींद उचाट होती है। ये लोग युगान्तरकारी थे। उर्दू-शायरीके युगान्तरकारी महलका 'आज़ाद' और 'हाली' ने शिलारोपण किया, 'इकबाल' और 'चकबस्त' ने दीवारें खड़ी की और 'जोश' ने उनके अधूरे कामको पूरा किया।

'जोश' स्पष्टवादी हैं। जो उनके मनमें होता है वही ज़बानपर, और नोकेकलमसे काग़ज़पर आता है। वह अपने भावोंको शायरीके रंगीन पर्देमें छुपाकर तीर नहीं छोड़ते, अपितु एक वीर सैनिककी भाँति ललकारकर मैदानमें आते हैं। सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक गढ़ोंपर इस वीरता-धीरतासे उन्होंने आक्रमण किया है, वह नज़ारी घोर पहुँचाई है कि बरबस मुँहसे वाह-वाह निकल पड़ती है। 'जोश' ने बादशाहोंकी मसनवी न लिखकर किसानका गुणगान किया है। फरिश्तेसे बढ़कर मज़दूरको समझा है। भाग्यपर जमनेको कुफ़्रान किया है। इंक़लाबसे बढ़कर उन्होंने साम्राज्यवादका बनाया है। 'जोश' की कहानी उनकी ही ज़बानी सुनिये —

'मैंने नौ बरसकी उम्रमें शेर कहना शुरू कर दिया था। जब मेरे दूसरे हमसिन बच्चे पतंग उड़ाने और गोलियाँ खेलते थे, उस वक्त किसी

अलहदा गोशेमें शेर मुझसे अपनेको कहलवाया करता था। शायरीसे जब फ़ुर्सत पाता था तो एक ऊँची-सी मेज़पर बैठकर साथी बच्चोंको जो जीमें आता अनाप-शनाप दर्स (उपदेश) दिया करता था। दर्स देते वक़्त मेरी मेज़पर एक पतला-सा बेंत रखा रहता था। गौरसे न सुननेवाले बच्चोंको मैं बुरी तरह मारता था। मैं लड़कपनमें बलाका गौलाखू था। ज़रा-सी ख़िलाफ़ बातपर मेरे मुँहसे चिनगारियाँ निकलने लगती थीं। तीस फ़ी सदी ज़मानेकी गर्दिश और सत्तर फ़ी सदी फ़िक्र, परेशानी और मुहब्बतने मेरे मिज़ाजको अब इस क़दर बदल दिया है कि मुझे ख़ुद हैरत होती है।"

"शायरी करते हुए यह मेरी चौथी पुश्त है। मेरा लड़का और मेरी लड़की भी मौज़ूँतबअ हैं। अगर आइन्दा यह दोनों शायरी करेंगे तो '**पाँचवीं पुश्त है शब्बीरकी मद्दाहीमें**' कहनेके मुस्तहक़ होंगे। मेरे वालिदने मुझे शायरीसे हमेशा रोका और सख़्तीके साथ रोका। फ़र्माते—'बेटा! शायरी मनहूस चीज़ है। अगर इसमें पड़ोगे तो तबाह हो जाओगे।' एक रोज़ मैंने बड़ी जिसारतसे काम लेकर डरते-डरते सवाल किया—'आप और दादामियाँ भी तो शेर कहते हैं, वो तो तबाह नहीं हुए, मैं क्यों तबाह हो जाऊँगा?' उन्होंने आँखोंमें आँसू भरकर जवाब दिया कि 'चार-पाँच पुश्तोंसे हमारी जायदाद लड़कों और लड़कियोंमें तक़सीम-दर-तक़सीम होती चली आ रही है, और तुम्हारे दादाने अपने कुछ ऊपर नौ लड़कों और लड़कियोंमे अपने ताल्लुकेको जिस तौरसे तक़सीम फ़रमाया है, उसके मायने हैं कि जो जायदाद मेरे हिस्सेमें आई है वोह मेरे बाद तुम तीनों भाइयों और चारों बहनोंमें तक़सीम होनेके बाद हरगिज़ इस क़ाबिल नहीं होगी कि एक शायरकी जौक़े-ख़ानुमाँबरदारीको बरदाश्त कर सके।' नतीजे वही हुआ जिसका मेरे बापको अन्देशा था।"

"घरमें दौलत पानीकी तरह बहती फिरती थी। हुकूमतका तनतना भी शामिल था। जिन्दगी और जिन्दगीकी तल्ख़ियोंसे क़तई नावाक़िफ़ि-यत। फिर भी, मुझे याद है कि कोई शै मेरे दिलमें रह-रहकर चुभा

१४

शब्बीर हसन खाँ 'जोश' मलीहाबादी

[जन्म सन् १८९६]

इस युगके शायरोंमें 'जोश' का नाम सबसे पहले आता है। १८५७के विद्रोहके बाद 'आज़ाद' और 'हाली' के प्रयत्नसे उर्दू-शायरी जम्हाइयाँ और करवटें-सी लेती हुई मालूम होती है। 'इक़बाल' और 'चकबस्त' के प्रयत्नसे उसकी नींद उचाट होती है। ये चारों युगान्तरकारी थे। उर्दू-शायरीके युगान्तरकारी महलका 'आज़ाद' और 'हाली' ने शिलारोपण किया, इक़बाल और चकबस्त ने दीवारें खड़ी कीं और 'जोश' ने उनके अधूरे कामको पूरा किया।

जोश स्पष्टवादी हैं। जो उनके मनमें होता है वही ज़बानपर और नोके-क़लमसे कागज़पर आता है। वे अपने भावोंको शायरीके रंगीन पर्देमें छुपाकर नहीं छोड़ते अपितु एक वीर सैनिककी भाँति ललकारकर मैदानमें आते हैं। सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक सभी मोर्चोंपर इस वीरता धीरतासे उन्होंने आक्रमण किया है और ऐसी करारी चोट पहुँचाई है कि बरबस मुँहसे वाह-वाह निकल पड़ती है। 'जोश' ने बादशाहोंकी मसनवी न लिखकर किसानका गुणगान किया है। फ़रिश्तेसे बेहतर मज़दूरको समझा है। भारतपर जनताको कुर्बान किया है। डाकूसे बदतर उन्होंने साम्राज्यवादको बताया है। जोश की कहानी उनकी ही ज़बानी सुनिये —

मैंने नौ बरसकी उम्रसे शेर कहना शुरू कर दिया था। जब मेरे दूसरे हमसिन बच्चे पतंग उड़ाते और गोलियाँ खेलते थे उस वक्त किसी

अलहदा गोशेमे शेर मुझसे अपनेको कहलवाया करता था। शायरीसे जब फ़ुर्सत पाता था तो एक ऊँची-सी मेज़पर बैठकर साथी बच्चोंको जो जीमे आता अनाप-शनाप दर्स (उपदेश) दिया करता था। दर्स देते वक़्त मेरी मेजपर एक पतला-सा बेत रखा रहता था। ग़ौरसे न सुननेवाले बच्चोंको मै बुरी तरह मारता था। मै लड़कपनमे बलाका गौलाखू था। जरा-सी खिलाफ बातपर मेरे मुँहसे चिनगारियाँ निकलने लगती थी। तीस फी सदी ज़मानेकी गर्दिश और सत्तर फी सदी फिक्र, परेशानी और मुहब्बतने मेरे मिज़ाजको अब इस कदर बदल दिया है कि मुझे खुद हैरत होती है।"

"शायरी करते हुए यह मेरी चौथी पुश्त है। मेरा लड़का और मेरी लड़की भी मौजूँतबह है। अगर आइन्दा यह दोनो शायरी करेगे तो **'पाँचवीं पुश्त है शब्बीरकी मद्दाहीमें'** कहनेके मुस्तहक़ होंगे। मेरे वालिदने मुझे शायरीसे हमेशा रोका और सख्तीके साथ रोका। फर्माते—'बेटा! शायरी मनहूस चीज है। अगर इसमें पड़ोगे तो तबाह हो जाओगे।' एक रोज मैंने बड़ी जिसारतसे काम लेकर डरते-डरते सवाल किया—'आप और दादामियाँ भी तो शेर कहते हैं, वो तो तबाह नही हुए, मै क्यों तबाह हो जाऊँगा?' उन्होने आँखोंमे आँसू भरकर जवाब दिया कि 'चार-पाँच पुश्तोंसे हमारी जायदाद लडको और लडकियोमे तकसीम-दर-तकसीम होती चली आ रही है, और तुम्हारे दादाने अपने कुछ ऊपर नौ लडकों और लडकियोंमे अपने ताल्लुकेको जिस तौरसे तक़सीम फ़रमाया है, उसके मायने है कि जो जायदाद मेरे हिस्सेमे आई है वोह मेरे बाद तुम तीनो भाइयों और चारों बहनोंमे तकसीम होनेके बाद हरगिज इस क़ाबिल नही होगी कि एक शायरकी शौके-खानुमाँबरदारीको बरदाश्त कर सके।' नतीजे वही हुआ जिसका मेरे बापको अन्देशा था।"

"घरमे दौलत पानीकी तरह बहती फिरती थी। हुकूमतका ततना भी शामिल था। जिन्दगी और जिन्दगीकी तल्खियोंसे कतई नावाकिफ़ियत। फिर भी, मुझे याद है कि कोई शै मेरे दिलमे रह-रहकर चुभा

करती थी। साथ ही मुझे हुस्नेमनाज़िर (प्राकृतिक सौन्दर्य) से ख़ुशी और हुस्नेइन्सानीमें दुख महसूस हुआ करता था। यह सब क्यों होता था, मैं नहीं समझ पाता था। उन दिनों नमाज़का सख्त पाबन्द था। दाढ़ी रख ली थी, और कमरा बन्द करके घंटों इबादतमें खोया रहता था। चारपाईपर लेटना, गोश्त खाना, तर्क कर दिया था। एक मशहूर ख़ानक़ाहके सज्जादहनशींके हाथपर बैत कर ली थी। ज़रा-ज़रा-सी बातपर आँसू निकल आते थे। मैं कबीर, टैगोरकी शायरीका दिलदादा और हाफ़िज़ेशीराज़का परिस्तार था।...लेकिन कभी-कभी यह भी महसूस होता था जैसे मेरे दिमाग़के अन्दर कोई ख़तरनाक कमानी खुल रही है, जो आख़िरकार मुझसे मेरी इस दुनियाए लताफ़तको छीन लेगी। वक़्त गुज़रता गया, कमानी खुलती चली गई, और कुछ दिनके बाद मुझे एक क़िस्मका हल्का बाग़ियाना (विद्रोही) मैलान पैदा हो गया और तरक्क़ी करने लगा। नौबत यहाँतक पहुँची कि मेरी नमाज़ें तर्क हो गईं, दाढ़ी मुँड गई, रातका रोना, सुबहका आहे भरना ख़त्म हो गया और मैं उस मंज़िलमें आगया जहाँ हर क़दीमी रस्मो-रिवाज रिवायत (पुरातन प्रथाओं रूढ़ियों, किंवदन्तियों) पर एतराज़ करनेको जी चाहता है।

'मेरे वालिदने मुझे बड़ी नरमी और अहतियातके साथ समझाया फिर धमकाया मगर मुझपर कोई असर न हुआ। मेरी बग़ावत बढ़ती ही चली गई। नतीजा यह हुआ कि मेरे बापने वसीयतनामा तहरीर फ़र्माकर मेरे पास भेज दिया कि अगर अब भी मैं अपनी ज़िदपर क़ायम रहूँगा तो सिर्फ़ १०० रुपए माहवार वज़ीफ़के अलावा कुल जायदादसे महरूम कर दिया जाऊँगा। लेकिन मुझपर इसका भी मुतलक़ असर नहीं हुआ। छः माहके बाद उनके तलब किये जानेपर मैं झुकाए अदबके साथ वालिदके पास पहुँचा। मेरे शफ़ीक़ बापने मुझसे कहा—'शबीर!' और मैंने नज़र उठाई तो देखा कि मेरे बापकी बड़ी-बड़ी गुलाबी आँखोंमें

आँसू डबडबाये हुए हैं। 'यह देखो, दूसरा वसीअतनामा। मैंने जायदादमें हिस्सा तुम्हारे दोनों भाइयोंके बराबर कर दिया है।' मेरे बापने भर्राई हुई आवाज़में मुझसे कहा—'शबीर! इस दौलत और जायदादकी ख़ातिर लोग माँ-बाप और भाई-बहन तकको मार डालते हैं और यहाँ तक कि ईमानको भी गँवा देते हैं। मगर तुमने इस दौलत और जायदादकी अपने उसूलके सामने ज़र्रा बराबर भी परवाह न की। मुझे तुम्हारी यह बात बहुत पसन्द आई'।"

उक्त आत्मपरिचयसे स्पष्ट हो जाता है कि 'जोश' किस धातुके बने हैं। 'जोश' का जन्म १८९६ में मलीहाबाद, ज़िला लखनऊमें हुआ। आप ९ वर्षकी आयुसे १२–१३ वर्षकी आयु तक 'अज़ीज' लखनवीसे इसलाह लेते रहे। बादमें स्वतंत्र होकर शायरी करने लगे। कॉलिज छोड़कर १९२४ में निज़ाम-स्टेटमें सर्विस की, और १९३४ में 'लिटरेरी सीनियर' के पदको छोड़कर देहलीमें "कलीम' मासिकपत्र निकालने लगे।

'जोश' इतने नेक हैं कि दुश्मनके बदी करनेपर उन्हें स्वयं शर्म आ जाती है। लेकिन स्वाभिमानको ठेस पहुँचनेपर आग हो जाते हैं। फ़र्माया भी है:—

"दिल हमारा जज़्बयेग़ैरतको[1] खो सकता नहीं।
हम किसीके सामने झुक जाएँ हो सकता नहीं॥

राहेख़ुद्दारीसे[2] मरकर भी भटक सकते नहीं।
टूट तो सकते हैं हम, लेकिन लचक सकते नहीं॥

हश्रमें[3] भी ख़ुसरवाना[4] शानसे जायेंगे हम।
और अगर पुरसिश[5] न होगी तो पलट आयेंगे हम॥

---

[1]लज्जाको (यहाँ व्यक्तित्वकी आनको); [2]स्वाभिमानके पथसे; [3]प्रलयवाले दिन ईश्वरके समक्ष; [4]बादशाही; [5]आवभगत।

होनेपर जोशको उनके पुराने नौकरकी भी याद आगई। और उस बूढ़े नौकरके आनेपर उससे भी बड़ी मुहब्बतसे सबके सामने पेश आये।

'जोश' उदार हृदय और दानी स्वभावके हैं—भद्र और नेक हैं। मुस्लिम वंशमें उत्पन्न हुए हैं, परन्तु 'जोश' का मजहब मनुष्य-सेवा और इंसान देशकी स्वतन्त्रता है।

'जोश' एक कामयाब शायर हैं। वे सही मायनोंमें शायराना दिलो-दिमाग लेकर पैदा हुए हैं। उनके कलाममें वोह सचाई है जो उनके फलसफे-को उभारती है। लाहौरके एक बहुत बड़े जल्सेमें जिसमें टैगोर और सरोजिनी नायडू भी थीं, जल्सेके सभापति प० बृजमोहन दत्तात्रय साहब 'कैफी' ने 'जोश' का परिचय देते हुए फर्माया था—" 'जोश'की शायरीने हमें इस काबिल बना दिया है कि आँखें नीची किये बगैर अपनी शायरीको तरक्कीयाफ्ता जबानोंकी शायरीके मुकाबिलेमें रख सकते हैं।"[१]

'जोश' ने प्राकृतिक सौन्दर्य, प्रेम, देशभक्ति, हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य, स्वतन्त्रता, किसान-मजदूर, मुफलिस, सरमायेदार और मानसिक, धार्मिक, सामाजिक रूढियोंपर बहुत काफी लिखा है। उसी सागरके कुछ मोतियो-की बानगी देखिए।

गुलामों से खिताबः—

('जोश'की देशभक्तिका परिचय)

जब दो देशोंमें युद्ध होता है, तब एक-न-एककी हार निश्चित है। फलस्वरूप विजित देश परतंत्रताकी नारकीय यत्रणा सहन करनेको बाध्य हो जाता है। विजित होनेपर भी वह अपने पूर्व गौरवको नहीं भूलता और अपनी वर्त्तमान स्थितिमें सदैव असन्तुष्ट और क्षुब्ध रहता है। उसके मनमें लुटने और पिटनेका खयाल सदैव काँटेकी तरह चुभता रहता है।

---

[१]देखिए—नक्शोनिगारकी भूमिका।

ख़ुदाके फ़ज़्लसे बदबख़्त हूँ, बुज़दिल हूँ, नादाँ हूँ।
मेरी गर्दनमें है तौक़ेग़ुलामी पाबजौलाँ[1] हूँ॥
दरेआक़ा[2] पै सर है, क़फ़्शबरदारीपै[3] नाज़ाँ[4] हूँ॥"

ग़ुलामीसे आपको इस क़दर चिढ़ है कि 'मुस्तक़बिल के ग़ुलाम, शीर्षकमें आप सन्तान भी पसन्द नहीं करते, क्योंकि—

इक दिन 'जलील'ओ 'वहशी' इनके भी नाम होंगे।
अपनी ही तरह इक दिन यह भी ग़ुलाम होंगे॥
(शोलओ शबनम)

पस्तक़ौम :—

गर्दनका तौक़ पाँवकी जंजीर काट दे।
इतनी ग़ुलामक़ौममें हिम्मत कहाँ है 'जोश'?
अपनी तबाहियोंपै कभी ग़ौर कर सके।
इतनी जलील मुल्कको फ़ुर्सत कहाँ है 'जोश'?
इक हर्फ़ेगर्म सुनते ही लौ दे उठे दिमाग़।
हिन्दोस्तानमें वह हरारत कहाँ है 'जोश'?
(सैफ़ोसुबू)

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर दिल्ली गए तो म्यूनस्पल कमेटीने अभिनन्दन देनेसे मना कर दिया। उसी भावावेशमें लिखते हैं :—

....'आह ! ऐ टैगोर ! तू क्यों हिन्दमें पैदा हुआ?
सच बता तू किस अदायेमुल्कपर शैदा हुआ?

---

[1]पाँवोंमें बेड़ियाँ पहने हुए।
[2]परतंत्र बनानेवालेकी चौखट।
[3]जूता उठानेपर; [4]गर्वित।

इस जगह तो कांपती हैं ख़ुदकी परछाइयाँ।
ज़िन्दगी शायद है मुर्दे साँस लेते हैं यहाँ॥'

भारतकी ग़ुलामीसे 'जोश' इतने दुखी हैं कि इसपर उन्होंने उम्र भर लिखा है। अपने इकलौते पुत्रको सम्बोधित करते हुए "सज्जाद से"— शीर्षकमें उन्होंने जो लिखा है उसीसे उनकी असीम देश-भक्तिका परिचय मिलता है—

. . . .

क़ब्रमें हज़रेपिदरको शाद करनेके लिए।
सर कटाना हिन्दको आज़ाद करनेके लिए॥

. . . .

आपकी सोती हुई क़िस्मत जगानेके लिए।
क़ब्रपर दो फूल ले आना चढ़ानेके लिए॥
बाग़ेहस्तीके न वोह् बाग़े जिनाँके फूल हों।
मुज़्दए[1] आज़ादिये हिन्दोस्ताँके फूल हों॥'

(शोलओ शबनम)

हुब्बे वतन और मुसलमान —

मज़हबी इख़्लाफ़के जज़्बेको ठुकराता है जो।
आदमीको आदमीका गोश्त खिलवाता है जो॥
फ़र्ज़ भी कर लूँ कि हिन्दू हिन्दकी रुसवाई है।
लेकिन इसको क्या करूँ, फिर भी वोह् मेरा भाई है॥
बाज़ आया मैं तो ऐसे मज़हबी ताऊनसे।
भाइयोंका हाथ तर हो भाइयोंके ख़ूनसे॥

---

[1]शुभ समाचाररूपी फल।

. . . .

तेरे लबपर है इराक़ो, शामो, मिस्रो, रूसो चीन ।
लेकिन अपने ही वतनके नामसे वाक़िफ़ नहीं ॥

सबसे पहले मर्द बन हिन्दोस्तांके वास्ते ।
हिन्द जाग उट्ठे, तो फिर सारे जहाँके वास्ते ॥

(हर्फ़ो हिकायत)

ग़द्दारसे ख़िताब :—

उँगलियां उट्ठेंगी दुनियामें तेरी औलादपर ।
ग़लग़ला होगा वह आते हैं रज़ालतके[1] पिसर[2] ॥

तेरी मस्तूरातका बाज़ारमें होगा क़याम ।
मादरेदुश्नाममें[3] तेरा लिया जायेगा नाम ॥

उस तरफ़ मुंह करके थूकेगा न कोई नौजवां ।
बरकी[4] हसरतमें रहेंगी तेरे घरकी लड़कियाँ ॥

क्या जवानोंके ग़ज़बका ज़िक्र औ हवसेख़िताब[5] !
सुनके तेरा नाम उड़ जाएगा बूढ़ोंका ख़िज़ाब ॥

फ़ाहश समझी जायेंगी महलोंमें तेरी दास्तां ।
कांप उठेंगी ज़िक्रसे तेरे कँवारी लड़कियाँ ॥

आयेगा तारीख़का जिस वक़्त जुम्बिशमें क़लम ।
क़ब्र तेरी दे उठेगी लौ जहन्नुमकी क़सम ॥

---

[1]कमीनापनके; [2]वंशज ।

[3]दुर्वचनोंका आदर्श (यानी ग़द्दार कह देना ही सबसे बड़ी गाली होगी) ।

[4]दूल्हाकी; [5]उपाधियोंके लालायित ।

भूखा हिन्दोस्तान —

दरिद्र कुटुम्बका चित्र खींचते हुए अभिलषित वस्तु न मिलनेपर एक बालककी मनोव्यथाका कैसा सजीव वर्णन है —

> 'खेलनेमें निफ़लके गुलफ़ाम[1] था डूबा हुआ।
> आई इतनेमें गलीसे आमवालेकी सदा॥
> देखकर माँकी उदासी हो गई पामालयास[2]।
> अँखड़ियोंमें आमकी सुर्ख़ी, तबस्सुममें[3] मिठास॥
> होंठ काँपे कुछ-न-कुछ और रह गए फिर काँपके।
> दिलमें फिर चुभने लगे अगली जिदोंके नश्तरे[4]॥
>
> छा गया चहरेपे सन्नाटा दिले नाकामका।
> अश्क बनकर आँखसे टपका तसव्वुर आमका॥
>
> आह! ऐ हिन्दोस्ताँ! ऐ मुफ़लिसोंकी सरज़मीं।
> इस कदर पर कोई तेरा पूछनेवाला नहीं?
> ताकुजा यह ख़्वाब? ऐ हिन्दोस्ताँ आ होशमें।
> आज भी हैं सैकड़ों अर्जुन तेरे आग़ोशमें॥'

(शोलओ शबनम)

चलाए जा तलवार —

सन् १९३० में लखनऊकी पुलिसने निर्दोष निहत्थी जनतापर गोली चलाई थी। उसीको लक्ष्य करते हुए फ़र्माया है —

---

[1]गुलाब-सा सुन्दर बच्चा, [2]अभिलाषा मिट-सी गई, [3]स्मित, [4]नश्तर।

'भेड़ियोंके तौरसे इन्सांका करता है शिकार।
ख़ाक हो जा ऐ जहाँबानीके[1] झूठे इक़्तदार[2]॥
बेकसोंके ख़ूनको नामर्द समझे जा हलाल।
देख, ख़ंजर तौलनेपर है मशीय्यतका[3] जलाल[4]॥
औरतोंकी अस्मतें, बच्चोंके दिल, बूढ़ोंके सर।
हाँ, चढ़ाए जा जहाँबानीकी क़ुर्बानगाहपर॥
ठोकरें खाता फिरेगा कजकुलाहीका[5] ग़रूर।
दबके भेजेसे निकल जाएगा शाहीका ग़रूर॥'

(हर्फ़ो हिकायत)

'मक़तले कानपुर'—शीर्षकमें 'जोश' ने १९३१ में कानपुरमें हुए हिन्दू-मुस्लिम-फ़िसाद—जिसमें श्रीगणेशशंकर विद्यार्थी बलि हुए, अपने हृदयकी वेदना किस ढंगसे व्यक्त की है, और मुसलमानोंपर किस तरह बरसे हैं नमूना देखिये :—

'ऐ सियहरू,[6] बेहया, वहशी, कमीने, बदगुमाँ!
ऐ जबीने अर्जके दाग़, ऐ दनिएहिन्दोस्ताँ[7]!!
तुझपै लानत ऐ फ़िरंगीके ग़ुलामे बेशऊर!
यह फ़िज़ाये सुलह परवर, यह क़ताले कानपूर॥
तेग़ेबुर्रां और औरतका गला क्यों बदसिफ़ात?
छूट जायें तेरी नब्ज़ें, टूट जायें तेरे हात॥
कोहनियोंसे यह तेरी कैसा टपकता है लहू?
यह तो है ऐ संगदिल! बच्चोंका ख़ूने मुश्कबू॥

---

[1]–[4]विश्वविजयके झूठे दावेदार; [2]ईश्वरका; [3]तेज; [4]बादशाही तिर्छे कुल्लेपर बँधा हुआ तिर्छा साफ़ा अर्थात्, अकड़; [6]काली आत्मा; [7]हिन्दके कमीन।

मर्द हैं तो उनसे सब पहले जो मारें फिर मरें।
तूने बच्चोंको बना डाला, ख़ुदा ग़ारत करे॥

तूने ओ बुज़दिल! लगाई है घरोंमें सिर्फ़ आग।
क्या इन्हीं हाथोंमें लेगा रख़्शे आज़ादीकी बाग[1]?

इस तरह इन्सान, और ज़िल्लत करे इन्सानपर।
तुफ़ है तेरे दीनपर, लानत तेरे ईमानपर॥

दर्देमुश्तरक —

ऐक्यका कैसा ज़ोरदार समर्थन है —

सुनते हैं सैलाबमें डूबा हुआ था इक दरख़्त।
जिसकी चोटीपर डरे बैठे थे दो आशुफ़्ता बख़्त॥

एक उनमें सांप था और एक हट्टा नौजवां।
दो अदूओंका एक भीगी शाख़पर था आशियां॥

सच है दर्देमुश्तरकमें है वोह रूहे इत्तहाद[2]।
दहरमें जिसके बदल जाते हैं आईने इनाद[3]॥

लेकिन ऐ ग़ाफ़िल मुसलमानो! मुदब्बिर हिन्दुओ!
हिन्दके सैलाबमें इक शाख़पर तुम भी तो हो?

नाज़ुक अन्दाज़ाने कॉलिजसे ख़िताब टीपटॉप फ़ैशनेबुल विलासी युवकोंकी किस तरह ख़बर ली है —

जग और नाज़ुक कलाई पेच हैं तक़दीरके।
मुड़ न जाएगी निगोड़ी बोझसे शमशीरके?

सुन लो जो मौज़ूं नहीं मर्दाना सूरतके लिए।
ज़िन्दगी उनकी वबा है आदमीयतके लिए॥

---

[1]स्वतन्त्रता-तुरंगकी लगाम, [2]संगठन शक्ति, [3]विरोध भाव।

मर्द कहते हैं उसे ऐ माँग-चोटीके ग़ुलाम !
जिसके हाथोंमें हो [1]तूफ़ानी अनासिरकी लगाम ॥

मर्दकी तख़लीक है जोर आजमानेके लिए।
गर्दनें सरकश हवादिसकी झुकानेके लिए ॥

मर्द हैं सैलाबके अन्दर अकड़नेके लिए।
बहरकी बिफरी हुई मौजोंसे लड़नेके लिए ॥

. . . .

जंगमें हो बाँकपन जिसकी शुजाअतका गवाह।
रज़्मके मैदाँमें कज करता हो माथेपर कुलाह ॥

दौड़ता हो शोलाख़ू बिजलीका दामन थामने।
मुस्कराता हो गरजते बादलोंके सामने ॥

मज़हका करता हो ख़ूँ आशाम तलवारोंके साथ।
खेलती हों जिसकी नींदें सुर्ख़ अंगारोंके साथ ॥

. . . .

जिन्दगी तूफ़ान हैं और नाव हो तुम पापकी।
आह, जीती-जागती बदबख़्तियाँ माँ-बापकी ॥

किसान और मज़दूर :—

'किसान'—शीर्षकमें सन्ध्या-कालीन दृश्यका वर्णन करते हुए फ़रमाया है :—

. . . .

'ख़ून है जिसकी जवानीका बहारे रोज़गार।
जिसके अश्कोंपर फ़राग़तके[1] तबस्सुमका[2] मदार ॥

[1]सुख चैन, आरामके; [2]मुस्कराहटका।

दौड़ती है रातको जिसकी नज़र अफ़लाकपर[1]।
दिनको जिसकी उँगलियाँ रहती हैं नब्ज़ेख़ाकपर ॥

ख़ून जिसका दौड़ता है नब्ज़ेइस्तक़लालमें[2]।
लोच भर देता है जो शहज़ादियोंकी चालमें ॥

धूपके झुलसे हुए रुख़पर मशक़्क़तके निशाँ।
खेतसे फेरे हुए मुँह, घरकी जानिब है रवाँ ॥

टोकरा सरपर, बग़लमें फावड़ा, तेवरपै बल।
सामने बैलोंकी जोड़ी, दोशपर[3] मज़बूत हल ॥

जिसका मस[4] ख़ाराज़म[5] बुनता है इक चादर महीन।
जिसका लोहा मानकर सोना उगलती है ज़मीन ॥

सोचता जाता है—'किन आँखोंसे देखा जाएगा।
बेरिदा[6] बीवीका सर, बच्चोंका मुँह उतरा हुआ ॥

सीमोज़र,[7] नानोनमक,[8] आबोग़िज़ा[9] कुछ भी नहीं।
घरमें इक ख़ामोश मातमके सिवा कुछ भी नहीं ॥"

---

[1]आकाशपर [2]संतोष दृढ़तामें [3]कंधेपर।
[4]स्पर्श करनेकी शक्ति (यहाँ हल जोतनेसे तात्पर्य है)।
[5]कड़ा-परिश्रम [6]नंगे सिर चादर रहित [7]चाँदी सोना।
[8]रोटी-नमक [9]ख़ुराक-पानी।

'जवाले जहाँबानी'—शीर्षकसे किसानको सावधान करते हुए कहा है :—

तुझे मालूम है तारीकियाँ[1] बढ़ती हैं जब हदसे।
उबलने लगती है जर्राते खाकीसे दरख़्शानी[2]॥

....

गये वोह दिन कि तू महरूमियेक़िस्मतपै रोता था।
जरूरत है तुझे अब आफ़ताेंपै मुस्करानेकी॥

तड़प, पैहम तड़प, इतना तड़प बर्क़ेतपाँ[3] बन जा।
ख़ुदारा! ऐ जमीने वेहक़ीक़त!! आस्माँ बन जा॥

(शोलओ शबनम)

ईद मिलने वाले :—

कहूँ क्या दिलपै क्या-क्या हौलनाक आलाम सहता हूँ।
न पूछ ऐ हमनशीं! क्यों ईदके दिन सुस्त रहता हूँ?

वोह सदमे जो लगे रहते हैं आसाइशकी घातोंमें।
वोह दुनिया सिसकियाँ भरती है जो तारीक रातोंमें॥

वोह चश्मा ग़मका सीनेसे जमींके जो उबलता है।
वोह ग़मगीं करवटें जो आस्माँ शबको बदलता है॥

वोह झूठी राहतें जिनसे तपाँ है दर्दके पहलू।
वोह फीके क़हक़हे गिरते हैं जिनसे ख़ूनके आँसू॥

वोह कोन्दे[4] ग़मके रूहोंके उफ़क़पर[5] जो लपकते हैं।
वोह दिल जो सीनए जर्रातमें[6] पैहम[7] धड़कते हैं॥

---

[1] अँधियारियाँ; [2] चमक, रोशनी; [3] जलती हुई बिजली।
[4] शोले, लपट; [5] आसमानपर; [6] धूलके कणोंमें; [7] सदैव।

वो झोंके नर्म जिनमें रात भर दम ही नहीं लेती।
ग़रीब इन्सानियतकी मुस्तक़ि ग़मनाक मौसीक़ी[1]॥
वोह दिल मशग़ूल है जो ज़िन्दगीके दर्देवेहममें।
वोह आँसू जो हैं ग़ल्ताँ दीदये[2] अदायाये आलममें॥
सबाए[3] ईदके जिस वक्त जलवे मुस्कराते हैं।
यह सब रोते हुए मुझसे गले मिलनेको आते हैं॥
(फ़िक्रो निशात)

मुफ़लिसोंकी ईद —

अहलेदवलमें[4] धूम थी रोज़े सईदकी।
मुफ़लिसके दिलमें थी न किरन भी उमीदकी॥
इतनेमें और चर्खने मिट्टी पलीद की।
बच्चेने मुस्कराके ख़बर दी जो ईदकी॥
फ़र्तेमहनसे[5] नब्ज़की रफ़्तार रुक गई।
माँ बापकी निगाह उठी और झुक गई॥
आँखें झुकीं कि दस्तेतहीपर[6] नज़र गई।
बच्चोंके वलवलोंकी दिलों तक ख़बर गई॥
ज़ुल्फ़ें शबातगमकी हवासे बिखर गई।
बर्छी-सी एक दिलसे जिगर तक उतर गई॥
दोनों हजूमेग़मसे हम आग़ोश हो गये।
एक दूसरेको देखके ख़ामोश हो गये॥
(नक्शोनिगार)

---

[1]संगीत, [2]भरणपोषणकी चीज़ोंके जुटानेमें त्रस्त, [3]हवा, [4]अमीरोंमें, [5]आकस्मिक चिन्ताकी अधिकतासे, [6]ख़ाली हाथकी ओर, दरिद्रतापर।

दीनेआदमियत :—

(सामाजिक उन्नतिमें रोड़े अटकानेवाले बड़े-बूढ़ोंके प्रति)

नौजवानो ! यह बड़े बूढ़े न मानेंगे कभी।
सेहतेअफ़कारसे[1] ख़ाली है उनकी ज़िन्दगी॥

सुबहका जब नाम आता है तो सो जाते हैं ये।
रोशनीको देखते ही कोर हो जाते हैं ये॥

इनके शानोंपर[2] तो ऐसे सर हैं ऐ अहलेनिगाह !
जिनका गूदा जल चुका है, जिनके ख़ाने हैं सियाह॥

और वोह ख़ाने हैं जिन तक रोशनी जाती नहीं।
आँधियोंके वक़्त भी जिनमें हवा आती नहीं॥

बुझ चुके हैं जुहलके[3] झोंकोंसे उन सबके चिराग़।
कबसे हैं ज़ोफ़ुलनफ़समें[4] मुब्तला[5] उनके दमाग़॥

. . . .

योंमे पैदाइशसे हैं यह अपने सीनोंमें लिये।
काँपते, बूढ़े अक़ीदे, थरथराते वसवसे[6]॥

. . . .

सैकड़ों हूरोंका हर नेकीपै है इनको यक़ीं।
सूद लेनेमें 'ख़ुदा'से भी ये शर्माते नहीं॥

(हर्फ़ोहिकायत)

धार्मिक विद्रोहकी भावना यहाँतक प्रबल हो उठी है कि पुराने सड़े-गले ख़ुदाको भी नहीं चाहते:—

---

[1]विचारधारासे; [2]कन्धोंपर; [3]जहालत, मूर्खताके; [4]रोगसे पीड़ित; [5]घिरे हुए; [6]वहम, विचार।

मज़ाक़े बन्दगीके[1] असरे-नौकी[2] तुझको क़सम।
नये मिज़ाजका परवरदिगार पैदाकर॥

बहारमें तो ज़मींसे बहार उबलती है।
जो मर्द है तो ख़िज़ाँमें बहार पैदा कर॥

बनवासी बाबू —

(प्राकृतिक सौन्दर्यकी कुछ झलक)

जंगलोंके सर्दगोशे,[3] रेल बल खाती हुई।
ज़ुल्मतके[4] सीनेपै ज़ुल्फ़ेइल्म[5] लहराती हुई॥

बज़्मेवहशतमें[6] तमद्दुन[7] नाज़ फ़रमाता हुआ।
तुन्द[8] ऐंजिनका धुआँ मैदांपै बल खाता हुआ॥

फल घबराये हुए-से, पत्तियाँ डरती हुई।
गर्म पुरज़ोंको सदाएँ शोख़ियाँ करती हुई॥

एक इस्टेशन फ़सुर्दा, मुज़महल, तनहा, उदास।
झुटपुटेकी बदलियाँ, पुरहौल जंगल आसपास॥

मलगजीनाले, अँधेरी वादियाँ, हल्की फुवार।
बनके गर्दोपेश कोसों तक खजूरोंकी क़तार॥

क़द्दे आदम घास, गहरी नद्दियाँ, ऊँचे पहाड़।
एक स्टेशन फ़क़त लेन्देके, बाक़ी सब उजाड़॥

---

[1] उपासनाकी अभिलाषा, [2] नवीन युगकी, [3] शीतल स्थानोंमें [4] अज्ञानतारूपी अन्धकारके, [5] शिक्षा रूपी ज़ुल्फें [6] दीवानगीके दरबारमें, [7] नागरिकता, शहरियत, [8] उग्र।

काश ! जाकर वादियोंसे 'जोश' यह पूछे कोई ।
जंगलोंमें कट रही है किस तरहसे जिन्दगी ?

. . . .

सच कहो, उठते हैं बादल जब अँधेरी रातमें ।
जब पपीहा कूक उठता है भरी बरसातमें ॥

शबको होता है घने जंगलमें जब बारिशका शोर ।
साइयाँ[1] भीगी हुई रातोंमें जब करता है शोर ॥

रूह तो उस वक़्त फ़र्तेग़मसे घबराती नहीं ?
तुमको अपने अहदेमाज़ीकी[2] तो याद आती नहीं ?

(शोलओशबनम)

दुनियामें आग लगी है :—

मौजे हवाके अन्दर शोला भड़क रहा है ।
गर्मीकी दोपहर है, सूरज दहक रहा है ॥

तपती हुई ज़मींसे आँचें निकल रही हैं ।
पत्थर सुलग रहे हैं, कानें पिघल रही हैं ॥

हर क़ल्ब फुंक रहा है तहख़ाना चाहता है ।
पर्देमें लूके गोया आलम कराहता है ॥

लौ दे रहे हैं काँटे, और फूल काँपते हैं ।
ताइर[3] सकूतमें[4] हैं, चौपाये हाँपते हैं ॥

क्यों जिस्मेनाज़नीको लूमें जला रहे हो ?
रूमाल मुँहपै डाले किस सिम्त जा रहे हो !

---

[1]सिंह; [2]भूतकालकी; [3]परिन्दे ।
[4]मौनावस्थामें ।

वक्तेजवाल अपनी शाने शबाबपर है।
ठहरो, कि दोपहरकी गर्मी शबाबपर है॥

देखो यह मेरा मस्कन[1] किस दर्जा पुरफ़िज़ा[2] है।
साया भी है मयस्सर दरिया भी बह रहा है॥

पानी है सर्दोशीरीं, ख़ुनकी भी दिलनशीं है।
नज़दीक, दूर कोई ऐसी जगह नहीं है॥

दुखते हुए जिगरकी हालत दिखाऊँ तुमको।
ठहरो तो बाँसुरीपर आहें सुनाऊँ तुमको॥

साँस लो या ख़ुश रहो —

कसम उस मौतकी उठती जवानीमें जो आती है।
उरूसेनौको[3] बेवा, माँको दीवाना बनाती है॥

जहाँसे झुटपुटेके वक्त इक ताबूत[4] निकला हो।
कसम उस शबकी जो पहले पहल उस घरमें आती है॥

अज़ीज़ोंकी निगाहें ढूँढती हैं मरनेवालोंको।
कसम उस सुबहकी जो ग़मका यह मंज़र दिखाती है॥

कसम साइलके[5] उस अहसासकी जब देखकर उसको।
सियाही दफ़्अतन[6] कंजूसके माथेपै आती है॥

कसम उन आँसुओंकी माँकी आँखोंसे जो बहते हैं।
जिगर थामे हुए जब लाशपर बेटेकी आती है॥

---

[1]स्थान [2]शोभायुक्त।
[3]नव दुल्हनको [4]अर्थी [5]भिक्षुक।
[6]भावनाकी [6]यकायक।

क़सम उस बेवसीकी अपने शौहरके जनाज़ेपर।
कलेजा थामकर जब ताज़ा दुल्हन सर झुकाती है॥
नज़र पड़ते ही इक जोमर्तबा[1] मेहमाँके चेहरेपर।
क़सम उस शर्मकी मुफ़लिसकी आँखोंमें जो आती है॥

. . . .

कि यह दुनिया सरासर ख़्वाब और ख़्वाबे परीशाँ है।
'ख़ुशी' आती नहीं सीनेमें जब तक 'साँस' आती है॥

हमारी सैर :—

लोग हँसते हैं चहचहाते हैं।
शामको सैरसे जब आते हैं॥
लैम्पकी रोशनीमें यारोंको।
दास्तानें नई सुनाते हैं॥

हम पलटते हैं जब गुलिस्ताँसे।
आह भरते हैं थरथराते हैं॥
मेजपर सरसे फेंककर टोपी।
एक कुर्सीपै लेट जाते हैं॥

आप समझे यह माजरा क्या है?
सुनिये, हम आपको सुनाते हैं॥
वोह लगाते हैं सिर्फ़ चक्कर ही।
हम मनाज़िरसे दिल लगाते हैं॥

वोह नज़र डालते हैं लहरोंपर।
और हम तहमें डूब जाते हैं॥

---

[1] भद्र।

घर पलटते हैं वोह 'हवा' खाकर।
और हम 'ज़ख़्म' खाके आते हैं॥

(रुहेअदब)

फ़ुटकर —

मर्द वह क्या है भँवरसे जो उभर सकता नहीं।
हक़ ही जीनेका नहीं उसको जो मर सकता नहीं॥

× × ×

जिसको ज़िल्लतका न हो अहसास वोह नामर्द है।
तंग पहलू है वोह दिल जो बेनियाज़े[1] दर्द है॥

हक़ नहीं जीनेका उसको जिसका चेहरा ज़र्द है।
ख़ुदकशी है फ़र्ज़ उसपर ख़ून जिसका सर्द है॥

× × ×

दौरेमहकूमीमें[2] राहत[3] कुफ़्र, इशरत[4] है हराम।
महवशोंकी[5] चाह, साक़ीकी मुहब्बत है हराम॥

इल्म नाजाइज़ है, दस्तारेफ़ज़ीलत[6] है हराम।
इन्तहा ये है, ग़ुलामोंकी इबादत है हराम॥

कूएज़िल्लतमें ठहरना क्या, गुज़रना भी हराम।
सिर्फ़ जीना ही नहीं, इस तरह मरना भी हराम॥

× × ×

---

[1]अनभिज्ञ, [2]परतन्त्र अवस्थामें।
[3]चैन, [4]विलास, [5]चन्द्रमुखियोंकी।
[6]विद्या-युक्त होना।

अहानत[1] गवारा नहीं आशिक़ीको।
ग़ुलामीमें भी सरवरी[2] चाहता हूँ॥
मिज़ाजेतमन्नाये[3] ख़ुद्दार[4] तौबा।
इबादतमें भी दावरी[5] चाहता हूँ॥
मुसिर[6] हूँ अगर दिलबरी 'दावरी'पर।
क़दमबक़दम मैं पैग़म्बरी चाहता हूँ॥
जो पैग़म्बरीमें भी दुश्वारियाँ हों।
तो हंगामये[7] काफ़िरी चाहता हूँ॥
ख़ुलासा है यह 'जोश' इस दास्ताँका।
कि जौहर हूँ और जौहरी चाहता हूँ॥

× × ×

बिठा दे कश्तियेआलमके[8] नाख़ुदाओंको।
ख़ुद आज कश्तियेआलमका नाख़ुदा[9] हो जा॥
यशक्लेबन्दा तो रहता है उम्रभर ऐ 'जोश'!
उठ, और चन्द नफ़सके लिए ख़ुदा हो जा॥

× × ×

बेहतर तो यही है हँसता रह, तू कोह[10] है ख़ुदको काह[11] न कर।
यह बन न पड़े तो कम-से-कम, ख़ामोश ही रह और आह न कर॥
कुछ दिनमें यह दुनिया ख़ुद आकर क़दमोंपर तेरे झुक जाएगी।
शोराएमुख़ालिफ़से[12] न झिझक परवाए सफ़ीनेगाह[13] न कर॥

---

[1]बेइज़्ज़ती; [2]सरदारी; [3], [4]स्वाभिमानकी अभिलाषा तो छोड़िये; [5]न्यायाधीशका वह पद जो इश्क़में न्याय करे; [6]ज़िद, अनधिकार चेष्टा; [7]नास्तिकता विद्रोह; [8]सांसारिक नावके मल्लाहोंको; [9]मल्लाह, माँझी; [10]पर्वत; [11]तिनका; [12]प्रतिकूल मौजों; [13]जीवन नैयाका तूफ़ान।

रुबाइयात

अपनी ही गरजसे जी रहे हैं जो लोग।
अपनी ही अनाएँ[1] सी रहे हैं जो लोग॥
उनको भी है क्या शराब पीनेसे गुरेज़ ?
इन्सानका खून पी रहे हैं जो लोग॥

सबक इबरतका ले नादान! बालोंकी सुफेदीसे।
कफन ओढ़ा है जीते जी निगारेज़िन्दगानीने[2]॥
नज़रकर झुर्रियोंसे खींचके सिमटे हुए रुखपर।
यह वोह बिस्तर है दम तोड़ा है जिसपर नौजवानीने॥

फाड़ते ही जैसे मैला चीथड़ा उठती है गर्द,
यूँ ही वोह दो शख्स जो इक दूसरेसे हैं खफा।
गुफ्तगू करते हैं जब आपसमें अज़राहेनिफाक[3],
देखता हूँ उनके होंठोंसे गुबार उड़ता हुआ॥

गुबार इक दूसरेपर फेंकते हैं तेज़ रौ मोटर।
मुखालिफ सिम्तसे हमदोश होकर जब गुज़रते हैं॥
यूँ ही दो बदगुहर[4] अशखास जब मिलते हैं आपसमें।
नई तारीफियाँ इक दूसरेसे अख्ज़[5] करते हैं॥

दश्त है तारीक और रह रहके झौंदेकी लपक।
छू रही है यूँ उफक्को[6] जुल्मते खामोशको॥

---

[1] चाग [2] जीवनरूपी सुन्दरीने [3] द्वेषभावसे।
[4] कटुभाषी [5] ग्रहण, [6] आकाशको।

जैसे उस मायूसकी आँखोंका आलम जो ग़रीब।
हाल कहना चाहता हो और कह सकता न हो॥

वक़्तेशब कुछ और भी तारीक कर जाती है यूँ।
अपनी चमकाती हुई ज़ुल्मतको मोटरका ग़ुबार॥
जिस तरह काँधेपै रखकर हाथ दम भरको ख़ुशी।
दोशपर[1] ग़मका नया इक और रख जाती है बार॥

नर्म हो जाता है पुलटिशसे जो पककर फोड़ा।
बेश्तर नश्तरेजर्राहसे होता है फ़िगार[2]॥
फ़र्शेगलकी यूँ ही हो जाती है ख़ूगर[3] जो क़ौम।
होना पड़ता है उसे ख़ारेमुग़ीलाँसे[4] दो-चार॥

गुज़रजा

(१६मेंसे २ बन्द)

यह माना कि यह ज़िन्दगी पुरअलम है।
यह माना कि यह ज़िन्दगी मौजेसम[5] है॥

यह माना कि यह ज़िन्दगी इक सितम है।
यह माना कि यह ज़िन्दगी ग़म ही ग़म है॥
सरेग़मपै ठोकर लगाता गुज़र जा।

अगर हर नफ़स है सतानेपै माइल।
अगर ज़िन्दगी है रुलानेपै माइल॥

---

[1]कन्धेपर; [2]चीरना; [3]आदी।
[4]कीकरका काँटा, मुसीबत; [5]विपदाएँ।

अगर आस्माँ है मिटानेपै माइल।
अगर दहर है रंग उड़ानेपै माइल॥
खुद इस दहरका रंग उड़ाता गुज़र जा।

× × ×

नौजवानीमें मसाइबसे[1] डराता है मुझे।
नासिहा, नादाँ! यह है वोह मौसमेबर्क़ोशरर[2]॥
आतिशेजोशेजनूंमें[3] मारती है फ़हक़हे।
ज़िन्दगी जब मौतकी आँखोंमें आँखें डालकर॥

कुछ चुने हुए शेर

ज़माना हो बुरा है दूर क्यों जाओ, हमें देखो।
जवाँ हैं और कोई वलवला बाक़ी नहीं दिलमें॥
जो मौक़ा मिल गया तो ख़िज़्रसे यह बात पूछेंगे—
"जिसे हो जुस्तजू अपनी वोह बेचारा किधर जाये?"
जब कोई बनता है लाखों हस्तियोंको मेटकर।
सुबह तारोंको दबाती है उभरनेके लिए॥
हँस रहे हैं शबेवादा वो मकाँमें अपने।
हम इधर ऐशका सामान किये बैठे हैं॥
शहरोंमें गश्त कर लें, सहरामें ख़ाक उड़ा लें।
तुमको भी ढूंढ लेंगे अपनेको पहले पा लें॥
अगर सच पूछिये इससे कहीं आसान है मरना।
ग़यूर[4] इंसानका नाअहलसे[5] हाजततलब[6] करना॥

---

[1]मुसीबतोंसे, [2]बिजली और शोलोंकी ऋतु, [3]उन्मत्तावस्थामें, [4]स्वाभिमानी, [5]अयोग्यसे, [6]अभिलाषापूर्ति।

ज़ौक़ेकरम[1] नहीं है, तावेजफ़ा[2] नहीं है।
बुज़दिलको जिन्दगीका कोई मज़ा नहीं है॥

बढ़े जाओ न यूँ डूबो ज़रा ग़ौरोतामुलमें[3]।
तरक़्क़ी थकके सोजाती है आग़ोशेतनज़्ज़ुलमें[4]॥

बढ़के सामान ऐशोइशरतका।
ख़ून करता है आदमीयतका॥

कहते हो 'ग़मसे परीशान हुए जाते हैं।'
यह नहीं कहते कि 'इन्सान हुए जाते हैं'॥

पपीहा जब तड़पता है घटामें 'पी कहाँ ?' कहकर।
हमारी रूह सोज़ेइश्क़से इस तरह जलती है॥
तलाशेतुरवतेआशिक़में कोई नाज़नीं जैसे।
बलाकी धूपमें पत्थरपै नंगे पाँव चलती है॥

इक बवा है आलिमेइख़लाक़में[5] उसका वजूद[6]।
तुझमें इक ज़र्रा भी ग़ैरत हो तो उस ज़ालिमसे डर॥
उस कमीनेसे हज़रकर, भाग उस मनहूससे।
ख़र्च कर डाले जो इज़्ज़त और बचा ले मालोज़र॥

रेशयेपीरी

निगह बेनूर होकर रातका मंज़र दिखाती है।
तनफ़्फ़ुस आह भरता है क़ज़ा लोरी सुनाती है॥

---

[1]महरबानीका शौक़; [2]अत्याचारकी शक्ति।
[3]सोच फ़िक्रमें; [4]असफलताकी गोदमें; [5]लोकमें;
[6]अस्तित्व।

जईफीका यह रेशा जिससे जुम्बिशमें है सब आजा[1]।
यह है दरअस्ल क्या ? कुछ अक्लमें यह बात आती है ?

यह है इक पालना डोरी हिलाती है रगें जिसकी।
यह इक झूला है जिसमें जिन्दगीको नींद आती है॥

इबादत :—

इबादत करते हैं जो लोग जन्नतकी तमन्नामें।
इबादत तो नहीं है इक तरहकी वोह तिजारत है॥

जो डरकर नारेदोज़खसे खुदाका नाम लेते हैं।
इबादत क्या वोह खाली बुज़दिलाना एक सिदमत है॥

मगर जब शुक्रेनेमतमें जबीं झुकती है बन्देकी।
वोह सच्ची बन्दगी है, इक शरीफाना अताअत है॥

कुचल दे हसरतोंको बेनियाज़े मुद्‌आ हो जा।
खुदीको झाड दे दामनसे मर्देबाखुदा हो जा॥

उठा लेती है लहरें तहनशीं होता है जब कोई।
उभरना है तो ग़र्के मौजयेबहरेफना हो जा॥

५ अप्रैल १६४५

[1] अंगापांग ।

१५

शेख़ आशिक़ हुसैन 'सीमाब' अकबराबादी

[जन्म आगरा सन् १८८० ई०]

अल्लामा 'सीमाब' अकबराबादी उर्दू-शायरीके लब्धप्रतिष्ठ काव्यगुरुओं-में हैं। आपके कई सहस्र शिष्य हैं जो भारतवर्षके हर कोनेमें बिखरे हुए हैं। सैकड़ोंकी संख्यामें सीमाब-सोसायटीकी शाखाएँ उर्दूका प्रसार कर रही हैं। 'सीमाब' मानों उर्दूका प्रसार करनेके लिए ही पैदा हुए हैं। साहित्य-सेवा ही आपके जीवनका ध्येय है। दिन-रात उसीमें रत रहते हैं। उर्दू-संसार आपकी सेवाओंसे उऋण नहीं हो सकता। सर इक़बालकी तरह फ़सीहुलमुल्क मिर्जा 'दाग़' देहलवी आपके भी काव्य-गुरु थे। किन्तु 'इक़बाल' और 'सीमाब' दोनोंने ही उनके पथका अनु-सरण न करके अपना पृथक-पृथक मार्ग चुना। 'इक़बाल' और 'सीमाब' दोनों एक गुरुके शिष्य और युगान्तरकारी कवि होते हुए भी दोनों भिन्न-भिन्न दिशाओंमें बढ़ते हुए दिखाई देते हैं। 'इक़बाल' अन्तमें पूर्ण-रूपेण इस्लामके लिए चिन्ताग्रस्त नज़र आते हैं। उनकी शायरीका समूचा प्रवाह इस्लामी शिक्षा-दीक्षाकी ओर बढ़ता है, और इस्लाम ही उनकी दृष्टिका लक्ष्य बनकर रह जाता है। 'सीमाब' किसी विशेष जाति या सम्प्रदायके मोहमें न फँसकर अखिल विश्वके लिए चिन्तातुर नज़र आते हैं। वे अपने सन्देशसे विश्वकी समस्त पिछड़ी हुई जातियोंको जगाना चाहते हैं। आप उर्दू-शायरीके पुराने स्कूलके स्नातक और वयोवृद्ध होते हुए भी एक क्रान्तिकारी शायर हैं। आपके सन्देशमें विध्वंस और नाशकी खटास न होकर रचनात्मक मिठास मिलती है। ख़ूबी

जईफ़ीका यह रेशा जिससे जुम्बिशमें है सब साजा[1]।
यह है दरअस्ल क्या ? कुछ अक़्लमें यह बात आती है ?

यह है इक पालना डोरी हिलाती है रगें जिसकी।
यह इक झूला है जिसमें जिन्दगीको नींद आती है ॥

इबादत —

इबादत करते हैं जो लोग जन्नतकी तमन्नामें।
इबादत तो नहीं है इक तरहकी वोह तिजारत है ॥

जो डरकर नारेदोज़ख़से ख़ुदाका नाम लेते हैं।
इबादत क्या वोह ख़ाली बुज़दिलाना एक ख़िदमत है ॥

मगर जब शुक्रेनेमतमें जबीं झुकती है बन्देकी।
वोह सच्ची बन्दगी है, इक शरीफ़ाना इताअत है ॥

कुचल दे हसरतोंको बेनियाज़े मुद्दआ हो जा।
ख़ुदीको झाड़ दे दामनसे मर्देबाख़ुदा हो जा ॥

उठा लेती हैं लहरें तहनशीं होता है जब कोई।
उभरना है तो ग़र्क़े मौजयेबहरेफ़ना हो जा ॥

५ अप्रैल १९४५

---

[1] अंगोपांग ।

१५

शेख़ आशिक़ हुसैन 'सीमाब' अकबराबादी

[जन्म आगरा सन् १८८० ई०]

अल्लामा 'सीमाब' अकबराबादी उर्दू-शायरीके लब्धप्रतिष्ठ काव्यगुरुओं-में हैं। आपके कई सहस्र शिष्य हैं जो भारतवर्षके हर कोनेमें बिखरे हुए हैं। सैकड़ोंकी संख्यामें सीमाब-सोसायटीकी शाखाएँ उर्दूका प्रचार कर रही हैं। 'सीमाब' मानों उर्दूका प्रसार करनेके लिए ही पैदा हुए हैं। साहित्य-सेवा ही आपके जीवनका ध्येय है। दिन-रात उसीमें रत रहते हैं। उर्दू-संसार आपकी सेवाओंसे उऋण नहीं हो सकता। सर इक़बालकी तरह फ़सीहुलमुल्क मिर्ज़ा 'दाग़' देहलवी आपके भी काव्य-गुरु थे। किन्तु 'इक़बाल' और 'सीमाब' दोनोंने ही उनके पथका अनु-सरण न करके अपना पृथक-पृथक मार्ग चुना। 'इकबाल' और 'सीमाब' दोनों एक गुरुके शिष्य और युगान्तरकारी कवि होते हुए भी दोनों भिन्न-भिन्न दिशाओंमें बढ़ते हुए दिखाई देते हैं। 'इक़बाल' अन्तमें पूर्ण-रूपेण इस्लामके लिए चिन्ताग्रस्त नजर आते हैं। उनकी शायरीका समूचा प्रवाह इस्लामी शिक्षा-दीक्षाकी ओर बढ़ता है, और इस्लाम ही उनकी दृष्टिका लक्ष्य बनकर रह जाता है। 'सीमाब' किसी विशेष जाति या सम्प्रदायके मोहमें न फँसकर अखिल विश्वके लिए चिन्तातुर नज़र आते हैं। वे अपने सन्देशसे विश्वकी समस्त पिछड़ी हुई जातियोंको जगाना चाहते हैं। आप उर्दू-शायरीके पुराने स्कूलके स्नातक और वयोवृद्ध होते हुए भी एक क्रान्तिकारी शायर हैं। आपके सन्देशमें विध्वंस और नाशकी खटास न होकर रचनात्मक मिठास मिलती है। ख़ूबी

ये है कि आप गज़ल और नज़्म (पुरानी-नई) दोनों प्रणालियोंमें ख्याति-प्राप्त उस्तादोंमें हैं। आपने गज़लका ढाँचा ही बदल दिया है। सीमाब-का कलाम विश्वहित, देशभक्ति, स्वतन्त्रता, रचनात्मक, आध्यात्मिक और दार्शनिक भावोंसे ओत प्रोत होता है। प्रसिद्ध उर्दू-पत्रकार और आलोचक 'नियाज़' फतहपुरीके शब्दोंमें—

"सीमाबका तग़ज़्ज़ुल (गज़लें) सुनकर पढ़ने और पढ़कर समझनेकी चीज़ है'।[1]

दुआ —

'साज़ो आहंग' नामक पुस्तक आप इस दुआसे प्रारम्भ करते हैं -

> यारब ! ग़मेदुनियासे इक लमहेकी फ़ुर्सत दे।
> कुछ फ़िक्रेवतन कर लूँ इतनी मुझे मुहलत दे॥

जंगी तराना —

> दिलावराने तेज़दम, बढ़े चलो, बढ़े चलो।
> बहादुराने मोहतरिम, बढ़े चलो, बढ़े चलो॥
> यह दुश्मनोंके मोर्चे फ़कत हैं ढेर ख़ाकके।
> तुम्हारे सामने जमे कहाँ किसीमें हौसले?
> नहीं हो तुम किसीसे कम,
> बढ़े चलो, बढ़े चलो। दिलावराने० ॥
> सितमके तमतराक़को[2] बढ़ाके हाथ छीन लो।
> है फ़तह सामने चलो, उठो, उठो, बढ़ो, बढ़ो॥

---

[1] 'दक्खिन—आनक' (उर्दू) पृष्ठ २६, १ दिसम्बर, १९४४
[2] शानोशौकत, कर्रोफ़रको।

यह जामेजम, वोह तख़्तेजम,
वढ़े चलो, वढ़े चलो। दिलावराने० ॥

× × ×

वतन :—

जहाँ जाऊँ वतनकी याद मेरे साथ रहती है।
निशाते महफ़िलेआवाद[1] मेरे साथ रहती है॥

× × ×

वतन! प्यारे वतन! तेरी मुहब्बत जुज़वे ईमाँ है।
तू जैसा है, तू जो कुछ है, सकूनेदिलका सामाँ है॥
वतनमें मुझको जीना है, वतनमें मुझको मरना है।
वतनपर ज़िन्दगीको एक दिन क़ुरवान करना है॥

दावतेइन्क़लाव :—

'आगे वढ़ो............या वक़्तकी रफ़्तार रोकदो'

....

तुझे है याद नुस्ख़ा ज़ुल्मतेआलम[2] वदलनेका।
तो फिर क्यों मुन्तज़िर[3] वैठा है तू सूरज निलकनेका॥
मिसाले माहेतावाँ[4] ज़ूफ़िशाँ[5] हो और आगे वढ़।
मिसाले शमा क्यों ख़ूगर[6] है जल-जलकर पिघलनेका॥
ख़ुदाने आज तक उस क़ौमकी हालत नहीं वदली।
न हो ख़ुद जिसको अहसास अपनी हालतके वदलनेका॥

---

[1]भरी मजलिसोंके वैभव; [2]संसारके अँधेरे।
[3]प्रतीक्षामें; [4]चमकता हुआ चांद; [5]प्रकाशमान।
[6]अभ्यासी।

जवानानेवतन —

बढ़के आगे दूरियेसाहिलका[1] अन्दाज़ा करो।
इज़्तराबे[2] शर्मियेमर्हिलका अन्दाज़ा करो॥

खोलकर आँखें हकोबातिलका[4] अन्दाज़ा करो।
आनेवाली हर नई मुश्किलका अन्दाज़ा करो॥

इम्तिहां लेनेको है दौरेपरीशानेवतन[5]।
ऐ जवानानेवतन !!

सोच लो आज़ाद हो जानेकी तदबीरें तमाम।
जमा कर लो ज़हनमें रफ़अतकी[6] तनवीरें[7] तमाम॥

फेंक दो हाथोंसे मायूसीकी तस्वीरें तमाम।
खोल दो प्यारे वतनसे आज ज़ंजीरें तमाम॥

तोड दो बन्देगुलामी ऐ गुलामानेवतन !
ऐ जवानानेवतन !!

ख्वाबआशनायेजमूदसे —

जहांमें इन्क़लाबे ताज़ा बरपा होनेवाला है।
गुलामीके अंधेरेमें उजाला होनेवाला है॥
मुरत्तिब[9] अज़सरेनौ[7]नज़्मेदुनिया[9]होनेवाला है।
मिसाले नक्शेकाली[10]बेहिसोहरकत[11] पड़ा है तू॥
अरे क्या सो रहा है तू ?

---

[1]दरियाके किनारकी दूरीका, [2]बेचैनी, [3]भय असमर्थता, [4]देशकी चिन्ताओंका युग, [5]उच्चविचारकी, [6]ज्ञान उजाला, [7]तैयार [8]नय ढगस, [9]संसारकी व्यवस्था, [10]मनोचित्रकी तस्वीरकी तरह [11]निर्जीवता।

जवानानेवतनमें इक तड़प इक जोश पैदा है।
गुलिस्तानेवतनका पत्ता-पत्ता चौंक उट्ठा है॥
बयाबानेवतनका ज़र्रा-ज़र्रा शोला बरपा है।
मगर अबतक जमूदोकस्लमें[1] ही मुब्तिला है तू॥
अरे क्या सो रहा है तू?

ग़द्दारेक़ौम और वतन :—

किया था जमा जाँबाज़ोंने जिसको जाँफ़रोशीसे।
रुपहले चन्द टुकड़ोंपर वोह इज़्ज़त बेच दी तूने॥
कोई तुझ-सा भी बेग़ैरत ज़मानेमें कहाँ होगा?
भरे बाज़ारमें तक़दीरेमिल्लत[2] बेच दी तूने॥

फुटकर :—

सच कहा था यह किसी दोस्तने मुझसे 'सीमाब'!
'अमन हो जाय अगर मुल्कमें अख़बार न हों'॥

* * *

ज़िन्दगी इल्मोहुनर अज़्मोअमलका नाम है।
ज़िन्दगी उसकी है जिसको है शऊरे ज़िन्दगी॥
सजदे करूँ, सवाल करूँ, इल्तजा करूँ।
यूँ दे तो कायनात मेरे कामकी नहीं॥
वोह ख़ुद अता करे तो जहन्नुम भी है बहिश्त।
माँगी हुई निजात मेरे कामकी नहीं॥

---

[1] आलस्य और ढोंगमें।
[2] क़ीमियत।

मज़दूर :—

गर्द चेहरेपर, पसीनेमें जबीं डूबी हुई।
आँसुओंमें कुहनियों तक आस्तीं डूबी हुई॥
पीठपर नाक़ाबिले बरदाश्त इक बारेगिरां।
ज़ोफ़मे लरज़ी हुई सारे बदनकी झुर्रियां॥
हड्डियोंमें तेज़ चलनेसे चटख़नेकी सदा।
दर्दमें डूबी हुई मजरूह[1] टख़नेकी सदा॥
पांव मिट्टीकी तहोंमें मैलसे चिकटे हुए।
एक बदबूदार मैला चीथड़ा बांधे हुए॥
जा रहा है जानवरकी तरह घबराता हुआ।
हांपता, गिरता, लरज़ता, ठोकरें खाता हुआ॥
मुज़महिल[2] बामांदगीसे[3] और फ़ाक़ोंसे निढाल।
चार पैसेकी तवक़्क़ोह[4] सारे कुनबेका ख़याल॥

* * *

अपनी ख़िलक़तको[5] गुनाहोंकी सज़ा समझे हुए।
आदमी होनेको लानत और बला समझे हुए॥

* * *

इसके दिल तक ज़िन्दगीकी रोशनी जाती नहीं।
भूलकर भी इसके होंटों तक हँसी आती नहीं॥

* * *

---

[1]घायल, [2]बहुत थका हुआ, [3]दुर्बलताके कारण, [4]आशा;
[5]अपने जन्मको।

शायरेइमरोज :—

क्या है कोई शेर तेरा तर्जुमानेदर्देक़ौम[1] ?
तूने क्या मंजूम[2] की है दास्तानेदर्देक़ौम ?

अपने सोजेदिलसे गरमाया है सीनोंको कभी ?
तर किया है आँसुओंसे आस्तीनोंको कभी ?

क़ौमके ग़ममें किया है ख़ूनको पानी कभी ?
रहगुजारेजंगमें[3] की है हुदीख़्वानी[4] कभी ?

क्या रुलाया है लहू तूने किसी मजमूनसे ?
नज्मे आजादी कभी लिक्खी है अपने ख़ूनसे ?

हिन्दोस्तानी माँ का पैग़ाम :—

* * *

मेरे बच्चे सफ़शिकन[5] थे और तीरन्दाज भी।
मनचले भी, साहबेहिम्मत भी, सरअफ़राज[6] भी ॥

मैं उलट देती थी दुश्मनकी सफ़ें तलवारसे।
दिल दहल जाते थे शेरोंके मेरी ललकारसे ॥

जुरअत[7] ऐसी, खेलती थी दश्नाओ ख़ंजरके साथ।
बावफ़ा ऐसी कि होती थी फ़ना शोहरके साथ ॥

छीनकर तलवार पहना दीं सुनेहरी चूड़ियाँ।
रख दिया हर जोड़पर जेवरका एक बारेगिराँ ॥

---

[1]समाजके दर्दका सन्देश; [2]नज्म; [3]युद्धके मार्गमें; [4]बलिदानों-की प्रशंसा; [5]व्यूह तोड़नेवाले; [6]सर ऊँचा रखनेवाले; [7]दिलेरी।

दर्सआज़ादीका[1] देती क्या तुझे आग़ोशमें[2] ?
मैं तो ख़ुद ही बंद थी इक मजलिसेगुलपोशमें ॥

मैंने दानिस्ता बनाया ख़ायफ़ोबुज़दिल[3] तुझे ।
मैंने दी कमहिम्मतीकी दावतेबातिल तुझे ॥

दिलको पानी करनेवाली लोरियाँ देती थी मैं ।
जब गरज होती थी दामनमें छुपा लेती थी मैं ॥

हाँ, तेरी इस पस्त ज़हनीयतकी मैं हूँ ज़िम्मेदार ।
तू तो मेरी गोद ही में था ग़ुलामीका शिकार ॥

सुन कि इस दुनियामें मिलता है उसीको इक़्तदार[4]।
जिसको अपनी कूवतेबाज़ूपर[5] हो इख़्तियार ॥

ग़ज़लोंके कुछ शेर —

(खेद है कि आपकी ग़ज़लोंके संग्रह युद्धके कारण अप्राप्य होनेसे हम इधर-उधरसे लेकर कुछ नमूने दे रहे हैं। काश! आपका दीवान मिला होता तब आपकी जौहर देखनेका अवसर मिलता।)

आ ऐ गुलेपज़मुर्दा[6]! लगा लूँ गले तुझे ।
तू भी तो मेरी तरह जुदा है शबाबमें[7] ॥

कहानी कहनेवाले हाय, क्यों ज़िक्रेजवानी है ?
जवानीकी कहानी क्या ? जवानी ख़ुद कहानी है ॥

कहानी मेरी रूदादेजहाँ मालूम होती है ।
जो सुनता है उसीकी दास्ताँ मालूम होती है ॥

---

[1]स्वतन्त्रताका पाठ, [2]गोदमें, [3]डरपोक और कायर, [4]अधिकार;
[5]भुजबलपर [6]मुरझाए फूल [7]भरी जवानीमें ।

कर रहे थे जाने हम अल्लाहसे किसका गिला ।
आप अपना सर झुकाकर क्यों पशेमाँ हो गये ?

न पूछ मुझसे तेरे जब्रोअख़्तियारकी ख़ैर ।
गुनाह हो न सका या गुनाह कर न सका ॥

आज़ुर्दा इस क़दर हूँ सरावेख़यालसे[1] ।
जी चाहता है तुम भी न आओ ख़यालमें ॥

मुहब्बत में एक ऐसा वक़्त भी आता है इन्साँपर ।
सितारोंकी चमकसे चोट लगती है रगेजाँपर ॥

अगर तू चाहता है आरज़ू तेरी करे दुनिया ।
तो दिलपर जब्र करके बेनियाज़े[2] आरज़ू होजा ॥

मिटा दे अपनी ग़फ़लत फिर जगा अरबावेग़फ़लतको[3]।
उन्हें सोने दे, पहले ख़्वावसे बेदार तू हो जा ॥

यह सोचता हूँ तो सिजदेसे[4] सर नहीं उठता ।
जो था फ़रिश्तोंका मसजूद[5] क्या नहीं हूँ मैं ?

तेरा जलवा, मेरा जलवा, जो है तू मैं हूँ वही ।
परदा इतना है कि मैं ज़ाहिर हूँ तू मस्तूर[6] है ॥

वोह सिजदा क्या, रहे अहसास[7] जिसमें सर उठानेका ।
इवादत और वक़देहोश, तौहीनेइवादत है ॥

---

[1]ख़यालके धोखेसे; [2]वेपरवाह ।
[3]ग़फ़लतमें पड़े हुओंको; [4]ईशप्रार्थनामें झुका हुआ सर ।
[5]उपास्य; [6]परदेमें छुपा हुआ ।
[7]ज्ञान ।

दीवानेको तहक़ीरसे क्यों देख रहा है ?
दीवाना मुहब्बतकी ख़ुदाईका ख़ुदा है ॥

सच है कि ख़ुदा तक है मुहब्बतकी रसाई ।
और तुमको यक़ीं हो तो मुहब्बत ही ख़ुदा है ॥

क़फ़सकी तीलियोंमें जाने क्या तरकीब रक्खी है ।
कि हर बिजली करीबेआशियाँ मालूम होती है ॥

वोह कोई और है जो मुझको तूफ़ाँसे बचाएगा ।
ख़िरदको[1] एतबारेनाख़ुदासे[2] खेल लेने दो ॥

उन्हें हिजाब, उदू शादमाँ, अज़ीज़ निढाल ।
मेरा जनाज़ा भी कोई उठायेगा कि नहीं ?

न सरमें सौदा है रहबरोंका[3] न दिलमें जज़्बा है रहबरीका ।
कुछ ऐसा महसूस कर रहा हूँ कि थक गया पाँव ज़िन्दगीका ॥

मिला है तुझको दिले शकिस्ता तो और उसे तोड़ता चला जा ।
शकिस्त हो जाये ग़ैरमुमकिन कमाल ये है शकिस्तगीका ॥

तू अपनी जातमें ताज़ा सिफ़ात पैदा कर ।
हो जिसमें शानेबदाअत वोह ज़ात पैदा कर ॥

कमाले इल्मोअमलकी हदूद और बढ़ा ।
नये शऊर नई हिस्सयात पैदा कर ॥

है मुश्किलातका बढ़ना ही वजहे आसानी ।
जो हल न हो सके वह मुश्किलात पैदा कर ॥

---

[1][illegible], [2]भगवान्‌पर विश्वासमय, [3]नेतागिरिका ।

क़दीम मज़हवो मिल्लतसे गर नहीं तसकीं।
तो फिर नई कोई राहेनिजात पैदा कर॥

वढ़ती ही चली जाती है दुनियाकी ख़रावी।
इसपर यह क़यामत अभी रहना है यहीं और॥

मैंने शवेग़म जिनको समेटा था वमुश्किल।
वोह तीरगियाँ[1] वादेसहर[2] फैल गईं और॥

है और तलव इश्क़की पस्तीओवुलन्दी।
आईनेनज़र[3] और है दस्तूरेजवीं[4] और॥

मैं हौसलोंसे यूँ शवेग़म काट रहा हूँ।
जैसे कोई वाद इसके मुसीवत ही नहीं और॥

* * *

सैयाद दे रहा है सवक़ सब्रोज़ब्तका।
क़ैदेक़फ़स[5] है सिल्सिलयेआगही[6] मुझे॥

वजाय हाथ उठानेके अपने पाँव वढ़ा।
दुआ तो वहमेअसरके सिवा कुछ और नहीं॥

जहाँ दिल है वहाँ वो हैं, जहाँ वो हैं वहाँ सव कुछ।
मगर पहले मुक़ामेदिल समझनेकी ज़रूरत है॥

वक़दरेयकनफ़स[7] ग़म माँग ले और मतमइन हो जा।
भिकारी! यह सनाजाते निशाते जाविदाँ[8] कव तक?

---

[1]अन्धेरे; [2]प्रातःकालके पश्चात्; [3]नजरोंका कानून; [4]मस्तिष्क का नियम; [5]पिंजरेकी क़ैद; [6]वरावर आते रहनेवाली आपत्तियोंकी सूचना है; [7]शरीरके सामर्थ्यके अनुसार; [8]स्थायी सुख-भोगकी प्रार्थना।

बहुत मुश्किल हैं कैदेजिन्दगीमें मुतमइन होना।
चमन भी इक मुसीबत था, कफस भी इक मुसीबत है॥

मुकाम इक इन्तहायेइश्कमें ऐसा भी आता है।
जमानेकी नजर अपनी नजर मालूम होती है॥

जो मुमकिन हो जगह दिलमें न दे दर्देमुहब्बतको।
घड़ीभरकी खलिश फिर उम्रभर मालूम होती है॥

*　　　*　　　*

हर इक फूल एक चश्मेतर है सुबहेचाकदामांकी।
कभी शबनमके आंसू बनके देख आँखें गुलिस्तांकी॥

फक्त अहसासेआजादीमें आजादी इबारत है।
वही दीवार घरकी है वही दीवार जिदांकी॥

१५ अप्रैल १६४५

१६

अहसान बिन दानिश

[जन्म कान्धला (मेरठ) १९१० ई० के क़रीब]

'अहसान' शोषित वर्गके पैग़म्बर कहलानेके अधिकारी हैं। वे उन्हींके लिए जीते हैं, उन्हींके लिए सोचते हैं और उन्हींकी व्यथाओं-को क़ाग़ज़पर सजीव रूप देते हैं। उनके यहाँ निरी कल्पना, भावुकता और उड़ान नहीं। उनका एक-एक अक्षर आपबीती और जगबीतीका मुँहबोलता हुआ चित्रपट है। उनका कलाम सुनते या पढ़ते हुए ऐसा मालूम होता है कि हम सब आँखोंसे देख रहे हैं। उन्होंने जीवनके लक्ष्य तक पहुँचनेमें जिन कण्टकाकीर्ण और दुर्गम मार्गोंको तय किया है, उसीमें जो देखनेको मिला वही काग़ज़पर चित्रित कर दिया है।

'अहसान' अपने सीनेमें एक दहकती हुई आग लिए फिरते हैं और उसी आगकी चमकमें जो भी देख लेते हैं उसे चमका देते हैं। खतौलीसे मेरठ जाते हुए एक अशिक्षिता नारीको घूरे जाते हुए देखनेपर नारी-समाजके इस पतनपर उबल पड़ते हैं। सरयू नदीके घाटपर सैर करते हुए एक युवती कन्याकी अर्थीको देखकर विह्वल हो उठते हैं। हिन्दू मज़दूरको दीवाली और मुस्लिम मज़दूरको ईदके रोज़ भी चिन्ताग्रस्त पाकर ईश्वर तकसे कैफ़ियत तलब कर बैठते हैं। मुस्लिम-समाजमें विधवा-विवाह प्रचलित होते हुए भी भाई-भावजकी सताई विधवाको पुनर्विवाहका विरोध करते हुए सुनकर उसके पति-प्रेमका ज्वलन्त दृश्य खींचते हैं, तो कहीं अपने मित्रकी सुहागरातको ही मृत्यु हो जानेपर विकल हो जाते हैं। एक साधु-की चिता और दो शिशुओंकी क़ब्रें देख पाते हैं तो असार-संसारका दृश्य

मचाकर रख देते हैं। भवके घर अतिथि और असहाय बीवी-बच्चोंको बिलखते छोड़कर मजदूरको मरते देख अहसान कलेजा थामकर रह जाते हैं। जहाँ मजदूरोंमें कत्तकी अवस्था भ्रष्ट और रोज़ीकी तलाशमें निर्दोष मजदूरका चालान होता है उस पापी समुदायमें आप सिहर उठते हैं और ऐसे ही पापियोंका शिकार करनेके लिए अपने एक शिकारी मित्रको परामर्श देते हैं। समाजको नरक बना देनेवाले पूँजीपतियोंसे आप कितनी घृणा करते हैं यह बागीकी रुबाइयाँ पढ़कर ही जाना जा सकता है। सन ४२ के आन्दोलनमें जो हुआ वह १०-१२ वर्ष पूर्व ही दिव्यदृष्टा अहसानने बागीकी रुबाइयोंमें लिख दिया था।

अहसान को बचपनमें संस्कृत और हिन्दी पढ़नेका चाव था परन्तु दरिद्र परिवारके एकमात्र कमाऊ पिताके रुग्ण-शय्या पकड़नेपर पढ़ाई लिखाईके सब स्वप्न भंग हो गये। स्वयं मजदूरी करना प्रारम्भ कर दिया किशोरावस्था और उसपर अचानक घोर परिश्रम। अहसान भी चारपाईपर गिर पड़े। मगर मरता क्या न करता? पड़े पड़े भी परिवारके भरण-पोषणकी चिन्ताने चैन न लेने दिया। रुग्णावस्थामें ही म्युनिसिपल कमेटीमें हल्की-सी नौकरी करली। चचककी पीपमें गरीबोंके कपड़े चिपके जाते फिर भी नौकरी करनेको विवश थे।

अनेक प्रयत्न करनेपर भी जब जीवन निर्वाह दूभर हो उठा तो मातृभूमिसे विदा होकर कितने ही स्थानोंमें चक्कर काटनेको विवश हुए परन्तु कहीं भी ढंग न बैठा। अन्तमें लाहौर आये और वहाँ ईंट-गारा ढोकर जीवन निर्वाह करने लगे। परिश्रमी और जहीन तो थे ही। धीरे धीरे राजमिस्त्रीका कार्य करने लगे। भाग्यका खेल देखिये कि जिस साहित्य निर्माण करना था वह भवन निर्माण-कार्य करनेपर मजबूर होता है जो पूँजीपतियोंके प्रति असीम घृणा रखता था उसीको उनके महल बनानेको बाध्य होना पड़ा।

अहसान राजमिस्त्रीका कार्य करते हुए लाहौर किनकी

बुलन्द दीवारसे गिरे और महीनों खटिया सेककर उठे तो मिन्नत-खुशामद-करके किसी रईसकी कोठीमें चौकीदार हो गये। वहीं धीरे-धीरे बागवानी भी सीख ली। इस चौकीदारीके कार्यसे 'अहसान' अत्यन्त प्रफुल्लता और गर्वका अनुभव करते थे क्योंकि यहाँ पढने-लिखनेकी सुविधा मिल जाती थी; परन्तु क़िस्मतकी मार 'अहसान' की यह नौकरी भी जाती रही। फिर वही रोज़ीकी तलाशमें दर-दरकी खाक छाननी शुरु कर दी। कभी रेलवेमें नौकरी मिली तो कभी मोचीका कार्य करना पड़ा। यहाँ तक कि बगैर रमजान आये रोजे रखने पड़े तथा कपड़ेपर कंट्रोल न होते हुए भी फटेहाल रहना पडा; परन्तु अपनी वजहदारी और गय्रे-मुफ़लिसीपर बाल नहीं आने दिया। 'अहसान' की इस आनका उल्लेख तौकीर साहब इस तरह करते हैं :—

"अहसान मुझे अपने कुटम्बियों और प्रियजनोंमें सबसे अधिक प्रिय है। यदि 'अहसान' मेरे स्नेहपूर्ण आग्रहको मान लेता तो मैं इस योग्य अवश्य था कि उसे लाहौरमें दरिद्रताके अभिशापसे बचा लेता; किन्तु आवश्यकतासे अधिक इस स्वाभिमानीने आग उगलती हुई दोपहरमें मजदूरी करना तो श्रेष्ठ समझा; परन्तु मुझ-जैसे अन्तरंग मित्रसे भी सहा-यता लेना अपमान समझा।

मुझे वे दिन अच्छी तरह स्मरण है कि जब दोपहरको सब मजदूर आराम करते थे और 'अहसान' सबसे जुदा एकान्तमें पत्र-पत्रिकाएँ पढा करता था। मैं उन रातोंको नहीं भूल सकता जब कि 'अहसान' अकेला एक तंग कोठरीमें टाटके बिस्तरपर बैठा हुआ मिट्टीके तेलकी डिबिया एक चीडके सन्दूकपर जलाये हुए पुस्तकोंमें तल्लीन पाया जाता था। 'अहसान' ने लाहौरमें मजदूरी भी की और मेमारी भी। पहरेदारी भी और बागबानी भी; लेकिन उसे कभी रातको १२ बजेसे पहले और प्रातः ४ बजेके बाद सोते हुए नहीं पाया; और आजतक उसका यही नियम चला आता है।

परिश्रम किसीका व्यर्थ नहीं जाता। फलस्वरूप 'अहसान' आज ख्यातिप्राप्त शायर है। 'अहसान' की यद्यपि वह खस्ता हालत नहीं रही है, फिर भी वह साहसको तोड़ देनेवाली घाटियोंसे गुज़र रहा है। उसका कहना है कि 'मेरी बोरियेपर आँखें खुलीं, मगर दम क़ालीनपर निकलेगा।' अभी चन्द रोज़ हुए बरेलीसे वह एक दरी ख़रीद लाया। एक दोस्तने व्यंगमें पूछा—'अहसान साहब ! बोरियेसे दरी तक तो आ गये हो, अब क़ालीनमें कितना अर्सा है ?' 'अहसान' ने मुस्कराते हुए जवाब दिया—'सिर्फ़ बालका फ़र्क़ है।' [1]

'अहसान' साहबकी नज़्मोंके ६–७ संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। नमूनेके तौरपर उनकी ५ नज़्मोंका थोड़ा-थोड़ा अंश दिया जा रहा है। यद्यपि इस तरहसे बीच-बीचके अंश छोड़ देनेसे कविताका प्रवाह और सौन्दर्य बिगड़ जाता है, परन्तु क्या करें, स्थानाभावके कारण लाचारी है।

---

[1] नवाएक़मरगम्से ।

नाख़्वान्दा ख़ातून (अशिक्षिता नारी)

खतौली से मेरठ आते हुए एक आँखों देखा दृश्य चित्रित करते हैं :—

. . . .

याद है अब तक वोह मन्ज़र[1] ढल चुका था आफ़ताब।
धीमा-धीमा था शररअफ़रोज़[2] किरणोंका रुबाब॥

कट चुके थे जंगलोंमें जाबजा गेहूँके खेत।
जम रही थी पाँवसे पिचके हुए तिनकोंपै रेत॥

झुक रही थी मस्जदे मगरिबमें[3] सूरजकी जबीं।
चुप थी ख़ाली गोद फैलाये हुए बेवा ज़मीं॥

ख़ारोख़समें[4] परशकिस्ता[5] टिड्डियोंकी आहटें।
नहरकी पटरीपै जालोंके तले धुँधलाहटें॥

बढ़ रही थी छांव खेतोंके किनारोंकी तरफ़।
फैलते जाते थे साये रहगुज़ारोंकी[6] तरफ़॥

नालाज़न[7] थीं फ़ाख़्ताएँ[8] ढल रही थी दोपहर।
हलकी-हलकी साँस लेती चल रही थी दोपहर॥

सनसनाती कीकरोंकी टहनियाँ कुछ ख़म-सी थीं।
धूपकी शिद्दत, लुओंकी सीटियाँ मद्धम-सी थीं॥

इसी तरह प्राकृतिक सौन्दर्यको छटा बिखेरते हुए आगे कहते हैं :—

---

[1]दृश्य; [2]प्रकाशकी शोभा बढ़ानेवाला; [3]पश्चिमके उपासना गृहमें; [4]कूड़ा-करकट, काँटे और घास में; [5]पर टूटे हुए; [6]मार्गोंकी; [7]फ़रियादी, आर्त्त; [8]बुलबुलें।

आ रहा था मैं खतौलीसे थका हारा हुआ।
प्यासका पैदल सफ़रका धूपका मारा हुआ॥

* * *

रफ़्ता रफ़्ता मुहर्रमे अहसान जब मैं आ गया।
वोह समाँ देखा कि हैरतज़दा सौ मर गया॥

* * *

एक अशिक्षिता नारीका चित्र खींचते हुए आगे फ़र्माते हैं —

आई है घरसे निकलकर ख़त लिखानेके लिए।
गोशे नामहरमको राज़े दिल सुनानेके लिए॥

* * *

ग़मसे मामूर[1] और बेकसीकी नोहाख़्वाँ[2]।
थरथराते लफ़्ज़ शरमाता बयाँ रुकती ज़बाँ॥
यह तो हालत और ज़ालिम मुस्तरी नामानिगार[3]।
लिखते लिखते रोक लेता है क़लमको बार बार॥

* * *

ताकि चश्मेबदसे वोह इस नक़्लको देख लें।
दीदयेबेआबरूसे आबरूको देख लें॥

* * *

अशिक्षिता नारीकी इस बेबसीपर अहसान उबल पड़ते हैं। और तीयोंको भाड़ बनाते हुए आगे फ़र्माते हैं —

हृदयके बातमें अनभिज्ञको हृदयकी ... पण
नाचारीके ... रुदन करनेवाली ... ख़त लिखनेवाला मगर
कदृष्टिसे भरी ... निगाह ... नताम ... संसार लज्जाको

जिनका दूध उनको मयस्सर था वोह माएँ और थीं ।
जिनमें वह परवान चढ़े वे दुआएँ और थीं ॥

* * *

हाँ, अगर वैसी-ही माएँ हों तो फिर पैदा हों मर्द ।
जिनका मशरब हो उखूवत[1] शग़ल हो जिनका नबर्द[2] ॥
जिनका दिल बेदार[3] हो तोपोसलासिल[4] देखकर ।
जो चलें हर राहपर हक़[5] औ बातिल[6] देखकर ॥
जिनकी आँखें हों भयानक घाटियोंकी राज़दार[7] ।
सर झुकायें सामने जिनके फ़राज़े[8] कोहसार[9] ॥
जिनको तूफ़ानोंकी बाहोंमें नज़र आए अमन ।
जिनकी फ़ितरत हो तड़पती बिजलियोंपर ख़न्दाज़न[10] ॥
जिनकी ठोकरसे रहें पामाल[11] मैदानेअजल[12] ।
मक़बरे जिनको नज़र आते हों जन्नतके महल ॥
जिनके क़दमोंके तले थककर चले पत्थरकी नब्ज़ ।
देखती हों जिनकी लम्बी उँगलियाँ ख़ंजरकी नब्ज़ ॥
साइदोंपर[13] जिनके हों ख़ूँरेज़ शमशीरोंको नाज़ ।
चुटकियोंपर जिनके हों मर्गआफ़रीं तीरोंको नाज़ ॥
तनतनेसे जिनके हो सैलाबे ख़ूँका रंग फ़क़ ।
जिनकी इक ललकारसे आ जाय शेरोंको अरक़ ॥
कर सकें जो दुश्मनोंके मोर्चे ज़ेरोज़बर ।
सो सकें रातोंको रखकर लाशहाएइन्साँपै सर ॥

---

[1]भ्रातृत्वभाव; [2]युद्ध; [3]जागना; [4]तोप और बेड़ियाँ; [5]सत्य; [6]असत्य; [7]भेद जाननेवाली; [8]उच्च; [9]पर्वत; [10]मुस्करानेवाली; [11]नष्ट; [12]मृत्युक्षेत्र; [13]बाजुओंपर, कलाइयोंपर ।

अहक़रे मारें जो बारानेबलाको देखकर।
नारएहक़ सर करें बाबेक़ज़ाको देखकर॥

धूपमें ख़ंजर हों जब क़ालीन-सा बुनते हुए।
मुस्करायें ज़ख़्मियोंकी सिसकियाँ सुनते हुए॥

जाएँ तोपोंके धमाकोंमें गुज़र हम झूमकर।
बर्छियाँ लेकर बढ़ें टड्डी अनीको चूमकर॥

माँओंके सीने अगर हों मायादारे इल्मोफ़न।
क्यों न फिर बच्चे हों पैदा अर्जुमन्दो सफ़शिकन॥

—नवाए कारगरसे

मज़दूरकी मौत —

एक टूटा-सा मकाँ है यासोहिरमाँ[1] दर किनार।
बामोदर[2] सहमे हुए, ख़स्ता मुँडेरें सोगवार॥

सुरमई छप्पर धुएँसे सहन नाहमवार-सा[3]।
ज़र्रा-ज़र्रा मरबसर, नासाज़-सा बीमार-सा॥

आग चूल्हेमें नहीं यह शिद्दतेइफ़लास[4] है।
घर-का-घर ओढ़े हुए गोया रदाएयास[5] है॥

ताक़ हैं काले धुओंसे और घड़ोंपर काई है।
नीमजाँ ज़र्रातकी डूबी हुई बीनाई है॥

घरके एक कोनेमें चक्की मुफ़लिसीकी राज़दाँ।
छतमें जालोंकी चटें, जालोंके अन्दर मकड़ियाँ॥

---

[1]निराशा, [2]छत और दर्वाज़े, [3]टूटा फूटा, [4]दरिद्रताकी बहुलता [5]निराशाकी चादर।

इक तरफ़को जंगआलूदा तवा रक्खा हुआ।
ख़स्ता दीवटपर सिसकता-सा दिया रक्खा हुआ॥

* * *

मशरिक़ी[1] हिस्सेमें इक मजदूर बीमारोजईफ़[2]।
नामुरादो,[3] नातवाँ,[4] मजबूरो, माज़ूरो[5] नहीफ़[6]॥
हैं अरक़में तरबतर उलझी हुई दाढ़ीके बाल।
डूबती नब्ज़ें, उलझती हिचकियाँ, चेहरा निढाल॥

* * *

पास बीबी गोदमें बच्चा लिये ख़ामोश है।
जिसकी ख़ातिर बेवगी, खोले हुए आग़ोश[7] है॥

* * *

देगची ख़ाली है चूल्हेपर दिखानेके लिए।
मुज़तरब[8] बच्चोंको बहलाकर सुलानेके लिए॥

* * *

जिस तरह लेकर सम्भाला शमा होती है ख़मोश।
यूँही जब दम तोड़ते मजदूरको आता है होश॥

तो बीबीको तसल्ली देते हुए, ईश्वरसे प्रार्थना करते हुए कहता है :—

गर्चे कुछ सामाँ नहीं है अहतमामेमर्गका[9]।
ख़ैर मक़दम दिलसे करता हूँ पयामेमर्गका॥

* * *

---

[1]पूर्वी; [2]वृद्ध; [3]असफल; [4]दुबला; [5]मजबूर; [6]दुर्बल, पतला; [7]गोद; [8]बेचैन; [9]मृत्युके स्वागतका।

कहकहे मारें जो बारानेबलाको देखकर।
नारएहक सर करें बाबेकज़ाको देखकर॥

धूपमें खंजर हो जब कालीन-सा बुनते हुए।
मुस्करायें ज़ख्मियोंकी सिस्कियाँ सुनते हुए॥

जाएँ तोपोंके धमाकोंमें गज़र दम झूमकर।
बर्छियाँ लेकर बढ़ें ठंडी अनीको चूमकर॥

माँओंके सीने अगर हों मायादारे इल्मोफ़न।
क्यों न फिर बच्चे हों पैदा अर्जमन्दो सफ़शिकन॥

—नवाए कारगरसे

मजदूरकी मौत —

एक टूटा-सा मकाँ है यासोहिरमाँ[1] दर किनार।
बामोदर[2] सहमे हुए, ख़स्ता मुंडेरे सोगवार॥

सुरमई छप्पर धुएँसे सहन नाहमवार-सा[3]।
ज़र्रा-ज़र्रा सरबसर, नासाज़-सा बीमार-सा॥

आग चूल्हेमें नहीं यह शिद्दतेइफ़लास[4] है।
घर-का-घर ओढ़े हुए गोया रदाएयास[5] है॥

ताक हैं काले धुओंसे और घड़ोंपर काई है।
नौमजाँ ज़र्रातकी डूबी हुई बीनाई है॥

घरके एक कोनेमें चक्की मुफ़लिसीकी राज़दाँ।
छतमें जालोंकी चटें, जालोंके अन्दर मकड़ियाँ॥

---

[1]निराशा, [2]छत और दर्वाज़े, [3]टूटा फूटा, [4]दरिद्रताकी बहुल्ता, [5]निराशाकी चादर।

इक तरफ़को जंगआलूदा तवा रक्खा हुआ।
ख़स्ता दीवटपर सिसकता-सा दिया रक्खा हुआ॥

* * *

मशरिक़ी[1] हिस्सेमें इक मज़दूर बीमारोज़ईफ़[2]।
नामुरादो,[3] नातवाँ,[4] मजबूरो, माज़ूरो[5] नहीफ़[6]॥
हैं अरक़में तरबतर उलझी हुई दाढ़ीके बाल।
डूबती नब्ज़ें, उलझती हिचकियाँ, चेहरा निढाल॥

* * *

पास बीवी गोदमें बच्चा लिये ख़ामोश है।
जिसकी ख़ातिर बेवगी, खोले हुए आग़ोश[7] है॥

* * *

देगची ख़ाली है चूल्हेपर दिखानेके लिए।
मुज़तरब[8] बच्चोंको बहलाकर सुलानेके लिए॥

* * *

जिस तरह लेकर सम्भाला शमा होती है ख़मोश।
यूँही जब दम तोड़ते मज़दूरको आता है होश॥

तो बीवीको तसल्ली देते हुए, ईश्वरसे प्रार्थना करते हुए कहता है :—

गर्चे कुछ सामाँ नहीं है अहतमामेमर्गका[9]।
ख़ैर मक़दम दिलसे करता हूँ पयामेमर्गका॥

* * *

---

[1]पूर्वी; [2]वृद्ध; [3]असफल; [4]दुबला; [5]मजबूर; [6]दुर्बल, पतला; [7]गोद; [8]बेचैन; [9]मृत्युके स्वागतका।

एक शिकारीसे—

ऐ अनीसेदश्त[1]! ऐ मेरे बहादुर हममआश[2]!
शेरनी और फिर दुनालीसे गिरा दो जिन्दहवाश ॥
लेकिन इस मंज़रसे मेरा दिल हुआ जाता है शक़ ।
है अचानक मौतसे इसकी मुझे बेहद क़लक़ ॥

इसका यह नाज़ुक शिकम,[3] यह जर्द मख़मलका गुलू ।
आह ! यह छकड़ेके पहियोंपर जवानीका लहू ॥

इसका नर फ़ुरक़तमें इसकी बावला हो जायगा ।
हाल बच्चोंका न जानें क्या-से-क्या हो जायगा ॥
भेड़िये हों, रीछ हों, चीते हों या ख़ूंख़्वार शेर ।
दस्तेवादी[4] तक बहादुर हैं नशिस्तां[5] तक दिलेर ॥

यह कभी आबादियोंमें आके ग़ुर्राते नहीं ।
यह किसानों और मज़दूरोंका हक़ खाते नहीं ॥

*　　*　　*

इनसे बढ़कर वह दरिन्दे हैं शक़ीदिल[6] गुर्गख़ूं[7] ।
चूस लेते हैं जो मज़दूरोंकी शहरगका लहू ॥
इनसे बढ़कर वे दरिन्दे हैं कि ज़ालिम बरमला ।
घोंट देते हैं अदालतमें सदाक़तका गला ॥

इनसे बढ़कर वे दरिन्दे हैं बशक्ले राहबर ।
दिनदहाड़े लूट लेते हैं जो बेवाओंके घर ॥

*　　*　　*

---

[1]सफ़रके दोस्त ! [2]मेरी जैसी आजीविका करनेवाले; [3]पेट; [4]घाटियों तक; [5]अपने स्थानों तक; [6]निर्दयी; [7]भेड़िया ।

इनसे बढ़कर वे दरिन्दे हैं जो पोशिश देखकर।
अपने मुफ़लिस हमनशीनोंसे[1] चुराते हैं नज़र॥
इनसे बढ़कर वे दरिन्दे हैं जो इशरतके लिए।
दाम फैलाते हैं बेवाओंको अस्मतके लिए॥
इनसे बढ़कर वे दरिन्दे हैं जो ज़रके वास्ते।
चाहते तकलीफ़ हैं नोए बशरके वास्ते॥
लाख हैवाँ हो उखुव्वतको[2] यह खो सकते नहीं।
शेर चीते ऐसे बेइन्साफ़ हो सकते नहीं॥
—आतिशेआमोशास

नौ उरूसे बेवा—

अहमान[3] साहबके एक मित्र सुहागरातको ही चल बसे। उनकी जिस लड़कीसे प्रेम था उसीसे जैसे-तैसे विवाह हुआ, पर हाय रे भाग्य! सुहागरातको दुल्हनके बजाय मौतने आलिंगन किया। उस वज्रपातका आँखों देखा दृश्य कैसा हृदयद्रावक शब्दोंमें खींचते हैं —

सितारोंकी फलकपर[4] जगमगाती अंजुमन[5] टूटी।
इधर दूल्हाका दम निकला उधर पहली किरन फूटी॥
शिकन बिस्तरमें दिलकी आरज़ू लाने न पाई थी।
नसीमेख्वाब[6] बेदारीमें[7] लहराने न पाई थी॥
मचा कुहराम हलचल पड़ गई सीने फड़क उट्ठे।
दिलोंमें आतिशेअन्दोहके[8] शोले भड़क उट्ठे॥

* * *

---

[1]पड़ोसियोंसे, [2]सहृदयताको [3]आतशनाम [4]महफ़िल, [5]स्वप्नकी मदमाती हवा [6]जागरणमें [7]आग।

जो सुनता था कि दूल्हा मर गया दिल थाम लेता था।
तहय्युर[1] आँखसे नोकेज़बाँका काम लेता था॥
वज़ीफ़ेकी तरह माँके लबोंपर नाम जारी था।
अलमसे बापपर इक आलमेवहशत-सा तारी था॥

* * *

दमादम हो रही थी मौत और हस्तीमें नज़दीकी।
कि जैसे चाँद छुपनेसे बढ़े जंगलमें तारीकी[2]॥
उरूसेनौका[3] सीना बेबगीसे[4] पारा-पारा था।
न खुलकर रो ही सकती थी न ज़ब्तेग़मका चारा था॥
क़यामत है क़यामत कारज़ारेज़िन्दगानीमें।
किसी दूल्हाका पहली रात मर जाना जवानीमें॥
दरोदीवार थर्राते हुए मालूम होते थे।
ज़मीनोचर्ख़ चकराते हुए मालूम होते थे॥
हुजूमे बेकराँ[5] था कर्बसे[6] जाँ खोनेवालोंका।
वोह मुँह तकती थी दीवानोंकी सूरत रोनेवालोंका॥
वोह शर्मिन्दा थी मातीमोंकी[7] अन्दाज़ेहिक़ारतसे[8]।
कली जैसे कोई मुरझाये सूरजकी तमाज़तसे॥

* * *

अलमने रौंद डाला था ग़रूरेकामरानीको।
बहारें जा रही थीं छोड़कर बेकस जवानीको॥

* * *

---

[1]आश्चर्य; [2]अंधियारी; [3]नवीन दुल्हनका; [4]वैधव्यसे; [5]बेचैन; [6]ग़मसे; [7]शोग़बारोंकी; [8]रोनेके ढंगसे।

हयासे रह गये थे अश्क यूँ लहराके आँखोंमें।
गुमाँ होता था मोती जम गये हैं आके आँखोंमें॥

* * *

वह रोते देखती थी सबको लेकिन रो न सकती थी।
हयासे मातमेशौहरमें शामिल हो न सकती थी॥
मुहल्लेकी छतोंपर दूर तक एक हश्रेमातम था।
असरसे माँके हर मासूम बच्चा चश्मेपुरनम था।
सहर[1] दुहरा रही थी रातको ख़ूनी कहानीको।
लिबासेनौउरूसी[2] रो रहा था नौजवानीको॥
वही कमरा कि जिसकी शाम थी राहत असर उसको।
उसी कमरेमें जाते मौत आती थी नज़र उसको॥
यह नौ आमोज़[3] थी मग़मूम[4] होना भी न आता था।
सलीकेसे जवाँ शौहरको रोना भी न आता था॥

* * *

विधवा विलाप करते हुए सोचती है—

मुसीबत है मुसीबतमें अगर मैके में जा बैठी।
मचेगा शोर "डायन खाके शौहर माँके आ बैठी"॥
मेरी हर एक साथिन मुझको नामानूस समझेगी।
सुहागन हो कि दोशीज़ा[5] मुझे मनहूस समझेगी॥

—नवाएकारगरसे

[1]सवेरा, [2]दुल्हनका लिबास, [3]नईनवेली, [4]संतप्त, [5]कन्या।

कुत्ता और मज़दूर

एहसान साहब घूमने जा रहे थे कि—

. . . .

कुत्ता इक कोठीके दरवाजेपै भूँका यकायक।
रुईकी गद्दी थी जिसकी पुश्तसे गरदन तलक॥
रास्तेकी सिम्त सीना बेख़तर ताने हुए।
लपका इक मज़दूरपर वह सैद[1] गरदाने हुए॥
जो यक़ीनन शुक्र ख़ालिक़का अदा करता हुआ।
सर झुकाये जा रहा था, सिसकियाँ भरता हुआ॥
पाँव नंगे फावड़ा काँधेपै वह हाले तबाह।
उँगलियाँ ठिठरी हुई धुँधली फ़िज़ाओंपर निगाह॥
जिस्मपर बेआस्तीं मैला, पुराना-सा लिबास।
पिंडलियोंपर नीली-नीली-सी रगें चेहरा उदास॥
ख़ौफ़से भागा बिचारा ठोकरें खाता हुआ।
संगदिल ज़रदारके कुत्तेसे थर्राता हुआ॥
क्या यह एक धब्बा नहीं हिन्दोस्ताँकी शानपर।
यह मुसीबत और ख़ुदाके लाड़ले इनसानपर॥
क्या है इस दारुलमहनमें आदमीयतका विक़ार?
जब है इक मज़दूरसे बहतर सगे सरमायादार॥
एक वोह हैं जिनकी रातें हैं गुनाहोंके लिए।
एक वो हैं जिनपै शब आती है आहोंके लिए॥

—दर्दे ज़िन्दगीसे

३० अप्रैल १९४५

---

[1]शिकारी।

१७

महाराज बहादुर 'बर्क' बी० ए०

[जन्म-देहली जुलाई १८८४, मृत्यु १७ फ़रवरी १९३६]

'बर्क' फ़ाख़री और ख़ानदानी शायर थे। उनकी आँख शायराना वातावरणमें खुली थी। उनके नाना और पिता दोनों ही शायर थे। शायरी आपको माता पारिवारिक सम्पत्तिके रूपमें मिली थी। अतएव बचपनसे ही आपको शेरोशायरीमें दिलचस्पी थी। एक बार बचपनमें आपकी आँखें दुखने आईं। किसी हमजोलीके मिज़ाज पूछनेपर आपके मुँहसे बरजस्ता निकल पड़ा —

दिल तो आता था मगर अब आँख भी आने लगी।
पुहनाकारी इश्ककी यह रंग दिखलाने लगी॥

किशोरावस्था और उसपर भी फड़कता हुआ यह फ़िकरा! घर हंगाम तर गया। जिसने भी सुना कलेजा थामकर रह गया। इश्क मुश्क खाँसी ख़ुश्क छिपाये नहीं छिपते। धीरे-धीरे बर्ककी इस हाज़िर जवाबी और शेरोशायरीकी रुचि आपके पिता तक भी पहुँची तो बाग़-बाग़ हो गये परन्तु विद्याध्ययनमें विघ्न पड़नेके भयसे इस ओर अधिक झुकाव न होने दिया। आख़िर १९०३ में मैट्रिक पास कर लेनेपर मुशायरोंमें कभी-कभी सम्मिलित होनेकी आज्ञा मिली।

'बर्क' साहबने शायरीकी चौखटपर जब क़दम रखा तो 'आज़ाद' और 'हाली' ग़ज़ल कहना छोड़ चुके थे। मिर्ज़ा दाग़ देहली छोड़कर

हैदरावाद रहने लगे थे। दिल्लीमें रहे-सहे नवाव 'साइल', 'वेख़ुद' 'आग़ाशायर', 'कैफ़ी', 'शैदा', 'माइल', और लाला श्रीराम जैसे शायरों और अदीवोंका दम ग़नीमत था। इन्हीके दमसे देहलीकी वज़्मेअदवकी शमा रोशन थी। रौनक़ेमहफ़िल मिर्ज़ा 'ग़ालिव' 'ज़ौक़' 'मोमिन' 'दाग़' जैसे वाकमाल उस्ताद नहीं रहे थे।

हज़ारों उठ गये लेकिन वही रौनक़ है महफ़िलकी।

फिर भी मुशायरे उसी उत्साहसे पुरलुत्फ और वारौनक होते थे। उस्ताद चल वसे थे; मगर अपने शागिर्दोंको उस्तादीकी मसनदपर विठा गये थे। वक़ौल 'वर्क़':—

'नाम लेवा उनके हम ज़ेरेफ़लक वाक़ी तो हैं।
मिटते-मिटते भी जहाँमें आजतक वाक़ी तो हैं॥

'वर्क़' ने इन्हीं प्राचीन प्रणालीके उस्तादोंकी सुहवतमें होश सम्हाला। अतः आपकी कविताका श्रीगणेश भी ग़ज़लगोईसे ही हुआ; परन्तु धीरे-धीरे नज़्मकी ओर रुचि वढ़ती गई। आपकी पहली नज़्म 'कारेख़ैर' जनवरी १९०८ के 'ज़वान' में प्रकाशित हुई। यह जनतामें काफ़ी पसन्द की गई। उत्तरोत्तर 'वर्क़' साहवकी ख्याति फैलती चली गई। वैरिस्टर आसफ़अली साहव (वर्त्तमान उड़ीसा प्रान्तके गवर्नर) के शब्दोंमें "देहली और देहलीवाले ही नहीं उर्दूके हामी 'वर्क़' के कमाल पर जितना नाज़ करें वजा है। 'वर्क़' देहलीकी वोह सुथरी ज़वान लिखते थे, जो सनद मानी जा सकती थी।...............

'वर्क़' की तवियतमें पहाड़ी चश्मेका-सा वहाव था कि जिससे हमेशा साफ़ वा निथरा हुआ पानी उवलता रहता है। उनके कलाम में अव्वलसे आख़िर तक मोतीकी-सीं आव पाई जाती है। अगर उन्होंने फूलोंकी दुनियाँसे सुफ़येक़रतास (पृष्ठों) को सजाया तो इस तरह कि फूलोंके रंगोवू और पत्तियोंकी नरमाहट क़ायम रही; और अगर

ज्नुनुमावी धूप छावपर नज़र डाली तो विजलाक ठण्ड शग्र कायम रख। कुदरतक मनाज़र (प्राकृतिक दृश्य) की तमवार श्याची तो एम पुर असरार लूबाजा (मनमोहक कूचो) म रग भर कि सज्जा लहनहाता फल विलविलात घटाम उमडती गगनम गयाश्रा (सूयकी किरणा) के पराघर उडती और मुर्गानचमन (कोयल बुलबुल आदि) वरमतरव (सगाकी महफिल) की आरास्ता (शृगार) करत नज़र आत है'।

मनलयअनवारकी भूमिका लिखत हुए मौलाना असग़र गोण्डवी फर्माते ह —

बक साहवकी नरमाकी सवस बडी खूबी य है कि उनकी नरमो का आत्मा और वप भूषा सव कुछ भारतीय हैं। इगलिश साहित्यका ज्ञान उनक विचाराको परिष्कृत तो करता हैं पर उनकी मौलिकता और भारतीय भावनाको छ नहा पाता ह और यही वह सवस बडी कामयावी ह जा किसी वन्से-वड नवीन प्रणालीक शायरको हो मकती ह।[2]

मभ वक माहवको सकडों वार दिल्लीक धार्मिक सामाजिक शिक्षालद्रा मार मुशायराम सुननका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अहल दहलाको वक पर नाज था। जहाँ भी जात सर्मा बाध दत थ। जो कहते थ सदम जदा और अनठा कहत थ। अभिमान लशमात्र भी नही था। अपनमे बड़का विनय और छोगाको प्यार करत थ मगर स्वाभिमान इतना कि एक बार आपक पढनकी उद्यत होनेपर एक उर्दू-दैनिक पत्रक मालिक और सम्पादक बीचम उठकर जान लग तो आपने वहीं एसा भाड़ पिलाइ कि वार-वार क्षमा-याचना करनपर उन्ह फिर बठनकी आज्ञा मिली। जीवन सरल स्वभाव मृदु और व्यक्तित्व ऊचा था।

---

[1]हुस्नतानमाम पृष्ठ २४ [2]मतलय अनवार पृष्ठ ५१।

'बर्क़' साहब कुछ दिन और जीवित रहते तो न जाने कैसे-कैसे अनमोल मोती छोड़ जाते; फिर भी जो लिख गये हैं, उर्दू-साहित्यके लिये गौरवकी वस्तु है। खेद है कि उस गुटबन्दीकी दुनियामें उनका कोई गुट न होनेसे पब्लिसिटी नहो पाई और जो ख्याति उनको मिलनी चाहिये थी वह न मिली। 'बर्क़' के ही शब्दोंमे :—

खिलके मुर्झा भी गया आँख किसीकी न पड़ी।
मैं चमनज़ारे जहाँमें गुले सहराई था॥

नसीमेसुबह

[प्रात कालीन वायु]

तू चमनमें आई इश्क़ेगुलका दम भरती हुई।
शाख़ोंमें तारोंको गिन-गिनकर क़दम धरती हुई॥

पहले आहिस्ता चली अठखेलियाँ करती हुई।
फिर वही करती अदाएँ रोज़की करती हुई॥

गुलको छेड़ा तुर्रयेसम्बुल[1] परेशाँ कर दिया।
गुंचये नौख़ेज़का[2] सदचाक दामाँ कर दिया॥

शाख़ोंमें तारोंकी यह आना तेरा अन्दाज़से।
वोह जगाना नींदके मातोंको ख़्वाबेनाज़से॥

जैसे सरगोशी[3] करे कोई किसी हमसाज़से[4]।
या कहे देकर टहोके यूँ दबी आवाज़से॥

"ले चुके अँगड़ाइयाँ बस गेसुओंवालो उठो।
नूरका तड़का हुआ ऐ शबके मतवालो उठो"॥

चौधरी जगतमोहन लाल रवाँ के शब्दोंमें —

'उक्त बन्द पढ़नेसे ऐसा मालूम होता है कि कोई डर डरकर पाँव रखता चला आ रहा है और जैसे कोई आशिक़ अपने महबूबकी बारगाहेनाज़ (प्रेमिकाके शयन-कक्ष) में जाते हुए ज़रा झिझकता है,

---

[1]सुगन्धित वनस्पतिका ताज, [2]नवजात कलीका, [3]छेड़छाड़, [4]झूठमूठ सोनेवालेसे।

इसीलिए चूंकि 'नसीमेसुवह' इश्क़ेगुलका दम भरती हुई आई है, वेवाक तरीक़ेसे जल्द-जल्द नहीं चली आती वलिक आहिस्ता-आहिस्ता तारोंकी छाओंमें आती है। ज्यों-ज्यों सुवहके आसार ज़्यादह नुमायाँ होते जाते हैं 'नसीमेसुवह' भी निस्वतन शोख होती जाती है।"

मिट्टी का चिराग़

हल्का-हल्का नूर वरसाता है मिट्टीका चिराग़।
इसकी जूपाशीसे[1] मिट जाता है ज़ुल्मतका सुराग़॥
वोह चमक है इसमें तारे चर्ख़पर खाते हैं दाग़।
वादएनावेतजल्लीका[2] है छोटा-सा अयाग़[3]॥
लैलियेशबका[4] शरारेहुस्न वेपरदा है ये।
रूकशे महरेजियापरवर है वोह जर्रा है ये॥

* * *

ये वोह शै है रोशनीका वोलवाला इससे है।
गर्मियेवज्मेतरव, घर-घर उजाला इससे है॥
लक्ष्मीपूजाकी जीनत दीप-माला इससे है।
मुंह शवेतारीकका दुनियामें काला इससे है॥
झोंपड़ी मुफ़लिसकी रोशन है इसीके नूरसे।
यह मुसाफ़िरको दिखा देता है मंजिल दूरसे॥

* * *

जुगनू

आतिशेहुस्नकी उड़ती हुई चिनगारी है।
शवेतारीकमें जो महवेजियावारी[5] है॥

* * *

---

[1]रोशनीसे; [2]परिपूर्ण प्रकाशरूपी मदिराका; [3]प्याला; [4]रात्रिरूपी लैलाका सौन्दर्य; [5]प्रकाश फैलानेमें व्यस्त।

किसी नाशादकी आहोंका शरारा तो नहीं ?
आस्माँसे कोई टूटा हुआ तारा तो नहीं ?

*   *   *

जल्वयेहुस्न तेरा परदेसे मानूस[1] नहीं।
तू है वह शम्अ कि शर्मिन्दये फानूस नहीं।

शफ़क़

(सूर्यास्तकी लाली)

रग लाया है शफ़क़ बनकर शहीदोंका लहू।
लोहेगरदूँसे[2] अयाँ[3] है नक्शेखूनेआरजू[4] ॥

*   *   *

सुर्ख जोड़ा लैलियेशबने किया है जेबेतन[5]।
रोज़ेरोशनसे है हमआग़ोश चौथीकी दुल्हन ॥

*   *   *

बादयेगुलरगका तेरे मज़ा लेता हूँ मैं।
तिश्नगीये ज़ौके नज्ज़ारा बुझा लेता हूँ मैं ॥

*   *   *

महव हो जाते हैं दम भरमें तेरे नक्शोनिगार।
हैं यही वक्फेलिज़ाँ उम्रे दोरोज़ाकी बहार ॥

जल्वयेगुल तू है मुश्ताकेतमाशाके लिए।
मज़रेइबरतनुमा है चश्मेबीनाके लिए ॥

---

[1]आदी, [2]आकाशकी लालीसे, [3]प्रकट, [4]अभिलाषाके रक्तके चिह्न [5]पहना है।

सुबहेउम्मीद

(आशाका प्रभात)

बिस्तरेमर्गपै ढारस है यह बीमारोंकी।
अश्कशोई[1] यही करती है अज़ादारोंकी[2]॥
यह मददगार यतीमोंकी है नाचारोंकी।
है हवाख़्वाह यही जानसे बेज़ारोंकी॥
नक़्श इसके दिलेमुज़तरमें[3] जो जम जाते हैं।
अश्क रुख़सारपै बहते हुए थम जाते हैं॥
हर तरफ़ होता है जब ग़मकी घटाओंका हुजूम।
दिलसे हो जाता है नक़्शेरुख़े राहत मादूम[4]॥
ज़िन्दगी होती है जब मौतसे बदतर मालूम।
यासअफ़ज़ा[5] नज़र आती है हयातेमोहूम[6]॥
इसके जल्वेकी झलक राहतेजाँ होती है।
रोशनीका शबेहिरमांमें[7] निशाँ होती है॥

*　　*　　*

टूट जाए दिलेनाशाद अगर आस न हो।
ज़िन्दगीका किसी जीरूहको[8] अहसास[9] न हो॥

अहलेहिन्द

(भारतीय)

इनक़लाबेदहरसे सब शानवाले मिट गये।
रूमवाले मिट गये, यूनानवाले मिट गये॥

---

[1]आँसू पोंछना; [2]मातम करने वालोंकी; [3]विकल हृदयमें; [4]नष्ट, [5]निराशा-वर्द्धक; [6]कल्पित जीवन; [7]निराशारूपी रात्रिमें; [8]भले आदमीको; [9]आभास।

सीरियावाले मिटे, तूरानवाले मिट गये।
कौन कहता है कि हिन्दुस्तानवाले मिट गये ?
नक्शेबातिल[1] हम नहीं जिनको मिटाये आस्माँ।
हम नहीं मिटनेके जबतक हैं बिनाए आस्माँ॥
हमने यह माना हमारे आनवाले मिट गये।
भोज से, विक्रम-से आलीशानवाले मिट गये॥
भीष्म औ अर्जुनसे योद्धा बानवाले मिट गये।
अकबरो परतापसे मैदानवाले मिट गये॥
नामलेवा उनके हम ज़र्रेफलक बाकी तो हैं।
मिटते मिटते भी जहाँमें आजतक बाकी तो हैं॥

क्या थे अहलेहिन्द यह चर्खेकुहनसे पूछ लो।
या हिमालयकी गुफाओंके दहनसे पूछ लो॥
अपना अफसाना लबेगंगोजमनसे पूछ लो।
पूछ लो, हर ज़र्रयेखाकेवतनसे पूछ लो॥
अपने मुँहसे क्या बतायें हम कि क्या थे लोग थे।
नफ़सकुश[2] नक्शे पुतले थे मुजस्सिमयोग[3] थे॥

*　　　　*　　　　*

तेगेहिन्दी

(भारतीय तलवार)

साफ करती सफ़दुश्मन[4] तू जिधर चलती है।
हाथ बाँधे तेरे सायेमें ज़फ़र[5] चलती है॥

*　　　　*　　　　*

---

[1]व्ययचिह्न　[2]संयमी　[3]पूर्णरूपेणयोगी।
[4]शत्रुओंका व्यूह　[5]विजय।

तुझमें वह आब है शेरोंका जिगर पानी है।
दुश्मनोंके लिए जुम्बिश तेरी तूफ़ानी है॥

तू वह है बहरेरवाँ[1] जिससे रवानी[2] माँगे।
तेरा मारा हुआ मैदाँमें न पानी माँगे॥

* * *

दिल लरज़ते हैं ज़रा तू जो लचक जाती है।
चश्मेग़द्दारमें[3] बिजली-सी चमक जाती है॥
अपने मरकज़से[4] ज़मीं रनकी सरक जाती है।
मौत भी सामने आये तो झिझक जाती है॥

* * *

जब कभी रनमें चमकती हुई तू निकली है।
ख़ौफ़से होके फ़ना जानेउदू निकली है॥

* * *

लोहा माने हुए बैठा है ज़माना तेरा।
कि लबेज़ख़्मपर अबतक है फ़िसाना तेरा॥

पयामे शौक़

(अमरीकासे एक भारतीयका सन्देश)

डूबनेवाले सितारे ! ऐ लबेबाम आफ़ताब !
ख़ाकज़मीने हिन्दमें होनेको है तू बारयाब॥
जब वहाँ चमके उफ़क़में ज़ेरेदामानेसहाब।
मेरी जानिबसे वतनको इस तरह करना ख़िताब॥

---

[1]प्रवाहित समन्दर; [2]बहाव; [3]देशद्रोहीके नेत्रोंमें; [4]केन्द्रसे।

इक मुसाफ़िरको ग़रीबोंसीका तेरी शौक़ है।
दूर उफ़्तादा[1] तेरा चश्मेसरापाशौक़[2] है॥

इसकी हसरत है कि अबतक आँखसे आँसू गिरें।
जज़्बेसादिक़के[3] असरसे सब दुरेशबनम[4] बनें॥

तेरे साहिल[5] तक उन्हें मौजेंसबाकी[6] ले उड़ें।
गोहरेनायाब तुझपर वारकर सदक़े करें॥

क़तराहाये अश्क़ेहसरत मिलके तेरी ख़ाकमें।
बेलबूटे बनके निकलें सरज़मीने पाकमें॥

* * *

मज़्जेये बेगाना

(घास-पात)

अत्याचारीको सम्बोधन करते हुए किस खूबीसे चुटकी लेते हुए सावधान करते हैं —

ओ मस्तेनाज़[7] रौंद ना ज़ेरेक़दम मुझे।
ज़ालिम ! बना न तख्तये मश्क़ेसितम मुझे॥

ठंडी हवामें लेने दे बेदर्द दम मुझे।
इतना न कर असीरेग़ज़ाबेअलम मुझे॥

ठुकरा न इस तरह कि गयाहेहक़ीं[8] हूँ मैं।
खुदफ़तें[9] इकेसारसे[10] फ़र्शेज़मीं हूँ मैं॥

---

[1]दूर पड़ा हुआ, [2]देखनेको लालायित, [3]सत्यनिष्ठ भावनाके, [4]मोती-जैसे, [5]किनारे, [6]हवाकी लहरें, [7]मदमस्त, [8]दुखिया घास, [9-10]स्वयं अपनी नम्रतासे।

महवेख़िरामेनाज़[1] ! क़दम रख सम्हालकर।
उफ़्तादगाने[2] ख़ाकका भी कुछ ख़याल कर॥
नाचीज़ काह[3] हूँ मैं ज़रा देखभाल कर।
सदक़ा शबाबका न मुझे पायमाल कर॥
मेरे लिए हैं आफ़तेजाँ शोख़ियाँ तेरी।
ढाती हैं मुझपै क़हर ये अठखेलियाँ तेरी॥

इठलाके चल न ओ सितमईजाद[4] ! ख़ैर है।
मुझ ख़ानुमाँख़राबसे[5] क्या तुझको वैर है॥
अच्छा यह शग़ल है तेरा अच्छी ये सैर है।
मेरा सरेनियाज़ है और तेरा पैर है॥
आया है बाग़में पए गुलगश्तेबाग़[6] तू।
पज़मुर्दगीका[7] दे न मेरे दिलपै दाग़ तू॥

*　　*　　*

हरगिज़ सितम न तोड़ किसी नातवानपर[8]।
बेफ़ायदा अज़ाब न ले अपनी जानपर॥
दारेफ़नामें[9] फूल न तू इज़्ज़ोशानपर।
ओ मुश्तेख़ाक ! उड़के न चल आसमानपर॥
हुश्यार है तो दहरमें दीवाना बनके रह।
बाग़ेजहाँमें सब्ज़ये बेगाना बनके रह॥

---

[1]मस्तचालमें लीन; [2]ख़ाकमें पड़े हुओंका; [3]घास; [4]अत्याचारोंके आविष्कारक; [5]बेघरबारवालेसे; [6]बाग़की सैरको; [7]मुर्झानेका; [8]निर्बल पर; [9]असार संसारमें।

दिले दर्द आश्ना

जिसे राहेतलबमें[1] खेल हो अपना मिटा देना।
हमेशा जिसकी खू[2] हो जलके भी बूएवफ़ा देना॥
जिसे आता हो ज़ोरेनारवा[3] सहकर दुआ देना।
वदीयत[4] जिसको फ़ितरतमें[5] हो रोतोंको हँसा देना॥
मेरे पहलूमें यारब ! वोह दिलेदर्द आश्ना देना।

कमरबस्ता रहे जो हर नफ़स इमदादे बेक्सपर।
हमेशा गोशबरआवाज़[1] हो फ़रियादे बेकसपर॥
जो अश्केखूं बहायें खातिरेनाशादेबेकसपर।
तड़प उट्ठे जो दर्दअंगेज़िये[2] रूदादेबेक्सपर[3]॥
मेरे पहलूमें यारब ! वोह दिलेदर्द आश्ना देना।

जिसे गर्मेतपिश रक्खे तड़पना बेकरारोंका।
न देखा जाय जिससे हालेज़ार आफ़तके मारोंका॥
जिसे बेताब करदे शोरेमातम सोगवारोंका।
जो अंगारोंपे लोटे सुनके नाला दिलफ़िगारोंका॥
मेरे पहलूमें यारब ! वोह दिलेदर्द आश्ना देना।

ज़ेबुन्निसाकी क़ब्र

(औरंगज़ेबकी पुत्रीकी समाधि)

* * *

गुम्बद है, मक़बरा है, ना लोहेमज़ार है।
तावीज़ेक़ब्रका भी है मिटता हुआ निशां॥

---

[1]आवश्यकता पड़नपर, [2]आदत, [3]अनुचित जुल्म, [4]धरोहर, [5]स्वभावमें; [1]चौकन्ना सजग, [2]करुण पुकारपर, [3]निरीहकी आवाज़पर।

न शमअ़ है, न चादरेगुल है, न क़ब्रपोश।
मिट्टीका एक ढेर है इबरतकी दास्ताँ॥

वीरानियेलहद[1] है मजावर[2] सरेमज़ार।
ज़ाइर[3] हुजूमेयास,[4] तबाही है पासबाँ[5]॥

है गर्दसे अटा हुआ अम्बार ख़ाकका।
सब्ज़ा तो क्या कि शक्लेनमू[6] भी नहीं अयाँ॥

उड़ती है ख़ाक और बरसती है तीरगी[7]।
छाया हुआ है हसरतोअन्दोहका[8] समाँ॥

रोती है बेकसी सरेबालीं खड़ी हुई।
तुरबतपै कसमपुरसीका आलम है नौहाख़्वाँ॥

बादेसबा चढ़ाती है चादर ग़ुबारकी।
हैं जर्राहाये रेगेबयाबाँ गुहर फ़िशाँ॥

है उसकी ख़्वाबगह यह शबिस्तानेख़ाक अब।
जेविन्दह जिसके दमसे थे क़ीसरे फ़लकनिशाँ॥

* * *

उसको पसेफ़ना हैं ये मटियानहल नसीब।
दामनको जिसके गर्दे सरेराह थी गिराँ॥

* * *

बच्चेकी गुलाबी मुस्कराहट

ख़न्दयेगुलमें यह रंगीनी कहाँ?
यह लताफ़तबेज़ शीरीनी कहाँ?

---

[1]क़ब्रकी वीरानी; [2]क़ब्रका रक्षक; [3]ज़ियारत करनेवाला, क़ब्रपर आनेवाला; [4]निराशाओंकी भीड़; [5]रक्षक; [6]तिनका तक; [7]अन्धेरा; [8]अभिलाषा और दुखका।

इस सबाहतपर यह नमकीनी कहाँ ?
इसमें है जाएसखुनचीनी कहाँ ?

खत्म है तेरे लबोंपर वाह ! वाह !!
यह गुलाबी मुस्कराहटकी अदा ॥

* * *

कोई हसरतकश है या महजूर है।
शादमानी जिससे कोसों दूर है॥
लाख जोशेग़मसे दिल मामूर है।
तुझसे मिलते ही नज़र मसरूर है॥

खत्म है तेरे लबोंपर वाह ! वाह !!
यह गुलाबी मुस्कराहटकी अदा ॥

* * *

अब्रेकरम बरस

* * *

हसरतसे देखते हैं सुए आस्माँ किसान।
बादलके नामका नज़र आता नहीं निशान॥
बारिश कहाँ है आह जो है खेतियोंकी जान।
फिरते हैं जानवर भी निकाले हुए ज़बान ॥

प्यासी ज़मीन है तो शजर तिश्ना काम है।
रिन्दानेबादहख्वार भी आतिश बजाम हैं॥

ताखीर किसलिए है यह अब्रेकरम बरस।
बारिश बग़ैर खल्कका है लबपै दम बरस ॥

अब ताबे इन्तज़ार नहीं बेशोकम बरस।
है रहमतेकरीमकी तुझको क़सम बरस॥

ऐसा बरस कि दूर ज़मानेसे काल हो।
जंगल हरे हों, सब्ज़ ये गुलशन निहाल हो॥

कारेख़ैर

(क्या किया तूने ?)

बता ऐ ख़ाकके पुतले कि दुनियामें किया क्या है ?
बता कै दाँत हैं मुंहमें तेरे, खाया पिया क्या है ?
बता ख़ैरात क्या की, राहे मौलामें दिया क्या है ?
यहाँसे आक़बतके[1] वास्ते तोशाह[2] लिया क्या है ?

दुआएँ ली कभी ठंडा किया दिल तुफ़्तहजानोंका[3] ?
हुआ है तू कभी राहतरसाँ[4] तिश्नादहानोंका[5] ?

किसी गुमकरदहरहकी[6] खिज्र[7] बनकर रहनुमाई[8] की ?
किसीको नाख़ुनेतद्वीरसे[9] उक्दाकुशाई[10] की ?
दमेमुश्किल[11] किसी मजलूमकी[12] हाजतरवाई[13] की ?
किसीको दस्तगीरी की, किसीकी कुछ भलाई की ?

कभी कुछ काम भी आया किसी आफ़तरसीदाके ?
कभी दामनसे पूँछे तूने आँसू आब्दीदाके ?

शरीके दर्देदिल होकर किसीका दुख बटाया है ?
मुसीबतमें किसी आफ़तज़दाके काम आया है ?

---

[1]परलोकके; [2]सामान; [3]दग्धहृदयोंका; [4]चैन देनेवाला; [5]प्यासोंका; [6]भूले-भटकेकी; [7]मार्ग-प्रदर्शक; [8]मार्ग सुझाना; [9]अक़्लसे; [10]मुश्किल हल करना; [11]आड़ेवक़्त; [12]पीड़ितकी; [13]इच्छा पूर्त्ति।

पराई आगमें पड़कर कभी दिल भी जलाया है ?
किसी बेकसकी ख़ातिर जानपर सदमा उठाया है ?

कभी आंसू बहाये हैं किसीकी बदनसीबीपर ?
कभी दिल तेरा भर आया है मुफ़लिसकी ग़रीबीपर ?

किसीका उक़्दयेमुश्किल[1] कभी आसां किया तूने ?
किसी दर्मांतलबके[2] दर्दका दर्मां किया तूने ?

किसी दिलगीरका[3] दिल गुंचयख़ंदां[4] किया तूने ?
किसीको भी कभी शर्मिन्दयेअहसां किया तूने ?

किसी दरमान्दय[5] मंज़िलके सरसे बोझ उतारा है ?
बिसातेदर्दमन्दीपर किसीसे कौल हारा है ?

कभी तूने किसी बरगश्ता[6] क़िस्मतकी ख़बर ली है ?
किसी मातमज़दाकी तूने दिलजोई कभी की है ?

किसीके वास्ते आफ़तमें अपनी जान डाली है ?
किसी बख़्तानुमाकी वक़्तेमुश्किल कुछ मदद की है ?

हुजूमेयासमें[7] हिम्मत बढ़ाई दिलशिकिस्ताकी ?
कभी कुछ चाराफ़रमाई[8] भी की ज़ख़्मी ओ ख़स्ताकी ?

कभी इम्दाद दी तूने किसी बेकस बिचारेको ?
सख़ी बनकर दिया कुछ तूने मुफ़लिसके गुज़ारेको ?

तसल्ली दी कभी तूने किसी आफ़तके मारेको ?
कभी तूने सहारा भी दिया है बेसहारेको ?

---

[1]उलझन [2]रोगीके [3]उदासका।
[4]कलीकी तरह खिला हुआ [5]थकेहुए।
[6]फिरी हुई [7]निराशाओंकी भीड़में [8]इलाज।

कभी फ़रियादरस बनकर ख़बर ली बेनवाओंकी[1] ?
लगी है चोट भी दिलपर सदा सुनकर गदाओंकी[2] ?

किसी बरगश्ता[3]क़िस्मत बेनवाकी[4] दिलनवाज़ी[5] की ?
किसीके ख़न्दये ज़ख़्मे जिगर की चारासाज़ी की ?
किसीके वास्ते ग़ममें घुला क्या जाँगुदाज़ी[6] की ?
अगर था साहिबेतौफ़ीक़[7] क्या बन्दानवाज़ी[8] की ?

सुना कब कान धरकर नालयेग़म बेनवाओंका ?
हमेशा वालओशैदा[9] रहा अपनी अदाओंका ॥

रहा तू रात-दिन मसरूफ़ शग़्लेमयपरस्तीमें[10] ।
गँवाई रायगाँ[11] उम्रे दो रोज़ा कैफ़ेमस्तीमें[12] ॥
तुला फूलोंमें गुलछर्रे उड़ाए बाग़ेहस्तीमें ।
गिरा ग़र्केनिशातो ऐश[13] होकर ग़ारेपस्तीमें[14] ॥

रचाये रंग तूने ख़ूब पी-पीकर मयेअहमर[15] ।
शबेमहताबमें जल्से रहे हैं माहताबीपर ॥

रहा महवे तमाशा हुस्नका, अन्दाज़का शैदा ।
रहा सौ जानसे तू हर अदाएनाज़का शैदा ॥
रहा इशरतका ख़्वाहिशमन्द हिर्सोआज़का[16] शैदा ।
रहा दौलतका दिलदादा रहा एज़ाज़का[17] शैदा ॥

---

[1]निराश्रितोंकी, अनबोलोंकी; [2]फकीरोंकी; [3]फिरी हुई; [4]बेसहारेकी; [5]दिल बहलाना; [6]मनघुलाना; [7]दान देनेमें समर्थ; [8]मनुष्योंकी भलाई; [9]अनुरक्त; [10]शराबमें व्यस्त; [11]व्यर्थ; [12]मस्तीकी हालतमें विलासितामें; [13]रंगरलियोंमें डूबकर; [14]पतनके कूपमें; [15]लाल शराब; [16]लालचका, तृष्णाका; [17]प्रतिष्ठाका ।

सदा मिटता रहा आराइशोंपर[1] जामाज़ेबोंपर[2]।
बहुत नाज़ाँ रहा अपनी अदायेदिलफ़रेबोंपर॥

बहुत तूने बहारेज़िन्दगानीके मज़े लूटे।
बहुत ज़ेरे क़दम तूने किये पामाल गुल बूटे॥
बहुत जामेमयेगुल रंग तेरे हाथसे टूटे।
बहुत लाला रुख़ोंके लाले लब तूने किये झूठे॥

रहा तू बेगुलोग़श महव शग्ले ऐशकोशीमें[3]।
कभी फ़िक्रेमआल आया न जोशेख़ुदफ़रोशीमें॥

कुछ शेर —

हमें राहेतलबमें ख़ाक हो जानेसे मतलब है।
क़दम पहुँचे न पहुँचे मंज़िलेमक़सूदपर अपना॥

मुसाफ़िर हूँ अदमकी राहमें फ़िक्रे अक़ामत क्या?
वही मंज़िल है जिस जा ख़त्म हो जाये सफ़र अपना॥

उन्हींको हम जहाँमें रहरवे कामिल समझते हैं।
जो हस्तीको सफ़र और क़ब्रको मंज़िल समझते हैं॥

जो हैं जोयाव क्य मुश्किलको वोह मुश्किल समझते हैं?
शनावर[4] मौजेतूफ़ाँगेज़को साहिल समझते हैं॥

न मिज़गाँसे चकूरेअश्कने हमने दिये आँसू।
यह दरिया थमके होकर रह गया अपने किनारोंमें॥

आनाममें बचनेको जो सूझी कोई तदबीर।
आग़ोशमियेनाज़ शर भी शामिल नज़र आई॥

२४ जुलाई १९४६

---

[1]सजावटपर, [2]वेश-भूषा, पोशाकपर, [3]भोगविलासमें, [4]तैराक।

सफल प्रयास

उर्दू-शायरी एक नए मोड़पर,
सरल भाषाके समर्थक

हिन्दुस्तानमें इस छोरसे उस छोर तक बसनेवाले हिन्दू-मुसलमान जिस भाषामें परस्पर बोल सकें, उस हिन्दी या हिन्दुस्तानी ज़बानकी दाग़बेल अमीर ख़ुसरोने डाली। जायसी, रसखान, रहीम और कबीर वग़ैरह इसी दाग़बेल पर ऐसा हिन्दी-मन्दिर बनानेमें सराबोर रहे, जहाँ हर हिन्दुस्तानी, चाहे वह किसी भी मज़हब या प्रान्तका हो बिना किसी भेदभावके अपना दिल खोलकर रख सके और दूसरेके मनको पढ़ सके। मगर वली वग़ैरहको यह गंगा-जमुनी देशी ढंग न भाया। उन्हें अरब, फ़ारस और तुर्कीकी कला अधिक पसन्द आई। भाव-भाषा, कल्पना, उपमा, अलंकार अनुप्रास, पिंगल, व्याकरण, जो भी वहाँसे ला सके लाये। हिन्दुस्तानसे केवल वही लिया जो दूसरी जगह न मिल सका। फिर भी इस विदेशी अरबी-फ़रसी मिश्रित दुरूह उर्दू काव्य-कला-मन्दिरमें हिन्दी-शब्द पच्चीकारीमें मीनेकी तरह लगते ही रहे।

वली द्वारा प्रचलित इस क्लिष्ट उर्दू शायरीको सबसे पहले सरल भाषा और भारतीय भावोंका रूपरंग नज़ीर अकबराबादीने दिया। मिर्ज़ा दाग़, अमीर मीनाई और अकबर इलाहाबादी वग़ैरहने इसे बड़ी ख़ूबीसे सँवारा और अब तो इस बाग़ीचेमें तरह-तरहके रंग-बिरंगे फूल खिलते नज़र आ रहे हैं। सैकड़ों बाकमाल कलाकार अपना-अपना कौशल दिखला रहे हैं। इस गंगा-जमुनी छटाको हम तीन तरहसे देखते हैं:—

१—भाषा उर्दू, मगर आसान—

अप्रचलित शब्दोंको छोड़कर आसान-से-आसान भाषामें लिखनेकी इस प्रणालीको नवाब साइल, आग़ा शायर, बेख़ुद, नूह, जिगर, रियाज़, जलील, बिस्मिल, बहज़ाद, दिल और आरज़ू वग़ैरहने बड़ी लगनके साथ आगे बढ़ाया; और अब तो एक आम धारणा बन चुकी है कि

लेखक, कवि और वक्ता वही अधिक सफल होते हैं जो अपने भावों को ज्यादा-से-ज्यादा लोगोंके मनमें आसानीसे बिठा सकें।

२—उर्दूमें हिन्दी-शब्द—

जिस तरह आपसके मेलजोलके कारण हिन्दीमें हज़ारों शब्द अरबी, फारसी, अंग्रेज़ी वगैरहके घुलमिल गये हैं और रोज़ानाके काम-काजमें इस्तेमाल होते हैं, उसी तरह उर्दूमें भी हज़ारों शब्द हिन्दीके समाये हुए हैं। यहाँ तक कि उर्दूकी नज़्मोंमें भी बड़ी खूबीके साथ हिन्दी-शब्द पिरोये जाने लगे हैं। अल्लामा इकबाल और चकबस्त-जैसे उर्दूके महान कलाकार भी इस लोभको संवरण न कर सके। उन्होंने उर्दूकी बहर (छन्द) और उर्दूके ही शब्दोंमें हिन्दी शब्दोंकी कहीं-कहीं पुट दे कर एक अजीब मिठास भर दी है। हिन्दीकी कलम लगाकर उर्दू-शायरीके चमनको काफी विकसित किया जा रहा है।

३—केवल हिन्दी—

वह युग लद गया जब कि हर भाषा-भाषी अपने भावोंको कठिन-से-कठिन शब्दोंमें प्रकट करना एक शान समझता था। अब ज़मानेने एक और करवट बदली है। उर्दू-शायरीमें कुछ बहरें (छन्द) नियत थीं। उन्हीं बहरोंमें गज़लें और नज़्में लिखते-गाते लोगोंका मन अब ऊब चुरा था। संसारकी दूसरी भाषाओं—अंग्रेज़ी, हिन्दी, बंगला आदिमें नित नई तर्ज़ें निकल रही थीं। उर्दूमें ऐसे गीतोंका नितान्त अभाव था। खुद उर्दू-शायरोंके घरोंमें, पड़ोसमें, महफिलोंमें रोज़ाना ऐसे गीत गाये जाते और वे मन मारके रह जाते थे। गीतोंके आगे गज़लें फीकी पड़ने लगीं। यहाँ तक कि वेलुदीमें शायर लोग भी उन गीतोंको गुन-गुनाने लगते। इस कमीको महसूस तो करते थे मगर उपाय न सूझता था। इस ओर सबसे पहला कदम जनाब हफ़ीज़ जालन्धरीने उठाया। उन्होंने गज़लें और नज़्में लिखनी कम करके बोह मारके

गीत लिखे और गाये कि उर्दू-दुनिया अश-अश कर उठी। फिर तो इन गीतोंकी ऐसी बाढ़-सी आई कि उर्दू-पत्र-पत्रिकाओंमें, मुशायरोंमें, व्यक्तिगत सोहबतोंमें गीत-ही-गीतोंकी भरमार रहने लगी। सागिर निजामी, अख्तर शीरानी, अमरचन्द क़ैस, अजमत अल्लाह खां, डा० मुहम्मद दीन तासीर, मक़बूल हुसेन अहमदपुरी, विक़ार अम्बालवी, पं० इन्द्रजीतशर्मा, अहसान बिन दानिश, हफ़ीज़ होशयारपुरी, मीराजी, हामिद अल्लाह अफ़सर, मौ० बशीर अहमद, मौ० हामिदअली खाँ राजामहदीअलीखाँ, बहज़ाद लखनवी, सिराजुद्दीन ज़फ़र, अहमद नदीम कासिमी—जैसे ख्याति-प्राप्त उर्दू शायरोंने प्रेम, भक्ति, विरह प्रकृति-सौन्दर्य, रहस्यवाद, सावन, वसन्त, होली, झूला, लोरी आदि भिन्न-भिन्न पहलुओंपर इतना अधिक लिखा है कि कई बड़े-बड़े संग्रह तैयार हो सकते हैं।

प्रथम तो प्रस्तुत पुस्तकका उद्देश्य हिन्दी पाठकोंको केवल उर्दू कविताका रसास्वादन कराना है। दूसरे, हिन्दीमें नित नए एक-से-एक बढ़कर गीत देखनेमें आ रहे हैं। हिन्दी-पाठकोंको शायद गीत अधिक न रुचें इसलिए हम इस युगके ख्यातिप्राप्त—१ हफ़ीज़ जालन्धरी; २ साग़र निजामी; ३ अख्तर शीरानी और ४ अर्श मलशियानीके नमूनेके तौरपर केवल एक-एक दो-दो गीत, कुछ नज़्में और चन्द ग़ज़लोंके अशआर देकर सन्तोष करेंगे।

१२ अगस्त १९४६

१८

हफ़ीज़ जालन्धरी

यह कौन बमदव है जो मिर्ज़ा गालिबपर भी चोट करनेका साहस कर सकता है? बड़े-बड़े बाकमाल उस्ताद तो मिर्ज़ाके सिरपर गिरह लगानेमें भी झिझकते हैं, और एक यह हैं कि बाआवाज़ बुलन्द कह रहे हैं—

> 'किया पाबन्दे नालेको मैंने
> यह तर्ज़ेख़ास है ईजाद मेरी ॥"

क्या ख़ूब! मिर्ज़ाने फ़र्माया है कि नाला लयके आधीन नहीं है[1] और आपका दावा है कि नालेको मैंने लयके आधीन कर लिया है।

यही परस्पर विरोधी बात देखनेको १२–१३ वर्ष पहले हफ़ीज़ जालन्धरीके नग़मयज़ार' और साज़ोआवाज़ पढ़ने बैठा तो उर्दू-साहित्यकी दुनिया ही बदली-सी दिखाई देने लगी। यह कृष्ण कन्हैया बाँसुरी प्रान्तकी रीति वसन्त रावी और चिनाब नदियाँ हिमालय लाहौर

---

[1]मिर्ज़ा गालिबका वह शेर यह है—

> 'फ़रियादकी कोई लै नहीं है।
> नाला पाबन्दे नै नहीं है॥"

यानी फ़रियाद—कष्टोंकी करुण पुकार—की कोई लय नहीं होती। यह पुकार तो चरमकी तरह हृदयसे अपने आप फूट पड़ती है। नाला—आह व्यथा वेदना क्रन्दन—ताल-स्वरके आधीन नहीं है। तात्पर्य यह है कि जब सचमुच रोना आता है तब वह गाया नहीं जाता।

वग़ैरह उर्दू-शायरीके मज़बूत गढ़में क्योंकर घुस गये? जो शायरी अभी तक अभारतीय रही, वही भारतीय-सी कैसे दीखने लगी?

जब उर्दू-शायर सदियोंसे भारतमें रहते-सहते हुए भी अधिकांश अपनेको हिरात, अफ़ग़ान, ग़ज़नी, दुर्रानी, तबरस्तान, काबुल, बग़दाद वग़ैरहका मूल निवासी बतानेमें आत्मगौरव समझते हैं, तब कोई विदेशी विद्वान भारतको देखे बग़ैर केवल उनके कलामको पढ़कर भारतको ईरानका सूबा या ज़िला समझनेकी भूल कर बैठे तो कोई आश्चर्य नहीं। यह माना कि बल, पौरुष, सभ्यता, सुन्दरता आदि में इन शायरोंके दृष्टिकोणसे भारतमें कुछ भी उल्लेख्य योग्य नहीं था। लेकिन मशहूर उर्दू-अदीब पं० हरिश्चन्द्र 'अख़्तर' के कथनानुसार "क्या इस विशाल जनसंख्या वाले भारतमें—जहाँ दुनियाँकी जनसंख्याका पाँचवाँ हिस्सा बसता है—किसी कमबख़्तको आशिक़ हो जानेकी भी तौफ़ीक़ नहीं हुई? और अगर हुई तो क्या उसका महबूब ऐसा गया-गुज़रा था कि हमारे शायरोंको उसका ज़िक्र तक गवारा नहीं हुआ?"[1]

इसी त्रुटिको अनुभव करते हुए एक उर्दू-साहित्यिक लिखते हैं—"अगर हमारे अदीब[2] देशी ज़बानके होते हुए परदेशी ज़बानोंके अल्फ़ाज़ इस्तेमाल न करें तो हमारी बहुत-सी मुश्किलें आसान हो सकती हैं। हमारे अदीब अभी तक पुरानी लकीरके फ़क़ीर बने हुए हैं। शायर बदस्तूर क़ुमरी और बुलबुलपर आशिक़ हैं। ग़ज़लमें मुक़ामी रंग मफ़क़ूद[3] है। गंगाके किनारे बैठकर दजलह[4] और फ़िरातके[5] ख़्वाब देखे जाते हैं। नतीजा यह है कि हमारी शायरी हक़ीक़तसे बहुत दूर हो गई है। सुहराब और रुस्तमका ज़िक्र सुनते-सुनते कान पक गये, अर्जुन और भीमका नाम कोई नहीं लेता।

---

[1]सोज़ोसाज़की भूमिका, पृष्ठ १३।

[2]साहित्यिक; [3]ग़ायब; [4]बग़दादकी एक नदी; [5]रूमकी एक नदी।

नर्गिस और नोमनस ज्यादा खूबसूरत और खुशबूदार कँवल और चम्पा हैं। शीरी फरहाद लैला-मजनूकी दास्तानोंसे ज्यादा दिलचस्प और दिलको मोहनेवाली नल दमयन्ती हीर राँझेकी कहानियाँ हैं। महज बुलबुल और कुमरी ही खुशइलहानियाँ[1] नहीं करतीं कोयल और पपीहेकी आवाज़में भी रस है। बगदादकी शामसे ज्यादा दिलफरेब सुबह-बनारस है। गुलज़ार रूम तो अहद अतीक (पुराने वक्तों) की दास्तान है लेकिन गुलकदह काश्मीर वाकई फिरदौसबरीका नमूना है।[2]

कौन न 'जमील' उर्दूका सिंगार, अब ईरानी तलमीहोंसे।
पहनेगी विदेशी गहने क्यों यह बेटी भारतमाताकी॥

हमारी गुलामी जहनियतका यह हाल है कि हम हिन्दी रज-वीर्यसे उत्पन्न हुए हिन्दी आबोहवामें पले और हिन्दी खाकमें अपने बुजुर्गोंकी तरह एक रोज मिल जायेंगे। फिर भी हमारी हर बातमें अहिन्दी भूत घुसा हुआ है। कुछ लोग तो यहाँके हर भरे बागीचे उजाड़ कर उसमें खजूर के पेड़ लगाना और रेत बिछाना ही सवाब समझते हैं। हाथीसे ऊँटको बेहतर जानते हैं। उर्दूके मशहूर शायर सौदा का बस चलता तो अपने हिन्दी माँ बापसे यहाँ पैदा किये जानेकी कैफियत भी तलब करते। आपको अपने बाप दादाओंके वतन हिन्दुस्तानसे इस कदर नफरत थी कि पेट भरनेका कहीं और ठिकाना होता तो एक लमहे भरको यहाँ न रहते।

गर हो कशिश शाह खुरासानकी 'सौदा'।
सिजदा न करूँ हिन्दकी नापाक ज़मींपर॥

ऐसे ही भले आदमियोंकी औलाद आज हिन्दोस्तान मुर्दाबाद के नारे लगाती है और देशको रसातलमें पहुँचानेका अधम प्रयत्न करती है तो आश्चर्यकी इसमें क्या बात है?

---

[1]मधुर गायन [2]हिन्दीके मुसलमान शायर पृष्ठ ४।

जिन मज़हबी अन्धविश्वासोंको अरबने धता बता दी, खिलाफ़तको टर्कीने तलाक़ देदी, उन्हींको हिन्दुस्तानमें पनाह दी गई है। उर्दू-हिन्दी शब्दकोषके सम्पादक बा० रामचन्द्रजी वर्माने सत्य ही लिखा है:—

"तुर्कोंने अरबी शब्दोंका बहिष्कार किया था, ईरानने भी उसका अनुकरण किया। वहाँकी भाषामें आधेके लगभग जो अरबी शब्द घुस गये थे, वे सब सरकारी आज्ञासे बहिष्कृत होने लगे, और उनके स्थानपर ईरानी या फ़ारसी भाषाके शब्द चलने लगे। उन्होंने अरबीके अल्लाह और रसूल तक की जगह अपने यहाँ 'खुदा' 'पैग़म्बर' शब्द चलाए। अब अफ़ग़ानिस्तान भला क्यों पीछे रहता? उसने अरबी फ़ारसी दोनों भाषाओंके शब्दोंका बहिष्कार किया है। यह सब तो स्वतन्त्र देशोंकी बातें हैं। हमारा देश तो परतंत्र है, यहाँ उलटी गंगा बहे तो कोई आश्चर्य नहीं।"[1]

एक ऐसे ही हिन्दी-द्वेषी 'नातिक़' गुलाठवीके ५ जून १९४४ के पत्रका उत्तर देते हुए जनाब 'एजाज़' सद्दीक़ी साहब (संपादक 'शाइर' आगरा; सुपुत्र अल्लामा 'सीमाब' अकबराबादी) लिखते हैं:—

"हिन्दी-शायरी क्या है और किस क़िस्मका अदब[2] पेश कर रही है, इसका जवाब बहुत तफ़सील तलब है, लेकिन उर्दूको हिंदुस्तानकी वाहिद मुश्तरका मुल्की ज़बान समझते हुए और उसका सच्चा खिदमतगार व परिस्तार होते हुए मैं निहायत ईमानदारीके साथ यह अर्ज़ करनेकी जुरअत कर रहा हूँ, कि हिन्दी-शायरी हमारी-आपकी आम उर्दूशायरीसे कहीं मुफीद और कारआमद है। यहाँ यह सवाल नहीं कि हिन्दी-शायरीमें संस्कृत अल्फ़ाज़की भरमार होती है, और आम तौर पर उसे समझा नहीं जा सकता। मेरे मुहतरिम! बहुतसे उर्दू-शायरोंका कलाम आम तौरसे कब समझा जाता है? हिन्दी जाननेवालोंको जाने दीजिये;

---

[1]अच्छी हिन्दी, पृ० १६७; [2]साहित्य।

उर्दू पढे लिग एग त्रिनन ह जा गालिब' 'इश्कवाज़ 'सीमाव पार्नी, मगगर' और बाज़ दूगर बुलन्गो शोमराव मग्फाज़ व मुफाहिमत' आमानीग समझ लन ह।

आजका न्दी नायर उर्दू-शोअराकी तरह ज़ुल्फागम, गुलो बुलबुल आरिज़ो रुखसार हिज्रो विसाल-जंग सैकडो फरमूदा' खयालात का शिकार नहीं। उसकी शायरीमें ज़िन्दा रहनेवाली कौमोंके जज़बात' मौजज़न ह। वह अमन व जहादका' पगाम दना है और ज़िन्दगीकी—दुखती हुई रगोपर हाथ रखना ह। आजकी हिन्दी शायरी रिवायती' मनाशिरम' कतअन पाक ह। यही वजह है कि हिन्दी कवियोंको कवि सम्मेलनोंमें दाद नहीं मिलती। जो शेर दस व पयाम और ठोस खयालातका हामिल होगा उस पर कभी वाह-वाह नहीं होगी। वाह-वाह तो सिर्फ़ उस अशआर पर होती है जो मामलाबन्दीकी मुकम्मिल तसवीर हो और जिन्सयाती' नज़रियानके' एन मुताबिक। आज जिस तरह हिन्दू कौमी मुल्की सियासी' मआशरती' तालीम और मज़हबी उमूरमें' आगे निकल चुका ह उसी तरह उसका अदब भी तरक्की'पज़ीर ह। मैं सही उल अकीदा मुसलमान हूँ और इसलामके नाम पर अपना सब कुछ कुरबान करनेके लिए तयार मगर हिन्दोस्तानी मुसलमानोंकी रविश वाकई बहुत मगमम''। हाँ मायूस नहीं हूँ। मुसलमान सिर्फ़ एतराज़ करना जानता ह लेकिन अपनी गलतियोंकी तरफ भूलकर भी उसकी निगाह नहीं जाती। मैं मज़हबी तास्सुब'' खालिउलज़हन'' होकर हर मामलेमें गौर करनेका आदी हूँ। अगर हिन्दू अपनी कदीम

'तात्पर्यको व्यर्थ 'भाव 'धार्मिक युद्धका 'नकलची 'नैतिकोंमें 'इंद्रिय-वासना सम्बन्धी 'दृष्टिकोणके 'राजनैतिक 'आर्थिक 'क्षेत्रोंमें 'उन्नतशील 'दुखी ''पक्षपातमें ''रहित।

ज़वानकी वक़ाके[1] लिए जद्दोजहद[2] करता है तो यह कोई गुनाह नहीं। रहा तरवीज[3] व उर्दूअशायतका[4] सवाल, तो जिस चीज़में जितना फैलनेकी सलाहियत[5] होगी वह फितरतन उतनी ही फैले और सिकुड़ेगी।

"जिस तरह मुसलमान संस्कृतकी शायरी पर एतराज करते हैं, क्या उसी तरह हिन्दुओंने भी कभी यह कहा कि मुसलमान फ़ारसीमें शायरी—क्यों करते हैं? हाफ़िज़, जामी, अनवरी, और सादी वग़ैरह को जाने-दीजिये, डाक्टर इक़बाल मरहूमका फ़ारसी कलाम सैकड़ों हिन्दुओंके ज़ेरेमताला[6] रहता है। सिर्फ इसलिए कि वह फ़ारसी भी जानते हैं। और फ़ारसी जानना उनके यहाँ कोई गुनाह नहीं। क्या मुसलमानोंने भी कभी यह कोशिश की कि वह संस्कृत या आसान हिन्दी ज़वानका कभी मताला करें?

"मैंने तालिव इल्मीके ज़मानेमें कभी एक लफ्ज़ हिन्दीका याद करके पण्डितजीको नहीं सुनाया, और हमेशा उन्हें एक-दो पान खिलाकर सालाना इम्तहानमें नम्वर हासिल कर लिए। चूंकि दिमाग़ की सही नश्वोनुमा[7] नहीं हुई थी, और तास्सुवकी[8] घटायें छाई हुई थीं, इसलिए आजतक उसका खमियाज़ा[9] भुगत रहा हूँ। अगर मसजिदमें जानेसे हिन्दू मुसलमान और मन्दिरमें जानेसे मुसलमान हिन्दू हो जाये, तो ज़वानोंके सीखनेसे भी यकीनन मज़हवी अज़मत पर धव्वा आना चाहिये।

"मुहतरिमी! सिर्फ़ एक क़दीम हिन्दुस्तानी ज़वान न जानने की वजहसे हम उसके साथ अछूतोंका-सा वरताव कर रहे हैं। अगर हमें इसमें थोड़ा वहुत भी दर्क होता, तो हिन्दी या संस्कृतकी शायरी वारे समाअत[10] न होती। हज़ारों हिन्दुस्तानी जो अंग्रेज़ी ज़वानसे अच्छी तरह

---

[1]अस्तित्वके; [2]प्रयत्न; [3]उर्दूका प्रसार; [4]उर्दू साहित्यका प्रसार; [5]योग्यताके; [6]अध्ययनमें; [7]उन्नति; [8]पक्षपातकी [9]हानि; [10]कर्णकटु।

वाकिफ है, उन्हें उर्दू या सम्कृततरी शायरीमें वह लुत्फ नहीं आता, जो मगरबी शायरीमें आता है। आखिर क्यों ? अंगरेज़ी ज़बानके खिलाफ मुसलमानोंमें जज़्बयेनफ़रत क्यों नहीं पाया जाता और वह उठने-बैठने, सोने-जागने, खाने-पीने, बजाय उर्दू या ब्रजभाषाके अंगरेज़ीमें गुफ्तगू क्यों किया करते हैं ? मैंने अक्सर देखा है कि दौरानेगुफ्तगूमें दो लफ्ज़ अगर उर्दूके बोलते हैं तो चार अंगरेज़ीके। यह क्या है ? हिन्दू अगर उर्दूमें सम्कृतकी आमेज़िश कर रहे हैं तो क्या बुरा कर रहे हैं, गो यह जानते हैं कि यह बेल मढ़े नहीं चढ़ेगी। मुसलमानोंके पास इस एत-राज़का क्या जवाब है, कि उर्दू ज़बानमें अस्सी फीसदी अरबी और फारसीके अल्फाज़ इस्तेमाल करते हैं। दरअसल हिन्दुस्तानियोंकी—ज़हनियतें इस कदर पस्त हो गई हैं कि, वह कदम कदमपर "हिन्दूपानी" और "मुसलमान पानी"की आवाज़ें सुननेके आदी हो गये हैं। काश ! कोई मुल्की और समाजी कानून ऐसा होता, जो दिमागोंसे इस लगवियतको छीलकर फेंक देता। मैं मानता हूँ कि मुसलमान हिन्दुओंके साथ बहुत ज़्यादा रवादार रहे, लेकिन उर्दू हिन्दीके मुआमिलेमें मुसलमानोंने रवादारीसे काम नहीं लिया। हकीकतन यह मसला मुसलमानोंके लिए काबिल तवज्जह होना ही नहीं चाहिए था। उर्दूके बग़ैर हिन्दुस्तानी ज़िन्दा नहीं रह सकता। अगर हिन्दुओंके प्रोपेगंडे और कोशिशसे उर्दूको किसी कदर नुकसान पहुँचा भी है—जिसे मैं माननेके लिए तैयार नहीं—तो वह महज़ ज़िदकी बिनापर। क्या यह ज़ुल्म नहीं कि एक ऐसी मुबारक ज़बानको मिटा दिया जाय जिसमें कदीम हिन्दुस्तानके तारीखी नक्श जगमगा रहे हैं, जिसमें हिन्दुस्तानके एक कदीम मज़हबकी तालीम महफूज़ है और जो ज़रा आसान होकर अपने अन्दर इतना लोच, इतनी लचक, और इतना रस रखती है कि कोई दूसरी ज़बान मुश्किलसे उसका मुका-बिला कर सकती है। क्या आम फ़हम हिन्दी गीत सुननेके बाद बेअख्ति-याराना दिलपर हाथ रख लेनेको जी नहीं चाहता ? और क्या हम एक

ग़ैर-मामूली लज़्जत महसूस नहीं करते? . . . . रहा हिन्दी शायरीके उसूल व क़वायद और वहरोवज़नका अवाल, तो जहाँ तक मुझे इल्म है यह सब मुन्ज़िबित है, और अबसे नहीं बल्कि ज़मानए क़दीमसे। अलबत्ता इसमें अब कुछ तब्दीलियाँ की गई हैं। हिन्दी ज़बानमें ऐसी कई किताबें मिलती हैं और शायद किसी एक किताबका उर्दूमें तरजुमा भी हो चुका है। हिन्दीके तमाम मशहूर कवि उसूल व क़वायदके मातहत ही शेर कहते हैं। इनके यहाँ असनाद भी मिल सकती हैं। हिन्दी और संस्कृतके लुग़ात भी मौजूद हैं, यहीं नहीं बल्कि अलफ़ाज़के माखिज़ और उनके मुतरादिफ़ात भी कसीर तादादमें हैं। हम किसी तरह संस्कृतको नामुकम्मिल ज़बान नहीं कह सकते। बल्कि यह एक जामा और बुलन्दतरीन ज़बान है।

"हज़रत मौलाना! क्या मैं दरियाफ़्त कर सकता हूँ कि आपने अपने गिरामी नामोंमें हिन्दी या संस्कृतके मुश्किल तरीन अलफ़ाज क्यों इस्ते-माल फरमाये? इसे रवादारीपर महमूल करूँ या ज़िदपर? इसी तरह हिन्दू भी मुसलमानोंको चिढ़ाते हैं।"[१]

हफ़ीज़ जालन्धरीके कलाममें मुझे भारतीय रंग और रूपकी छटा खिलखिलाती नज़र आई है। यद्यपि बक़ौल जनाब 'पितरस' हफ़ीज़ कभी-कभी कनखियोंसे तुर्केशीराज़को देख लेता है, फिर भी उनका यह भारतीय प्रेम सराहने योग्य है। उनकी विरह ग़ज़लोंको पढ़नेसे मालूम होता है कि पतिके परदेश चले जाने पर कोई गौनावाली दुल्हन काली साड़ी पहनकर विरहा गा रही है। हफ़ीज़की नज़्में देखो तो आभास होता है विवाह योग्य क्वारी छोकरियाँ झूला झूल रही हैं। उनके गीत किसीको गुनगुनाते सुनो तो प्रतीत होता है कि साक्षात काम-देव दुन्दुभी बजाते हुए आ रहा है।

---

[१]'शायर' जुलाई—अगस्त १९४४, पृ० ६६-६७।

मिसरी-जैसी भाषा, कन्या-सी अछूती कल्पना और कृष्णचन्द्रकी बाँसुरीसे निकले हुए-से मादक गीत आनन्द-विभोर कर देनेके लिए काफ़ी हैं।

जनाब हफ़ीज़ शायरीकी बदौलत आज बड़े आदमी हैं। लाहौर रेडियोविभागमें उच्च पद पर प्रतिष्ठित हैं। 'शाहनामाए इस्लाम' —जैसी कृति लिखकर हफ़ीज़ उर्दू-शायरोंकी उच्च श्रेणीमें बैठ गये हैं। अब वे ख्याति-प्राप्त उर्दूके प्रतिष्ठित शायरोंमेंसे हैं; किन्तु आम जनताकी दृष्टिमें हफ़ीज़ वही १५–२० वर्ष पूर्व गीतिमय नज़्म और मादक गीतोंके आविष्कारककी हैसियतसे आसीन हैं। आज उनके कलामके लिए उर्दू-पत्र-पत्रिकाएँ बाट जोहा करती हैं। बज़्मेअदब के संचालक रास्ता तका करते हैं। हालाँकि प्रारम्भमें जब उन्होंने गीत लिखने शुरू किये तो उनके साहित्यिक मित्रोंने भी अपने पत्रोंमें उन्हें स्थान देना उचित नहीं समझा। मुशायरोंमें उनके गीत और नज़्म गले-बाज़ी समझे गये। फिर धीरे-धीरे उनके गीतों और नज़्मोंकी लोक-प्रियता बढ़ने लगी। काफ़ी नौजवान शायरोंने उनकी इस नवीन प्रणाली-को अपनाया, और अब तो गीत भी उर्दू-शायरीका एक अंग समझा जाने लगा है। प्रत्येक पत्र-पत्रिकामें रोज़मर्रा अच्छे-अच्छे गीत देखनेमें आते हैं।

२० अगस्त १९४६ ई०

नज़्म

१ जल्वयेसहर :—(१४ बन्दोंमेंसे १ बन्दका नमूना देखिये)

उठे हसीन ख़्वाबसे, कि धोये मुंह गुलाबसे।

यह इशवह[1] साजियोंमें है।

अदातराज़ियोंमें है॥

इधरसे इश्क़ भी उठा, मगर है अपनी हाँकमें।

इधर गया, उधर फिरा, फ़िज़ूल ताक-झाँकमें॥

शबाब जिसकी रात भी।

निशातोऐशमें[2] कटी॥

वह नींद ही का होगया, उठा, फिर उठके सो गया

उठे हसीन ख़्वाबसे, कि धोए मुंह गुलाबसे

[नग़मयेज़ारसे]

२ तूफ़ानी कश्ती :—(६ बन्दोंमेंसे केवल ३ बन्द)

नाव तूफ़ानमें घिरी हुई हो, उसमें पानी भरा चला आ रहा हो, तब मुसाफ़िरोंकी दयनीय स्थिति देखिये—

नग़मोंका[3] जोश ख़ामोश, सब नावनोश[4] ख़ामोश।

है यह बरात किसकी

नोशाह[5] और बराती

लौटे हैं लेके डोली

---

[1]नाज़-नखरा; [2]सुख-भोगमें; [3]मधुर-स्वरोंका, गीतोंका; [4]पीना-पिलाना; [5]दूल्हा।

मिसरी-जैसी भाषा, कन्या-सी अछूती कल्पना और कृष्णकन्हाईकी बाँसुरीसे निकले हुए-से मादक गीत आनन्द विभोर कर देनेके लिए काफ़ी हैं।

जनाब हफ़ीज़ शायरीकी बदौलत आज बड़े आदमी हैं। लाहौर रेडियाविभागमें उच्च पद पर प्रतिष्ठित हैं। 'शाहनामाए इस्लाम'—जैसी कृति लिखकर हफ़ीज़ उर्दू-शायरीकी उच्च श्रेणीमें बैठ गये हैं। अब वे ख्याति प्राप्त उर्दूके प्रतिष्ठित शायरोंमेंसे हैं, किन्तु आम जनताकी दृष्टिमें हफ़ीज़ वही १५–२० वर्ष पूर्व संगीतमय नरम और मादक गानोंके आविष्कारककी हैसियतसे आसीन हैं। आज उनके कलामके लिए उर्दू-पत्र-पत्रिकाएँ बाट जोहा करती हैं। बज़्मअदबके संचालक रास्ता तका करते हैं। हालाँकि प्रारम्भमें जब उन्होंने गाने लिखने शुरू किये तो उनके साहित्यिक मित्रोंने भी अपने पत्रोंमें उन्हें स्थान देना उचित नहीं समझा। मुशायरोंमें उनके गीत और नज़्में गले बाज़ी समझे गये। फिर धीरे-धीरे उनके गीतों और नज़्मोंकी लोकप्रियता बढ़ने लगी। काफ़ी नौजवान शायरोंने उनकी इस नवीन प्रणालीको अपनाया और अब तो गीत भी उर्दू शायरीका एक अंग समझा जाने लगा है। प्रत्येक पत्र-पत्रिकामें रोज़मर्रा अच्छे-अच्छे गीत देखनेमें आते हैं।

२० अगस्त १९४६ ई०

नज़्म

१ जल्वयेसहर :—(१४ बन्दोंमेंसे १ बन्दका नमूना देखिये)

उठे हसीन ख़्वाबसे, कि धोये मुँह गुलाबसे।

यह इशवह्[1] साज़ियोंमें है।

अदातराज़ियोंमें है॥

इधरसे इश्क़ भी उठा, मगर है अपनी हाँकमें।

इधर गया, उधर फिरा, फ़िज़ूल ताक-झाँकमें॥

शबाब जिसकी रात भी।

निशातोऐशमें[2] कटी॥

वह नींद ही का होगया, उठा, फिर उठके सो गया

उठे हसीन ख़्वाबसे, कि धोए मुँह गुलाबसे

[नग़मयेज़ारसे]

२ तूफ़ानी कश्ती :—(६ बन्दोंमेंसे केवल ३ बन्द)

नाव तूफ़ानमें घिरी हुई हो, उसमें पानी भरा चला आ रहा हो, तब मुसाफ़िरोंकी दयनीय स्थिति देखिये—

नग़मोंका[3] जोश ख़ामोश, सब नावनोश[4] ख़ामोश।

हैं यह बरात किसकी

नोशाह[5] और बराती

लौटे हैं लेके डोली

---

[1]नाज़-नख़रा; [2]सुख-भोगमें; [3]मधुर-स्वरोंका, गीतोंका; [4]पीना-पिलाना; [5]दूल्हा।

मायूस[1] हैं निगाहें, रक्सां[2] लबोंपै आहें।
डोलीमें हूरपैकर[3]
क्या कांपती है थर-थर
लेकिन है मुहर लबपर

दूल्हाके सरपै सेहरा, लेकिन उदास चेहरा।
इशरतकी[4] आरजू थी
उल्फ़तकी जुस्तजू थी
उम्मीद रोबरू थी

यह इन्क़लाब क्या है, आग़ोशेमर्गवा[5] है।
अफ़सोस है इलाही !
क्या आ गई तबाही !
क़िस्मतकी कमनिगाही[6] !!

बैठी है एक बेवा, है सब्र जिसका शेवा[7]।
दिल हाथसे दबाए
बच्चा गले लगाए
तीरे उम्मीद खाए

यह बापकी निशानी, सरमायए[8] जवानी।
एक दिन ज्वान होगा
अम्माका मान होगा
हक़ मेहर्बान होगा

—नग़मयज़ारसे

---

[1]निराश [2]थिरकती हुई [3]अप्सरा लावण्यवती, [4]आनन्दका [5]मृत्यु गोदमें लेनेको खडी है [6]भाग्यकी कुदृष्टि, [7]स्वभाव, [8]धन।

३ ईदका चाँद :—

जोती रहो, मगर मुझे आता नहीं नज़र ।
बेटी ! कहाँ है चाँद ? मुझे भी बता किधर ?

अफ़सोस, अब निगाह भी कमज़ोर हो गई ।
नेमत ख़ुदाने दी थी बुढ़ापेमें खो गई ॥

मीनारेजामअ़ाहके ऊपर ? कहाँ-कहाँ ?
कुछ भी नहीं, कोई भी नहीं है यहाँ कहाँ ?

हाँ, डालियोंके बीचमें होगा वहीं कहीं ।
वोह है जहाँपै अब्रके[1] सुर्ख़ी कहीं-कहीं ॥

अब हो चुकी है उम्र भी नौ और आठ साल ।
गुज़रे तेरे ससुरको[2] भी गुज़रे हैं आठ साल ॥

तेरी तरहसे मैं भी कभी हाँ, जवान थी ।
वोह दिन भले थे और भली उनकी शान थी ॥

हर ईदसे पहले देखती थी मैं हिलालेईद[3] ।
दस-बीस दिनसे रहता था हरदम ख़यालेईद ॥

अब दिन तुम्हारे, वक़्त तुम्हारा, तुम्हारी ईद ।
बेटी ! तुम्हारी ईदसे है अब हमारी ईद ॥

चाँद देख लेने पर दुआ माँगते हुए :—

यारब ! तेरे हुज़ूरमें हाज़िर खड़ी हूँ मैं ।
आसी[4] गुनहगार[5] तो बेशक बड़ी हूँ मैं ॥

---

[1]बादलकी; [2]ससुर; [3]ईदका चाँद; [4]अपराधिन; [5]मुजरिम ।

लेकिन मेरे गुनाहोखतापर निगह न कर।
यारब ! तू अपनी शानेकरीमीपै[1] रख नजर॥

अल्लाह ! मेरे चाँद-से नूरेनजरकी ख़ैर।
मेरे कमाऊ मेरे मुसाफिर पिसरकी ख़ैर॥

अल्लाह ! मुझको घरका उजाला नसीब हो।
बेटा बहूको, और मुझे पोता नसीब हो॥

—नग़मयेप्यारसे

४ शामेग्रामी —

सध्याका दृश्य खीचते हुए आगे फर्माते हैं—

खेतोंमें काम करके लौटे हैं कामवाले।
चादर सरोंपै डाले कन्धोंपै हल सम्हाले॥

अब शाम आ गई है, जागे हैं भाग उनके।
हरसिम्त[2] गूँजते हैं रस्तोंमें राग उनके॥

ले-लेके ढोर-डगर चरवाहे[3] आ रहे हैं।
सीटी बजा रहे हैं और गीत गा रहे हैं॥

कमसिन सहेलियोंका पनघटपै जमघटा है।
जाने अकेलियोका दिन किस तरह कटा है?

यह बार-बार बातें, यह बार-बार हँसना।
यह बेशुमार बातें, ये बेशुमार हँसना॥

---

[1]क्षमा कर देनेवाला व्यक्तित्व [2]हर तरफ, [3]चौपाये चरानेवाले।

वह गुदगुदा रही है, वह खिलखिला रही है।
यह भर चुकी है पानी, ऊपर उठा रही है॥

शरमाके उसने खींचे मुँहपै हँसीके मारे।
रंगीन ओढ़नीके भीगे हुए किनारे॥

शर्मोहयाकी सुर्ख़ी चेहरेपै छा रही है।
शाम उसको देखती है और मुस्करा रही है॥

—सोज़ोसाज़से

५ ख़ैवरका दर्रह :—

न इसमें घास उगती है, न इसमें फूल खिलते हैं।
मगर इस सरज़मींसे आस्माँ भी झुकके मिलते हैं॥

कड़कती बिजलियोंकी इस जगह छाती दहलती है।
घटा बचकर निकलती है, हवा थर्राके चलती है।

इन्हीं दुश्वारियोंसे आरयोंका कारवाँ[1] गुज़रा।
ज़मीनेहिन्दपै जाता हुआ एक आस्माँ गुज़रा॥

इसे तैमूरने रौंदा, इसे बाबरने ठुकराया।
मगर इस ख़ाककी आलीविक़ारीमें[2] न फ़र्क़ आया॥

—सोज़ोसाज़से

६ तसवीरेकाश्मीर :—

५८ बन्दोंमें बहुत आकर्षक कश्मीरका वर्णन किया है। एक बन्द बतौर नमूना दर्ज किया जाता है :—

---

[1]यात्रीदल; [2]उच्च प्रतिष्ठा, शानमें।

आमियोंने[1] कह दिया कश्मीरको जन्नतनिशां[2]।
वर्ना जन्नतमें यह हुस्नो रंगो शादाबी[3] कहां ?
क्या है जन्नत ? चन्द हूरें, इक चमन, दो नद्दियां।
खैर, जाहिदकी रिग्रायतसे यह कहता हूँ कि हां॥
ग्रालमेबालापे[4] है परतौ[5] इसी कश्मीरका।
एक पहलू यह भी है कश्मीरकी तसवीरका॥

७ प्रीतका गीत —

हफीज़के बहुतसे हिन्दी गीतोंमेंसे केवल एक गीतका पांचवां अंश नीचे दिया जाता है —

अपने मनमें प्रीत
बसाले
अपने मनमें प्रीत

मनमन्दिरमें प्रीत बसाले, ओ मूरख ! ओ भोलेभाले!
दिलकी दुनिया करले रोशन, अपने घरमें जोत जगाले।
प्रीत है तेरी रीत पुरानी, भूल गया ओ भारतवाले॥
भूलगया ओ भारतवाले
प्रीत है ऐसी रीत
बसाले
अपने मनमें प्रीत।

नफरत इक आजार है प्यारे, दुखका दारू प्यार है प्यारे।
आजा असली रूपमें आजा, प्रेमका तू अवतार है प्यारे॥
यह हारा तो सब कुछ हारा, मनके हारे हार है प्यारे॥

---

[1]मूर्खोंने, [2]स्वर्ग-बहिश्तके समान, [3]हरियाली, [4]आस्मानपर, [5]प्रतिच्छाया।

मनके हारे हार हैं प्यारे
मनके जीते जीत
बसाले
अपने मनमें प्रीत

—सोज़ोसाज़से

हफ़ीज़की ग़ज़लोंके नमूने :—

होगया जब इश्क़ हमआग़ोश[1] तूफ़ानेशवाब[1]।
अक़्ल बैठी रह गई साहिलपै[2] शरमाई हुई॥

ओ बेनसीब! हश्रके[3] वादोंका हश्र[4] देख।
वोह रफ़्ता-रफ़्ता वादाफ़रामोश[5] होगये॥

मुझे डर है गुलोंके बोझसे मरक़द[6] न दब जाए।
उन्हें आदत है जब आना ज़रूर अहसान धर जाना॥

अब इब्तदायेइश्क़का आलम कहाँ 'हफ़ीज़'!
किश्ती मेरी डुबोके वो दरिया उतर गया॥

काबेको जा रहा हूँ निगह सूएदैर[7] है।
फिर-फिरके देखता हूँ कोई देखता न हो॥*

यह हुस्न कहीं इश्क़को बेज़ार न करदे।
दुनियाकी हक़ीक़तसे ख़बरदार न करदे॥

---

[1]-[1]यौवनका तूफ़ान बग़लगीर हो गया; [2]नदी किनारे; [3]प्रलय-के बाद; [4]परिणाम; [5]वायदा भूल गये; [6]क़ब्र; [7]मन्दिरकी ओर;

*इस क़ाफ़ियेमें 'निज़ाम' रामपुरीका शेर याद आया :—

अन्दाज़ अपना देखते हैं आईनेमें वोह।
और यह भी देखते हैं कोई देखता न हो॥

सरूनेज़िन्दगी[1] हासिल हुआ तर्के अमल करके।
न खुश होता हूँ आसाँसे न घबराता हूँ मुश्किलसे ॥
बनानेवाले शायद तेरा कोई खास मक्सद था।
मेरी फूटी हुई तक़दीरमें, टूटे हुए दिलमें ॥
सरेमक़तल[2] 'हफ़ीज़' अपना कोई हमदम न था लेकिन।
निगह कुछ देर तक लड़ती रही शमशीरे क़ातिलसे ॥
रूहको खाकके दामनमें लिये बैठा हूँ।
मेरा कालिब ही हकीक़तमें है मदफ़न मेरा ॥

यह खूब[3] क्या है, यह ज़िश्त[4] क्या है, जहाँकी असली सरिश्त[5] क्या है?
बड़ा मज़ा हो तमाम चेहरे अगर कोई बेनक़ाब करदे ॥
तेरे करमके[6] मुआमिलेको तेरे करम[7] ही पै छोड़ता हूँ।
मेरी खताएँ शुमार करले मेरी सज़ाका हिसाब करदे ॥

न दर्दे मुहब्बत न जोशेजवानी।
यह जन्नत है, तो हाय! दुनियाएफ़ानी[8] ॥
तू फिर आगई गर्दिशे आस्मानी।
बड़ी महर्बानी, बड़ी महर्बानी ॥
सुनाता है क्या हैरत अगेज़ क़िस्से।
हसीनोंमें खोई हो जिसने जवानी ॥
हुस्न बेचारा तो हो जाता है अक्सर महर्बाँ।
फिर उसे आमादयेबेदाद[9] कर लेता हूँ मैं ॥
आई है बेहया मेरा ईमाँ खरीदने।
दुनिया खड़ी है दौलतेदुनिया लिये हुए ॥

---

[1]जीवनमें शान्ति, [2]वधस्थलमें, [3]अच्छा, [4]बुरा, [5]स्वभाव, [6]दयालुताके, [7]तेरे ही न्याय या इंसाफपर, [8]असारसंसार, [9]अत्याचार करनेको राज़ी।

ओ नंगेऐतबार[1]! दुआपर न रख मदार[2]।
ओ बेवक़ूफ़! हिम्मतेमर्दाना चाहिये॥
रहने दे जामेजम मुझे अंजामेजम पिला।
खुल जाय जिससे आँख वोह् अफ़साना चाहिये॥

तुमने दुनिया ही बदल डाली मेरी।
अब तो रहने दो यह दुनियादारियाँ॥

मेरी जिन्दगीपर ताज्जुब नहीं था।
मेरी मौतपर उनको हैरानियाँ हैं॥
नदामत हुई हश्रमें जिनके बदले।
जवानीकी दो-चार नादानियाँ हैं॥
मेरा तजरुबा है कि इस जिन्दगीमें।
परेशानियाँ ही परेशानियाँ हैं॥

ना आशना हैं रुत्बयेदीवानगीसे दोस्त!
कम्बख़्त जानते नहीं क्या होगया हूँ मैं॥
हाँ कैफ़ेबेख़ुदीकी वोह साइत भी याद है।
महसूस हो रहा था ख़ुदा होगया हूँ मैं॥

समझा हुआ हूं सूमियेदस्तेदुआको[3] मैं।
कुछ रोज और देख रहा हूँ ख़ुदाको मैं॥*

---

[1]अन्धविश्वासी; [2]भरोसा; [3]नमाज पढ़ते समय हाथ उठाकर दुआ मांगनेके परिणामको।

*दुआओंका अंजाम पेशेनज़र हैं।
बहरहाल सजदे किये जा रहा हूँ॥

—मानूस सहसरामी

साबित क़दम रहूँ कि तलातुमका[1] साथ दूँ ?
साहिलके[2] रुख़ तो जा न सकूँगा हवाके मैं ॥

किश्ती सुपुर्द छोड़के बैठा हूँ मुतमईन।
दरियामें फेंक दूँ न कहीं नाख़ुदाको[3] मैं ॥

इन्सान हूँ ख़ताएवफ़ा बख़्श दीजिए।
बस कीजिए, पहुँच तो चुका हूँ सज़ाको मैं ॥

मतलबपरस्त दोस्त ना आये फ़रेबमें।
बैठा रहा लिये हुए दामेवफ़ाको मैं ॥

है अज़लसे इस ग़लत बख़्शीपै हैरानी मुझे।
इश्क़ लाफ़ानी मिला है ज़िन्दगी फ़ानी मुझे ॥

वहीं ज़ेरदस्तोंको राहत नहीं है।
न ज़ेरे फ़लक है न ज़ेरेज़मीं है ॥

तनज़्ज़ुलकी हद देखना चाहता हूँ।
कि शायद वहीं हो तरक़्क़ीका ज़ीना ॥
मेरे डूब जानेका बाइस तो पूछो।
किनारेसे टकरा गया था सफ़ीना ॥

असीरीसे रिहाई पानेवालो !
तुम्हें पहुँचे मुबारिकबाद मेरी ॥
सहारा क्यों लिया था नाख़ुदाका।
ख़ुदा भी क्यों करे इमदाद मेरी ?

ख़िरदमन्दो[4] ! ख़िरदसे दूर हूँ मैं।
बहुत ख़ुश हूँ बहुत मसरूर हूँ मैं ॥

---

[1]तूफ़ानका [2]किनारेकी तरफ़ [3]मल्लाहको [4]अक़्लमन्दो !

किसीने भी न पहचाना वतनमें।
मैं सनन्ना था बहुत मशहूर हूँ मैं॥

यानी मैं नामुराद भी हूँ बेवक़ूफ़ भी।
कुछ इस तरह वोह दादेवफ़ा दे गये मुझे॥

जिनसे कोई उम्मीद न थी उनसे क्या उम्मीद?
जिनसे उम्मीद थी वोह दग़ा दे गये मुझे॥

फ़रमा गये बुज़ुर्ग कि "उम्रदराज़ बाद"[1]।
मेरी शरारतोंकी सज़ा दे गये मुझे॥

जबसे देखा जल मरना नन्हीं-नन्हीं जानोंका।
शमअ़का परवाना न सही, परवाना हूँ परवानोंका॥

ले चल, हाँ, मझधारमें ले चल, साहिल-साहिल क्या चलना?
मेरी इतनी फ़िक्र न कर मैं ख़ूगर हूँ तूफ़ानोंका॥

---

[1]तेरी आयु अधिक हो।

१६

सागर निजामी

सागर एक रूपवान सजीला शायर है। वह अपनी इश्किया और रोमानी शायरीकी बदौलत समूचे हिन्दुस्तानमें ख्याति पा चुका है। उसके कलाममें प्यार, विरह और वेदना है। कंठमें उसके जादू है। सुननेवालोंको वह मन-मुग्ध-सा कर देता है। जब वह पढ़ने बैठता है तो मालूम होता है सारी राग रागिनियाँ एकाकार होकर बैठ गई है। भारतके हर रेडियो-स्टेशनसे उसके नग्मे गूंजते रहते हैं। बड़े-बड़े मुशायरोंमें उसकी उपस्थिति अनिवार्य समझी जाती है। उसके उठनेमें, बैठनेमें एक सलीक़ा है—अन्दाज़ है। बोलता है तो फूल-से झड़ते है। वह जितना मधुर लिखता है और बोलता है उतनी ही मधुरता अपने व्यक्तिगत जीवनमें भी रखता है। उसकी आंखोंमें मादकता और सकल्पकी दृढ़ता घुल मिलकर खेलती है। वह लजीला और विनयशील है, मगर स्वाभिमानको नही बिछुड़ने देता। मुख पर हँसी, मगर हृदयमें क्रान्तिकी आग। जन्मसे मुसलमान मगर मज़हब उसका मनुष्यप्रेम। जीवनकी कितनी ही अंधेरी कन्दराओंसे निकल कर वदाग़ हीरेकी तरह स्वच्छ और दृढ़।

सागर देशभक्त सुधारक परिवर्तनवादी और प्रगतिशील शायर है। प्यार भरे स्वरमें पुजारन भिखारन पनिहारीको टेरता है तो ससार की भलाईके लिए वह नये ईश्वर बनानेकी भी बात सोचता है। देश-प्रेमके आगे वह सब कुछ हेच समझता है। एक खतकी तरदीद करते हुए लिखता है —

'जहाँ तक हिन्दोस्तानकी आज़ादी हिन्दू-मुस्लिम इत्तहाद (ऐक्य)

और एक मुत्तहद (अखण्ड) आज़ाद मुल्कका सवाल है मैं इनके मुक़ाबिलेमें दुनियाकी बादशाहतको ठुकरा दूँगा। मुझे हिन्दोस्तान और उसकी आज़ादी अपने माँ-बाप, अपने भाई, अपनी बीवी और अपनी जानसे भी ज़्यादा अज़ीज़ है। मैं मर जाना पसन्द करूँगा, लेकिन उन तबकों (पार्टियों) का साथ न दूँगा जो हिन्दुस्तानकी आज़ादीके दुश्मन हैं यह मेरा महफ़ूज़ (सुरक्षित) और मज़बूत ईमान है जो कभी मुतज़लज़ल (डगमगानेवाला) नहीं हुआ और कभी नहीं होगा।.........

"मेरे और उनके दरमियान लाखों खलीजें हैं। वे बरतानवी साम्राज्यकी मशीनके एक पुर्ज़े, अंग्रेज़ोंके तनख्वाहदार मुलाज़िम यानी रजिस्टर्ड सरकारी आदमी—मैं हिन्दुस्तान और उसकी क़ौमोंका खादिम, मुझसे उनका क्या वास्ता? वह नौकर, मैं आज़ाद! वह ग़ुलामी पर नाज़ाँ मैं ग़ुलामीसे नाफ़िर। इसलिए हर अक़्लमन्द बाआसानी फ़ैसला कर सकता है कि मेरा उनका क्या इत्तहाद हो सकता है।"[१]

साग़िर आजकल बम्बई में रौनक़ अफ़रोज़ हैं। वहाँ किसी फ़िल्म कम्पनीमें कहानी और गीत-लेखक हैं; और वहींसे उर्दूमें 'एशिया' मासिक पत्र निकालते हैं। साग़िरने ऊँचे पायेकी ग़ज़ल और गीत लिखे हैं। उर्दूके पत्र-पत्रिकाओंमें उनका कलाम प्रकाशित होता रहता है। उनके सरल कलामका संक्षिप्त नमूना आगे देखिये।

---

[१]एशिया (उर्दू) सितम्बर १९४३, पृष्ठ ८ ।

चन्द गज़लोंके नमूने —

दिल हुस्नके हाथोंसे दामनको छुड़ाये है।
लेकिन कोई दामनको खींचे लिये जाये है॥

क्या शै है मुहब्बत भी, कोहसारको[1] ढाये है।
तिरतोंको डुबोवे है, डूबोंको तिराये है॥

जब प्रेमकी नद्दीमें तूफान-सा आये है।
नैया हो नहीं, नद्दी हिचकोले-से खाये है॥

यह तेरा तसव्वुर है या मेरी तमन्नाएँ।
दिलमें कोई रह रहके दीपक-से जलाये है॥

जिस सिम्त न दुनिया है, ऐ दोस्त! न उक्बा[2] है।
उस सिम्त मुझे कोई खींचे लिये जाये है॥

सीना हो दागदार क्यों, आज हो अश्कबार क्यों?
गम कोई ताजरी[3] नहीं, गमका हो इश्तहार क्यों?

खाम है जौके इन्तज़ार जीस्त[4] अगर हुई है बार।
उनका जब इन्तज़ार है, मौतका इन्तज़ार क्यों?

सब्र नहीं है जिन्दगी, जब्र नहीं है आशिकी।
दिलपै नहीं है अख्तियार, उनपै हो अख्तियार क्यों?

अपना ही बुतकदा सजा, अपने ही बुतपै लोट जा।
तेरे दिमागोदिलपै हो, दैरोहरमका[5] बार क्यों?

---

[1]पर्वतको [2]परलोक [3]व्यापार [4]ज़िन्दगी, [5]मन्दिर मस्जिदका।

उभरूँगा फिर लिबासेख़िज़ाँमें[1] बतर्ज़े नौ।
मुझको कुचल दिया जो ख़िरामेबहारने[2] ॥

जो इक नग़्मा भी दिलसे अन्दलीबेज़ार हो जाये।
चमन कैसा, चमनकी ख़ाक भी बेदार हो जाये ॥
तेरे सरकी क़सम गर तू न हो मेरे तसव्वुरमें।
मेरी नाज़ुक तबीयतपै यह दुनिया बार हो जाये ॥
इसी लमहेको शायद यासकी[3] तकमील कहते हैं।
मुहब्बत जब मिज़ाजे आशिक़ीपर बार हो जाये ॥

न गुल हैं न कलियाँ, न कलियाँ न काँटे।
तही[4] दामनी-सी तही दामनी है ॥
न मौजें न तूफ़ाँ, न माँझी न साहिल।
मगर मनकी नैया बही जा रही है ॥
चला जा रहा है वफ़ाका मुसाफ़िर।
जिधर भी तमन्ना लिये जा रही है ॥
हैं साजिदसे[5] मसजूद,[6] सजदोंसे[7] काबा।
मेरी बन्दगीसे तेरी दावरी[8] है ॥
मेरी ख़ाकपर साज़ेयकतार[9] लेकर।
उमीद अब भी इक गीत-सा गा रही है ॥

वोह दामनको अपने झटकते रहेंगे।
जो मैं ख़ाक हूँ, उड़के छाता रहूँगा ॥

---

[1]पतझड़-भेषमें; [2]बहारके आगमनने; [3]निराशाकी सीमा
[4]खाली दामन; [5]उपासकोंसे; [6]उपास्य; [7]नमाज़ पढ़नेसे;
[8]ईश्वरत्व; [9]इकतारा वाद्य।

तेर नामपर मौजवानी लुटा दी ।
जवानी नहीं, जिन्दगानी लुटा दी ॥

यहा इशरतेज़िन्दगानी लुटा दी ।
वहा दौलते जावदानी[1] लुटा दी ॥

यह इकरोज मिटती यह इकरोज लुटती ।
यह इक चीज थी आनी जानी लुटा दी ॥

जवानीके लुटनका ग़म हो तो क्यों हो ?
जवानी थी फानी[1] जवानी लुटा दी ॥

ख़िरदको[1] यह ज़िद थी न लुटती यह दौलत ।
इसी ज़िदप हमन जवानी लुटा दी ॥

वह गलियाँ अभी तक हसीनो जवाँ ह ।
जहाँ हमन अपनी जवानी लुटा दी ॥

मुहब्बतम हम और क्या कुछ लुटाते ?
मताएग़रूर जवानी लुटा दी ॥

× × ×

कफ खुनीन मौजको किश्ती बना दिया ।
फिक्र ख़ुदा ह अब न ग़मे नाख़ुदा मुझे ॥

यह सहनमस्जिद यह दौर सागिर ।
बहके नमाज़ी डूब नमाज़ी ॥
बग़ावत जवानीका मजहब ह 'साग़िर' !
ग़ुलामी ह पीरी बग़ावत जवानी ॥

---

[1]जीवनकी प्रसन्नताए परलोक-सुख [1]नष्ट होनवाली अक्लको यौवन-मदकी दौलत

समझना तेरा कोई आसां है ज़ालिम !
यह क्या कम है ख़ुद आइना हो गये हम ॥

भटककर पड़े रहज़नोंके[1] जो हाथों।
लुटे इस क़दर रहनुमा[2] हो गये हम ॥

जुनूनेख़ुदीका[3] यह ऐजाज़[4] देखो।
कि जब मौज आई ख़ुदा हो गये हम ॥

मुहब्बतने उम्रे अबद[5] हमको बख़्शी।
मगर राज़ यह समझे फ़ना[6] हो गये हम ॥

यह दोज़ख़, यह जन्नत, यह अमरोनवाही।
फ़सूनें रवायात है, और क्या है ?

—'रंगमहल'से

रोकती ही रह गई मासूम दूरन्देशियां।
उनके लबपर मेरा ज़िक्रेनातमाम आ ही गया ॥

हैं जहां इश्क़ो हविसको एतराफ़े बेकसी।
तलख़िये हस्तीके क़ुरबां वोह मुक़ाम आही गया ॥

जैसे साग़िरसे छलक जाये मचलती मौजेमय।
कांपते होठोंपै उनके मेरा नाम आ ही गया ॥

—उर्दू 'आजकल'से

---

[1]लुटेरोंके; [2]पथप्रदर्शक; [3]सोऽहंका उन्माद; [4]जादू, चमत्कार; [5]अमरत्व; [6]मर गये।

नज़्म

बुत-तराशका गीत

नया आदम तराशूंगा, नई हव्वा बनाऊँगा।
नया माबूद[1] ढालूंगा, नया बन्दा बनाऊँगा॥
इसी मिट्टीसे इक हँसती हुई दुनिया बनाऊँगा।

हर इक ज़र्रेके दिलमें इक जहन्नुम-सा दहकता है।
न जाने ख़ाकको कबसे ख़ुदा बननेका जज़्बा है॥
नई दुनियामें हर बन्देको मैं देवता बनाऊँगा।
नया आदम बनाऊँगा, नई हव्वा बनाऊँगा॥

तराने ज़िन्दगीके इन बुतोंसे फूट निकलेंगे।
फ़िसाने ज़िन्दगीके इन बुतोंसे फूट निकलेंगे॥
मैं इस गूंगे जहाँको बोलती दुनिया बनाऊँगा।
नया आदम बनाऊँगा, नई हव्वा बनाऊँगा॥

नई धरती, नया आकाश होगा और नये तारे।
नये जंगल, नये गुलशन, नई नदियां, नये धारे॥
इसी दुनियाकी बुनियादोंपै इक दुनिया बनाऊँगा।
नया आदम बनाऊँगा, नई हव्वा बनाऊँगा॥

हर इक तूफ़ानकी फेंकी हुई हलवान लहरोंमें।
पुरानी कश्तियोंकी लाश और बेजान लहरोंमें॥
नई कश्ती बनाऊँगा, नये दरिया बनाऊँगा,
नया आदम बनाऊँगा, नई हव्वा बनाऊँगा॥

---

[1] उपासनाके योग्य देवता।

कहाँ तक जिन्दगी उकटी रहे क़ुदरतके खाँचेमें।
कहाँ तक मैं ढलूँ दुनियाके इस महदूद साँचेमें॥
यह दुनिया जिसमें ढल जाये मैं वह साँचा बनाऊँगा।
नया आदम बनाऊँगा, नई हव्वा बनाऊँगा॥
जो आँसू दिलके पर्देमें छिपे हैं दिलका ग़म बनकर।
जो आँसू मेरे दामनपर गिरे हैं दिलका ग़म बनकर॥
मैं उनसे जिन्दगीकी एक नई दुनिया बनाऊँगा।
नया आदम बनाऊँगा, नई हव्वा बनाऊँगा॥

'एशिया' मार्च १९४४

अहद (प्रतिज्ञा)

जब निलाई रग सिक्कोको नचाया जायगा।
जब मेरी गरत्को[1] दौलतसे लडाया जायगा॥
जब रगइफलासको[2] मेरी दबाया जायगा।
ए वतन ! उस वक्त भी म तेर नग्मे गाऊँगा॥
और अपन पावसे अम्बारजर[3] ठुकराऊँगा॥

जब मुझ पडासे उरियाँ[4] करके बाधा जायगा।
गम आहनसे मेर होठोसे दागा जायगा॥
जब दहन्ती आगपर मुझको लिटाया जायगा।
ए वतन ! उस वक्त भी म तेर नग्मे गाऊँगा॥
तेर नामे गाऊँगा और आगपर सो जाऊँगा॥

ए वतन ! जब तुझप दुश्मन गोलिया बरसायेंगे।
सुख बादल जब फसीलोपर[5] तेरी छा जायग॥
नब समन्दर आगक बुर्जोंसे टक्कर खायेंगे।
ए वतन ! उस वक्त भी म तेर नग्मे गाऊगा॥
तेगकी झकार बनकर मिस्लतूफा[6] आऊँगा॥

गोलिया चारा तरफसे घर लगी जब मुझ।
और तनहा छोड देगा जब मेरा मरकब मुझ॥

---

[1]गुनहरा [2]स्वाभिमानका [3]दरिद्रताकी नसको [4]दौलतका र [4]नग्न [5]लोहम [5]चहारदीवारीपर [6]तूफानकी तरह घोडा।

और संगीनोंपे चाहेंगे उठाना सब मुझे।
ऐ वतन! उस वक़्त भी मैं तेरे नग़मे गाऊँगा॥
मरते-मरते इश्क़ तमाशायेवफ़ा[1] बन जाऊँगा॥

ख़ूनसे रंगीन हो जायेंगी जब तेरी बहार।
सामने होंगी मेरे जब सर्द लाशें बेशुमार॥
जब मेरे बाज़ूपे सर आकर गिरेंगे बार बार।
ऐ वतन! उस वक़्त भी मैं तेरे नग़मे गाऊँगा॥
और दुश्मनकी सफ़ोंपर[2] बिजलियाँ बरसाऊँगा॥

जब दरेज़िन्दा[3] खुलेगा बरमला[4] मेरे लिए।
इन्तहाई[5] जब सज़ा होगी रवा[6] मेरे लिए॥
हर नफ़स[7] जब होगा पैग़ामेक़ज़ा[8] मेरे लिए।
ऐ वतन! उस वक़्त भी मैं तेरे नग़मे गाऊँगा॥
बादाकश[9] हूँ, ज़हरकी तल्ख़ीसे[10] क्यों घबराऊँगा?

हुक्म आख़िर क़त्लगहमें[11] जब सुनाया जायगा।
जब मुझे फाँसीके तख़्तेपर चढ़ाया जायगा॥
जब यकायक तख़्तयेख़ूनी हटाया जायगा।
ऐ वतन! उस वक़्त भी मैं तेरे नग़मे गाऊँगा॥
अहद करता हूँ कि मैं तुझपर फ़िदा हो जाऊँगा॥

---

[1]प्रेम निर्वाहका तमाशा; [2]श्रेणी-क़तारपर; [3]कारागृह-द्वार; [4]तत्काल; [5]अधिक से अधिक; [6]जायज; [7]स्वास; [8]मृत्युका सन्देश; [9]शराबी; [10]कड़ुवाहटसे; [11]वध-स्थानमें।

क़ौमी तराना

अय वतन, अय वतन, अय वतन !
जानेमन,[1] जानेमन, जानेमन !!

–१–

ज़र्रे ज़र्रेमें महफ़िल सजा देंगे हम,
तेरे दीवारोदर जगमगा देंगे हम ॥
तुझको हस्तीका[2] गुलशन बना देंगे हम,
आसमानोंपे तुझको बिठा देंगे हम ॥
बनके दुश्मन तेरा जो उठेगा यहाँ,
उसको तहतुस्सरामें[3] गिरा देंगे हम।
और तहतुस्सराको फ़नाके[4] समन्दरमें,
अर्थी बनाके बहा देंगे हम।
अय वतन, अय वतन !!
सुन लें यह इन्सो[5]जानो[6]ज़मीनोज़मन[7] ॥
अय वतन, अय वतन, अय वतन !
जानेमन, जानेमन, जानेमन !

–२–

सोनेवालोंको इक दिन जगा देंगे हम,
रस्मो राहे ग़ुलामी मिटा देंगे हम।

---

[1]मेरे प्राण [2]जीवनरा [3]पातालमें [4]मृत्युके, [5]आदमी, [6]जान (जिन परी), [7]पृथ्वी और समय।

तेरे वैरीके टुकड़े उड़ा देंगे हम,
आसमानोज़मींको हिला देंगे हम।
कौन कहता है कमज़ोर निर्बल है तू,
हर तरफ़ ख़ूंके दरिया बहा देंगे हम।
जिस तरफ़से पुकारेगा हिन्दोस्तां,
उस तरफ़ ही आपको मिटा देंगे हम।
अय वतन, अय वतन,
सरसे बाँधे हुए हैं तिरंगा कफ़न।
अय वतन, अय वतन, अय वतन।
जानेमन, जानेमन, जानेमन!

— २ —

तेरी हस्ती हिमालयकी चोटी बनी,
माहोख़ुरशीदकी[1] उसपे बिन्दी लगी।
रोशनी शर्क़से[2] ग़र्ब[3] तक हो गई,
सजदेमें झुक गई अज़मतेज़िन्दगी[4]।
अज़मते ज़िन्दगीकी क़सम है हमें,
तेरी इज़्ज़तपे सर तक कटा देंगे हम।
वक़्त आने दे, ऐ माँ तेरे नामपर,
अपनी हस्ती व मस्ती मिटा देंगे हम।
अय वतन, अय वतन, अय वतन!
ख़ूनसे अपने भर देंगे गंगोजमन,

---

[1]चाँद-सूरजकी; [2]पूरबसे; [3]पश्चिम; [4]ज़िन्दगीकी शान।

अय वतन, अय वतन।
जानेमन, जानेमन, जानेमन!

– ४ –

मस्तोमुग्नबू हवाओंसे शीतल है तू,
माधुरी है मनोहर है कोमल है तू।
प्रेम मदिराको लबरेज़[1] छागल है तू,
सर्फ़ आलमको रहमतका[2] बादल है तू।
आँख उठाके जो देखा किसीने तुझे,
छावनी अपनी लाशोंसे छा देंगे हम।
तेरे पाकीज़ापैकरको[3] रूहोंकी बारीक
चादरके नीचे छिपा देंगे हम।
अय वतन, अय वतन!
तुझपै कुरबाँ ज़रोमाल और जानो तन,
अय वतन, अय वतन, अय वतन!
जानेमन, जानेमन, जानेमन!

– ५ –

तेरी नदियाँ रसीली मधुर नग़मख्वाँ[4],
तेरे परबत तेरी अज़मताके निशाँ।
तेरे जंगल भी हँसते हुए गुलसिताँ,
तेरे गुलशन भी रश्केबहारेजिनाँ[5]।

---

[1]भरा हुआ [2]महरबानी [3]पवित्र शरीरको [4]गान
[5]बैकुण्ठकी शोभाका शर्मानेवाला।

ज़िन्दाबाद, ऐ ग़रीबोंके हिन्दोस्ताँ !
तेरा सिक्का दिलोंपर बिठा देंगे हम।

जो भी पूछेगा जन्नतका हमसे पता,
राहेकश्मीर उसको दिखा देंगे हम।

अय वतन, अय वतन !
तू चमन दर चमन[1] है अदन दर अदन[2],

अय वतन, अय वतन, अय वतन !
जानेमन, जानेमन, जानेमन !!

— ६ —

गुलशने ऐशोआरामोराहत है तू,
बेकसीमें कनारेमुहब्बत[3] है तू।

बेबसों और ग़ुलामोंकी दौलत है तू,
ज़िन्दगीके जहन्नुममें जन्नत है तू।

सींचकर ख़ूनेदिलसे तेरी क्यारियाँ,
और भी तुझको जन्नत बना देंगे हम।

हो वह गुलचीं कि सैयाद दोनोंके सर,
तेरे क़दमोंपै इक दिन झुका देंगे हम।

अय वतन, अय वतन !
हम तेरे फूल हैं तू हमारा चमन,

अय वतन, अय वतन, अय वतन !
जानेमन, जानेमन, जानेमन !!

---

[1]बाग़ोंसे भरा हुआ; [2]जन्नतमें जन्नत; [3]प्रेमकी गोद।

ऐ वतन, ऐ वतन।
जानेमन, जानेमन, जानेमन!

— ४ —

मस्तोसरशार हवाओंसे शबनम है तू,
माधुरी है मनोहर है कोमल है तू।
प्रेम मदिराका लबरेज़[1] जाम है तू,
सरपे माताकी रहमतका[2] बादल है तू।
आँख उठाके जो देखा किसीने तुझे,
छावनी अपनी लाशोंसे छा देंगे हम।
तेरे पाकीज़ापैकरको[3] रूहोंकी बारीक
चादरके नीचे छिपा देंगे हम।
ऐ वतन, ऐ वतन!
तुझपे क़ुरबाँ ज़रोमाल और जानो तन,
ऐ वतन, ऐ वतन, ऐ वतन!
जानेमन, जानेमन, जानेमन!

— ५ —

तेरी नदियाँ रसीली मधुर नग़माख्वाँ[4],
तेरे परबत तेरी अज़मतोंके निशाँ।
तेरे जंगल भी हँसते हुए गुलसिताँ,
तेरे गुलशन भी रश्केबहारेजिनाँ[5]।

---

[1]भरा हुआ, [2]महरबानी, [3]पवित्र शरीरको, [4]गानेवा
[5]बैकुण्ठकी शोभाको शर्मानेवाला।

ज़िन्दाबाद, ऐ ग़रीबोंके हिन्दोस्ताँ!
तेरा सिक्का दिलोंपर बिठा देंगे हम।
जो भी पूछेगा जन्नतका हमसे पता,
राहेकश्मीर उसको दिखा देंगे हम।
अय वतन, अय वतन!
तू चमन दर चमन[1] है अदन दर अदन[2],
अय वतन, अय वतन, अय वतन!
जानेमन, जानेमन, जानेमन!!

– ६ –

गुलशने ऐशोआरामोराहत है तू,
बेकसीमें कनारेमुहब्बत[3] है तू।
बेवसों और ग़ुलामोंकी दौलत है तू,
ज़िन्दगीके जहन्नुममें जन्नत है तू।
सींचकर ख़ूनेदिलसे तेरी क्यारियाँ,
और भी तुझको जन्नत बना देंगे हम।
हो वह गुलचीं कि सैयाद दोनोंके सर,
तेरे क़दमोंपै इक दिन झुका देंगे हम।
अय वतन, अय वतन!
हम तेरे फूल हैं तू हमारा चमन,
अय वतन, अय वतन, अय वतन!
जानेमन, जानेमन, जानेमन!!

---

[1]बाग़ोंसे भरा हुआ; [2]जन्नतमें जन्नत; [3]प्रेमकी गोद।

– ७ –

जिसका पानी है अमृत, वो मखज़न[1] है तू,
जिसके दाने है बिजली, वो ख़िरमन[2] है तू।
जिसके पत्थर है हीरे वो माइन[3] है तू,
जिससे जन्नत है दुनिया वो गुलशन है तू।
देवियो देवताओंका मस्कन[4] है तू,
सिर्फ़ उल्फ़त नहीं सारे संसारमें,
तुझको सिजदोसे काबा बना देंगे हम।
तेरी अज़मतका डंका बजा देंगे हम।
अय वतन, अय वतन!
यह फ़बन, ये विकार,[5] और यह बाँकपन,
अय वतन, अय वतन, अय वतन!
जानेमन, जानेमन, जानेमन!!

– ८ –

यह सितारे यह निखरा हुआ आसमाँ,
आसमाँसे हिमालयकी सरगोशियाँ[6]।
यह तेरी अज़मतोंका[7] अटल राज़दाँ[8],
मुस्तकिल मोतबिर[9] मुहतशिम[10] जाविदाँ[11]।
इसको चोटीसे ख़ूंख्वार दुनियाको फिर,
हम पयामेहयातोवफ़ा[12] देंगे हम।

---

[1]भण्डार, [2]खलिहान, [3]खान, [4]घर, [5]शान; [6]विचार-परामर्श, [7]गौरव-गरिमाका, [8]विश्वस्त जानकार [9]विश्वासपात्र, [10]महान वैभवशाली, [11]अमर, [12]जीवन और नेकीका सन्देश।

फिर मुहब्बतका नगमा सुना देंगे हम,
फिर ज़मानेको जीना सिखा देंगे हम।

अय वतन, अय वतन।
ज़िन्दगी फिर भी लेगी हमारी शरन,
अय वतन, अय वतन, अय वतन!
जानेमन, जानेमन, जानेमन!!

— ७ —

जिसका पानी है अमृत, वो मख़ज़न[1] है तू,
जिसके दाने हैं बिजली, वो खिरमन[2] है तू।
जिसके कंकर हैं हीरे वो मादन[3] है तू,
जिससे जन्नत है दुनिया वो गुलशन है तू।
देवियों देवताओंका मस्कन[4] है तू,
सिर्फ़ उल्फ़त नहीं सारे संसारमें,
तुझको सिजदोंसे काबा बना देंगे हम।
तेरी अज़मतका डंका बजा देंगे हम।
अय वतन, अय वतन!
यह फबन, ये विक़ार,[5] और यह बाँकपन,
अय वतन, अय वतन, अय वतन!
जानेमन, जानेमन, जानेमन!!

— ८ —

यह सितारे यह निखरा हुआ आसमाँ,
आसमाँसे हिमालयकी सरगोशियाँ[6]।
यह तिरी अज़मतोंका[7] अटल राज़दाँ[8],
मुस्तक़िल मौतबिर[9] मुहतशिम[10] जाविदाँ[11]।
इसको चोटीसे ख़ूँख्वार दुनियाको फिर,
हम पयामेहयातोवफ़ा[12] देंगे हम।

---

[1]भण्डार, [2]खलिहान, [3]खान, [4]घर, [5]शान; [6]विचार-परामर्श, [7]गौरव-गरिमाका, [8]विश्वस्त जानकार [9]विश्वासपात्र, [10]महान वैभवशाली, [11]अमर, [12]जीवन और नेकीका सन्देश।

पनघटकी रानी—

आई वो पनघटकी देवी, वोह पनघटकी रानी।
दुनिया है मतवाली जिसकी, और फ़ितरत दीवानी॥
माथेपर सिन्दूरी टीका, रंगी और नूरानी।
सूरत है आकाशमें जिसकी जौसे पानी-पानी॥
छम-छम उसके बिछवे बोलें जैसे गाये पानी।
आई वो पनघटकी देवी, वो पनघटकी रानी॥

× × ×

रग-रग जिसकी है इक बाजा और नस-नस ज़ंजीर।
कृष्णमुरारीकी बंसी है या अर्जुनका तीर॥
सरसे पा तक शोख़ीकी वो इक रंगीं तस्वीर।
पनघट बेकल जिसकी ख़ातिर चंचल जमना नीर॥
जिसका रस्ता टक-टक देखे सूरज-सा रहगीर।
आई वह पनघटकी देवी, वह पनघटकी रानी॥

सरपर इक पीतलकी गागर ज़ोहराको[1] शरमाय।
ग़ौके पाबोसीमें[2] जिससे पानी छलका जाय॥
प्रेमका सागर बूँदें बनकर झूमा उमडा आय।
सरसे बरसे और सीनेके दरपनको चमकाय॥
उस दरपनको जिससे जवानी झाँके और शरमाय।
आई वह पनघटकी देवी, वह पनघटकी रानी॥

—रस-सागरसे

---

[1]प्रकाशमें, [2]एक चमकीला नक्षत्र, [3]पद-चुम्बनकी अभिलाषामें।

चारों ओर चमककर अपनी किरनोंको दौड़ाया।
जितना ढूँढ़ा उतना खोया, खोकर ख़ाक न पाया॥
बीत गये जुग लेकिन 'साग़िर' मुझतक कोई न आया।
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ मैं बुझा हुआ-सा दीपक॥

× × ×

आख़िर बिल्कुल बुझ जानेकी हो ली जब तैयारी।
आकर मेरे कानमें बोली इक शब यूँ अँधियारी॥
जगमें जिसको कोई न पूछे वह क़िस्मतकी मारी॥
मन-मन्दिरमें मुझे बिठालो ऐ ज्योतीके रसिया!
बुझे हुए-से दीपक तुम, मैं थकी हुई अँधियारी।
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ मैं बुझा हुआ-सा दीपक॥

अँधियारीकी बातें सुनकर मन बोला—उठ जाग।
यही तेरी मंज़िल है दीपक! यही हैं तेरे भाग॥
भड़क उठी सीनेमें विरहकी दबी हुई-सी आग।
आशाके मन्दिरमें गूँजा इक तूफ़ानी राग॥
आँखोंमें जलते आँसू थे होठोंपर थी आहें।
डाल दी अँधियारीके गलेमें रोकर मैंने बाहें॥
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ, मैं बुझा हुआ-सा दीपक॥

—रस-सागरसे

नाग—

× × ×

मस्तीका लहराता पैकर[1] सिरसे पा तक काले।
मौतकी वादीके[2] रखवाले, ऐ क़हरोंके[3] पाले॥

---

[1]चित्र; [2]घाटीके; [3]आफ़तके।

मरियमो सीताकी शोरी मुस्कराहटकी कसम।
आज भी ससारको जन्नत बना सकती है तू॥

× × ×

लोग खिज्रोंको लिये फिरते हैं ऐ रूहे हयात!
मैं तो यह कहता हूँ मुर्दोंको जिला सकती है तू॥

× × ×

दहरमें जिस अक्लकी बेदारियोंकी धूम है।
उसको तो सिर्फ एक लोरीमें सुला सकती है तू॥

—'रंगमहल'से

बुझा हुआ दीपक—

जीवनकी कुटियामें हूँ मैं बुझा हुआ-सा दीपक।
आशाके मन्दिरमें हूँ मैं बुझा हुआ सा दीपक॥
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ मैं बुझा हुआ-सा दीपक।

× × ×

कजराये दीवटपै धरा हूँ यूँ कुटियामें हाय!
जैसे कोयल सीस नवाकर अम्बुआपर सो जाय॥
जैसे श्यामा गाते-गाते कुहरेमें खो जाय।
जैसे-दीपक आगमें अपनी आप भस्म हो जाय॥
विरह में जैसे आँख किसी बवारीकी पथरा जाय।
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ मैं, बुझा हुआ सा दीपक॥

× × ×

आतम, हिरदय, जीवन, मृत्यु, सतयुग, कलियुग, माया।
हर रिश्तेपर मैंने अपने नूरका जाल बिछाया॥

चारों ओर चमककर अपनी किरनोंको दौड़ाया।
जितना ढूँढ़ा उतना खोया, खोकर ख़ाक न पाया॥
बीत गये जुग लेकिन 'साग़िर' मुश्तक़ कोई न आया।
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ मैं बुझा हुआ-सा दीपक॥

× × ×

आख़िर बिल्कुल बुझ जानेकी हो ली जब तैयारी।
आकर मेरे कानमें बोली इक शब यूँ अँधियारी॥
जगमें जिसको कोई न पूछे वह क़िस्मतकी मारी॥
मन-मन्दिरमें मुझे बिठालो ऐ ज्योतीके रसिया!
बुझे हुए-से दीपक तुम, मै थकी हुई अँधियारी।
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ मै बुझा हुआ-सा दीपक॥

अँधियारीकी बातें सुनकर मन बोला—उठ जाग।
यही तिरी मंज़िल है दीपक! यही हैं तेरे भाग॥
भड़क उठी सीनेमें विरहकी दबी हुई-सी आग।
आशाके मन्दिरमें गूँजा इक तूफ़ानी राग॥
आँखोंमें जलते आँसू थे होठोंपर थी आहें।
डाल दी अँधियारीके गलेमें रोकर मैंने बाहें॥
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ, मैं बुझा हुआ-सा दीपक॥

—रस-भागरसे

नाग—

× × ×

मस्तीका लहराता पैकर[1] सिरसे पा तक काले।
मौतकी वादीके[2] रखवाले, ऐ क़हरोंके[3] पाले॥

---

[1]चित्र; [2]घाटीके; [3]आफ़तके।

मरियमो सीताकी शीरीं मुस्कराहटकी कसम।
आज भी संसारकी जन्नत बना सकती है तू॥

× × ×

लोग ज़िन्दाको लिये फिरते हैं ऐ रूहे हयात!
मैं तो यह कहता हूँ मुर्दोंको जिला सकती है तू॥

× × ×

दहरमें जिस अक्लकी बेदारियोंकी धूम है।
उसको तो सिर्फ एक लोरीमें सुला सकती है तू॥

—'रंगमहल'से

बुझा हुआ दीपक—

जीवनकी कुटियामें हूँ मैं बुझा हुआ-सा दीपक।
आशाके मन्दिरमें हूँ मैं बुझा हुआ सा दीपक॥
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ मैं बुझा हुआ-सा दीपक।

× × ×

कजराये दीवटपै धरा हूँ यूँ कुटियामें हाय!
जैसे कोयल सीस नवाकर अम्बुआपर सो जाय॥
जसे श्यामा गाते-गाते कुहरेमें खो जाय।
जैसे-दीपक आगमें अपनी आप भस्म हो जाय॥
विरह में जैसे आँख किसी बदारीकी पथरा जाय।
बुझा हुआ-सा दीपक हूँ मैं, बुझा हुआ-सा दीपक॥

× × ×

आतम, हिरदय, जीवन, मृत्यु, सतयुग, कलियुग, माया।
हर रिश्तेपर मैंने अपने नूरका जाल बिछाया॥

उम्मीदोंका दीप जला लूँ ?
ऐ वाम्बीके वासी !
आओ मैं तन-मनमें बसा लूँ ऐ वाम्बीके वासी ॥

× × ×

ऐ वाम्बीके बसनेवाले तुम क्या हो ज़हरीले।
लाखों नाग हैं इन्सानोंमें गोरे, काले, पीले॥
मुल्ला, नेता, पीर और पंडित, राजे पांडे, लाले।
बसते हैं दुनियामें तुमसे बढ़कर डसनेवाले॥

तुमसे मैं क्या मनको डसा लूँ ?
ऐ वाम्बीके वासी !
आओ मैं तन-मनमें बसा लूँ ऐ वाम्बीके वासी ॥

विष है तुम्हारा बूँद बराबर, इनका ज़हर समन्दर।
डङ्क तुम्हारा वीरानों तक, इनका डसना घर-घर॥
तेरा काटा एक दिन जीवे, इनका काटा पलभर।
सहर[1] तुम्हारा सरपर बोले, इनका जादू मनपर॥

मनसे इनका ज़हर हटा लूँ।
ऐ वाम्बीके वासी !
आओ मैं तन-मनमें बसा लूँ ऐ वाम्बीके वासी ॥

× × ×

इन्सानी नागोंके बयाँ हों क्या ज़हरी अफ़साने।
तेरा डसना छुप-छुपकर है, इनका खुले ख़ज़ाने॥

---

[1]जादू।

अब्रे-सियाह[1] उतरा है जमींपर ताज़ा शबनम[2] पीने ।
हब्शी कोई लूट रहा है या मोतीके खज़ीने ॥
मैं भी इक मोतीको उठा लूँ ?
ऐ बाम्बीके बासी !
आओ मैं तन-मनमें बसा लूँ ऐ बाम्बीके बासी ॥

अपनी ही मस्तीकी धुनमें झूम रहे हो ऐसे ।
जैसे कोई दखिनी क्वारी मदिरा पीकर झूमे ॥
अँधियारी दर्पन है तुम्हारा नूर तुम्हारा हाला ।
रातकी देवी क्या जगलमें भूल गई है माला ?
अपने गलेमें तुमको डालूँ ?
ऐ बाम्बीके बासी !
आओ मैं तन-मनमें बसा लूँ ऐ बाम्बीके बासी ॥

कुसुमकी टहनीपर भौंरोने या डाला है डेरा ।
बिन पत्ताकी शाख़पे है या कोयल रैन बसेरा ॥
बिजलीसे मामूर घटायें उमड रही हो जैसे ।
या सावनकी काली रातें सिमट गई हो जैसे ॥
आओ तुमको बीन बना लूँ ?
ऐ बाम्बीके बासी !
आओ मैं तन-मनमें बसा लूँ ऐ बाम्बीके बासी ॥

या कोई मगरूर जवानी झूम रही हो पीकर ।
या तूफ़ानोंमें लहराए जैसे काला सागर ।
पापकी मीठी अँधियारी हो या मस्तीका सवेरा ।
मौतकी रौशन तारीकी हो या जीवनका अँधेरा ॥

---

[1]काला बादल, [2]ओस ।

उम्मीदोंका दीप जला लूँ ?
ऐ वाम्बीके वासी !
आओ मैं तन-मनमें बसा लूँ ऐ वाम्बीके वासी ॥

× × ×

ऐ वाम्बीके बसनेवाले तुम क्या हो ज़हरीले ।
लाखों नाग हैं इन्सानोंमें गोरे, काले, पीले ॥
मुल्ला, नेता, पीर और पंडित, राजे पांडे, लाले ।
बसते हैं दुनियामें तुमसे बढ़कर डसनेवाले ॥

तुमसे मैं क्या मनको डरालूं ?
ऐ वाम्बीके वासी !
आओ मैं तन-मनमें बसा लूं ऐ वाम्बीके वासी ॥

विष है तुम्हारा बूंद बराबर, इनका ज़हर समन्दर ।
डङ्क तुम्हारा वीरानों तक, इनका डसना घर-घर ॥
तेरा काटा एक दिन जीवे, इनका काटा पलभर ।
सहर[1] तुम्हारा सरपर बोले, इनका जादू मनपर ॥

मनसे इनका ज़हर हटा लूं ।
ऐ वाम्बीके वासी !
आओ मैं तन-मनमें बसा लूं ऐ वाम्बीके वासी ॥

× × ×

इन्सानो नागोंके बयां हों क्या ज़हरी अफ़साने ।
तेरा डसना छुप-छुपकर है, इनका खुले ख़ज़ाने ॥

---

[1]जादू ।

डसते ह और फिर कहते ह मौत न आन पाए।
तेरा विष तो रखता ह हर चश्मो ज्लिपर फाए॥

शाश्यमानान[1] *घुरा लू ?*
ए बाम्बीके बासी !

आओ म तन-मनम बसा लू ऐ बाम्बीके बासी॥

—रंगमहलमे

गीत

महात्मा गांधी

दुनिया थी गो उसकी वैरी दुश्मन था जग सारा।
आखिरमें जब देखा साधू वह जीता जग हारा॥

कैसा सन्त हमारा,
कैसा सन्त हमारा गान्धी, कैसा सन्त हमारा।

सच्चाईके नूरसे इसके मनमें है उजियारा।
बातिनमें[1] शक्ती ही शक्ती जाहिरमें बेचारा॥

कैसा सन्त हमारा,
कैसा सन्त हमारा गान्धी, कैसा सन्त हमारा।

गौतम है या नए जन्ममें वंसीका मतवारा।
मोहन नाम सही पर 'सागिर' रूप वही है सारा॥

कैसा सन्त हमारा,
कैसा सन्त हमारा गान्धी, कैसा सन्त हमारा।

भारतके आकाशपै है वह एक चमकता तारा।
सचमुच ज्ञानी सचमुच मोहन सचमुच प्यारा-प्यारा॥

कैसा सन्त हमारा,
कैसा सन्त हमारा गान्धी, कैसा सन्त हमारा।

—रस-सागरसे

---

[1]अन्तरंगमें।

पुजारिन

ऐ मंदिरका राज़ पुजारिन, ऐ फ़ितरतका साज़ पुजारिन !
प्रेमनगरकी रहनेवाली, हरकी बतियां कहनेवाली,
सीधी-साधी भोली-भाली, बात निराली गात निराली,
गर्दनमें तुलसीकी माला, दिलमें इक ख़ामोश शिवाला,
होठोंपर पैमाने रक़्सां,[1] आँखोंमें मयख़ाने रक़्सां।

ऐ देवीका रूप पुजारिन !
तेरा रूप अनूप पुजारिन !

भीनी-भीनी बू सारीमें, सारी मदमें तू सारीमें,
आँखोंमें जमुनाकी मौजें, बालोंमें गंगाकी लहरें,
नूर तेरे रुख़सारे हसींपर, रंगीं टीका पाक जबींपर,
जैसे फ़लक़पर सुबहका तारा, रौशन-रौशन प्यारा-प्यारा,
शर्मीली मासूम निगाहें, गोरी-गोरी नाज़ुक बाहें।

ऐ देवीका रूप पुजारिन !
तेरा रूप अनूप पुजारिन !

फूलोंकी इक हाथमें थाली, मोहन, मदमाती, मतवाली,
नीची नज़रें तिरछी चितवन, मस्त पुजारन हरिकी जोगन,
चाल है मस्तानी मतवाली, और कमर फूलोंकी डाली,
दिल तेरा नेकीकी मंज़िल, लाखों बुतख़ानोंका हासिल,
हस्ती तुझमें झूम रही है, मस्ती आँखें चूम रही है।

ऐ देवीका रूप पुजारिन !
तेरा रूप अनूप पुजारिन !

---

[1] नाचते हुए।

नूरके तड़के घाटपै जाकर, गंगाका सम्मान बढ़ाकर,
फिर लेकर ख़ुशबूएँ सारी, चन्दन, जल औ' दूब सुपारी,
सुबहके जल्वोंको तड़पाकर, नज्ज़ारोंसे आँख बचाकर,
ऐ मन्दिरमें आनेवाली, प्रेमके फूल चढ़ानेवाली,
हस्ती भी है गुल्शन तुझसे, सूरज भी है रौशन तुझसे।

ऐ देवीका रूप पुजारिन !
तेरा रूप अनूप पुजारिन !

लौट चली तू करके पूजा, देख लिया ईश्वरका जल्वा,
ठहर-ठहर ऐ प्रेम-पुजारिन, मैं भी कर लूँ तेरे दर्शन,
देख इधर घूँघटको हटाकर, अपने पुजारीपर किरपाकर
सबकी पूजा जोहदो[1]-ताअ़त,[2] मेरी पूजा तेरी उलफ़त,
हरिका घर है तेरा पैकर[3], तू ख़ुद है इक सुन्दर मन्दिर।

ऐ देवीका रूप पुजारिन !
तेरा रूप अनूप पुजारिन !

आँखमें मेरी है इक आँसू, जैसे हो नद्दीपर जुगनू,
मालामें इसको शामिल कर, यह मोती है तेरे क़ाबिल,
ध्यानसे अपने प्राण बचाकर, पाँवसे तेरे आँख मिलाकर,
प्रेमका अपने नीर बहा दूँ, सबकुछ तुझपै भेंट चढ़ा दूँ,
पापी दिल मेरा सुख पाए, मेरी पूजा क्यों रह जाए ?

ऐ देवीका रूप पुजारिन !
तेरा रूप अनूप पुजारिन !

आ तेरी सूरतको पूजूँ, मैं जीवित मूरतको पूजूँ,
तू देवी मैं तेरा पुजारी, नाम तेरा हर साँससे जारी,

---

[1]पवित्रता; [2]वन्दन; [3]शरीर।

लागकी आगने तनको भूना, फिर मन्दिर है दिलका सूना,
मनमें तेरा रूप बसा लूं, तुझको मनका चैन बना लूं,
छिप जा मेरे दिलके अन्दर, हो जाये आबाद यह मन्दिर।

ऐ देवीका रूप पुजारिन!
तेरा रूप अनूप पुजारिन!

तुझको दिलके गीत सुनाऊँ, फिर चरनोंमें सीस नवाऊँ,
तीन लोक आराश झुका दूं, धरतीकी हस्ती लचका दूं,
तारे, चाँद और भूरे बादल, बाग़, नदी, दरिया, औ' जंगल,
पर्वत, रूप औ मसजिद, मन्दिर, साकी, पैमाना औ सागर,
दुनिया हो तेरे कदमोंपर, क़दमोंके नीचे मेरा सर।

ऐ देवीका रूप पुजारिन!
तेरा रूप अनूप पुजारिन!

एक पुजारिन, एक पुजारी, प्रीतकी रीतें कर दें जारी,
देशमें प्रीत और प्यारको भर दें, प्रेमसे कुल संसारको भर दें,
लोभ मोहके बुतको तोड़ें, पाप, क्रोधका नाम न छोड़ें,
प्रेमका रस दौड़े रग रगमें, हो इक प्रेमकी पूजा जगमें,
दोनों इस धुनमें मर जाएँ, तीरथ एक अजोब बनाएँ।

ए देवीका रूप पुजारिन!
तेरा रूप अनूप पुजारिन!

—रस-सागरसे

२४ अगस्त १९४६

२०

अख़्तर शीरानी

अख़्तर शीरानी अस्मानेशायरीमें सचमुच अख़्तरकी तरह चमक रहे हैं। उनकी नज़्म और गीत पंजाबमें बच्चे-बच्चेकी ज़बान पर थिरकते हैं। प्रेमका वह मधुर स्वर छेड़ते हैं कि सुप्त हृदयतंत्री भी झंकृत हो उठती है। कभी वह गाँवोंके खेतों और कुओं पर देहाती छोकरियोंमें कान्हा बने दिखाई देते हैं, तो कभी स्वार्थी संसारसे विरक्त होकर किसी अज्ञात स्थानको जानेके लिए उद्यत दिखाई देते हैं। कभी वतन और क़ौमकी दयनीय स्थिति उन्हें चौंका देती है।

अख़्तर शीरानीकी अपनी लय है, अपने बोल हैं और अपनी एक दुनिया है, जिसमें वह योगीकी तरह मस्त घूमते हैं।
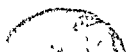
लागकी आगने तनको भूना, फिर मन्दिर है दिलका सूना,
मनमें तेरा रूप बसा लूँ, तुझको मनका चैन बना लूँ,
छिप जा मेरे दिलके अन्दर, हो जाये आबाद यह मन्दिर।

ऐ देवीका रूप पुजारिन!
तेरा रूप अनूप पुजारिन!

तुझको दिलके गीत सुनाऊँ, फिर चरनोंमें सीस नवाऊँ,
तीन लोक आकाश झुका दूँ, धरतीकी शक्ती लचका दूँ,
तारे, चाँद और भूरे बादल, बाग, नदी, दरिया, औ' जंगल,
पर्बत, रूस औ मसजिद, मन्दिर, साकी, पैमाना औ सागर,
दुनिया हो तेरे कदमोंपर, कदमोंके नीचे मेरा सर।

ऐ देवीका रूप पुजारिन!
तेरा रूप अनूप पुजारिन!

एक पुजारिन, एक पुजारी, प्रीतकी रीतें कर दें जारी,
देशमें प्रीत और प्यारको भर दें, प्रेमसे कुल संसारको भर दें,
लोभ मोहके बुतको तोड़ें, पाप, क्रोधका नाम न छोड़ें,
प्रेमका रस दौड़े रग-रगमें, हो इक प्रेमकी पूजा जगमें,
दोनो इस धुनमें मर जाएँ, तीरथ एक अजीब बनाएँ।

ऐ देवीका रूप पुजारिन!
तेरा रूप अनूप पुजारिन!

—रस-सागरसे

२४ अगस्त १९४६

मुझे लेने न आए अच्छे बाबल, तुम्हारी याद आफ़त ढा रही है।
मेरी अम्माको हो इसकी ख़बर क्या ? कि चंपा इस जगह घबरा रही है।

न ली भैयाने भी सुध-बुध हमारी, जहाँसे चाह उठती जा रही है।
भला क्योंकर थमें आँसू कि जीपर, उदासीकी बदरिया छा रही है।

नए फूलोंसे जंगल बस चले हैं, मेरे मनकी कली कुम्हला रही है।
कोई इस बावली बदलीसे पूछे, पराये देशमें क्यों छा रही है ?

नहीं खेतोंमें ये सावनकी गुड़ियाँ, हमारी आँख ख़ूँ बरसा रही है।
घटा है या कोई बिछड़ी सहेली, मेरे घरसे सन्देशा ला रही है।

गया पींगे बढ़ानेका ज़माना, वह अमरय्योंपै कोयल गा रही है।
यों ही वह अपनी ग़मगीं रागनीसे, दरो-दीवारको तड़पा रही है।

३—ऐ इश्क़ !

ऐ इश्क़ कहीं ले चल इस पापकी बस्तीसे,
नफ़रतगहे आलमसे, लानतगहे हस्तीसे,
इन नफ़्स-परस्तोंसे, इस नफ़्स-परस्तीसे,
दूर और कहीं ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

हम प्रेम-पुजारी हैं, तू प्रेम-कन्हैया है,
तू प्रेम-कन्हैया है, यह प्रेमकी नैया है,
यह प्रेमकी नैया है, तू इसका खेवैया है,
कुछ फ़िक्र नहीं, ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

बेरहम ज़मानेको अब छोड़ रहे हैं हम,
बेदर्द अज़ीज़ोंसे मुंह मोड़ रहे हैं हम,
जो आस थी उसको भी अब तोड़ रहे हैं हम,
बस, ताब नहीं, ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

१—मुझे बददुआ न दे

इकरार है मुझे कि गुनहगार हूँ तेरा।
मुजरिम हूँ, बेवफा हूँ, खतावार हूँ तेरा॥
लेकिन तू रहमक्र मुझे ऐसी सजा न दे।
श्रो नाजनीं! खुदाके लिए बददुश्रा न दे॥

यह क्या कहा "खुदा करे तेरा भी आये दिल।
मेरी ही तरह कोई तेरा भी दुखाये दिल॥
श्रौर दिल भी यूं दुखाये कि क़ुदरत शफा न दे"
श्रो नाजनीं! खुदाके लिए बददुश्रा न दे॥

माना कि तेरे इश्कको दिलसे भुला दिया।
नक्शेवफाको सीनेसे अपने मिटा दिया॥
लेकिन तू मेरी पिछली वफाएँ भुला न दे।
श्रो नाजनीं! खुदाके लिए बददुश्रा न दे॥

अपने कियेपै आप ही पछता रहा हूँ मैं।
तेरी निगाहेदर्दसे शरमा रहा हूँ मैं॥
दिलसे भुला दे, अपनी नजरसे गिरा न दे।
श्रो नाजनीं! खुदाके लिए बददुश्रा न दे॥

२—नगमये सेहर

एक देहाती युवती चक्की पीसते हुए गा रही है—

यह बरखा रितु भी बीती जा रही है!

हवा जो गाँवको महका रही है, मेरे मैकेसे शायद आ रही है!
घटाको ऊदी-ऊदी चुनरियोंसे, मेरी सखियोकी बू-बास आ रही है।

मुझे लेने न आए अच्छे बादल, तुम्हारी याद आफ़त ढा रही है।
मेरी अम्माको ही इसकी ख़बर क्या ? कि चंपा इस जगह घबरा रही है।

न ली भैयाने भी सुध-बुध हमारी, जहाँसे चाह उठती जा रही है।
भला क्योंकर थमें आँसू कि जीपर, उदासीकी बदरिया छा रही है।

नए फूलोंसे जंगल बस चले हैं, मेरे मनकी कली कुम्हला रही है।
कोई इस बावली बदलीसे पूछे, पराये देशमें क्यों छा रही है ?

नहीं खेतोंमें ये सावनकी गुड़ियाँ, हमारी आँख ख़ूँ बरसा रही है।
घटा है या कोई बिछड़ी सहेली, मेरे घरसे सन्देशा ला रही है।

गया पींगे बढ़ानेका जमाना, वह अमरय्योंपै कोयल गा रही है।
यों ही वह अपनी ग़मगीं रागनीसे, दरो-दीवारको तड़पा रही है।

३—ऐ इश्क़ !

ऐ इश्क़ कहीं ले चल इस पापकी बस्तीसे,
नफ़रतगहे आलमसे, लानतगहे हस्तीसे,
इन नफ़्स-परस्तोंसे, इस नफ़्स-परस्तीसे,
दूर और कहीं ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

हम प्रेम-पुजारी हैं, तू प्रेम-कन्हैया है,
तू प्रेम-कन्हैया है, यह प्रेमकी नैया है,
यह प्रेमकी नैया है, तू इसका खेवैया है,
कुछ फ़िक्र नहीं, ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

बेरहम जमानेको अब छोड़ रहे हैं हम,
बेदर्द अजीजोंसे मुंह मोड़ रहे हैं हम,
जो आस थी उसको भी अब तोड़ रहे हैं हम,
बस, ताब नहीं, ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

आपसमें छल और धोखे संसारकी रीतें हैं,
इस पापकी नगरीमें उजड़ी हुई प्रीतें हैं,
याँ न्यायकी हारें हैं, अन्यायकी जीतें हैं,
सुख-चैन नहीं, ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

ये दर्द भरी दुनिया बस्ती है गुनाहोंकी,
दिलचाक उम्मीदोंकी, सफ़्फ़ाक निगाहोंकी,
ज़ुल्मोंकी, जफ़ाओंकी, आहोंकी, कराहोंकी,
है ग़मसे हज़ीं, ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

एक ऐसी जगह जिसमें इन्सान न बसते हों,
ये मक्रोजफ़ा पेशा हैवान न बसते हों,
इन्सांकी क़बामें ये शैतान न बसते हों,
तो ख़ौफ़ नहीं, ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

इन चाँद-सितारोंके बिखरे हुए शहरोंमें,
इन नूरकी किरनोंकी ठहरी हुई नहरोंमें,
ठहरी हुई नहरोंमें, सोई हुई लहरोंमें,
ऐ ख़िज़्रेहसीं ! ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

संसारके उस पार इक इस तरहकी बस्ती हो,
जो सदियोंसे इन्सांकी सूरतको तरसती हो,
औ' जिसके नज़ारोंपर तनहाई बरसती हो,
यूँ हो तो वहीं ले चल, ऐ इश्क़ ! कहीं ले चल ॥

४—सलमा

कहती हैं सब "यह किसकी तड़पा गई है सूरत ?
'सलमा'की शायद इसके मन भा गई है सूरत !
और उसके ग़ममें इतनी मुरझा गई है सूरत।
मुरझा गई है सूरत, कुम्हला गई है सूरत ॥

सँवला गई है सूरत सलमासे दिल लगाकर।"
बस्तीकी लड़कियोंमें बदनाम हो रहा हूँ॥

पनघटपै जब कि सारी होती हैं जमा आकर।
गागरको अपनी रखकर घूँघट उठा-उठाकर॥
यह क़िस्सा छेड़ती हैं मुझको बता-बताकर।
"सलमासे बातें करते देखा है इसको जाकर॥
हमने नज़र बचाकर" सलमासे दिल लगाकर।
बस्तीकी लड़कियोंमें बदनाम हो रहा हूँ॥

रातोंको गीत गाने जब मिलकर आती हैं सब।
तालाबके किनारे धूमें मचाती हैं सब॥
जंगलकी चाँदनीमें मंगल मनाती हैं सब।
तो मेरे और सलमाके गीत गाती हैं सब॥
और हँसती जाती हैं सब, सलमासे दिल लगाकर।
बस्तीकी लड़कियोंमें बदनाम हो रहा हूँ॥

खेतोंसे लौटती हैं जब दिन छिपे सकाँको।
तब रास्तेमें बाहम वोह मेरी दास्ताँको॥
दुहराके छेड़ती हैं, सलमाको, मेरी जाँको।
और वह हयाकी मारी सी लेती है जबाँको॥
क्या छेड़े उस बयाँको? सलमासे दिल लगाकर।
बस्तीकी लड़कियोंमें बदनाम हो रहा हूँ॥

एक शोख़ छेड़ती है इस तरह पास आकर—
"देखो वोह जा रही है सलमा नज़र बचाकर॥
शरमाके मुस्कराकर, आँचलसे मुँह छिपाकर।
जाओ न पीछे-पीछे दो बात कर लो जाकर॥

आपसमें छल और धोके संसारकी रीतें हैं,
इस पापकी नगरीमें उजड़ी हुई प्रीतें हैं,
याँ न्यायकी हारें हैं, अन्यायकी जीतें हैं,
सुख-चैन नहीं, ले चल, ऐ इश्क़! कहीं ले चल॥

ये दर्द भरी दुनिया बस्ती है गुनाहोंकी,
दिलचाक उम्मीदोंकी, सफ़्फ़ाक निगाहोंकी,
ज़ुल्मोंकी, जफ़ाओंकी, आहोंकी, कराहोंकी,
हैं ग़मसे हुईं, ले चल, ऐ इश्क़! कहीं ले चल॥

एक ऐसी जगह जिसमें इन्सान न बसते हों,
ये मक्रोजफ़ा पेशा हैवान न बसते हों,
इन्सांकी क़बामें ये शैतान न बसते हों,
तो ख़ौफ़ नहीं, ले चल, ऐ इश्क़! कहीं ले चल॥

इन चाँद-सितारोंके बिखरे हुए शहरोंमें,
इन नूरकी किरनोंकी ठहरी हुई नहरोंमें,
ठहरी हुई नहरोंमें, सोई हुई लहरोंमें,
ऐ ख़िज्रेहसीं! ले चल, ऐ इश्क़! कहीं ले चल॥

संसारके उस पार इक इस तरहकी बस्ती हो,
जो सदियोंसे इन्सांकी सूरतको तरसती हो,
औ' जिसके नज़ारोंपर तनहाई बरसती हो,
यूँ हो तो वहीं ले चल, ऐ इश्क़! कहीं ले चल॥

४—सलमा

कहते हैं सब "यह किसको तड़पा गई है सूरत?
'सलमा'को शायद इसके मन भा गई है सूरत!
और उसके ग़ममें इतनी मुरझा गई है सूरत।
मुरझा गई है सूरत, कुम्हला गई है सूरत॥

और अपने मुल्कको ग़ैरोंके पंजेसे छुड़ायेगा।
ग़रूरेज़ानदाँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

सफ़ेदुश्मनमें तलवार इसकी जब शोले गिरायेगी।
शुजाअ़त बाज़ुओंमें बनके बिजली लहलहायेगी॥

जवोंकी हर शिकनमें मर्गेदुश्मन थरथराएगी।
यह ऐसा तेग़ज़ाँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

सरे मैदान जिस दम दुश्मन इसको घेरते होंगे।
बजाए ख़ूं रगोंमें इसकी शोले तैरते होंगे॥

सब इसके हमलए शेरानासे मुंह फेरते होंगे।
तहोबाला जहाँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

५—मदर्सेकी लड़कियोंकी दुआ

यारब ! यही दुआ है तुझसे सदा हमारी।
हिम्मत बढ़ा हमारी, क़िस्मत बना हमारी॥

तालीममें कुछ ऐसी हम सब करें तरक़्क़ी।
ग़ैरोंकी इन्तहा भी हो इब्तदा हमारी॥

नफ़रत बुराईसे हो, उल्फ़त भलाईसे हो।
रग़बत सफ़ाईसे हो, यह है दुआ हमारी॥

पढ़ लिखके नाम पाएँ, कुछ काम कर दिखाएँ।
तेरे हुज़ूरमें है यह इल्तजा हमारी॥

६—औरत

हयातो हुरमतो महरो वफ़ाकी शान है औरत।
शबाबोहुस्नो अन्दाज़ो अदाकी जान है औरत॥

हिजाबो अस्मतो, शर्मोहयाकी कान है औरत।
जो देखो ग़ौरसे हर मर्दका ईमान है औरत॥

खेतोंमें छिप छिपाकर" सलमासे दिल लगाकर।
बस्तीकी लडकियोंमें बदनाम हो रहा हूँ॥
—सुबहे बहार

४—आखिरी उम्मीद

मेरा नन्हा जवाँ होगा !

ख़ुदा रक्खे जवाँ होगा, तो ऐसा नौजवाँ होगा।
हसीनो कामराँ होगा, दिलेरो तेग़राँ होगा॥
बहुत शीरींज़बाँ होगा, बहुत शीरीं बयाँ होगा।
यह महबूबेजहाँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

वतन और कौमकी सौ जानसे ख़िदमत करेगा यह।
ख़ुदाकी और ख़ुदाके हुक्मकी इज़्ज़त करेगा यह॥
हर अपने और परायेसे सदा उल्फ़त करेगा यह।
हर इकपर मेहर्बाँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

मेरा नन्हा बहादुर एक दिन हथियार उठायेगा।
सिपाही बनके सूए अर्सगाहे रज़्म जायेगा॥
वतनके दुश्मनोंसे ख़ूनकी नहरें बहायेगा।
और आख़िर कामराँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

वतनकी जंगेआज़ादीमें जिसने सर कटाया है।
यह उस शैदायेमिल्लत बापका पुरजोश बेटा है॥
अभीसे आलमेतिफ़लीका हर अन्दाज़ कहता है।
वतनका पासबाँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

वतनके नामपर इक रोज़ यह तलवार उठायेगा।
वतनके दुश्मनोंको कुंजेतुरबतमें सुलायेगा॥

और अपने मुल्कको ग़ैरोंके पंजेसे छुड़ायेगा।
ग़रूरेख़ानदाँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

सफ़ेदुश्मनमें तलवार इसकी जब शोले गिरायेगी।
शुजाअ़त बाज़ुओंमें बनके बिजली लहलहायेगी॥

जबींकी हर शिकनमें मर्गेदुश्मन थरथराएगी।
यह ऐसा तेग़राँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

सरे मैदान जिस दम दुश्मन इसको घेरते होंगे।
बजाए ख़ूँ रगोंमें इसकी शोले तैरते होंगे॥

सब इसके हमलए शेरानासे मुँह फेरते होंगे।
तहोबाला जहाँ होगा, मेरा नन्हा जवाँ होगा॥

५—मदर्सेकी लड़कियोंकी दुआ

यारब ! यही दुआ है तुझसे सदा हमारी।
हिम्मत बढ़ा हमारी, क़िस्मत बना हमारी॥

तालीममें कुछ ऐसी हम सब करें तरक़्क़ी।
ग़ैरोंकी इन्तहा भी हो इब्तदा हमारी॥

नफ़रत बुराईसे हो, उल्फ़त भलाईसे हो।
रग़बत सफ़ाईसे हो, यह है दुआ हमारी॥

पढ़ लिखके नाम पाएँ, कुछ काम कर दिखाएँ।
तेरे हुज़ूरमें है यह इल्तजा हमारी॥

६—औरत

हयातो हुरमतो महरो वफ़ाकी शान है औरत।
शबाबोहुस्नो अन्दाज़ो अदाकी जान है औरत॥

हिजाबो अस्मतो, शर्मोहयाकी कान है औरत।
जो देखो ग़ौरसे हर मर्दका ईमान है औरत॥

अगर औरत न आती कुल जहाँ मातमकदा होता।
अगर औरत न होती हर मकाँ इक ग़मकदा होता॥

× × ×

जहाँमें करती है शाही मगर लश्कर नहीं रखती।
दिलोंको करती है ज़ख़्मी मगर खंजर नहीं रखती॥

कहीं मासूमतिफ़्ली इसके नामोंसे बहलती है।
कहीं बेक़ैद जवानी इसके नौशेलबसे फलती है॥

कहीं मजबूर पीरी इसकी बातोंसे सम्भलती है।
कहीं आरामसे जान इसके क़दमोंपर निकलती है॥

नहीं है किब्रिया लेकिन वोह शानेकिब्रियाई है।
हमारी सारी प्यारी उम्रपर इसकी खुदाई है॥

वोह रोती है तो सारी कायनात आँसू बहाती है।
वोह हँसती है तो फ़ितरत बेख़ुदीसे मुस्कराती है॥

वोह सोती है तो सातों आस्माँको नींद आती है।
वो उठती है तो कुल ख़्वाबीदा दुनियाको उठाती है॥

वही अरमानेहस्ती है, वही ईमानेहस्ती है।
बदन कहिये अगर हस्तीको तो वोह जानेहस्ती है॥

वोह चाहे तो उलट दे परदये दुनियाये फ़ानीको।
वोह चाहे तो मिटा दे जोशेदहरे जिन्दगानीको॥

वोह चाहे तो जला दे नख़्लज़ारे हुक्मरानीको।
वोह चाहे तो बदल दे रंगेबज़्मेआस्मानीको॥

वह कह दे तो बहारेजन्नत मिट जाये नज़ारोंसे।
वोह कह दे तो लिबासे नूर छिन जाये सितारोंसे॥

दुनिया

अख्तर शीरानी अंग्रेजी-छन्द सानीट (१४ लाइनका लघु छन्द) को उर्दूमें सम्भवतया सबसे पहले लाये हैं। इस लघुछन्दमें अब काफ़ी लोग लिखने लगे हैं।

इस छन्दका आधा अंश नीचे दिया जा रहा है :—

तेरी दुनियामें गर मक्कार ही मक्कार बसते हैं।
तो मेरा सीना क्यों अख़लास़से मामूर है यारब ?
मेरा ही दिल मयेउल्फ़तसे क्यों मख़मूर है यारब ?
तेरे मयख़ानये हस्तीमें गर सैय्यार बसते हैं।
तेरी दुनिया अगर बेदर्द इनसानोंका मसकन है।
तो मुझको क्यों किया है दर्देदिलसे आश्ना तूने।
मुझीको क्यों बनाया पैकरे रहमो वफ़ा तूने॥
तेरी दुनिया अगर ख़ूँख़्वार हैवानोंका मसकन है।

'शेरस्तानसे'

२६ अगस्त १९४६

पं० बालमुकन्द 'अर्श' मलसियानी

अर्श साहबके पिता पं० लब्भूराम 'जोश' मलसियानी उर्दू गज़लके माने हुए उस्तादोंमेंसे एक हैं। हम उनका परिचय अपनी 'शेर-ओ-सुखन' शायर पुस्तकमें दे रहे हैं।

अर्श साहबकी ख्याति और प्रतिभाको देखते हुए निस्संकोच कहा जा सकता है कि यह उदीयमान तरुण कवि एक रोज़ आसमान शायरीपर अवश्य चमकेगा। आप गज़ल नज़्म और गीत बड़े आकर्षक ढंगसे कहते हैं। स्थानाभावके कारण केवल १ गज़ल और २ गीत बतौर नमूना पेश किये जा रहे हैं—

क्या मानी ?

जिस गमसे दिलको राहत हो उस गमका मदावा[1] क्या मानी ?
जब फितरत तूफानी ठहरी साहिलकी[2] तमन्ना क्या मानी ?
राहतमें[3] रंजकी आमेज़िश[4] इशरतमें[5] अलमकी[6] आलाइश[7],
जब दुनिया ऐसी दुनिया है फिर दुनिया-दुनिया क्या मानी ?
खुद शेखोबिरहमन मुजरिम हैं एक जामसे दोनो पी न सके
साकीकी बुख्लपसंदीपर[8] साकीका शिकवा[9] क्या मानी ?

---

[1] इलाज [2] किनारा घाटकी [3] सुख चैनमें
[4] मिलावट [5] ऐश्वर्यमें [6] दुखकी
[7] मिलावट [8] मितव्ययता कंजूसी [9] शिकायत।

अख़लाक़ोवफ़ाके¹ सजदोंको जिस दरपर दाद नहीं मिलती,
ऐ शौक़े दिल ऐ अज़्मेख़ुदी² उस दरपर सजदा क्या मानी ?
ऐ शाहिदे नज़्ज़ारानवाज़ माना, इन्सांका निज़ाम नहीं अच्छा,
इसकी इस्लाहके पर्देमें अल्लाहसे झगड़ा क्या मानी ?
जल्वोंका तो यह दस्तूर नहीं, पर्दोंसे कभी बाहर आएँ,
ऐ दीदये नादीदनी³ तेरा यह शौक़े तमाशा क्या मानी ?
मयख़ानेमें तो ऐ वाइज़ ! तलक़ीनके⁴ कुछ असलूब⁵ बदल,
अल्लाहका बन्दा बननेको जन्नतका सहारा क्या मानी ?
हर सख़्त फ़ज़ूँ हो जोशे अमल, तस्लीमोरज़ाकी राहपै चल,
तक़दीरका रोना क्या मतलब, तदबीरका शिकवा क्या मानी ?
इज़हारेवफ़ा लाज़िम ही सही ऐ 'अर्श' मगर फ़रियादें क्यों ?
वो बात जो सबपर ज़ाहिर है उस बातका चर्चा क्या मानी ?

आजकल १५ नवम्बर १९४६

जागा सब संसार

मधुबनने मोती रोले,
कलियोंने घूंघट खोले,
सब सोये पंछी बोले,

हुआ गीत गुंजार 'उठो अब भोर भई'।
जागा सब संसार उठो अब भोर भई ॥

जागा हर प्रीतम प्यारा,
दर्शन-नदका मतवारा,
हर मनमें हुआ उजयारा,

---

¹प्रेमभावके; ²स्वाभिमानका इरादा; ³देखने अयोग्य; ⁴उपदेशके; ⁵ढंग ।

खुले प्रेमके द्वार उठो अब भोर भई।
जागा सब ससार उठो अब भोर भई॥

मन्दिरको चले नर-नारी,
मतवाले प्रेम-पुजारी,
पूजनकी आशा धारी,

ले पूजन उपहार, उठो अब भोर भई।
जागा सब ससार उठो अब भोर भई॥

पूजन है एक बहाना,
दर्शन भी एक फसाना,
कहता है तुम्हें जमाना,

करो प्रेम सचार उठो अब भोर भई।
जागा सब ससार उठो अब भोर भई॥

भावनगर १५ दि० १९४४

मेरे मनकी आशा जाग

मनका मनोरथ मिल जाएगा मनका कँवल भी खिल जाएगा।
मनके मुण्डेरपे बोल रहा है कल्पन रूपी काग॥

मेरे मनकी आशा जाग

निद्राका सुख मौतका सुख है, निद्रामें तो दुख ही दुख है।
रैन नहीं अब हुआ सवेरा, उठ निद्राको त्याग॥

मेरे मनकी आशा जाग

किस्मतके हेटे भी जागे, निद्राके बेटे भी जागे।
तू जागे तो फिर क्या कहना, जाग उठेंगे भाग॥

मेरे मनकी आशा जाग

मनमें ऐसी लय बन जावे, नागन बनके जो डस जावे।
लयका ज़हर चढ़े नस-नसमें, छेड़ दे दीपक राग॥
मेरे मनकी आशा जाग

आजकल १५ अक्तूबर १९४९

१५ मार्च १९४८

प्रगतिशील युग

प्राचीन इश्क़िया शायरी नवीन प्रेम-मार्ग पर
वर्त्तमान युगके उदीयमान कवि

अतीत और वर्त्तमान युगमें पृथ्वी-आकाशका अन्तर है। सभ्यता और संस्कृतिने परिधान बदल लिये हैं। शिक्षा और दीक्षाके रूप-रंग कुछ-से कुछ हो गये हैं। रथ-मझोलीकी आवश्यकताएँ वायुयान पूरी करने लगे हैं। तीर-तलवारके आसनपर एटम बम बैठ गया है। क़ासिद-का नाज़ुक काम तार और वायरलेसने ले लिया है। महफ़िलोंकी रौनक़ रेडियोने उजाड़ दी है। परवानोंसे कहीं ज़्यादा अब मनुष्य छटपटा कर मरते नज़र आते हैं। दूधकी नदियाँ तो दरकिनार, मिट्टीके तेलके दर्शन नहीं होते। अन्नके पर्वत पर खड़ा होनेवाला किसान कीड़ोंसे बिलबिलाते मुट्ठी भर आटेके लिए दिन भर लाइनमें खड़े होनेको मजबूर हैं। सीता-सावित्रीकी दुलारियाँ लुच्चे-लफ़ङ्गोंकी भीड़में पाँच गज कपड़ेके लिए खड़ी होनेको विवश हैं। देशका नक़्शा ही नहीं बदला, समूची दुनिया ही बदल गई है। फिर उर्दू-शायरीका भी काया-कल्प क्यों न होता ?

वह युग हवा हुआ जब ज़मीनपर रहते हुए भी लोग कल्पनाके उड़नखटोले पर आकाशकी सैर करते थे। पुलाव खाते हुए और शर्बतेअंगूर पीते हुए भी कहा करते थे :—

'ख़ूनेदिल पीते हैं और लख़्तेजिगर खाते हैं।'

× × ×

'ऐ इश्क़ ! देख हम भी हैं किस दिलके आदमी। ।
महमाँ बनाके ग़मको कलेजा खिला दिया ।।'

बादरेगुल पर सोते हुए, सुशीला स्त्रीके होते हुए भी कल्पित माशूक़के लिए जंगलोंकी खाक़ छाननेका स्वप्न देखा करते थे, और कलेजे पर हाथ धर-धर फ़र्माते थे:—

'इश्क़का मनसब'[1] मिला जिस दिन मेरी तक़दीरमें।
आहकी नक़दी मिली, सहरा[2] मिला जागीरमें॥'

बादशाहों और नवाबोंकी खुशामदमें क़सीदे लिखते थे, मगर स्वाभिमानकी शम्मा बुझानेमें नहीं चूकते थे —

'आशिक़का बाँकपन न गया बादेमर्ग[3] भी।
तख़्तेपै गुस्लके[4] जो लिटाया, अकड़ गया॥'

खुद हज़ारों बुलबुलें मार कर खा जाते, मगर उनको पिंजरेमें पालनेवालोंको जी भर कोसते थे —

'चमन सैयादने सींचा यहाँ तक खूनेबुलबुलसे।
कि आख़िर रंग बनकर फूट निकला आरिज़ेगुल्से[5]॥'

आजका शायर हवामें सचमुच उड़ता हुआ भी ज़मीनकी सोचता है, क्योंकि उसे वहीं जीना और मरना है। वह ऐसा हवाई क़िला नहीं बनाता जिसमें ज़िन्दगी झाँक भी नहीं सके। उसने आज ऐसे शिवालयकी कल्पना की है, जहाँ हर इन्सान प्रीतिके मीठे मंत्र जप सके।

आजका प्रगतिशील शायर आख़िर एक मनुष्य ही है। उसके पहलूमें भी दिल और दिलमें प्रेमका दरिया मौजें मार रहा है। वह भी प्रेम करता है, परन्तु मजनूँ और फ़रहाद नहीं बनता, अपने कुटुम्ब और व्यक्तित्वको डुबा नहीं देता। वह प्रेम-सागरमें डूब कर गुम नहीं हो जाता, अपनेको जागरूक रखता है। देशपर शत्रुका आक्रमण, मनुष्योंकी सिसकियाँ, पूँजीपतियोंके खूनी पंजे, डायनकी तरह चीख़ती और मुँह फैलाये मिल-मशीनें, ज[illegible] तरह आस्मानकी यह नीली स्याही उसे महबूब छोड़नेके लिए मजबूर करते हैं। ज़िन्दगीके जाममें जब कभी वह महबूबको

---

[1] प्रेमीका पद [2] जंगल [3] मृत्युके बाद [4] स्नानकी, [5] फूलोंके कपोलोंसे।

विमार देता है या आजीविका अथवा इन्सानी फ़राइज उसे आनेसे मजबूर करते हैं तब वह बेबस होकर कहता है :—

'मुझसे पहली-सी मुहब्बत मेरी महबूब न मांग।'

या—

तू बता अपने फ़राइजको भुला दूं कैसे।
मैंने परचम[1] जो उठाया है गिरा दूं कैसे॥
शमएअहसासेवतन[2] खुद ही बुझा दूं कैसे।
तेरे फ़िरदौसमें[3] आया हूँ बहुत रोजके बाद॥

मेरे हमराह अगर चलनेका अरमां है तुझे।
यह दिलेराना इरादा तेरा मंजूर मुझे॥
तू भी चल एक नये साजपै गानेके लिए।
तेरे फ़िरदौसमें आया हूँ बहुत रोजके बाद॥

अपनी हस्तीका सफ़ीना[4] सूयेतूफ़ां[5] कर लें।
हम मुहब्बतको शरीकेग़मेइन्सां[6] कर लें॥

—'मौज' साहबकी 'बाजपुर्स' नज्मके दो बन्द 'आजकल'से

आजका शायर प्रेयसीके लिये यह नहीं सोचता :—

'उम्मीद वावफ़ाईकी उस बुतसे क्या करें?
क़ासिद की नाश भेजी है ख़तके जवाबमें॥'

यह तो इस निश्चयके साथ उसके पास जाता है: —

महफ़िलेखुरशीदमें मुझको बिठा सकती हो तुम।
नाजके क़ाबिल मेरी क़िस्मत बना सकती हो तुम॥

---

[1]झण्डा; [2]देशकी भावनाका दीपक; [3]जन्नतमें (प्रेयसीके स्थानको स्वर्गकी उपमा दी है)।

[4]कश्ती; [5]तूफ़ानोंकी ओर; [6]मनुष्यके दुःखका साथी।

'इक्क़का मनसब¹ लिखा जिस दिन मेरी तक़्दीरमें।
आहकी नक़्दी मिली, सहरा² मिला जागीरमें॥'

बादशाहों और नवाबोंकी खुशामदमें क़सीदे लिखते थे, मगर स्वाभिमानकी शमाँ बधारनेमें नहीं चूकते थे —

'आशिक़का बाँकपन न गया बादेमर्ग³ भी।
तख़्तेपै गुसलको⁴ जो लिटाया, अकड़ गया॥'

खुद हज़ारों बुलबुल मार कर खा जाते, मगर उनको पिंजरेमें पालनेवालेको जी भर कोसते थे —

'चमन सैयादने सींचा यहाँ तक खूनेबुलबुलसे।
कि आख़िर रंग बनकर फूट निकला आरिज़ेगुलसे⁵॥'

आजका शायर हवामें सचमुच उड़ता हुआ भी ज़मीनकी सोचता है क्योंकि उसे वहीं जीना और मरना है। वह ऐसा हवाई क़िला नहीं बनाता जिसमें ज़िन्दगी भरके भी नहीं सके। उसने आज ऐसे शिवालयकी कल्पना की है जहाँ हर इन्सान प्रीतिके मीठे मंत्र जप सके।

आजका प्रगतिशील शायर आख़िर एक मनुष्य ही है। उसके पहलूमें भी दिल और दिलमें प्रेमका दरिया मौजें मार रहा है। वह भी प्रेम करता है परन्तु मजनूँ और फ़रहाद नहीं बनता, अपने कुटुम्ब और व्यक्तित्वका डुबो नहीं देता वह प्रेम-सागरमें डूब कर गुम नहीं हो जाता, अपनेको जागरूक रखता है। देशपर दानुओंके आक्रमण, मनुष्योंकी सिसकियाँ, पूँजीपतियोंके खूनी पंजे नायनकी तरह चीख़ती और मुँह फैलाये मिल-मशीन जाँकी तरह श्रमिकोंकी यह शैली स्याही उसे महबूब छोड़नेके लिए मजबूर करते हैं। ज़िन्दगीके जंगमें जब कभी वह महबूबको

¹वसीयत पट्टा ²जंगल ³मृत्युके बाद, ⁴स्नानको, ⁵पुष्पके कपोलसे।

बिसार देता है या आजीविका अथवा इन्सानी फ़राइज उसे आनेसे मजबूर करते हैं तब वह बेबस होकर कहता है :—

'मुझसे पहली-सी मुहब्बत मेरी महबूब न मांग ।'

या—

तू बता अपने फ़राइजको भुला दूं कैसे ।
मैंने परचम[1] जो उठाया है गिरा दूं कैसे ॥
शमएअहसासेवतन[2] ख़ुद ही बुझा दूं कैसे ।
तेरे फ़िरदौसमें[3] आया हूँ बहुत रोजके बाद ॥'
मेरे हमराह अगर चलनेका अरमां है तुझे ।
यह दिलेराना इरादा तेरा मंजूर मुझे ॥
तू भी चल एक नये साजपै गानेके लिए ।
तेरे फ़िरदौसमें आया हूँ बहुत रोजके बाद ॥
अपनी हस्तीका सफ़ीना[4] सूयेतूफ़ां[5] कर लें ।
हम मुहब्बतको शरीकेग़मेइन्सां[6] कर लें ॥

—'मौज' साहबकी 'बाजपुर्स' नज्मके दो बन्द 'आजकल'से

आजका शायर प्रेयसीके लिये यह नहीं सोचता :—

'उम्मीद बावफ़ाईकी उस बुतसे क्या करें ?
क़ासिद की नाश भेजी है ख़तके जवाबमें ॥'

वह तो इस निश्चयके साथ उसके पास जाता है: —

महफ़िलेख़ुरशीदमें मुझको बिठा सकती हो तुम ।
नाजके क़ाबिल मेरी क़िस्मत बना सकती हो तुम ॥

---

[1]झण्डा; [2]देशकी भावनाका दीपक; [3]जन्नतमें (प्रेयसीके स्थानको स्वर्गकी उपमा दी है) ।
[4]कश्ती; [5]तूफ़ानोंकी ओर; [6]मनुष्यके दुःखका साथी ।

मुझको दे सक्ती हो दर्से[1] होशो[2] तमकीनो[3] वकार[4]।
और अगर चाहो तो दीवाना बना सकती हो तुम॥

शिकवये ऐय्यामसे[5] आज़ाद हो सक्ता हूँ मैं।
गर्दिशे ऐय्यामको[6] नीचा दिखा सक्ती हो तुम॥

× × ×

सरमगीं[7] इसरार[8] छोडो इक ज़रा हिम्मत करो।
कुछ नहीं हूँ मैं, मगर सब कुछ बना सक्ती हो तुम॥

है तुम्हारी हर नज़रमें दावते[9] सद[10] इन्क़लाब[11]।
हादसाते[12] दहरसे[13] आँखें लडा सक्ती हो तुम॥

सबसे पहले तोड डालो ये समाजी बन्दिशें।
फिर ज़रा देखो कि क्या है ज़िन्दगीकी राहतें॥

—'नूर' बिजनौरी

('शायर' जून १९४४)

आजका शायरका महबूब शराबखानका छोकरा या हज़ारो मर्दोंमे आग लडानवाली नारीजातिका अभिशाप नही होता। वह सौन्दर्यमे चादस अधिक सुन्दर और सुकुमारतामें फूलस अधिक कोमल नही होता। वह परी न होकर एक भोली भाली सुशीला लडकी होती है, जो नारी जातिक परम्परागत लाज और शील धनको बडी सावधानीसे सम्हाल रखती है। उसक हृदयमें भी प्रम-ज्वाला जलती है पर उसकी लौसे वह अपन वशकी मानमर्यादाको जला नही डालती। लोक लिहाज और

---

[1]पाठ नसीहत, [2]चतना बुद्धि, [3]इज्ज़त मान, [4]वैभव स्थिरचित्तता, [5]दुनियाक झझटोकी शिकायतोस, [6]ससार-चक्रको, [7]हठ [8]आग्रह, [9-10-11]सैकडा क्रान्तियोका निमत्रण, [12-13]ससारकी दुर्घटनाओस।

वंशकी प्रतिष्ठाका ध्यान रखते हुए प्रेमका इज़हार करती है। वह अपने प्रेमी पर एक सतीकी भाँति न्योछावर होना चाहती है।

पहले युगका महबूब दिल नहीं रखता था। वह पत्थर और बुत होता था :—

बुत बनके वोह सुना किये बेदादका गिला।
सूझा न कुछ जवाब तो पत्थरके हो गये॥

—अज्ञात

वह गोया क़साइयों और छिनालोंका शिरमौर होता था :—

हमने उनके सामने पहले तो ख़ंजर रख दिया।
फिर कलेजा रख दिया, दिल रख दिया, सर रख दिया॥

—दाग़

सरसे पहले वोह ज़बाँ काट लिया करते हैं।
कि ख़ुदासे न करे कोई शिकायत मेरी॥

—दाग़

उदूसे तुम मिला करते हो यह तो मैं नहीं कहता।
मेरी जाँ देखनेवाले तुम्हारा नाम लेते हैं॥

—अज्ञात

माल जब उसने बहुत रद्दोबदलमें मारा।
हमने दिल अपना उठा अपनी बग़लमें मारा॥

—ज़ौक़

आजकी महबूबा (प्रेयसी) ऐसी अछूती और शर्मीली लड़की है, जो नहीं जानती प्रेम क्या है; और अनजाने प्रेमभँवरमें फँस जाती है, और फिर उस भँवरसे निकलनेका नाम नहीं लेती—उसीमें डूब जाती है। अथवा अपने मन-मन्दिरमें प्रेमीको बिठाकर प्रेम-किवड़िया बन्द करके

आँसुओंसे उसके पग पखारती है। छातीकी प्रेम-ज्योतिसे आरती उतारती है, और श्रद्धाके फूल चढाती है, और अन्तमें एकाकार होकर उसीमें लीन हो जाती है।

प्राचीन उर्दू-शायरीने महबूबका बडा अश्लील, भयावह और अस्वाभाविक चित्रण किया है। संस्कृत और हिन्दीके कवि नारी जातिका प्रेम, विरह, गुण, स्वभाव, शील आदिका वर्णन करनेमें अत्यन्त सफल और अनुपम रहे हैं। उनके शतांश भागका भी कोई अन्य साहित्य मुकाबिला नहीं कर सकता। जिस साहित्यमें रामायण, महाभारत, साकेत, मेघनाद-वध, सिद्धराज, मेघदूत-जैसे काव्य-ग्रन्थ मौजूद है उसे गद्गद् होकर प्रणाम करनेको जी चाहता है। शरत्बाबूने नारी-जातिके गौरवको जिस स्याहीसे अमर किया है, काश ! वह उर्दू शायरोंको भी मिल पाती ! वे कितने महान थे जिन्होने नारी-जातिमें सरस्वती, लक्ष्मी दुर्गा और भारत माँकी स्थापना करके उन्हे मातृत्व-दृष्टिसे सम्मानित करनेकी मनुष्यको बुद्धि दी।

हिन्दी-शायरीमें प्रेम और विरहकी यातनामे स्त्री छटपटाती है, उर्दू-शायरीमें पुरुष। स्त्री भी प्रेम-ज्वालामे झुलस सकती है और वह सकती है —

नाड़ी छुअत बैदके पडे फफोले हाय।

या

छातीसे छुआय दीवा बाती क्यों न बार लेय।

× × ×

सोना लेने पिउ गये, सूना कर गये देस।
सोना मिला न पिउ फिरे, रूपा हो गये केस ॥

यह शायद उर्दू-शायरोंको पता न था। स्त्रियोंके अहसास व जज्बात

ज़ाहिर करनेमें उर्दू-शायरी गूँगी है। काश, स्त्रियोंके मनोभावोंका भी उसमें दिग्दर्शन होता! हर्ष है कि अब बड़ी तेजीसे मुस्लिम महिलाएँ इस ओर प्रयत्नशील हैं। वे कहानियाँ तो बड़ी सफलता पूर्वक लिखने ही लगी हैं, शायरीमें भी दिलचस्पी ले रही हैं।

मुहोतरिमा इक़बाल सलमाँ चश्ती का एक गीत :—

यादमें तेरी जाने तमन्ना जानपै जब बन आती है।
भोली भाली तेरी सूरत दिलपर तीर चलाती है॥
कली-कलीको छेड़के जब यह मस्त हवा इठलाती है।
कू-कू की आवाज़से बनमें कोयल शोर मचाती है॥
यादमें तेरी जाने तमन्ना! रूह मेरी घबराती है॥

सावनकी घनघोर घटा जब मनमें आग लगाती है।
शोख़ो क़ज़ाकी मस्त दुलहन आकाशपै जब छा जाती है॥
डाल-डालपै बैठके बुलबुल प्रीतके नग़में गाती है।
विरह अगनमें फूँकके तन मन बरखा ऋतु तड़पाती है॥
यादमें तेरी जाने तमन्ना! रूह मेरी घबराती है॥

पनघटपर जब मिलकर सखियाँ गीत ख़ुशीके गाती हैं।
हल्की-हल्की मस्त हवामें ऐशका मुज़दह लाती हैं॥
मस्त निगाहें, शोख़ अदाएँ सबका जी भरमाती हैं।
राग मल्हार जगतके गाकर विरहनको तड़पाती हैं॥
यादमें तेरी जाने तमन्ना! रूह मेरी घबराती है॥

('आजकल' १५-३-१९४५)

सुरैया 'नज़र' फ़ैज़ाबादी 'पसेमंज़र' में रुपयेके कारनामोंका बड़ी ख़ूबीसे बयान करती हैं:—

इस चाँदीके इक टुकड़ेपर जाँ जाती है सर कटता है।
बेबाकी जवानी लुटती है, मुफ़लिसका नशेमन जलता है॥

हाँ, इसके ढंग निराले हैं।
समझी कि नहीं ? यह सिक्का है॥

हाँ, तेरी ही भोली बहनोंके दिल इससे लुभाये जाते हैं।
चाँदीके खुदाओंके दरपर मन भेंट चढाये जाते हैं॥

जरदारोंके हैवानी हमले होते हैं अँधेरी रातोंमें।
जाहिदके भी सब्र छू लेते हैं सागिरकी भरी बरसातोंमें॥

चाँदीके दाजरकी थाप्रोंमें जिस्मोंकी लटक देखी होगी।
मासूम मचलते सीनोंपर पत्रोंकी झलक देखी होगी॥

हर रोज भयानक गोशोंमें किनरतके पुजारी हँसते हैं।
तन, मन, धन,पर इज्जत पासर ये जीते जुआरी हँसते हैं॥

तू इन खेलोंको क्या जाने ?
समझी कि नहीं ?—यह सिक्का है।
('मुन्तखिब नज्में' १९४४से)

श्रीमती कनीजहसनमा 'ह्या' की 'दावने सुदी' का एक बन्द —

जुल्मको मिटाके देख, चश्जियाँ उड़ाके देख।
सीनयेग़रूरपर बिजलियाँ गिराके देख॥
सा न मुस्कराके तीर ख़जर आजमाके देख॥
वक्तकी सदा तो सुन जिन्दगीमें रूह फूँक।
('आजकल' १-४-१९४५से)

× × ×

श्रीदत्तबाल माहफका 'डूबती नैया' गीत —

कौन खेवनहार तुम बिन नैया डूबन लागी—जीवन नैया डूबन लागी
गहरी नदिया, दूर किनारा, बीच भँवरमें मोरी नाव, साजन ! बीच भँवर मोरी नाव॥

लहरें उठ-उठ अम्बर चूमें डगमग डोले नाव, मोरी डगमग डोले नाव।
राह तकत हूँ तुमरी साजन बिन खेवैया, आव, प्रीतम ! बिन खेवैया आव॥
कौन लगाये पार तुम बिन नैया डूबन लागी—मोरी नैया डूबन लागी॥

× × ×

चन्दरमापर बादल छाये, आशका दीपक बुझता जाए।
मुझ बिरहनको कौन बचाये, आस निरासमें बदली जाए॥
बादरवा घनघोर छाये, नैया अब हिचकोले खाये।
कौन लगाये पार यह नैया डूबन लागी, मोरी नैया डूबन लागी॥
('आजकल' १ मई १९४५)

एक लड़की कनखियोंसे घूरनेवाले सज्जनोंके संबन्धमें अपनी डायरीमें नोट करती है :—

नौजवाँ अहबाब अक्सर मेरे भाई जानके।
रातको होते हैं मसरूफ़ चाय पीनेके लिए॥
भाई जान अबतक समझते हैं कि यह अहबाब सब।
सिर्फ़ उनके पास आते हैं बउम्मीदे तरब॥
मैं समझती हूँ कि वोह आते हैं मेरे वास्ते।
दूरसे तकलीफ़ फ़रमाते हैं मेरे वास्ते॥
मैं समझती हूँ कि वे खामोश होकर सर बसर।
गोश बर आवाज हैं मेरी सदाये साजपर॥
फिर मैं दानिस्ता जरा उभरी हुई आवाजसे।
अपनी मामाको सदा देती हूँ एक अन्दाजसे॥
लफ्ज भी उतने हसीं उस वक़्त करती हूँ अदा।
वोह अगर सुनलें तो तड़पा ही करें सुबहोमसा॥
('शायर' जनवरी १९४५)

उक्त ४-५ नज़्मोंमें किस खूबीसे स्त्रियोंके मनोभावोंको व्यक्त किया गया है। पुरुष कितना ही सिद्धहस्त कलाकार हो, उसके काव्यमें वह बात नहीं आ सकती।

घायलकी गति घायल जाने और न जाने कोय।

पुरुष द्वारा व्यक्त किये हुए भावोंमें अनुभवहीनता, अस्वाभाविकता और कृत्रिमताकी गन्ध आये और फिर आये। संस्कृत-हिन्दी काव्यों-में नारी जातिकी अनुभूतिका बड़ा सुन्दर और कोमल चित्रण मिलता है, किन्तु वह सब पुरुषों द्वारा लिखा हुआ है। यदि वह स्त्रियों द्वारा लिखा हुआ होता तो उसका सौन्दर्य कितना अधिक बढ़ गया होता, कल्पना नहीं की जा सकती। आशा है स्त्रियोंका यह प्रयास उर्दू-शायरीमें इस अभाव-की पूर्ति करेगा। अभी उन्हें इस कूचेमें आये दिन ही कितने हुए हैं, नया-नया प्रयास है। तिसपर भी अनेक अड़चनें, सामाजिक बन्धन, पर्दा और कौटुम्बिक बाधाएँ उनके विकासमें काफ़ी बाधक हैं। फिर भी वह दिन दूर नहीं जब इनमें मीर, ग़ालिब, इक़बाल जैसी लब्धप्रतिष्ठ शायरा उत्पन्न होंगी। प्रसंगवश हमने ३-४ शायराओंके कलामका नमूना दिया है। उर्दू-शायराओंका विस्तृत परिचय हम अपनी दूसरी पुस्तकमें देंगे।

इस युगके अधिकांश उदीयमान शायर पिछले महासमर (१९१४) के आस-पास उत्पन्न हुए। लारियोंकी जगह युद्धके भयानक हौलनाक समा-चार कानोंमें पड़े। तोतली बोली छूटने और दूधके दाँत टूटते-टूटते काँग्रेस और खिलाफ़तके पुरजोश जुलूस देख लिए। खुद भी आँमकी नपल्लीमें रंगीन कपड़ा बाँधकर भारत और गान्धीकी जय बोली। निहत्थी भीड़पर लाठियों और गोलियोंकी बौछार देखी। स्कूलोंमें जाते-जाते (१९२४में) हिन्दू-मुस्लिम फ़िसादके घिनौने दृश्य भी देखनेको मिले। तभी दरियाओं-की प्रलयकारी बाढ़ोंमें एक ही छप्परपर साँप, बिल्ली, कुत्ता, और मनुष्य भयसे काँपते बहते हुए भी देखे। तनिक होश सम्हाला तो अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाकुल्ला, भगतसिंह, जतीन्द्रनाथ, चन्द्रशेखर

आज़ाद—ज़िन्दावाद, इनक़लाब-ज़िन्दावादके नारे सुनाई पड़ने लगे। अखबारोंमें, घरोंमें, उनके रोमांचकारी बलिदानोंकी चर्चाएँ सुनीं। हड़ताल, किसान, मज़दूर, पूँजीपति, साम्राज्यवाद, स्वराज्य, जैसे शब्द अनजाने गलेके नीचे उतर गये। पढ़ना आया तो 'जोश' मलीहाबादीकी 'इन्क़लाबी', 'अहसान' दानिशकी 'बग़ीका ख्वाब', 'सागिर' की 'ऐ वतन' जैसी नज़्में आँखोंके सामने ख़ूनी मंज़र दिखलाने लगीं। नौजवानोंके सरोंपर ख़ून सवार हो गया।

'सरफ़रोसीकी तमन्ना अब हमारे दिलमें है'—जैसी गजलें बच्चोंके दिलोंमें भी उतर गईं। फिर जवानी आई तो अपने साथ दूसरा महा-समर घसीट लाई। हिटलर, मुसोलनी, रुज़वेल्ट, ब्लैक आउट, कन्ट्रोल, टैंक, और एटम बमके करिश्मे जी भरके देखे। बक़ौल इक़बाल 'तेग़ोंके सायेमें जो पलकर बड़े हुए हैं' वे नौजवान आग उगलें, अत्याचारों-की जड़ोंको खोखली करनेकी तदबीरें बतायें तो आश्चर्य ही क्या है ?

'सबा' मथरावी फर्माते हैं:—

× × ×

जिन्दगीकी मजलिसोंपर हर तरफ़ छायेगी मौत।
जिन्दगी क्या मौतको भी एक दिन आयेगी मौत॥ १
जब यह बरबादी मुसल्लिम है तो क्यों रोकर मिटें ?
जब है मिटना ही मुक़द्दर, क्यों न ख़ुश होकर मिटें ?

× × ×

क्यों गरजते गूँजते जाएँ न धारोंकी तरह।
क्यों न बरसें मुस्कुराकर अब्रपारोंकी तरह॥
क्यों चटानोंकी तरह रासिख़ न हों अपने क़दम।
क्यों पहाड़ोंकी तरह क़ायम न हों जबतक है दम॥

× × ×

उक्त ४ ५ नज़्मामें किस खूबीसे स्त्रियोंके मनोभावोंको व्यक्त किया गया है। पुरुष कितना ही सिद्धहस्त कलाकार हो, उसके काव्यमें वह बात नहीं आ सकती।

घायलकी गति घायल जाने और न जाने कोय।

पुरुष द्वारा व्यक्त किये हुए भावोंमें अनुभवहीनता अस्वाभाविकता और कृत्रिमताकी गन्ध आय और फिर आय। संस्कृत हिन्दी काव्यों में नारी जातिकी अनुभूतिका बड़ा सुन्दर और मार्मिक चित्रण मिलता है किन्तु वह सब पुरुषों द्वारा लिखा हुआ है। यदि वह स्त्रियों द्वारा लिखा हुआ होता तो उसका सौन्दर्य कितना अधिक बढ़ गया होता, कल्पना नहीं की जा सकती। आशा है स्त्रियोंका यह प्रयास उर्दू शायरीमें इस अभाव की पूर्ति करेगा। अभी उन्हें इस कूचेमें आये दिन ही कितने हुए हैं नया नया प्रयास है। तिसपर भी घरेलू अड़चनें सामाजिक बन्धन पर्दा और कौटुम्बिक बाधाएँ उनके विकासमें काफी बाधक हैं। फिर भी वह दिन दूर नहीं जब इनमें मीर, गालिब इक़बाल जैसी लब्धप्रतिष्ठ शायरा उत्पन्न होंगी। प्रसंगवश हमने ३–४ शायराओंके कलामका नमूना दिया है। उर्दू-शायराओंका विस्तृत परिचय हम अपनी दूसरी पुस्तकमें देंगे।

इस युगके अधिकांश उदीयमान शायर पिछले महासमर (१९१८) के आस-पास उत्पन्न हुए। लारियोंकी जगह युद्धके भयानक हौलनाक समाचार कानोंमें पड़े। तोतली बोली छूटने और दूधके दाँत टूटते-टूटते कांग्रेस और खिलाफतके पुरजोश जुलूस देख लिए। खुद भी बाँसकी खपच्चीमें रंगीन कपड़ा बाँधकर भारत और गान्धीकी जय बोली। निहत्थी भीड़पर लाठियों और गोलियोंकी बौछार देखी। स्कूलोंमें जाते-जाते (१९२४में) हिन्दू मुस्लिम फ़िसादके घिनौने दृश्य भी देखनेको मिले। तभी दरियाओं की प्रलयकारी बाढ़ोंमें एक ही छप्परपर साँप, बिल्ली, कुत्ता, और मनुष्य भयसे काँपते बहते हुए भी देखे। तनिक होश सम्हाला तो अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल अशफ़ाकुल्ला, भगतसिंह, जतीन्द्रनाथ चन्द्रशेखर

आज़ाद—जिन्दाबाद, इनक़लाब-ज़िन्दाबादके नारे सुनाई पड़ने लगे। अख़बारोंमें, घरोंमें, उनके रोमांचकारी बलिदानोंकी चर्चाएँ सुनीं। हड़ताल, किसान, मज़दूर, पूंजीपति, साम्राज्यवाद, स्वराज्य, जैसे शब्द अनजाने गलेके नीचे उतर गये। पढ़ना आया तो 'जोश' मलीहाबादीकी 'इन्क़लाबी', 'अहसान' दानिशकी 'बाग़ीका ख़्वाब', 'साग़र' की 'ऐ वतन' जैसी नज़्में आँखोंके सामने ख़ूनी मंज़र दिखलाने लगीं। नौजवानोंके सरोंपर ख़ून सवार हो गया।

'सरफ़रोशीकी तमन्ना अब हमारे दिलमें है'—जैसी गजलें बच्चोंके दिलोंमें भी उतर गईं। फिर जवानी आई तो अपने साथ दूसरा महासमर घसीट लाई। हिटलर, मुसोलनी, रूज़वेल्ट, ब्लैक आउट, कन्ट्रोल, टैंक, और एटम बमके करिश्मे जी भरके देखे। वक़ील इक़बाल 'तेग़ोंके सायेमें जो पलकर बड़े हुए हैं' वे नौजवान आग उगलें, अत्याचारोंकी जड़ोंको खोखली करनेकी तदबीरें बतायें तो आश्चर्य ही क्या है?

'सबा' मथरावी फ़र्माते हैं:—

× × ×

जिन्दगीकी मजलिसोंपर हर तरफ़ छायेगी मौत।
जिन्दगी क्या मौतको भी एक दिन आयेगी मौत॥
जब यह बरबादी मुसल्लिम है तो क्यों रोकर मिटें?
जब है मिटना ही मुक़द्दर, क्यों न ख़ुश होकर मिटें?

× × ×

क्यों गरजते गूँजते जाएँ न धारोंकी तरह।
क्यों न बरसें मुस्कुराकर अब्रपारोंकी तरह॥
क्यों चटानोंकी तरह रासिख़ न हों अपने क़दम।
क्यों पहाड़ोंकी तरह क़ायम न हों जबतक है दम॥

× × ×

यह भी कोई ज़िन्दगी है ग़मकी मारी ज़िन्दगी।
चीख़ती, रोती, बिलखती, बिलबिलाती ज़िन्दगी॥

× × ×

यह भी कोई ज़िन्दगी है हर घडी सौ आफ़तें।
दुश्मनी, गीबत, गिले शिक्वे, शिकायत, तुहमतें॥

× × ×

यह भी कोई ज़िन्दगी है जान हम खोते रहें।
लोग हमपर मुस्कुराएँ और हम रोते रहें॥

× × ×

ऐ ग़ुलामेज़िन्दगी! इस ज़िन्दगीसे फ़ायदा?
यह तो है बेचारगी, बेचारगीसे फ़ायदा?

× × ×

ज़ख़्म खाकर मुस्करायें तीर खाकर हँस पड़ें।
आफ़तोंकी गोदमें खेला करें और ख़ुश रहें॥
दिलमें टीसें हों मगर रक्सा हो होठोंपर हँसी।
मौतसे लडकर बनाए मौतको भी ज़िन्दगी॥

('शायर' जनवरी १९४५)

ये उदीयमान शायर हृदयके भावोंको छिपाते नहीं। हृदयकी ज्वाला और सौन्दर्यकी प्यास किसीको आडम्ब होकर नहीं बुझाते, अपितु जो मनमें होता है वही व्यक्त कर देते हैं। कभी मनकी वासनाओंको तृप्त करनेके लिये भौंरेकी तरह लोलुप नज़र आते हैं। कभी आवारगीमें ताड़ीखानेमें घुसते हुए दिखाई देते हैं। कभी सांसारिक मुसीबतोंसे खीझकर ईश्वर तकसे विद्रोह कर बैठते हैं। कभी धर्मके ठेकेदार मुल्लाओं-पण्डितोंको आड़े हाथ लेते हैं। कभी मजदूर और किसानकी बेबसी देख पूँजीपतियोंपर बरस पडते हैं। कभी मज़हबी, सामाजिक रस्मोरिवाजके ख़िलाफ़

बग़ावतपर आमादा हो जाते हैं, तो कभी दरियाके किनारे बैठकर प्रेयसी की यादमें मादक गीत गाते हैं, और वहीं किसी अव्यक्त वेदनासे तड़पकर सामाजिक बन्धनोंको तोड़नेके लिये अधीर हो उठते हैं। ग़रज़ हर मज-मूनपर उनकी क़लम चलती है। जो पाठक इनकी ग़ज़लोंमें मीर-जैसी व्यथा, ग़ालिब-जैसी कल्पना, नज़्मोंमें इक़बाल-जैसी गहराई, चकवस्त-जैसी सुघराई, जोश-जैसी आग और अहसान-जैसी तड़प ढूँढ़ना चाहेंगे उन्हें निराश होना होगा। इनका अपना जुदा और नया रंग है। अभी इनकी उम्र ही क्या है? होश सम्भाले दिन ही कितने हुए? सन् ३५ से तो इस युगका प्रारम्भ ही होता है। फिर भी अपनी हल्की-हल्की, और भीनी-भीनी ख़ुशबूसे उर्दू-दुनियाँको महका दिया है। इनमें नून मीम राशिद, अहमद नदीम क़ासिमी, डा० तासीर, सलाम मछलीशहरी, मीराजी, जगन्नाथ आज़ाद, परवेज़, मख़मूर जालन्धरी, मक़बूलहुसेन अहमदपुरी, रविशसिद्दीक़ी, मुख़तार सिद्दीक़ी, अज़ीम कुरेंसी, फ़ैज़, मजाज़, जज़्बी, साहिर वग़ैरह जैसे शायर भिन्न-भिन्न पहलुओंपर अनेक तरहसे (ग़ज़लों, नज़्मों, गीतों, लघुछन्दों और मुक्तछन्दोंमें) लिख रहे हैं। यहाँ हम अन्तिम केवल चार कवियोंका परिचय दे रहे हैं।

२८ अगस्त १९४६ ई०

२२

फ़ैज़ अहमद 'फ़ैज़'

(जन्म १९१० सियालकोट)

फ़ैज़ साहब अभी ७ ८ वर्षसे ही साहित्यिक क्षेत्रमें आये हैं। आपकी कविताओंका संग्रह नक्शे फरियादी सन् १९४२ में प्रकाशित हुआ है। आप आलोचनात्मक लेख भी सामयिक पत्रोंमें लिखते रहते हैं। पहिले सरकारी सर्विसमें फौजमें कर्नल थे, आजकल लाहोरके अंग्रेज़ी दैनिक पाकिस्तान टाइम्स के सम्पादक हैं।

फ़ैज़ साहबने भी शायरीकी बिस्मिल्लाह ग़ज़लसे ही की है। प्रारम्भ की ग़ज़ल बड़ी रंगीन और लुभावनी रही है।

रात यूं दिलमें तेरी खोई हुई याद आई।
जैसे वीरानेमें चुपकेसे बहार आजाये॥
जैसे सहराओंमें[1] हौले-से चले बादेनसीम[2]।
जैसे बीमारको बेवजह करार आजाये॥

× × ×

दिल रहीनेग़मेजहाँ[3] है आज,
हर नफ़स तिश्नयेफुगाँ है आज।
सख़्त वीराँ है महफ़िल हस्ती,
ऐ ग़मेदोस्त ! तू कहाँ है आज ?

× × ×

---

[1]जंगलोंमें [2]पवन [3]संसारके दुखोंका केन्द्र।

फूल लाखों बरस नहीं रहते।
दो घड़ी और है बहारेशबाब ॥

× × ×

सो रही है घने दरख़्तोंपर, चाँदनीकी थकी हुई आवाज़।

× × ×

वक़्फ़े हिरमानोयास रहता है।
दिल है अक्सर उदास रहता है ॥

तुम तो ग़म देके भूल जाते हो।
मुझको अहसाँका पास रहता है ॥

× × ×

परन्तु बहुत शीघ्र फ़ैज़में अभूतपूर्व परिवर्तन हो जाता है। हसीनोंके साथ-साथ उन्हें भूखे भी दीखने लगते हैं।

मौज़ूए सुख़न

गुल हुई जाती है अफ़सुर्दा सुलगती हुई शाम।
धुलके निकलेगी अभी चश्मये मेहताबसे रात ॥

× × ×

यह हसीं खेत, फटा पड़ता है जोबन जिनका।
किसलिये उनमें फ़क़त भूख उगा करती है ?

× × ×

यह हरइक सिम्त पुरइसरार कड़ी दीवारें।
जलबुझे जिनमें हज़ारोंकी जवानीके चिराग़ ॥

× × ×

'फ़ैज़' प्रेम करते हैं परन्तु उसमें अन्धे नहीं होते। अन्तर्चक्षु खुले रखते हैं; और प्रेम-पाठ पढ़ते हुए भी अपने आस-पास कराहती दुनियाको

कर्तव्यपथ दर्शा रहे हैं। 'फ़ैज़' मार्क्सवादी नहीं, वह एक मनुष्य है—शायर है और जब उन्हें मनुष्य रक्तके पिपासु नज़र आते हैं तो मनुष्यता और शायरीके नाते बेचैन हो उठते हैं—

रक़ीबसे

× × ×

मानता हूँ तेरे क़दमोंसे वोह राहें जिनपर।
उसकी मदहोश जवानीने इनायत की है॥

× × ×

तूने देखी है वोह पेशानी, वोह रुख़सार, वोह होंट।
ज़िन्दगी जिनके तसव्वुरमें लुटा दी हमने॥
तुझपै उठती हैं वोह खोई हुई साहिर आँखें।
तुझको मालूम है, क्यों उम्र गँवा दी हमने?
हमपै मुश्तरका हैं अहसान ग़मेउल्फ़तके।
इतने अहसान कि गिनवाऊँ तो गिनवा न सकूँ॥
हमने इस इश्क़में क्या खोया है क्या सीखा है।
जुज़ तेरे औरको समझाऊँ तो समझा न सकूँ॥
आजिज़ी सीखी, ग़रीबोंकी हिमायत सीखी।
यासो हिरमानके दुख-दर्दके मानी सीखे॥
ज़ेरदस्तोंके मसाइबको समझना सीखा।
सर्द आहोंके रुख़े ज़र्दके मानी सीखे॥
जब कहीं बैठके रोते हैं वोह बेकस जिनके।
अश्क आँखोंमें बिलखते हुए सो जाते हैं॥
नातवानोंके निवालोंपै झपटते हैं उक़ाब।
बाज़ू तोले हुए मँडलाते हुए आते हैं॥

जब कभी बिकता है बाज़ारमें मज़दूरका गोश्त ।
शाहराहोंपै ग़रीबोंका लहू बहता है ॥
या कोई तोंदका बढ़ता हुआ सैलाब लिये ।
फ़ाक़ामस्तोंको डुबोनेके लिए कहता है ॥

आग-सी सीनेमें रह-रहके उबलती है न पूछ ।
अपने दिलपर मुझे क़ाबू ही नहीं रहता है ॥

पहली-सी मुहब्बत

मुझसे पहली-सी मुहब्बत मेरी महबूब न माँग ।

× × ×

और भी दुख हैं ज़मानेमें मुहब्बतके सिवा ।
राहतें और भी हैं वस्लकी राहतके सिवा ॥

× × ×

जा-बजा बिकते हुए कूचओबाज़ारमें जिस्म ।
ख़ाकमें लिथड़े हुए ख़ूनमें नहलाये हुए ॥

× × ×

लौट जाती है इधरको भी नज़र क्या कीजे ?
मुझसे पहली-सी मुहब्बत मेरी महबूब न माँग ॥

'फ़ैज़' भावावेशमें बह नहीं जाते, स्थिर और अटल रहते हैं। उनका क्रोध दीपककी वह अन्तिम लौ नहीं जो एकबारगी भड़ककर बुझ जाय। वह उपलेकी आगकी तरह छुपी-छुपी अपना काम करती रहती है :—

चन्द रोज़ और

चन्दरोज़ और मेरी जान ! फ़क़त चन्द ही रोज़ ।
ज़ुल्मकी छाओंमें दम लेनेको मजबूर हैं हम ॥

और कुछ देर सितम सह लें, तड़प लें, रो लें।
अपने अजदादकी मीरास है माज़ूर है हम ।।

जिस्मपर क़ैद है, जज़बात पै ज़ंजीरें हैं।
फ़िक्र महबूस है, गुफ़्तारपै ताज़ीरें हैं ।।
अपनी हिम्मत है कि हम फिर भी जिये जाते हैं ।।

जिन्दगी क्या किसी मुफ़लिसकी क़बा है जिसमें।
हर घड़ी दर्दके पेवन्द लगे जाते हैं ।।

लेकिन अब ज़ुल्मकी मीयादके दिन थोड़े हैं।
इक ज़रा सब्र, कि फ़रियादके दिन थोड़े हैं ।।

× × ×

'फ़ैज़' अत्याचार-पीड़ितोके अहसास किस ख़ूबीसे उभारते हैं —

कुत्ते

यह गलियोंके आवारा बेकार कुत्ते।
कि बख़्शा गया जिनको ज़ौक़े गदाई ।।
ज़मानेकी फटकार सरमाया उनका।
जहाँ भरकी धितकार उनकी कमाई ।।

न आराम शबको न राहत सवेरे।
ग़िलाज़तमें घर, नालियोंमें बसेरे ।।
जो बिगड़ें तो इक दूसरेसे लड़ा दो।
ज़रा एक रोटीका टुकड़ा दिखा दो ।।
यह हर एककी ठोकरें खानेवाले।
यह फ़ाक़ोंसे उक्ताके मर जानेवाले ।।

यह मज़लूम मख़लूक़ गर सर उठाये।
तो इनसान सब सरकशी भूल जाये ।।

यह चाहें तो दुनियाको अपना बना लें।
यह आक़ाओंकी हड्डियाँ तक चबा लें॥

कोई उनको अहसासे जिल्लत दिला दे।
कोई उनकी सोई हुई दुम हिला दे॥

शायरके हृदयमें आग है। पर उसे आजीविकोपार्जन अथवा अन्य आवश्यक कार्योंसे विदेश जानेकी सम्भावना दीख रही है। विरहकी ज्वालामें वह जलेगा, परन्तु अपनी प्रियाके कष्टोंकी आशंकासे सिहर उठता है।

ख़ुदा वोह वक़्त न लाये

ख़ुदा वह वक़्त न लाये कि सोगवार हो तू।
सकूँकी नींद तुझे भी हराम हो जाये।
तेरी मसर्रते पैहम तमाम हो जाये।
तेरी हयात तुझे तल्ख़जाम हो जाये।
ग़मोंसे आईनये दिलगुदाज हो तेरा॥

हुजूमेयाससे बेताब होके रह जाये।
वफ़ूरे दर्दसे सीमाब होके रह जाये।
तेरा शबाब फ़क़त ख़्वाब होके रह जाये।
ग़रूरेहुस्न सरापा नियाज हो तेरा॥

'फ़ैज़' युवक हैं। उनसे उर्दू-साहित्यको बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं। उनकी दो नज़्मोंके कुछ अंश, चंद अशआर नीचे और दिये जाते हैं :—

हुस्न और मौत

जो फूल सारे गुलिस्ताँमें सबसे अच्छा हो।
फ़रोग़ेनूर हो जिससे फ़िज़ाए रंगीमें॥

ख़िज़ांके जोरोसितमको न जिसने देखा हो।
बहारने जिसे खूने जिगरसे पाला हो॥
वोह एक फूल समाना है चश्मे गुलचींमें॥

हज़ार फूलोंसे आबाद बाग़ेहस्ती है,
अजलकी आंख फक़त एकको तरसती है।

कई दिलोंकी उमीदोंका जो सहारा हो,
फ़िज़ाएदहरकी आलूदगीसे बाला हो,
जहांमें आके अभी जिसने कुछ न देखा हो,
न कहते ऐशो मसर्रत न ग़मकी अरज़ानी,
किनारेरहमते हक़में उसे सुलाती है।

× × ×

तनहाई

फिर कोई आया दिलेज़ार! नहीं, कोई नहीं।
राहरव होगा, कहीं और चला जायेगा॥

× × ×

अपने बेदवाद किवाड़ोंको मुक़फ्फ़ल कर लो।
अब यहां कोई नहीं, कोई नहीं आयेगा॥

× × ×

मेरी किस्मतसे खेलनेवाले।
मुझको किस्मतसे बेख़बर कर दे॥

× × ×

यह दुख तेरा है ना मेरा।
हम सबकी जागीर है प्यारे!

× × ×

क्यों न जहाँका ग़म अपना लें।
बादमें सब तदबीरें सोचें॥

बादमें सुखके सुपने देखें।
सुपनोंकी ताबीरें सोचें॥

× × ×

न जाने किसलिए उम्मीदवार बैठा हूँ।
इक ऐसी राहपै जो तेरी रहगुज़र भी नहीं॥

× × ×

शबेमहताबकी सहर आफ़रीं मदहोश मौसीक़ी।
तुम्हारी दिलनशीं आवाज़में आराम करती है॥

× × ×

फ़रेबे आरज़ूकी सहलअंगारी नहीं जाती।
हम अपने दिलकी धड़कनको तेरी आवाज़ेपा समझे॥

× × ×

दोनों जहान तेरी मुहब्बतमें हारके।
'यह कौन जा रहा है शबेग़म गुज़ारके?

३० अगस्त १९४६

छिज़ाँके जोरोसितमको न जिसने देखा हो।
बहारने जिसे ख़ूने जिगरसे पाला हो॥
वोह एक फूल समाता है चश्मे गुलचींमें॥

हज़ार फूलोंसे आबाद बाग़ेहस्ती है,
अजलकी आँख फ़क़त एकको तरसती है।

कई दिलोंकी उमीदोंका जो सहारा हो,
फ़िज़ाएदहरकी आलूदगीसे बाला हो,
जहाँमें आके अभी जिसने कुछ न देखा हो,
न क़हते ऐशो मसर्रत न ग़मकी अरज़ानी,
किनारेरहमते हक़में उसे सुलाती है।

× × ×

तनहाई

फिर कोई आया दिलेज़ार ! नहीं, कोई नहीं।
राहरव होगा, कहीं और चला जायेगा॥

× × ×

अपने बेख़्वाब किवाड़ोंको मुक़फ़्फ़ल कर लो।
अब यहाँ कोई नहीं, कोई नहीं आयेगा॥

× × ×

मेरी क़िस्मतसे खेलनेवाले।
मुझको क़िस्मतसे बेख़बर कर दे॥

× × ×

यह दुख तेरा है ना मेरा :
हम सबकी जागीर है प्यारे !

× × ×

क्यों न जहाँका ग़म अपना लें।
बादमें सब तदबीरें सोचें॥

बादमें सुखके सुपने देखें।
सुपनोंकी ताबीरें सोचें॥

× × ×

न जाने किसलिए उम्मीदवार बैठा हूँ।
इक ऐसी राहपै जो तेरी रहगुज़र भी नहीं॥

× × ×

शबेमहताबकी सहर आफ़रीं मदहोश मौसीक़ी।
तुम्हारी दिलनशीं आवाजमें आराम करती है॥

× × ×

फ़रेबे आरज़ूकी सहलअंगारी नहीं जाती।
हम अपने दिलकी धड़कनको तेरी आवाज़ेपा समझे॥

× × ×

दोनों जहान तेरी मुहब्बतमें हारके।
'यह कौन जा रहा है शबेग़म गुज़ारके?

३० अगस्त १९४६

२३

इसरारुलहक़ 'मजाज़'

(जन्म १९१३ ई०)

मजाज की कविताओंका १९४३में प्रकाशित 'आहग' सकलन हमारे सामने है। मजाज अपना परिचय इस तरह देते हैं —

× × ×

जिन्दगी क्या है गुनाहेआदम।
जिन्दगी है तो गुनहगार हूँ मैं॥

× × ×

कुफ़्रोइलहादसे नफ़रत है मुझे।
और मज़हबसे भी बेज़ार हूँ मैं॥

× × ×

इक लपकता हुआ शोला हूँ मैं।
एक चलती हुई तलवार हूँ मैं॥

उक्त परिचयमे सब कुछ आ गया। मजाज़ मनुष्य हैं और मनुष्यमे भूल होना स्वाभाविक है। वे न नास्तिक हैं न वठमुल्ले। वे अल्लामा इकबालके इस शेरके कायल है —

खुदाके बन्दे तो है हज़ारो, बनोंमें फिरते है मारे-मारे।
मैं उनका बन्दा बनूगा जिनको खुदाके बन्दोसे प्यार होगा॥

यानी मजाज साहब मनुष्य-सेवक है। रूढियोको जलानेके लिये चिनगारी और गुलामीकी जजीर काटनेके लिए तलवार हैं।

'मजाज़' भी किसीको प्यार करते हैं, परन्तु लोक-लाजकी मर्यादा नहीं तोड़ते। प्रेमी और प्रेयसीको लैला-मजनूंकी तरह गली-कूचोंमें ख़ाक नहीं छनवाते। 'मजबूरियाँ' शीर्षकमें लिखते हैं :—

न तूफ़ाँ रोक सकते हैं, न आँधी रोक सकती है।
मगर फिर भी मैं उस क़स्रेहसीं तक जा नहीं सकता॥

वह मुझको चाहते हैं और मुझतक आ नहीं सकते।
मैं उसको पूजता हूँ और उसको पा नहीं सकता॥

यह मजबूरी-सी मजबूरी, यह लाचारी-सी लाचारी।
कि उसके गीत भी जी खोलकर मैं गा नहीं सकता॥

ज़बाँपर बेख़ुदीमें नाम उसका आ ही जाता है।
अगर पूछे कोई, यह कौन है? बतला नहीं सकता॥

कहाँतक क़िस्सये आलामें फ़ुरक़त? मुख़्तसिर ये है।
यहाँ वो आ नहीं सकते, वहाँ मैं जा नहीं सकता॥

हदें वोह खींच रक्खी हैं हरमके पासबानोंने।
कि बिन मुजरिम बने पैग़ाम भी पहुँचा नहीं सकता॥

'मजाज़' की प्रेयसी पुराने शायरोंकी हरजाई—असती नारी नहीं। बल्कि शील-स्वभाव वाली एक लड़की है :—

सरापा रंगोबू है पैकरे हुस्नो लताफ़त है।

× × ×

मेरा ईमाँ है, मेरी जिन्दगी है, मेरी जन्नत है।

× × ×

वफ़ा ख़ुद की है और मेरी वफ़ाको आज़माया है।
मुझे चाहा है मुझको अपनी आँखोंपै बिठाया है॥

२३

इसरारुलहक 'मजाज़'

(जन्म १९१० ई०)

मजाज़ का कविताओंका १९४३में प्रकाशित 'आहंग' संकलन हमारे सामने है। मजाज़ अपना परिचय इस तरह कराते हैं —

× × ×

जिन्दगी क्या है गुनाहेआदम।
जिन्दगी है तो गुनहगार हूँ मैं॥

× × ×

कुफ़्रोइलहादसे नफ़रत है मुझे।
और मज़हबसे भी बेज़ार हूँ मैं॥

× × ×

इक लपकता हुआ शोला हूँ मैं।
एक चलती हुई तलवार हूँ मैं॥

उक्त परिचयमें सब कुछ आ गया। मजाज़ मनुष्य है और मनुष्यसे भूल होना स्वाभाविक है। वे न नास्तिक हैं न कठमुल्ले। वे अल्लामा इक़बालके इस शेरके कायल हैं —

ख़ुदाके बन्दे तो हैं हज़ारों बनोंमें फिरते हैं मारे-मारे।
मैं उनका बन्दा बनूँगा जिनको ख़ुदाके बन्दोंसे प्यार होगा॥

यानी मजाज़ सच्चे मनुष्य-सेवक हैं। रूढ़ियोंको जलानेके लिये चिनगारी और गुलामीकी ज़ंजीर काटनेके लिए तलवार हैं।

तेरे माथेपै यह आँचल बहुत ही ख़ूब है लेकिन।
तू इस आँचलसे इक परचम बना लेती तो अच्छा था॥

'मजाज़' जहाँ नारीको कार्य-क्षेत्रमें लाना चाहते है, वहाँ युवकोंको भी आदेश देते हैं। वे नहीं चाहते कि आजका एक भी युवक नाकारा बैठा हुआ हुस्नोइश्क़की दास्तान दोहराया करे और सीनेपर हाथ रखकर ठंडी साँस भरके कहा करे :—

सम्हाला होश तो मरने लगे हसीनोंपर।
हमें तो मौत ही आई शबाबके बदले॥

जवानीकी दुआ बचपनमें नाहक़ लोग देते हैं।
यही लड़के मिटाते हैं जवानीको जवाँ होकर॥

'मजाज़' फ़र्माते हैं :—

नौजवाँ से—

तेरा शबाब अमानत है सारी दुनियाकी।
तू ख़ारज़ारे जहाँमें गुलाब पैदा कर॥
शराब खींची है सबने ग़रीबके ख़ूँसे।
तू अब अमीरके ख़ूँसे शराब पैदा कर॥
बहे ज़मींपै जो तेरा लहू तो ग़म मत कर।
इसी ज़मींसे महकते गुलाब पैदा कर॥
तू इन्क़लाबकी आमदका इन्तज़ार न देख।
जो हो सके तो अभी इनक़लाब पैदा कर॥

फिर उन्हीं नौजवानोंको सावधान करते हुए फ़र्माते हैं :—

सरमायादारी

कलेजा फुँक रहा है और ज़बाँ कहनेसे आरी है।
बताऊँ क्या तुम्हें क्या चीज़ यह सरमायेदारी है॥

मेरे चेहरेपै जब भी फ़िक्रके आसार पाये हैं।
मुझे तस्कीन दी है मेरे अन्देशे मिटाये हैं॥

× × ×

कोई मेरे सिवा उसका निशाँ पा ही नहीं सकता।
कोई उस बारगाहे नाज़ तक जा ही नहीं सकता॥

मजाज़' नारीको केवल भोगकी वस्तु नहीं समझता। उसका दिल वोह लोटन कबूतर नहीं कि चूड़ियोंकी खनखनाहट और पायलेंकी आवाज़पर लोट-पोट हो जाय। वह नारीको भी देशकी उन्नतिमें आवश्यक अंग समझता है। उसे पर्देमें सिमटी गुड़ियाकी तरह सजी देखकर किस खूबीसे कर्त्तव्यकी ओर सकेत करता है —

नौजवाँ खातून से —

हिजाबे फ़ित्ना परवर अब उठा लेती तो अच्छा था।
खुद अपने हुस्नको परदा बना लेती तो अच्छा था॥

तेरी नीची नज़र खुद तेरी अस्मतकी मुहाफ़िज़ है।
तू इस नश्तरकी तेज़ी आज़मा लेती तो अच्छा था॥

दिले मजरूहको मजरूहतर करनेसे क्या हासिल ?
तू आँसू पोंछकर अब मुस्करा लेती तो अच्छा था॥

अगर खिलवतमें तूने सर उठाया भी तो क्या हासिल ?
भरी महफ़िलमें आकर सर झुका लेती तो अच्छा था॥

तेरे माथेका टीका मर्दकी किस्मतका तारा है।
अगर तू साज़ेबेदारी उठा लेती तो अच्छा था॥

सनाएँ खींच ली हैं सरफिरे बाग़ी जवानोंने।
तू सामाने जराहत अब उठा लेती तो अच्छा था॥

तेरे माथेपै यह आँचल बहुत ही खूब है लेकिन ।
तू इस आँचलसे इक परचम बना लेती तो अच्छा था ॥

'मजाज़' जहाँ नारीको कार्य-क्षेत्रमें लाना चाहते हैं, वहाँ युवकोंको भी आदेश देते हैं। वे नहीं चाहते कि आजका एक भी युवक नाकारा बैठा हुआ हुस्नोइश्क़की दास्तान दोहराया करे और सीनेपर हाथ रखकर ठंडी साँस भरके कहा करे :—

सम्हाला होश तो मरने लगे हसीनोंपर ।
हमें तो मौत ही आई शबाबके बदले ॥
जवानोंकी दुआ बचपनमें नाहक़ लोग देते हैं ।
यही लड़के मिटाते हैं जवानीको जवाँ होकर ॥

'मजाज़' फ़र्माते हैं :—

नौजवाँ से—

तेरा शबाब अमानत है सारी दुनियाकी ।
तू ख़ारज़ारे जहाँमें गुलाब पैदा कर ॥
शराब खींची है सबने ग़रीबके खूँसे ।
तू अब अमीरके खूँसे शराब पैदा कर ॥
बहे ज़मींपै जो तेरा लहू तो ग़म मत कर ।
इसी ज़मींसे महकते गुलाब पैदा कर ॥
तू इन्क़लाबकी आमदका इन्तज़ार न देख ।
जो हो सके तो अभी इनक़लाब पैदा कर ॥

फिर उन्ही नौजवानोंको सावधान करते हुए फर्माते हैं :—

सरमायादारी

कलेजा फुँक रहा है और ज़बाँ कहनेसे आरी है ।
बताऊँ क्या तुम्हें क्या चीज़ यह सरमायेदारी है ॥

ये वो आँधी है जिसकी रौमें मुफ़लिसका नशेमन है।
यह वोह बिजली है जिसकी ज़ौमें हर दहक़ांका ख़िरमन है॥

यह अपने हाथमें तहज़ीबका फ़ानूस लेती है।
मगर मज़दूरके तनसे लहूतक चूस लेती है॥

यह इन्सानी बला ख़ुद ख़ूने इन्सानीकी गाहक है।
वबासे बढ़के मुहलक, मौतसे बढ़कर भयानक है॥

न देखें है बुरे इसने न परखे हैं भले इसने।
शिकंजोंमें जकड़कर घोंट डाले हैं गले इसने॥

क़यामत इसके ग़मज़े जानलेवा हैं सितम इसके।
हमेशा सीनयेमुफ़लिसपै पड़ते हैं क़दम इसके॥

ग़रीबोंका मुक़द्दस ख़ून पी पीकर बहकती है।
महलमें नाचती है रक़्सगाहोंमें थिरकती है॥

जिधर चलती है बरबादीके सामाँ साथ चलते हैं।
नहूसत हमसफ़र होती है शैताँ साथ चलते हैं॥

यह अक्सर लूटकर मासूम इन्सानोंको राहोंमें।
ख़ुदाके ज़मज़मे गाती है छिपकर ख़ानक़ाहोंमें॥

जवाँ मर्दोंके हाथोंसे यह नेज़े छीन लेती है।
यह डाइन है भरी गोदोंसे बच्चे छीन लेती है॥

यह ग़ैरत छीन लेती है, हमीयत छीन लेती है।
यह इन्सानोंसे इन्सानोंकी फ़ितरत छीन लेती है॥

हमेशा ख़ून पीकर हड्डियोंके रथमें चलती है।
ज़माना चीख़ उठता है यह जब पहलू बदलती है॥

मुबारिक दोस्तो ! लबरेज़ है अब इसका पैमाना।
उठाओ आँधियाँ ! कमज़ोर है बुनियादेकाशाना॥

विदेशी महमानसे

'मजाज' साहब अंग्रेजको किस ख़ूबीसे बोरिया-बधना बाँधनेकी सलाह दे रहे हैं :—

मुसाफ़िर ! भाग वक़्ते बेकसी है।
तेरे सरपर अजल मँडला रही है॥
तेरी जेबोंमें है सोनेके तोड़े।
यहाँ हर जेब ख़ाली हो चुकी है॥
यह आलम हो गया है मुफ़लिसीका।
कि रस्मे मेज़बानी उठ गई है॥
न दे ज़ालिम फ़रेबे चारासाजी।
यह बस्ती तुझसे अब तंग आ चुकी है॥
मुनासिब है कि अपना रास्ता ले।
वोह किश्ती देख साहिलसे लगी है॥

रात और रेल

'मजाज' के दृश्य-वर्णनकी ख़ूबी भी लगे हाथ देखलें: —

फिर चली है रेल इस्टेशनसे लहराती हुई।
नीमशबकी खामुशीको ज़ेरे लब गाती हुई॥
डगमगाती, झूमती, सीटी बजाती, खेलती।
वादिओ कोहसारकी ठंडी हवा खाती हुई॥

× × ×

नाज़से हर मोड़पर खाती हुई सौ पेचोख़म।
इक दुल्हन अपनी अदासे आप शरमाती हुई॥
जैसे आधीरातको निकली हो इक शाही बरात।
शादियानोंकी सदासे वज्दमें आती हुई॥

मुन्तशिर करके फ़िज़ामें जाबजा चिनगारियाँ।
दामने मौजे हवामें फूल बरसाती हुई॥
सीनये कोहसारपर चढ़ती हुई बेइख़्तियार।
एक नागन जिस तरह मस्तीमें लहराती हुई॥
जुस्तजूमें मंज़िलेमक़सूदकी दीवानावार।
अपना सर धुनती फ़िज़ामें बाल बिखराती हुई॥
रेंगती, मुड़ती, मचलती, तिलमिलाती, हाँपती।
अपने दिलकी आतिशेपिन्हाँको भड़काती हुई॥
पुलपे दरियाके दमादम कौंदती ललकारती।
अपनी इस तूफ़ानअंगेज़ीपर इतराती हुई॥
पेश करती बीच नद्दीमें चिराग़ोंका समाँ।
साहिलोंपर रेतके ज़र्रोंको चमकाती हुई॥
मुहमें घुसती है सुरंगोंके यकायक दौड़कर।
दनदनाती, चीख़ती, चिंघाड़ती, गाती हुई॥
आगे आगे जुस्तजू आमेज़ नज़रें डालती।
शबके हैबतनाक नज़्ज़ारोंसे घबराती हुई॥
एक मुजरिमकी तरह सहमी हुई सिमटी हुई।
एक मुफ़लिसकी तरह सर्दीमें थर्राती हुई॥

× × ×

नन्ही पुजारन

शायरोंमें भी लागान कैसी-कैसी गन्द बसरी है कि मारे शर्मके गर्दन नीची हो जाती है। एक सुकुमार अबोध कन्या जिसे हिन्दी-कवि सरस्वतीका अवतार समझते हैं, उसीको देखकर एक साहब फ़र्माते हैं —

'जवानी आयेगी जब देखना क़हरे ख़ुदा होगा।'

× × ×

'अभी कमसिन हो, नादाँ हो, कहीं खो दोगे दिल मेरा।
तुम्हारे ही लिए रक्खा है ले लेना जवाँ होकर॥"

'मजाज़' ऐसी लड़कियोंमें सीताका रूप-शील देखते हैं :—

कैसी सुन्दर है क्या कहिये।
नन्हीं-सी एक सीता कहिये॥

धूप-चढ़े तारा चमका है।
पत्थरपर इक फूल खिला है॥

चाँदका टुकड़ा, फूलकी डाली।
कमसिन, सीधी, भोली-भाली॥

हाथमें पीतलकी थाली है।
कानमें चाँदीकी बाली है॥

दिलमें लेकिन ध्यान नहीं है।
पूजाका कुछ ज्ञान नहीं है॥

× × ×

हँसना-रोना इसका मजहब।
इसको पूजासे क्या मतलब?

ख़ुद तो आई है मन्दरमें।
मन उसका है गुड़ियाघरमें॥

नूरा, नर्स

हुस्न आख़िर हुस्न है। यह किसी वर्ग विशेषकी मीरास नहीं। बक़ौल 'जोश' :—

महतरानी हो कि रानी गुनगुनायेंगे जरूर।
कोई आलम हो जवानी गुनगुनायेंगी जरूर॥

और दिल आखिर दिल है। किसी पर भी आ जाय बसकी बात नहीं, और मनकी बात छिपाना आजकल शायर पाप समझता है। 'जोश' महतरानीको देखकर उसके सौन्दर्यकी जी खोलकर सराहना करते हैं। 'सागर' पुजारनकी महिमा गाते हैं तो 'अहसान' तेलनको लेडीसे तरजीह देते हैं। 'सलाम' मछलीशहरी मजदूर औरतपर रिझल जाते हैं 'मखमूर' जालंधरी एक मैली कुचैली मँगतनके लिये सोचते हैं। 'वूम' का चमारीनामा मशहूर ही है। मजाज़ साहब हास्पिटलकी नूरा नर्सके सम्बन्धमें लिखते हैं —

वह एक नर्स थी चारागर जिसको कहिये।
मदावाय दर्देजिगर जिसको कहिये॥
जवानीसे तिफ्ली गले मिल रही थी।
हवा चल रही थी कली खिल रही थी॥
वोह पुररौब तेवर, वोह शादाब चेहरा।
मतायें जवानीपै फितरतका पहरा॥
मेरी हुक्मरानी है अहले जमींपर।
यह तहरीर था साफ उसकी जबींपर॥
सफेद और शफ्फाफ कपड़े पहनकर।
मेरे पास आती थी एक हूर बनकर॥

× × ×

कभी उसकी शोखीमें संजीदगी थी।
कभी उसकी संजीदगीमें भी शोखी॥

घड़ी चुप, घड़ी करने लगती थी बातें।
सिरहाने मेरे काट देती थी रातें॥

× × ×

सिरहाने मेरे एक दिन सर झुकाये।
वोह बैठी थी तकियेपै कोहनी टिकाये॥
ख़यालाते पैहममें खोई हुई-सी।
न जागी हुई-सी, न सोई हुई-सी॥
झपकती हुई बार-बार उसकी पलकें।
जबींपर शिकन बेक़रार उसकी पलकें॥

× × ×

मुझे लेटे-लेटे शरारतकी सूझी।
जो सूझी भी तो किस क़यामतकी सूझी॥
ज़रा बढ़के कुछ और गर्दन झुका ली।
लबे लाल अफ़शाँसे इक शै चुराली॥
वोह शै जिसको अब क्या कहूँ क्या समझिये।
बहिश्ते जवानीका तोहफ़ा समझिये॥
मैं समझा था शायद बिगड़ जायगी वोह।
हवाओंसे लड़ती है लड़ जायगी वोह॥
मैं देखूँगा उसके बिफरनेका आलम।
जवानीका ग़ुस्सा बिखरनेका आलम॥
इधर दिलमें इक शोरे महशर बपा था।
मगर उस तरफ़ रंग ही दूसरा था॥
हँसी और हँसी इस तरह खिलखिलाकर।
कि शमयेहया रह गई झिलमिलाकर॥

नहीं जानती है मेरा नाम तक वोह।
मगर भेज देती है पैग़ाम तक वोह॥
यह पैग़ाम आते ही रहते हैं अक्सर।
कि किस रोज़ आओगे बीमार होकर॥

फुटकर—

दिलको महवेग़ममें दिलदार किये बैठे हैं।
रिन्द बनते हैं मगर ज़हर पिये बैठे हैं॥
चाहते हैं कि हर इक ज़र्रा शगूफ़ा बन जाय।
और खुद दिल ही में एक खार लिये बैठे हैं॥

× × ×

इश्क़का ज़ौक़े नज़ारा मुफ़्तमें बदनाम है।
हुस्न खुद बेताब है जल्वे दिखानेके लिये॥

× × ×

छुप गये वे साज़े हस्ती छेड़कर।
अब तो बस आवाज़ ही आवाज़ है॥

२ सितम्बर १९४६

२४

मईन हुसेन 'जज़्बी'

(जन्म १९१२ के लगभग)

कॉलिजमें अध्ययन करते हुए 'जज़्बी' साहब 'फ़ानी' जैसे माहिरेफ़नसे इस्लाह लेते रहे। अतः उनके प्रारम्भके कलाममें 'फ़ानी' की कला स्पष्ट झलकती है। आगे जाकर उस्तादकी व्यक्तिगत वेदना 'जज़्बी' के यहाँ इन्सानी वेदनामें बदल जाती है; यानी 'जज़्बी' फिर अपने कष्टोंकी ओर तो ध्यान नहीं देते, मगर मनुष्योंके दुखोंकी ओर उनका ध्यान बरबस खिंच जाता है। ईदके चाँदको देखकर सुबक उठते हैं :—

तेरी ज़ौपाशी है कब हम ग़मके मारोंके लिये।
आह ! तू निकला है इन सरमायेदारोंके लिये॥

'ऐ काश' शीर्षक नज़्म में फ़र्माते हैं :—

काश कहती न ये मज़दूरकी गुलरंग नज़र।
हसरते ख़्वाब अभी दीदये बेख़्वाबमें है॥

काश मुफ़लिसके तबस्सुमसे न चलता यह पता।
कितने फ़ाक़ोंकी सकत ग़ैरते बेताबमें है॥

काश तोपोंकी गरजमें न सुनाई देता।
जज़्बये ग़ैरते मज़लूम अभी ख़्वाबमें है॥

और यह शोर गरजते हुए तूफ़ानोंका।
एक सैलाब सिसकते हुए इन्सानोंका॥

देशकी भुखमरीके होते हुए 'जज़्बी' का मन प्राकृतिक दृश्यमें नहीं उलझता है। वे खीझकर कहते हैं :—

फ़ितरतके पुजारी कुछ तो बता, क्या हुस्न है इन गुलज़ारोंमें ?
है कौन-सी रानाई आख़िर इन फूलोंमें इन ख़ारोंमें ??

× × ×

कोयलके रसीले गीत सुने, लेकिन यह कभी सोचा तूने ?
है उलझे हुए नामे कितने इक साज़के टूटे तारोंमें ??
बादलकी गरज, बिजलीकी चमक, बारिश वोह तेज़ी तीरोंकी।
मैं ठिठुरा, सिमटा सड़कोंपर, तू जाम-बलब मयख़्वारोंमें॥

× × ×

जब जेबमें पैसे बजते हैं, जब पेटमें रोटी होती है।
उस वक़्त यह ज़र्रा हीरा है उस वक़्त यह शबनम मोती है॥

'जज़्बी' अधिकतर ग़ज़ल लिखते हैं। उनकी नज़्मोंमें भी ग़ज़लकी-सी मिठास मिलती है। उनके कलामका संग्रह 'फ़िरोज़ाँ' प्रकाशित हो चुका है। उसमेंसे कुछ बानगी देखिये —

ग़मकी तस्वीर बन गया हूँ मैं।
ख़ातिरेदर्द आश्ना हूँ मैं॥

हुस्न हूँ मैं कि इश्क़की तस्वीर ?
बेख़ुदी ! तुझसे पूछता हूँ मैं॥

दिलको होना था जुस्तजूमें ख़राब।
पास ही वर्ना मंज़िले मक़सूद॥

दिले नाकाम थकके बैठ गया।
जब नज़र आई मंज़िले मक़सूद॥

तेरे जल्वोंकी हद मिली तो कब।
हो गई जब नज़र भी लामहद्दूद ॥

सम्हलने दे ज़रा बेताबिये दिल।
नज़र आते हैं कुछ आसारे मंज़िल ॥
मज़े नाकामियोंके उससे पूछो।
जिसे कहते हैं सब गुमकरदह मंज़िल ॥
गिरा पड़ता हूँ क्यों हर-हर क़दमपर ?
इलाही ! आ गई क्या पास मंज़िल ??

दास्ताने शबेग़म क़िस्सये तूलानी है।
मुख़्तसिर ये है कि तूने मुझे बरबाद किया ॥
हो न हो दिलको तेरे हुस्नसे कुछ निस्बत है।
जब उठा दर्द तो क्यों मैंने तुझे याद किया ?
सकूँ नहीं न सही, दर्देइन्तज़ार तो है।
हज़ार शुक्र कोई दिलका ग़मगुसार तो है ॥
तुम्हारे जल्वोंकी रंगीनियोंका क्या कहना !
हमारे उजड़े हुए दिलमें इक बहार तो है ॥

फ़िज़ूल राज़ मुहब्बतका सब छुपाते हैं।
बुझाये जो न बुझे आग वोह बुझाते हैं ॥
सम्हल ओ जज़्बये ख़ुद्दारिये दिले महज़ूँ।
किसीके सामने फिर अश्क आये जाते हैं ॥
शकिस्ता दिल ही के नग़मे तो हैं वोह ऐ 'जज़्बी' !
जिन्हें वोह सुनते हैं और झूम-झूम जाते हैं ॥

रूठनेवालोंसे इतना कोई जाकर पूछे।
ख़ुद ही रूठे रहे या हमसे मनाया न गया॥

फूल चुनना भी अबस, सैरे बहारां भी फ़िज़ूल।
दिलका दामन ही जो कांटोंसे बचाया न गया॥

यह कैसा शिक्वा तग़ाफ़ुलका हुस्नसे 'जज़्बी'!
तुम्हें तो भूलनेवालोंको भूल जाना था॥

जहांतक आख़िरी नज़रें तेरी मुश्किलसे पहुँची है।
वही मंज़िलकी हद है ख़्वाबेमंज़िल देखनेवाले॥

मेरी दिक़्क़तपसन्दी देख, मेरा मुस्कराना देख।
निगाहेयाससे ओ मेरी मुश्किल देखनेवाले॥

शिकवा क्या करता कि उस महफ़िलमें कुछ ऐसे भी थे।
उम्र भर जो अपने ज़ख़्मोंपर नमक छिड़का किये॥

सवाले शौक़पे कुछ उनको इज्तनाब-सा है।
जवाब यह तो नहीं है मगर जवाब-सा है॥

मुस्कराकर डाल दी रुखपर नक़ाब।
मिल गया जो कुछ कि मिलना था जवाब॥

मेरी ख़ाकेदिल भी आख़िर उनके काम आ ही गई।
कुछ नहीं तो उनको दामन ही बचाना आ गया॥

ऐशसे क्यों ख़ुश हुए क्यों ग़मसे घबराया किये?
ज़िन्दगी क्या जाने क्या थी, और क्या समझा किये।

नाख़ुदा बेख़ुद, फ़िज़ा ख़ामोश, साकित मौजेआब।
और हम साहिलसे थोड़ी दूरपर डूबा किये॥

मुख़्तसिर ये है हमारी दास्ताने जिन्दगी।
इक सकूने दिलकी ख़ातिर उम्र भर तड़पा किये ॥

काट दी यूं हमने 'जज़्बी' राहे मंजिल काट दी।
गिर पड़े हर नामपर, हर गामपर सम्हला किये ॥

ऐ हुस्न ! हमको हिज्रकी रातोंका ख़ौफ़ क्या ?
तेरा ख़याल जागेगा सोया करेंगे हम ॥

यह दिलसे कहके आहोंके झोंके निकल गये।
उनको थपक-थपकके सुलाया करेंगे हम ॥

मरनेकी दुआएँ क्यों माँगूं, जीनेकी तमन्ना कौन करे ?
यह दुनिया हो या वोह दुनिया, अब ख़्वाहिशेदुनिया कौन करे ?
जब किश्ती साबुत-ओ-सालिम थी, साहिलकी तमन्ना किसको थी।
अब ऐसी शकिस्ता किश्तीपर साहिलकी तमन्ना कौन करे ?
जो आग लगाई थी तुमने, उसको तो बुझाया अश्कोंने।
जो अश्कोंने भड़काई है, उस आगको ठंडा कौन करे ?
दुनियाने हमें छोड़ा 'जज़्बी' हम छोड़ न दें क्यों दुनियाको ?
दुनियाको समझकर बैठे हैं, अब दुनिया-दुनिया कौन करे ?

न आये मौत ख़ुदाया तबाहहालीमें।
यह नाम होगा ग़मे रोज़गार सह न सका ॥

यह सोचकर मेरी पलकोंपै रुक गया आँसू।
कि रायगाँ तेरी महफ़िलमें क्यों गुहर जाये ॥

तेरी झूठी ख़फ़गीका था इल्म मुझको।
मगर तुझको सचमुच मनाया है मैंने ॥

यही जिन्दगी मुसीबत, यही जिन्दगी मसर्रत।
यही जिन्दगी हकीकत, यही जिन्दगी फ़िसाना॥

जिसको कहते हैं मुहब्बत, जिसको कहते हैं खलूस।
झोंपड़ोंमें हो तो हो पुख्ता मकानोंमें नहीं॥
अब कहाँ मैं ढूँढ़ने जाऊँ सकूँको ऐ खुदा!
इन जमीनोंमें नहीं, इन आसमानोंमें नहीं॥
वोह ग़ुलामोंका लहू जो था रगे असलाफ़में।
शुक्र है 'जज़्बी' कि अब हम नौजवानोंमें नहीं॥

तेरी खामोश वफ़ाओंका सिला क्या होगा?
मेरे नाकरदह गुनाहोंकी सजा क्या होगी??

हम दहरके इस वीरानेमें जो कुछ भी नज़ारा करते हैं।
अश्कोंकी जबाँमें कहते हैं, आहोंमें इशारा करते हैं॥
ऐ मौजेबला! उनको भी ज़रा दो-चार थपेड़े हल्के-से।
कुछ लोग अभी तक साहिलसे तूफ़ाँका नज़ारा करते हैं॥
क्या जानिये कब यह पाप कटे, क्या जानिये वह दिन कब आए।
जिस दिनके लिए हम ऐ 'जज़्बी' क्या कुछ न गवारा करते हैं॥

ऐ जोशेवफ़ा! उन कदमोंको इज्ज़त तो बड़ा दी सर रखकर।
अब हम कैसे इस ज़िल्लतके अहसाससे छुटकारा पाएँ?

४ सितम्बर १६४६

२५

साहिर लुधियानवी

साहिरकी शायरी आजकी शायरी है। प्रगतिशील शायरोंमें साहिर अपना एक विशेष स्थान रखते हैं। वे कल्पनाके घोड़े न दौड़ाकर अपने कड़ुवे-मीठे अनुभवोंको मधुर और दर्द भरे ढंगसे पेश करते हैं :—

दुनियाने तजरुबातोहवादसकी शक्लमें।
जो कुछ मुझे दिया है, वह लौटा रहा हूँ मैं॥

साहिरके भी पहलूमें दिल है, वह भी जवानीकी चौखटपर पाँव रखते हुए अपनी प्रेयसीको प्रतीक्षामें खड़ी देखनेका अभिलाषी है, किन्तु उसका प्रेम सामाजिक असमानताओंकी विषम दीवारोंसे टकराकर चूर हो जाता है और सहसा कराह उठता है :—

मायूसियोंने छीन लिये दिलके वलवले।
× × ×
मेरे बेचैन ख़यालोंको सकूँ मिल न सका।

साहिरको केवल प्रेम-मार्गमें ही नहीं जीवन-यात्रामें भी अनेक असफलताओं और असुविधाओंका मुँह देखना पड़ता है। तब वह ऐसे निकृष्ट जीवनसे मृत्युको श्रेष्ठ समझता है :—

जो सच कहूँ तो मुझे मौत नागवार नहीं।
× × ×
यह ग़म बहुत है मेरी ज़िन्दगी मिटानेको।

किन्तु सहसा उसे प्रकाश मिलता है। प्रेम और जीवन-सम्बन्धी

भावनाएँ हों जीवनका ध्येय नेक, उनका कर्तव्य कुछ और भी है। आत्माओं और अन्तरात्माओंकी आग रात दिन सुलगनेसे क्या लाभ? उनको तो हिम्मतके साथ इन सबका सामना करना चाहिए। प्रेयसी मिलनसे पूर्व जहाँ वह पहले जीवन संग्रामके लिए रहनेको बाध्य शायर करता था —

अभी न छेड़ मुहब्बतके गीत ए मुतरिब !
अभी हयातका माहौल खुशगवार नहीं ॥

× × ×

मेरी महबूब ! यह हंगामए तजदीदे वफ़ा।
मेरी अफ़्सुर्दा जवानीके लिए रास नहीं ॥

× × ×

प्रेयसी मिलन हो जाने पर कहता है —

सोचता हूँ कि मुहब्बत है जुनूनरुसवा।
चन्द बेकारसे बेहूदा ख़यालोंका हुजूम ॥

× × ×

साहिर प्रेम-मार्गकी असफलताओं और जीवन सम्बन्धी विघ्न बाधाओंके प्रति विद्रोही हो उठता है। सामाजिक रीति रिवाजों धार्मिक धारणाओं और आर्थिक अमलोंके प्रति घृणासे भर उठता है। ऊँच नीच अमीर-ग़रीबका भेद भी उसे असह्य हो उठता है। यहाँ तक कि वह ताजमहलमें अपनी प्रेयसीसे मिलनेमें भी संकोच करता है क्योंकि वह बादशाहका बनवाया हुआ है और साहिरका विश्वास है कि शाहजहाँने यह प्रेम-स्मारक बनवाकर ग़रीबोंकी मुहब्बतका मज़ाक उड़ाया है। इसीलिए वह कहता है —

मेरी महबूब कहीं और मिलाकर मुझसे।

ताजमहल

ताज तेरे लिए एक मजहरेउल्फ़त[1] ही सही।
तुझको इस वादियेरंगींसे[2] अक़ीदत[3] ही सही॥
मेरी महबूब[4] कहीं और मिलाकर मुझसे।

बज़्मेशाहीमें[5] ग़रीबोंका गुज़र क्या मानी?
सब्त[6] जिस राहपै हों सतवतेशाहीके[7] निशाँ।
उसपै उलफ़त भरी रूहोंका सफ़र क्या मानी?

मेरी महबूब पसेपरदए[8] तशहीरेवफ़ा[9],
तूने सतवतके[10] निशानोंको तो देखा होता?
मुर्दाशाहोंके मक़ाबिरसे[11] बहलनेवाली,
अपने तारीक[12] मकानोंको तो देखा होता?

अनगिनत लोगोंने दुनियामें मुहब्बत की है।
कौन कहता है कि सादिक़[13] न थे जज़्बे[14] उनके?
लेकिन उनके लिए तशहीरका सामान नहीं,
क्योंकि वे लोग भी अपनी ही तरह मुफ़लिस थे॥

यह इमारत, यह मक़ाबिर, यह फ़सीलें,[15] ये हिसार[16],
मुतलक़ुलहुक्म[17] शहन्शाहोंकी अज़मतके सतूँ[18]।

---

[1]प्रेमका द्योतक; [2]रमणीय स्थानसे; [3]श्रद्धा; [4]प्रेयसी; [5]बादशाही दरबारमें; [6]अंकित; [7]बादशाही वैभवके; [8]परदेके पीछे; [9]वफ़ाका विज्ञापन; [10]वैभवके; [11]मक़बरोंसे; [12]अँधेरे; [13]सच्चे; [14]भाव; [15]परिकोटे; [16]क़िला; [17]हुक्म देनेमें स्वतंत्र, मनमानी करनेवाले; [18]वैभवके स्तम्भ।

सीनयेदहरके[1] नासूर हैं, कुहना[2] नासूर,
जज़्ब[3] हैं उनमें तेरे और मेरे अजदादका[4] ख़ूँ ॥

मेरी महबूब इन्हें भी तो मुहब्बत होगी ?
जिनकी सन्नाईने[5] बख़्शी है उसे शक्लेजमील[6]

उनके प्यारोंके मक़ाबिर रहे बेनामोनमूद[7],
आज तक उनपे जलाई न किसीने कन्दील।

यह चमनज़ार,[8] यह जमनाका किनारा, यह महल,
यह मुनक़्क़श[9] दरोदीवार, यह महराब, यह ताक़,
एक शहन्शाहने दौलतका सहारा लेकर,
हम ग़रीबोंकी मुहब्बतका उड़ाया है मज़ाक़।
मेरी महबूब कहीं और मिलाकर मुझसे ॥

कभी-कभी

कभी-कभी मेरे दिलमें ख़याल आता है :

कि ज़िन्दगी तेरी ज़ुल्फ़ोंकी नर्म छाँवमें,
गुज़रने पाती तो शादाब[10] हो भी सकती थी।

यह तीरगी जो मेरे ज़ीस्तका[11] मुक़द्दर[12] है,
तेरी नज़रकी शुआओंमें खो भी सकती थी।

अजब न था कि मैं बेगानएग़म[13] रहकर,
तेरे जमालकी[14] रानाइयोंमें[15] खो रहता।

---

[1]संसारके वक्षस्थलके   [2]पुराने   [3]रमे हुए समाये हुए,
[4]पूर्वजोंका   [5]कारीगरान   [6]सुन्दर रूप   [7]बेनामोनिशाँ,
[8]उद्यान   [9]नक्शोनिगारा की हुई   [10]प्रफुल्ल   [11]जीवनका,
[12]भाग्य   [13]ग़मोंसे बेख़बर   [14]सौन्दर्यकी   [15]रंगीनियों।

तेरा गुदाज[1] बदन तेरी नीमवाज[2] आँखें,
इन्हीं हसीन फ़िसानोंमें महव[3] हो रहता।

पुकारतीं मुझे जब तल्ख़ियाँ[4] जमानेकी
तेरे लबोंसे हलावतके[5] घूंट पी लेता।
हयात[6] चीख़ती फिरती बिरहनासर[7] और मैं,
घनेरी जुल्फ़ोंके साएमें छुपके जी लेता।

मगर यह हो न सका और अब ये आलम है,
कि तू नहीं, तेरा ग़म, तेरी जुस्तजू[8] भी नहीं।
गुजर रही है कुछ इस तरह जिन्दगी जैसे,
उसे किसीके सहारेकी आरजू भी नहीं।

जमाने भरके दुखोंको लगा चुका हूँ गले,
गुजर रहा हूँ कुछ अनजानी रहगुजारोंसे[9]।
महीब[10] साए मेरी सिम्त बढ़ते आते हैं
हयातोमौतके पुरहौल[11] ख़ारजारोंसे[12]।

न कोई जादह,[13] न मंजिल, न रोशनीका सुराग़,
भटक रही है ख़लाओंमें[14] जिन्दगी मेरी।
इन्हीं ख़लाओंमें रह जाऊँगा कभी खोकर,
मैं जानता हूँ मेरी हमनफ़स! मगर यूँही
कभी-कभी मेरे दिलमें ख़याल आता है।

---

[1]गुदगुदा; [2]अधखुली; [3]तन्मय; [4]कड़वाहट; [5]मधुरताके; [6]जिन्दगी; [7]नंगे सिर; [8]पानेकी इच्छा; [9]अनजाने मार्गोंसे; [10]डरावने; [11]हृदय दहलानेवाले; [12]कंटकाकीर्ण मार्गोंसे; [13]सामान; [14]शून्यमें, बियाबानमें।

फ़रार

(१)

अपने माज़ीके[1] तसव्वुरसे[2] हिरासाँ हूँ मैं,
अपने गुज़रे हुए ऐय्यामसे नफ़रत है मुझे।
अपनी बेकार तमन्नाओंपे शर्मिन्दा हूँ,
अपनी बेसूद उमीदोंपे नदामत है मुझे।

(२)

मेरे माज़ीको अंधेरेमें दबा रहने दो,
मेरा माज़ी मेरी ज़िल्लतके सिवा कुछ भी नहीं।
मेरी उम्मीदोंका हासिल, मेरी काविशका[3] सिला,
एक बेनाम अज़ीयतके सिवा कुछ भी नहीं।

(३)

कितनी बेकार उम्मीदोंका सहारा लेकर,
मैंने ऐवान[4] सजाए थे किसीकी ख़ातिर।
कितनी बेरब्त तमन्नाओंके मुबहम[5] ख़ाके,
अपने ख़्वाबोंमें बसाये थे किसीकी ख़ातिर।

(४)

मुझसे अब मेरी मुहब्बतके फ़साने न कहो,
मुझको कहने दो कि मैंने उन्हें चाहा ही नहीं।
और वे मस्त निगाहें जो मुझे भूल गईं,
मैंने उन मस्त निगाहोंको सराहा ही नहीं।

---

[1]भूतकालीन, [2]कल्पनासे, [3]तलाशका, [4]महल, [5]अस्पष्ट।

(५)

मुझको कहने दो कि मैं आज भी जी सकता हूँ,
इश्क़ नाकाम सही, जिन्दगी नाकाम नहीं।
उन्हें अपनानेकी ख्वाहिश, उन्हें पानेकी तलब,
शौक़े वेकार सही, सईएग़मअंजाम[1] नहीं।

(६)

वही गेसू, वही नजरें, वही आरिज, वही जिस्म,
मैं जो चाहूँ तो मुझे और भी मिल सकते हैं।
वे कँवल जिनको कभी उनके लिए खिलना था,
उनकी नजरोंसे वहुत दूर भी खिल सकते हैं॥

हिरास

तेरे होंटोंपै तबस्सुमकी[2] वोह हलकी-सी लकीर
मेरी तख़यीलमें[3] रह-रहके झलक उठती है।
यूँ अचानक तेरे आरिजका[4] ख़याल आता है,
जैसे जुल्मतमें[5] कोई शमअ़ भड़क उठती है॥

तेरे पैराहनेरंगींकी[6] जुनूँखेज़[7] महक
ख्वाब बन-बनके मेरे जहनमें लहराती है।
रातकी सर्द ख़मोशीमें हर इक झोंकेसे
तेरे अनफ़ास[8] तेरे जिस्मकी आँच आती है।

---

[1]दुखांत चेष्टा; [2]मुस्कराहटकी; [3]कल्पनामें; [4]कपोलका; [5]अँधेरेमें; [6]रंगीन लिबासकी; [7]उन्माद भरी; [8]श्वासों।

मैं सुलगते हुए राज़ोंको[1] अयाँ[2] तो कर दूँ,
लेकिन इन राज़ोंकी तशहीरसे[3] जी डरता है।
रातके ख्वाब उजालेमें बयाँ तो कर दूँ,
इन हसीं ख्वाबोंकी ताबीरसे[4] जी डरता है॥

तेरी साँसोंकी थकन तेरी निगाहोंका सकूत[5],
दरहक़ीक़त कोई रंगीन शरारत ही न हो।
मैं जिसे प्यारका अन्दाज़ समझ बैठा हूँ,
वो तबस्सुम वोह तकल्लुम[6] तेरी आदत ही न हो॥

सोचता हूँ कि तुझे मिलके मैं जिस सोचमें हूँ
पहले उस सोचका मक्सूम[7] समझ लूँ तो कहूँ।
मैं तेरे शहरमें अनजान हूँ परदेशी हूँ
तेरे इल्ताफ़को[8] मफ़हूम[9] समझ लूँ तो कहूँ।

कहीं ऐसा न हो पाँव मेरे थर्रा जाएँ,
और तेरी मरमरी[10] बाहोंका सहारा न मिले।
अश्क बहते रहें खामोश सियह रातोंमें
और तेरे रेशमी आँचलका किनारा न मिले॥

शिकस्त

अपने सीनेसे लगाए हुए उम्मीदकी लाश।
मुद्दतो जीस्तको[11] नाशाद[12] किया है मैंने॥

---

[1]भेदोंको [2]प्रकट, [3]विज्ञापनसे, ढोंडी पीटनेसे, [4]परिणामसे, [5]खामोशी, [6]बातचीत करना, [7]भाग्य, परिणाम, [8]कृपाओंका, [9]तात्पर्य, [10]धवल-गोरी; [11]जिन्दगीको, [12]अप्रसन्न ।

तूने तो एक ही सदमेसे किया था दो-चार।
दिलको हर तरहसे बरबाद किया है मैंने।

जब भी राहोंमें नज़र आए हरीरी[1] मलबूस[2]।
सर्द आहोंमें तुझे याद किया है मैंने॥

और अब जब कि मेरी रूहकी पहनाईमें[3]।
एक सुनसान-सी मग़मूम घटा छाई है।

तू दमकते हुए आरिज़की[4] शुआएँ[5] लेकर।
गुलशुदाशमअ्[6] जलानेको चली आई है।

मेरी महबूब! यह हंगामयेतजदीदे[7] वफ़ा।
मेरी अफ़सुर्दा[8] जवानीके लिए रास नहीं॥

मैंने जो फूल चुने थे तेरे क़दमोंके लिए।
उनका धुँधला-सा तसव्वुर भी मेरे पास नहीं॥

एक यख़बस्ता[9] उदासी है दिलोजाँपै मुहीत[10]।
अब मेरी रूहमें बाक़ी है न उम्मीद न जोश॥

रह गया दबके गिराँबार[11] सलासिल[12]के तले।
मेरी दरमान्दह[13]जवानीकी उमंगोंका ख़रोश[14]॥

रहगुज़ारोंमें बगोलोंके सिवा कुछ भी नहीं।
सायए अब्रे गुरेज़ाँसे मुझे क्या लेना?

बुझ चुके हैं मेरे सीनेमें मुहब्बतके कँवल।
अब तेरे हुस्ने पशेमाँसे मुझे क्या लेना?

---

[1]रंगबिरंगे; [2]लिबास; [3]हृदयकी विशालतामें; [4]कपोलोंकी; [5]किरणें; [6]बुझा दीपक; [7]फिर नये ढंगसे प्रेम करना; [8]कुम्हलाई हुई; [9]जमी हुई; [10]घिरी हुई; [11]बोझीली; [12]श्रृंखलाके; [13]साधनहीन, थकी हुई; [14]उत्साह, उमंग।

तेरे आरिज़ों पे ढलके हुए सीमीं आँसू।
मेरी अफ़सुर्दगीके [illegible] गवारा तो नहीं ?
तेरी मरऊब निगाहोंका पयामेनजवीद।
इक तमाशा ही सही, मेरी तमन्ना तो नहीं॥

एक तसवीरे रंग

मैंने जिस वक़्त तुझे पहले पहल देखा था।
तू जवानीका कोई ख़्वाब नज़र आई थी॥
हुस्नका नामयेजावेद[1] हुई थी मालूम।
इश्क़का जज़्बए बेनाम नज़र आई थी॥
ऐ तरबज़ारेजवानीकी[2] परेशाँ तितली।
तू भी एक बूए गिरफ़्तार है मालूम न था॥
तेरे जल्वोंमें बहारें नज़र आई थीं मुझे।
तू सितमख़ुर्दए इदबार[3] है मालूम न था॥
तेरे नाज़ुकसे परोंपर यह ज़रोसीमका[4] बोझ।
तेरी परवाज़को आज़ाद न होने देगा॥
तूने राहतकी तमन्नामें जो ग़म पाला है।
वोह तेरी रूहको आबाद न होने देगा॥
तूने सरमायेकी छाओंमें पनपनेके लिए।
अपने दिल अपनी मुहब्बतका लहू बेचा है॥
दिनकी तज़ईने फ़िसुर्दाका असासा लेकर।
रातकी शोख़ मसर्रतका लहू बेचा है॥

---

[1]अनन्त संगीत, [2]जवानीके लहलहाते उद्यानकी, [3]दुर्भाग्यसे पीड़ित, [4]सोनचाँदीका।

इससे क्या फ़ायदा रंगीन लबादोंके तले।
रूह जलती रहे गलती रहे पज़मुर्दा[1] रहे॥
होंट हँसते हों दिखावेके तबस्सुमके लिए।
दिल ग़मेज़ीस्तसे[2] बोझल रहे आज़ुर्दा[3] रहे॥

दिलकी तस्कीं[4] भी है आसाइशेहस्तीकी[5] दलील।
ज़िन्दगी सिर्फ़ ज़रोसीमका पैमाना नहीं॥
ज़ीस्त[6] एहसास[7] भी है शौक़ भी है, दर्द भी है।
सिर्फ़ अनफ़ासकी[8] तरतीबका अफ़साना नहीं॥

उम्र भर रेंगते रहने से कहीं बहतर है।
एक लम्हा जो तेरी रूहमें वुसअ़त भर दे॥
एक लम्हा जो तेरे गीतको शोख़ी दे दे।
एक लम्हा जो तेरी लौमें मसर्रत भर दे॥

अभी न छेड़ मुहब्बतका राग ऐ मुतरिब[9]!
अभी हयातका[10] माहौल[11] साज़गार नहीं॥

मादाम

आप बेवजह परीशान-सी क्यों हैं मादाम[12]!
लोग कहते हैं तो फिर ठीक ही कहते होंगे॥
मेरे अहबाबने[13] तहज़ीब न सीखी होगी।
मेरे माहोलमें[14] इन्सान न रहते होंगे॥

---

[1]मुर्झायी हुई; [2]ज़िन्दगीके, ग़मसे; [3]चिन्तित; [4]शान्ति; [5]जीवन-सुखकी; [6]ज़िन्दगी; [7]अनुभव करना; [8]सांसोंकी; [9]मधुर गानेवाली प्रेयसी; [10]जीवनका; [11]वातावरण; [12]मैडमका उर्दू रूपान्तर; [13]इष्ट-मित्रोंने; [14]वातावरणमें।

नूरेसरमायेसे[1] है रूएतमद्दुनकी[2] जिला[3]।
हम जहाँ है वहाँ तहजीब नहीं पल सकती॥
मुफ़लिसी हिस्सेलताफ़्तको[4] मिटा देती है।
भूख आदाबके साँचोमें नहीं ढल सकती॥
लोग कहते है तो लोगोपै ताज्जुब कैसा?
सच तो कहते है कि नादारोंकी इज्जत कैसी?
लोग कहते हे मगर आप अभी तक चुप है।
आप भी कहिए, ग़रीबोंमें शराफ़त कैसी?
नेक मादाम! बहुत जल्द वोह वक्त आयेगा।
जब हमें जीस्तके[5] अदवार परखने होगे।
अपनी जिल्लतकी कसम आपकी अज़मतकी क़सम।
हमको ताज़ीमके मेयार परखने होगे।
हमने हर दौरमें तज़लील[6] सही है लेकिन।
हमने हर दौरके चेहरेको ज़िया बख़्शी है॥
हमने हर दौरमें मेहनतके सितम झेले है।
हमने हर दौरके हाथोको हिना बख़्शी है॥
लेकिन इन तल्ख़ मबाहससे भला क्या हासिल?
लोग कहते हैं तो फिर ठीक ही कहते होगे॥
मेरे अहबाबने तहज़ीब न सीखी होगी।
मै जहाँ हूँ वहाँ इन्सान न रहते होगे॥

२८ अप्रैल १६४८

---

[1]धनके प्रकाशमे, [2]सभ्यताके चेहरकी, [3]चमक, [4]कोमलताकी गतिका, [5]जिन्दगीके, [6]अपमान।

मधुर प्रवाह

: १० :

[अतीत युगकी ग़ज़लके वर्त्तमान समर्थ .

पिछले पृष्ठोंमें प्राचीन शायरी (ग़ज़लगोई) और नवीन शायरी (नज़मगोई) का प्रसंगानुसार उल्लेख हुआ है। उर्दू-शायरीका उद्‌गम ग़ज़लगोईसे हुआ। किसी भी देश और जातिके उत्थान और पतनका दिग्दर्शन उसके साहित्यसे किया जा सकता है। ग़ज़लका अर्थ ही हुस्नो-इश्क़का वर्णन, स्त्रियोंका उल्लेख है। ग़ज़लका जन्म भी नवाबों और बादशाहोंके दरबारोंमें हुआ। इसलिए ग़ज़लमें विलासिता, मादकता, दरबारी रीति-रिवाज वग़ैरहका वर्णन पाया जाता है। १८५७ के बाद ज़मानेने करवट ली और यह पुराना रंग लोगोंको नहीं जँचा। यह नहीं कि ये नये ज़मानेके शायर उन पुराने शायरोंके आलोचक थे; अपितु 'आज़ाद' ज़ौक़के, 'हाली' ग़ालिबके, और 'इक़बाल' दाग़के शिष्य थे। उनकी शायराना विद्वताकी इनपर गहरी छाप थी। आज़ादने 'आबेहयात', हालीने 'यादगारे ग़ालिब', और इक़बालने 'दाग़का नौहा' लिखकर अपनी श्रद्धाका परिचय दिया है। इन नये ज़मानेके शायरोंको उनकी विद्वता और शायरीके जादूने ही उनके खिलाफ़ नज़्म-आन्दोलन करनेका अवसर दिया; क्योंकि ये जानते थे कि इन उस्तादोंका कलाम हमारे समाजको मदहोश बना डालेगा और वह हमें इस योग्य न रक्खेगा कि हम आनेवाली मुसीबतोंका मुक़ाबिला कर सकें। मनुष्यका यह स्वभाव है कि वह प्रेम, शृंगार, काम-सम्बन्धी कविताओंकी ओर आकर्षित होता है। वह सबसे अधिक ऐसी ही गोपनीय कृतियोंको पढ़ना चाहता है। यहाँ तक कि बड़े-बड़े ऋषि और आचार्य भी जब अपने हृदयमें दुबकी हुई आगको अधिक नहीं दबा सकते हैं तो वह काव्य और उपदेशके रूपमें प्रस्फुटित हो जाती है। स्त्रियोंका नख-सिख-वर्णन, कामका नग्न-रूप, रतिका वीभत्स वर्णन उपदेशके बहाने करते हैं। यह मनुष्यका स्वभाव है। इश्क़िया शायरी कभी मर नहीं सकती, लेकिन

उनक सामन तो प्रश्न यह था कि दुश्मन जब दरवाजपर मारू बाजा बजाता हुआ आ धमका हो तब भी हुस्नोइश्ककी दास्ताँ कहत रहना क्या मुनासिब होगा ? मादक सगीत प्रम विभार कविताएँ दार्शनिक तत्व चर्चाएँ य सब सुखी और निराकुल समारक लिए गोभनीय ह न कि परतन्त्रता और आपदाग्रास जकड हुए मनुष्योक लिय। वक्त वक्तकी रागनी और वक्त वक्तक गीत ही सुहावन लगत ह। जैसा कि सलाम मछलीशहरी फर्मात ह —

मुझ नफरत नहीं ह इश्क़िया अशआरसे लकिन।
अभी उनको गुलामाबादमें म गा नहीं सकता॥

मुझ नफरत नही ह हुस्नजन्नत जारसे लकिन।
अभी दोजख़में इस जन्नतसे दिल बहला नही सकता॥

मुझ नफरत नहीं पाजबकी झनकारमे लकिन।
अभी ताब निशाते रक्सेमहफिल ला नहा सक्ता॥

अभी हिन्दोस्ताको आतशीं नग्मे सुनाने दो।
अभी चिनगारियोसे इक गुलरगीं बनान दो॥

श्रीमती गायत्री दवी इसी तरहक भावोको यू व्यक्त करती ह —

यह हुस्नोइश्ककी रगीनियाँ नहीं दरकार।
शबफिराक़की बेचनियाँ नहीं दरकार॥

शराब इश्ककी मस्तीका अहतियाज नहीं।
विसोका कुब मेर शौक़का इलाज नहीं॥

सताफतें मेर हकमें अभी ह दारोरसन।
मुझ पुकार रहा ह मेरा अज़ीज वतन॥

अभी तो सोयी हुई क़ौमको जगाना है।
वतनको जन्नते अरज़ी अभी बनाना है॥

इसलिये हिन्दुस्तानकी उस वक़्तकी आवश्यकताको देखकर पुरानी शायरीके विरोधमें उन्होंने एक आन्दोलन उठाया। इतिहास हमें बताता है कि कोई आन्दोलन कितना ही प्रबल क्यों न हो, उसके विपक्षी अंकुर कभी नष्ट नहीं होते। कांग्रेसका आन्दोलन जब प्रबल होता है तब भी हिन्दू-मुस्लिम-साम्प्रदायिक मनोवृत्तियाँ छिपी-छिपी पनपती रहती हैं। गांधीका अहिंसावाद देखने-सुननेको सारे भारतपर कोहरेकी तरह छाया रहता है, मगर यदा-कदा उन्हींके साथियोंमें हिंसात्मक आन्दोलनके रूपमें भी फूटता रहता है। इसी तरह ग़ज़लोंके खिलाफ़ काफ़ी आन्दोलन होनेपर भी पुरानी शायरीके दिलदादा बने ही रहे और आजतक वही मुशायरोंकी धूम, वही ग़ज़लोंका रंग मौजूद है। यहाँ तक कि जो मशहूर नज़मगो शायर हैं, उनका श्रीगणेश ग़ज़लगोईसे ही हुआ, और अब भी मुशायरोंके लिये ग़ज़लें लिखते रहते हैं। ग़ज़लोंके लिये सबसे बड़ा एतराज़ ये है, कि ग़ज़लगो अपनी धुनमें मस्त रहते हैं। इनक़लाबकी आँधियाँ इनके ऊपरसे गुज़र जायँ, इनको मालूम नहीं होतीं। घरके बाहर क़त्लेआम होता रहे, ये ज़ुल्फ़ेपेंचोंमें फँसे नज़र आते हैं। मगर ईमानकी बात यह है कि सामयिक साहित्य तो ज़मानेकी रुचिके अनुसार बनता है और नष्ट हो जाता है। अमर साहित्य वही है जो सामयिक न हो। ज़मानेके मुताबिक़ उसमें ख़ूबियाँ पैदा होती जाएँ। नज़्म लिखनेवाले बातको बढ़ाकर और स्पष्ट रूपमें कहते हैं। ग़ज़लगो शायर एक शेरमें ही सब कुछ कह जाते हैं। मगर सीधा और साफ़ नहीं। चोट तो वह भी करते हैं, मगर दुशालेमें लपेट कर।

अलाउद्दीन चित्तौड़ पर हमला करता है। राजपूत सब युद्धमें जूझ मरते हैं। राजपूतानियाँ पद्मिनीके साथ चितामें भस्म हो जाती हैं।

फ़िराक गोरखपुरी जैसे बाकमाल उस्ताद इस रंगमें नई-नई गुलकारियाँ कर रहे हैं।[1]

हम इनमेंसे यहाँ केवल छःका परिचय दे रहे है। यद्यपि अपने-अपने रंगमें उक्त कवियोंको कमाल हासिल है, मगर निश्चित संख्याकी क़ैदके कारण हम मजबूर हैं। अगर पाठकोंको हमारा यह परिश्रम रुचिकर हुआ तो और बाक़ी अदीबोंका परिचय और कलाम भी पाठकोंके सम्मुख किसी दूसरी पुस्तकमें देनेका प्रयास करेंगे।[2]

१३ अक्तूबर १९४६ ई०

---

[1]यद्यपि उक्त शायरोंमेंसे कई महानुभाव इस दुनियाएफ़ानीसे नजात पा चुके हैं, फिर भी ये सब इसी बीसवीं सदीमें हुए हैं और वर्त्तमान युगके शायर कहलाते हैं, इसी लिये हमने उनका उल्लेख वर्त्तमान-युगमें किया है।

[2]'शेर-ओ-सुख़न' भाग द्वितीयमें इनका परिचय मिलेगा। जो शीघ्र प्रकाशित होगी।

२६

ज़ाकिर हुसेन 'साक़िब'

(जन्म आगरा २ जनवरी १८६९ ई०)

साक़िब शाइरी जबान 'मीर' की-सी और तख़ैयुल (विचार-कल्पना, उड़ान) ग़ालिब जैसा है। इसीलिये लोग आपको जानशीन मीर-ओ-ग़ालिब कहते हैं; मगर आप नम्रता पूर्वक अपनी लघुता प्रकट करते हुए लिखते हैं :—

जानशीनी मीरोग़ालिबकी कहाँ, और मैं कहाँ?
वोह ख़ुदाएफ़न थे, उनसे मुझको निस्बत कुछ नहीं॥

साक़िब साहबको किशोरावस्थामें ही शेरोशायरीकी और रुचि थी, किन्तु पिताजीके भयसे खुलते न थे। अपने सहपाठियोंमें ग़ज़लें कह-कहकर शायर बने हुए थे। दिसम्बर १८८४ ई० की एक घटनाने आपको यकायक सबके सामने ला दिया।

उन दिनों आप अपने पिताके साथ इलाहाबादमें रहते थे। उनके पास कई उच्चकोटिके शायर बैठे हुए थे। ग़ज़लोंसे महफ़िल गर्म थी कि आपने भी एक ग़ज़ल हिम्मत करके सुना दी। सुना तो लोगोंने समझा कि किसीसे लिखा ली होगी। परीक्षाके तौरपर उसी वक़्त मिसरा दिया गया —

"पर मारते हैं चर्ख़के सीनेपे फटाफट"

आपने लमहे भरमें गिरह लगाकर सुनाया :—

ऐसे हैं मेरे नालओफ़ुग़ाँके कबूतर।
पर मारते हैं चर्ख़के सीनेपे फटाफट॥

मिसरेपर इतनी सुन्दर गिरह लगते होते देख लोगोंका कौतूहल बढ़ा। आजमाइशके लिये निम्न मिसरे पर ग़ज़ल कहनेकी फिर फ़र्माइश की गई :—

न वह आस्माँकी हैं गर्दिशें न वह सुबह है न वह शाम है

आपने थोड़ी देरके परिश्रममें पूरी ग़ज़ल लिखकर दे दी, जिसके दो शेर नीचे दिये जा रहे हैं :—

कहूँ हसरतोंका हुजूम था, दरेदिल तक आके वोह बेवफ़ा।
मुझे यह सुनाके पलट गया, कि "यहाँ तो मजमये आम है" ॥
न वोह महरो-माहकी ताबिशें, न वोह अख़्तरोंकी नुमाइशें।
न वोह आस्माँकी हैं गर्दिशें न वोह सुबह है, न वोह शाम है ॥

ग़ज़ल सुनी तो लोग सकतेमें आ गये। सुकुमार साक़िबको लोग हैरत-से देखने लगे। शम्सउलउलेमा[1] मौलवी ज़काउल्लाह साहबने तो यहाँ तक कह दिया कि:—

"मियाँ साहबज़ादे अगर ज़िन्दा रहे तो अपने वक़्तके 'मीर' होंगे।[2]"

उत्साह बढ़ा, तो विकसित होनेके अवसर मिलने लगे। मुशायरों और पत्र-पत्रिकाओंमें इनके कलामकी धूम-सी मच गई। १६१८ में अली-गढ़ यूनीवर्सिटीकी सिलवर जुबलीपर मुशायरेका भी वृहद आयोजन किया गया था। भारतके ख्याति-प्राप्त शायर कोने-कोनेसे आये थे। साक़िब साहबकी ग़ज़लकी ख़ूब तारीफ़ हुई। सदरके अलावा एक साहब-ने वज्दकी हालतमें फ़र्माया—"हमारी दिली तमन्ना थी कि मिर्ज़ा ग़ालिब मरहूमको देख लेते। ख़ुदाका शुक्र है कि वह तमन्ना आज पूरी हो गई।"

साक़िब साहब १८८७ से १८६१ तक आगरा कालेजमें शिक्षा पाते रहे, स्थायी रूपसे लखनऊ रहते हैं।

---

[1]महामहोपाध्याय-जितनी कोटिकी सरकारी उपाधि।
[2]दीवानेसाक़िब, पृ० ३६।

जो सरपै बला आई, वोह ग़फ़लतसे ही आई।
बे सोये हुए ख़्वाबेपरीशाँ[1] नहीं देखा॥

कुछ न पूछो हाल अपना कुश्तयेतक़्दीर[2] हूं।
मौतने खींचा है जिसको हम वही तस्वीर हूं॥

मेरी दास्तानेग़मको वोह ग़लत समझ रहे हैं।
कुछ उन्हींकी बात बनती अगर एतबार होता॥

वही रात मेरी वही रात उनकी।
कहीं बढ़ गई है कहीं घट गई है*॥

ख़ाली है जामेज़ीस्त[3] मगर कह रही है मौत।
"लबरेज़ तेरी उम्रका पैमाना हो गया"॥

जो अच्छा कर नहीं सकते तो क्यों तड़पूं मैं बिस्तरपर।
दुआ देना नहीं आता तो सीखो बद्‌दुआ देना॥

मेरे पहलूसे अगर निकला तो मेरा क्या गया?
गुमशुदा दिल आप ही का एक मख़फ़ी[4] राज़ था॥

---

[1]चिन्ताग्रस्त स्वप्न [2]अभाग।

*जब मैं चलूं तो साया भी अपना न साथ दे।
जब तुम चलो ज़मीन चले, आस्माँ चले॥
—जलील

तेरी गलीमें मैं न चलूं और सबा चले।
जब चाहे यों ख़ुदा ही तो बन्देकी क्या चले॥

[3]जीवन प्याला [4]गुप्त छिपा हुआ।

रोशनी डालके दुनियाको दिखाता था मआल[1]।
यह चिराग़े सरेतुरबत[2] मेरा बेकार न था॥

पूछा न ज़िन्दगीमें यूँ तो किसीने आकर।
मरनेके बाद जो था, वह मुझको पूछता था॥

मैं तो च्यूँटीके कुचलनेसे हज़र[3] रखता था।
फिर मुझे किसने तहेज़ानुएजल्लाद[4] किया?

दिल जलाकर मैंने दुनिया भरकी आँखें खोल दीं।
इस तरहका सुरमए अहले नज़र पहले न था॥

हवास तो हैं मुन्तशिर[5] ख़याल मुन्तशिर नहीं।
जो देखता मैं जागकर वह देखता हूँ ख़्वाबमें॥

यह न समझो कि फ़लक बरसरेबेदाद[6] नहीं।
बात ये है कि मुझे आदतेफ़रियाद नहीं॥

थी वफ़ादारोंके दमतक पुरसिशो,[7] क़दरेजफ़ा[8]।
फेंक दो अब क्या लिये बैठे हो ख़ंजर हाथमें॥

बाँट लें दुनियाको हम तुम मिलके ऐशोरंजमें।
एक जानिब क़हक़हे हों, एक तरफ़ फ़रियाद हो॥

कौन ले मुफ़्तका झगड़ा कोई दीवाना है?
उनके सर कौन चढ़े दिलसे उतरनेके लिए॥

लूटनेवाले हमारी नींदके।
रात भर किस चैनसे सोते रहे!

---

[1]अन्त; [2]क़ब्रपर; [3]परहेज़; [4]वधिकके घुटनेके नीचे; [5]बिखरे हुए; [6]अत्याचारी; [7]पूछ-ताछ; [8]अत्याचार-की क़दर।

जान हाज़िर है लिये जाओ अमानत अपनी।
फिर खुदा जाने, रहे या न रहे होश मुझे॥

सदाएँ देके हमने एक दुनिया आज़मा देखी।
[illegible] [illegible] [illegible] आने, 'बढ़ो आगे यहाँ क्या है'?

हिज्रकी[1] शब[2] नालयेदिल[3] वोह सदा[4] देने लगे।
सुननेवाले रात कटनेकी दुआ देने लगे॥
सुननेवाले रो दिये सुनकर मरीज़ेग़मका हाल।
देखनेवाले तरस खाकर दुआ देने लगे॥
मुट्ठियोंमें ख़ाक लेकर दोस्त आये वक्ते दफ़न।
ज़िन्दगी भरकी मुहब्बतका सिला देने लगे॥

जल्वेकी सैर देख तो लेनी शुआएहुस्न[5]।
यह क्या कि दिलमें आग लगाकर निकल गई॥

किसीका रंज देखूँ यह नहीं होगा मेरे दिलसे।
नज़र सैयादकी[6] झपके तो कुछ कह दूँ असादिलसे[7]॥

चमन न देख नशेमनको[8] देख ऐ बुलबुल!
बहार ही में कभी आग भी बरसती है॥

हम उनसे मिलके भी फ़ुरक़तका हाल कह न सके।
मज़ा विसालका[9] खोते अगर गिला[10] करते॥

इन्कार कीजिये क्यों सब राज़[11] खुल चुके हैं।
कुछ मेरे हालेग़मसे, कुछ आपके बयाँसे[12]॥

---

[1]विरहकी [2]रात्रि, [3]हृदयकी पुकार, [4]आवाज़,
[5]रूपकी किरण, [6]शिकारीकी, [7]बुलबुलाम, [8]घोंसलेको,
[9]मिलनका, [10]शिकायत, [11]भेद, [12]कथनसे।

सुलझ सकीं न मेरी मुश्किलें, मगर देखा,
उलझ गये थे जो गेसू[1] उन्हें सँवार आये ॥

बहुतसे याद हैं महफ़िलमें बैठनेवाले।
कभी तो भूलके कोई सरेमज़ार आये ॥

कभी उट्ठा कभी बैठा उमीदोयासके[2] हाथों।
बड़ी मुश्किलसे नामेइश्क़को[3] ऊँचा किया मैंने ॥

दिल ही पाबन्देअलम[4] था वर्ना बज़्मेऐशमें।
हम तेरी ख़ातिरसे ता-इमकान[5] हँसते-बोलते ॥

शौक़ेपाबोसियेमहबूब[6] था वर्ना 'साक़िब'!
संगेदरपै[7] कोई मौक़ा था जबींसाईका[8]?

बरगिश्ता[9] हुई दुनिया रस्मोरहे उल्फ़तसे।
एक मेरी तबीयत है जो बाज़ नहीं आती ॥

ज़माना बड़े शौक़से सुन रहा था।
हमीं सो गये दास्ताँ कहते-कहते ॥

जफ़ा उठानेकी आदत पड़ी तो क्योंकर जाय।
सितम सहे मगर इतने कहाँ कि जी भर जाय ॥

वह उलटकर जो आस्तीं निकले।
ज़ुल्म जामेसे अपने बाहर था ॥

दिलने रग-रगसे छुपा रक्खा है राज़ेइश्क़ेदोस्त।
जिसको कहदे नब्ज़ ऐसी मेरी बीमारी नहीं ॥

---

[1]ज़ुल्फ़; [2]आशा-निराशाके; [3]प्रेमके नामको; [4]दुखी; [5]जहाँ तक सम्भव होना; [6]प्रेयसीके पाँव पकड़नेका चाव; [7]पत्थरके दरवाज़ेपर; [8]मस्तक रगड़नेका; [9]विरुद्ध।

विसालेहिज्रमें छिपा है दिलका हाल कहीं ?
बुझे तो प्यास सिवा हो, जले तो बू आये ॥

इत्तहादे बाहमीका है नतीजा ज़िन्दगी।
ज़र्रे क्या थे मगर मिलनेसे इन्सां हो गया ॥

उनकी बज़्मेनाज़में तो सांस भी दिलने न ली।
नालाकश बरसोंका एक तसवीर बनके रह गया ॥

दिलने अपने हसरतोंके काफ़िले ठहरा दिये।
इस क़दर आबाद पहले कूचयेक़ातिल न था ॥

शिकायत ज़ुल्मेख़ंजरकी नहीं, ग़म है तो इतना है।
ज़बानेग़ैरसे क्यों मौतका पैग़ाम आता है ॥

दिलमें दो बूंदें लहूकी हैं मगर ऐ तेग़ज़न[1] !
एक दामनपर रहेगी और एक शमशीरपर ॥

न शाद बंद करूँ गर तो क्या करूँ या रब !
वोह आ रहे हैं तमाशायेजाँकनीके[2] लिये ॥

तीरगी[3] नाम है दिलवालोंके उठ जानेका।
जिसको शब कहते हैं, मक़तल[4] है वह परवानेका ॥

बला है, अहदेजवानीसे खुश न हो ऐ दिल !
सम्हल कि उम्रकी दुनियामें इनक़लाब आया ॥

यह किसने 'ग़मकदा'[5] दुनियाका नाम रक्खा है।
हमें तो कोई यहाँ दर्द आश्ना[6] न मिला ॥

---

[1]तलवार मारनेवाला अर्थात प्रेमपात्र [2]मृत्युका तमाशा देखनेके, [3]अन्धेरा [4]वध-स्थान [5]विपत्ति-स्थान [6]सहानुभूति वाला।

नाज़ोअदाकी चोटें सहना तो और शै है।
ज़ख़्मोंको देख लेता कोई, तो देखता मैं॥

ऊरूसेदहरको[1] दिल देके आज़माऊँ क्या?
सँवारनेमें जो बिगड़े उसे बनाऊँ क्या?

अपने ही दिलकी आगमें आख़िर पिघल गई।
शमएहयात[2] मौतके साँचेमें ढल गई॥

शादीमें भी कुछ ग़मके पहलू निकल आते हैं।
बेसाख़्ता हँसनेमें आँसू निकल आते हैं॥

४ नवम्बर १६४६ ई०

---

[1]संसार-रूपी दुल्हनको; [2]जीवन-रूपी मोमबत्ती।

२७

मौलाना फ़ज़लुलहसन 'हसरत' मोहानी

(जन्म—मोहाना १८७५ ई०)

हसरतकी शायरी इश्ककी शायरी है और वह सांसारिक प्रेम (मजाजी इश्क) से प्रारम्भ होकर ईश्वरीय प्रेम (हकीकी इश्क) और देश-प्रेम पर समाप्त होती है। आपने उर्दू साहित्यकी प्रशंसनीय सेवाएँ की हैं।

हसरत सन् १८७५ में मोहाना (ज़िला उन्नाव) में उत्पन्न हुए। एण्ट्रेन्स पास करनेसे पहले ही शेर कहने लगे थे। १६०३ में अलीगढ से बी० ए० पास किया और १६०४ से कांग्रेसमें शामिल हो गये। १६०८ में दो वर्षकी सख्त कैद और फिर १६१६ में दो वर्षकी सादा क़ैद देश-भक्तिके पुरस्कार-स्वरूप मिली। नजरबन्द भी रहे और १६२० के बाद असहयोग आन्दोलनमें आगे आये और कई बार जेल गये। आपने राज-नैतिक क्षेत्रोंमें अपने उग्र विचारों और त्यागके कारण काफी ख्याति प्राप्त की। १६३२ के बाद आप साम्प्रदायिक आन्दोलनोंमें भाग लेने लगे हैं। हसरतने देश, उर्दू-साहित्य और मुस्लिम कौमकी जितनी भी सेवाएँ की हैं वे अनुपम हैं। आप बहुत दिनोंसे कानपुरमें रहते हैं, और इस युगके 'मीर' समझे जाते हैं।

हालाँ कि इब्तदा भी नहीं है शबाबकी।
उनको कमालेहुस्नका दावा अभीसे है॥

खुलके हमसे कभी वोह मिल न सके।
बावजूदे कमाले दिलसोजी[1]॥

ग़ैरकी जद्दोजहदपर तकिया न कर कि है गुनाह।
कोशिशे जाते ख़ासपर नाज़कर, ऐतमाद कर॥

वह जुर्मेआरज़ूपर जिस क़दर चाहें सज़ा दे लें।
मुझे ख़ुद ख़ाहिशेताजीर है मुलज़िम हूँ इक़बाली॥

वोह शर्माए बैठे हैं गर्दन झुकाये।
ग़जब हो गया इक नज़र देख लेना॥
न भूलेगा वह वक़्तेरुख़सत किसीका।
मुझे मुड़के फिर इक नज़र देख लेना॥*

मैं क्या कहूँ कि शर्मसे कैसे झुकाके सिर।
पूछा उन्होंने हसरतेबीमारका मिज़ाज॥

नाकामियोंपै अपनी हँसी आ गई थी आज।
सो, कितने शर्मसार हुए बेकसीसे हम॥

वोह दर्दमन्द हूँ 'हसरत' कि अब बजाये सितम।
करे जो लुत्फ़ भी कोई तो अश्कबार हूँ मैं॥

---

[1]प्रेमाग्निमें झुलसते हुए भी।

*क़यामत बनके पलटी है निगाहेनाज़ क़ातिलकी।
यह मौजेशापिसीं किश्ती डुबो देगी मेरे दिलकी॥
—शेरी भोपाली

मिलते हैं इस अदासे कि गोया ख़फ़ा नहीं।
क्या आपकी निगाहसे मैं आश्ना नहीं?

अदा न हमसे हुआ हक़ तेरी ग़ुलामीका।
नसीबे शौक़ रहा दाग़ नातमामीका॥

तुम जो अफ़सुर्दा[1] हुए सुनके मेरा हाल सो क्यों?
सरसरी तौरसे बातोंमें उड़ा देना था॥

वोह बिगड़े बहुत बदगुमानीके बाइस।
न तड़पे जो हम नातवानीके[2] बाइस[3]॥

रानाइये ख़यालको ठहरा दिया गुनाह।
ज़ाहिद भी किस क़दर है मज़ाक़ेसुख़नसे दूर॥

यह क्या मुन्सिफ़ी है कि महफ़िलमें तेरी।
किसीका भी हो जुर्म पाएँ सज़ा हम॥

ख़न्दये[4] अहले जहाँकी मुझे परवाह क्या थी।
तुम भी हँसते हो मेरे हालपै रोना है यही॥

छुपे जो मुझसे तो क्या यह भी इक अदा न हुई।
वोह चाहते थे न देखे कोई अदा मेरी॥

कहीं वोह आके मिटा दें न इन्तज़ारका लुत्फ़।
कहीं क़बूल न हो जाय इल्तिजा मेरी॥

वोह आईनेमें देख रहे थे बहारेहुस्न।
आया मेरा ख़याल तो शर्माके रह गए॥

---

[1]मुर्झाना बुझना, [2]निर्बलताके, [3]कारण, [4]मुस्कान।

दावाए आशिक़ी है तो 'हसरत' करो निवाह ।
यह क्या कि इब्तदा ही में घबराके रह गये ॥

देखा जो कहीं गर्मेनज़र बज़्मेउदूमें ।
वोह डाट गये मुझको बराबरसे निकलकर ॥

क्या करें ख़ूसे[1] हैं मजबूर कि पीना है ज़रूर ।
वर्ना 'हसरत' रमज़ाँका यह महीना है ज़रूर ॥
उम्र ही क्या है, वोह कमसिन हैं अभी नामेख़ुदा ।
उनपै मरना हो तो कुछ दिन हमें जीना है ज़रूर ॥

मालूम सब है पूछते हो फिर भी मुद्दआ ।
अब तुमसे दिलकी बात कहें क्या ज़बाँसे हम ?
ऐ जुहदेख़ुश्क तेरी हिदायतके वास्ते ।
सौग़ाते इश्क़ लाये हैं कूए बुताँसे हम ॥
'हसरत' फिर और जाके करें किसकी बन्दगी ।
अच्छा जो सर उठायें भी, उस आस्ताँसे हम ॥

सुनके क़ासिदसे मेरा हाल, कहा तो यह कहा ।
हैं वह बदनाम, कहीं हमको भी रुसवा न करे ॥

फिर भी है तुमको मसीहाईका दावा देखो ।
मुझको देखो, मेरे मरनेकी तमन्ना देखो ॥

हमें वक़्फ़ेग़म सरबसर देख लेते ।
वोह तुम कुछ न करते मगर देख लेते ॥
तमन्नाको फिर कुछ शिकायत न रहती ।
जो तुम भूलकर भी इधर देख लेते ॥

---

[1]अभ्याससे ।

क्या कहते हो कि और लगालो किसीसे दिल।
तुम-सा नज़र भी आए कोई दूसरा मुझे॥

रायगाँ[1] "हसरत" न जायेगा मेरा मुश्तेग़ुबार[2]।
कुछ ज़मीं ले जायेगी, कुछ आस्माँ ले जायेगा॥

वोह कहना तेरा याद है वक़्तेरुख़सत।
"कभी ख़त भी हमको लिखा कीजिएगा"॥

जब उनसे अदबने न कुछ मुँहसे माँगा।
तो इक पैकरेइल्तिजा हो गये हम॥

वोह जब यह कहते हैं 'तुमसे ख़ता ज़रूर हुई'।
मैं बेक़ुसूर भी कह दूँ कि 'हाँ ज़रूर हुई'॥

वोह बेपरदह सोते हैं ज़ाहिरमें लेकिन।
दुपट्टा यूँ ही मुँहपै डाले हुए हैं॥

खुल सके जबतलक न राहेमुराद।
मंज़िलेसब्रमें क़याम करो॥

मालूम है दुनियाको यह 'हसरत'की हक़ीक़त।
ख़िलवतमें[3] वोह मयख़्वार है जिल्वतमें[4] नमाज़ी॥

वोह चुप हो गए मुझसे 'क्या' कहते-कहते।
कि दिल रह गया मुद्दआ कहते-कहते॥

लिक्खा था अपने हाथसे तुमने जो एक बार।
अबतक हमारे पास है वोह यादगार ख़त॥
उसमें कहीं न हर्फ़ेतसल्ली भी हो लिखा।
पढ़ते हैं इस उम्मीदपर हम बार-बार ख़त॥

---

[1] व्यर्थ, [2] मुट्ठी भर ख़ाक, [3] एकान्तम, [4] ज़ाहिरामें।

हमको यही क्या कम है कि बन्दे हैं तुम्हारे।
दावाए मुहब्बतके सज़ावार कहाँ हैं॥

पढ़िये इसके सिवा न कोई सबक़।
"ख़िदमतेख़ल्क़ औ इश्क़े हज़रते हक़"॥

बनकर गदायेइश्क़ गये थे, मगर फिरे।
सुलतान होके यारकी दौलत सरासे हम॥

हम हाल उन्हें यूँ दिलका सुनानेमें लगे हैं।
कुछ कहते नहीं, पाँव दबानेमें लगे हैं॥

न सूरत कहीं शादमानीकी देखी।
बहुत सैर दुनियायेफ़ानीकी देखी॥

ग़मे आरज़ूका 'हसरत'! सबब और क्या बताऊँ?
मेरी हिम्मतोंकी पस्ती, मेरे शौक़की बलन्दी॥

मेरी ख़तापै आपको लाज़िम नहीं नज़र।
यह देखिये मुनासिबे शानेअता है क्या॥
हम क्या करें न तेरी अगर आरज़ू करें।
दुनियामें और भी कोई तेरे सिवा है क्या?

शिकवयेग़म तेरे हुज़ूर किया।
हमने बेशक बड़ा क़ुसूर किया॥

रियायत जो उस शोख़की थी ज़रूरी।
ख़ता बन गई ख़ुद मेरी बेक़ुसूरी॥

१५ नवम्बर १९४६

क्या कहते हो कि और लगालो किसीसे दिल।
तुम-सा नज़र भी आए कोई दूसरा मुझे॥

रायगाँ[1] 'हसरत' न जायेगा मेरा मुश्तेग़ुबार[2]।
कुछ ज़मीं ले जायेगी, कुछ आस्मां ले जायेगा॥

वोह कहना तेरा याद है वक़्तेरुख़सत।
"कभी ख़त भी हमको लिखा कीजिएगा"॥

जब उनसे अदबने न कुछ मुँहसे माँगा।
तो इक पैकरेइल्तिजा हो गये हम॥

वोह जब यह कहते हैं 'तुझसे ख़ता ज़रूर हुई'।
मैं बेक़ुसूर भी कह दूँ कि 'हाँ ज़रूर हुई'॥

वोह बेपरदह सोते हैं ज़ाहिरमें लेकिन।
दुपट्टा यूँ ही मुँहपै डाले हुए है॥

भूल सके जबतलक न राहेमुराद।
मंज़िलेसब्रमें क़याम करो॥

मालूम है दुनियाको यह 'हसरत'की हक़ीक़त।
ख़िलवतमें[3] वोह मयख़्वार है जिल्वतमें[4] नमाज़ी॥

वोह चुप हो गए मुझसे-'क्या' कहते-कहते।
कि दिल रह गया मुद्दआ कहते-कहते॥

लिक्खा था अपने हाथसे तुमने जो एक बार।
अबतक हमारे पास है वोह यादगार ख़त॥
उसमें कहीं न हर्फ़तसल्ली भी हो लिखा।
पढ़ते हैं इस उम्मीदपर हम बार-बार ख़त॥

---

[1]व्यर्थ, [2]मुट्ठी भर ख़ाक, [3]एकान्तम, [4]ज़ाहिरामें।

हमको यही क्या कम है कि बन्दे हैं तुम्हारे।
दावाए मुहब्बतके सजावार कहाँ हैं॥

पढ़िये इसके सिवा न कोई सबक़।
"ख़िदमतेख़ल्क़ औ इश्क़े हज़रते हक़"॥

बनकर गदायेइश्क़ गये थे, मगर फिरे।
सुलतान होके यारकी दौलत सरासे हम॥

हम हाल उन्हें यूँ दिलका सुनानेमें लगे हैं।
कुछ कहते नहीं, पाँव दबानेमें लगे हैं॥

न सूरत कहीं शादमानीकी देखी।
बहुत सैर दुनियायेफ़ानीकी देखी॥

ग़मे आरज़ूका 'हसरत'! सबब और क्या बताऊँ?
मेरी हिम्मतोंकी पस्ती, मेरे शौक़की बलन्दी॥

मेरी ख़तापै आपको लाज़िम नहीं नज़र।
यह देखिये मुनासिबे शानेअता है क्या॥
हम क्या करें न तेरी अगर आरज़ू करें।
दुनियामें और भी कोई तेरे सिवा है क्या?

शिकवयेग़म तेरे हुज़ूर किया।
हमने बेशक बड़ा क़ुसूर किया॥

रियायत जो उस शोख़की थी ज़रूरी।
ख़ता बन गई ख़ुद मेरी बेक़ुसूरी॥

१५ नवम्बर १९४६

२८

शौकत अलीखाँ 'फानी'

(जन्म जिला बदायूं १८७९ मृत्यु १९४१ ई०)

सन १८७९ में जिला बदायूंके इस्लामनगरमें उत्पन्न हुए। १९०१ में बी० ए० और १९०८ में एल-एल० बी० की डिग्री प्राप्त की। ११ वर्षकी आयुसे ही शेर कहने लगे और २० सालकी उम्रमें पहला दीवान पूर्ण कर लिया किन्तु खेद है कि न जाने कैसे नष्ट हो गया। १९०६ में दूसरा दीवान तैयार किया तो वह भी गुम हो गया। इससे फानीके हृदयको बड़ी ठेस पहुँची और उन्होंने फिर १९१७ तक शेरोशायरीकी ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। इसके बाद जो कुछ लिखा वह नकीब बदायूंके दफ्तरसे पहले दीवानकी सूरतमें और दूसरा दीवान बाकयात फानी १९२६ में और एक 'वजदानियात फानी' नामसे प्रकाशित हुए। हमने अन्तिम दो पुस्तकोंसे फानीके कलामका संकलन किया है।

फानीका जीवन असुविधाओं चिन्ताओं और वेदनाओंसे परिपूर्ण रहा है। ऐसी स्थितिमें उनका कलाम भी व्यथापूर्ण होना निश्चित था। फानीने गालिब का मस्तिष्क और 'मीर' का हृदय पाया था। १६ अगस्त १९४१ को हैदराबादमें आपका अन्तकाल हुआ।

यो हूँ मुख़्तार सज़ा दे कि जज़ा दे 'फ़ानी' !
दो घड़ी होशमें आनेके गुनहगार हैं हम ॥

दुनियामें हाले आमदोरफ़्ते बशर न पूछ ।
बेअख़्तियार आके रहा, बेख़बर गया ॥

देख 'फ़ानी' ! वोह तेरी तदबीरकी मैयत[1] न हो ।
इक जनाज़ा जा रहा है, दोशपर[2] तक़दीरके ॥

क़िस्मतके हर्फ़ सिजदये दरसे मिटा तो दूँ ।
दिल काँपता है शोख़िये तहरीर देखकर ॥

हमको मरना भी मयस्सर नहीं जीनेके बग़ैर ।
मौतने उम्रेदोरोज़ाका बहाना चाहा ॥

मेरी हविसको ऐशे दो आलम भी था क़ुबूल ।
तेरा करम कि तूने दिया दिल दुखा हुआ ॥

'फ़ानी' हम तो जीते जी वोह मैयत हैं बेगोरोकफ़न ।
ग़ुरबत[3] जिसको रास न आई, और वतन भी छूट गया ॥

ज़िन्दगी जब्र है और जब्रके आसार नहीं ।
हाय इस क़ैदको ज़ंजीर भी दरकार नहीं ॥

जिये जानेकी तोहमत किससे उठती, किस तरह उठती ?
तेरे ग़मने बचाई ज़िन्दगीकी आबरू बरसों ॥

ख़फ़ा न हो तो यह पूछूँ कि तेरी जानसे दूर ।
जो तेरे हिज्रमें जीता है, मर भी सकता है ?

---

[1]अर्थी; [2]कन्धेपर; [3]परदेश ।

इसीको तुम मगर ऐ ग्रहलेदुनिया ! जान कहते हो।
वोह काँटा जो मेरी रग-रगमें रह-रहकर खटकता है॥

ज़िक्र जब छिड़ गया क़यामतका।
बात पहुँची तेरी जवानी तक॥

'फ़ानी'को या जुनूँ है, या तेरी आरज़ू है।
कल नाम लेके तेरा दीवानावार रोया॥

आया है याद मुद्दत बिछड़े हुए मिले हैं।
दिलसे लिपट लिपटकर ग़म बार-बार रोया॥

अहदेजवानी ख़त्म हुआ अब मरते हैं ना जीते हैं।
हम भी जीते थे जबतक, मर जानेका ज़माना था॥

नामुरादी हदसे गुज़री हालेफ़ानी कुछ न पूछ।
हर नफ़स है इक जनाज़ा आहे बेतासीरका॥

नहीं ज़रूर कि मर जाएँ जाँनिसार तेरे।
यही है मौत कि जीना हराम हो जाये॥

अब लबपै वोह हंगामये फ़रियाद नहीं है।
अल्लाहरे तेरी याद कि कुछ याद नहीं है॥

बर्क़को[1] अब क्या ग़रज़, क्या रह गया, क्या जल गया?
जल गया ख़िरमनमें[2] जो कुछ था मेरी तक़दीरका॥

फ़िक्रेराहत छोड़ बैठे हम तो राहत मिल गई।
हमने क़िस्मतसे लिया जो काम था तद्बीरका॥

ग़मके ठहोके कुछ हो बलासे, आके जगा तो जाते हैं।
हम हैं मगर वह नींदके माते, जागते ही सो जाते हैं॥

---

[1]बिजलीका [2]खलिहानमें।

भड़काके शोलयेगुल तू ही अब लगा दे आग।
कि बिजलियोंको मेरा आशियाँ नहीं मालूम॥

जब तेरा ज़िक्र आ गया हम दफ़अ़तन चुप हो गये।
वोह् छुपाया राज़ेदिल हमने कि अफ़शा[1] कर दिया॥

ग़म मिटा दिया, ग़मको लज़्ज़तआश्ना,[2] करके।
क्या किया सितमगरने ख़ूगरेजफ़ा[3] करके॥

कलतक यहीं गुलशन था, सैयाद भी, बिजली भी।
दुनिया ही बदल दी है तामीरेनशेमनने[4]॥

माना हिजाबेदीद[5] मेरी बेख़ुदी[6] हुई।
तुम वजहे बेख़ुदी नहीं, यह एक ही हुई!

मेरे शौक़ने सिखाया उसे शेवयेतग़ाफ़ुल[7]।
न मुझे रियाज़[8] होता, न वोह् बेनियाज़[9] होता॥

हमें तेरी मुहब्बतमें फ़क़त दो काम आते हैं।
जो रोनेसे कभी फ़ुर्सत मिली ख़ामोश हो जाना॥

इक फ़साना सुन गये इक कह गये।
मैं जो रोया मुस्कराकर रह गये॥

दिल उनके न आनेतक लबरेज़े शिकायत था।
वोह् आए तो अपनी ही तक़सीर नज़र आई॥

सुनके तेरा नाम आँखें खोल देता था कोई।
आज तेरा नाम लेकर कोई ग़ाफ़िल हो गया॥

---

[1]प्रकट; [2]स्वादको जानने वाला; [3]अत्याचार-सहनका अभ्यस्त; [4]घोंसलोंके निर्माणने; [5]सम्मुख देखनेमें बाधक पर्दा; [6]आत्मविस्मृति; [7]उपेक्षाका अभ्यास; [8]कामना, प्रेम-प्रदर्शन; [9]लापरवाह।

मौत ग्रानेतक न ग्राये ग्रब जो ग्राये हो, तो हाय !
जिन्दगी मुश्किल ही थी, मरना भी मुश्किल हो गया ॥

ग्राप मेरी लाशपर हुजूर, मौतको कोसते तो हैं।
ग्रापको यह भी होश है किसने किसे मिटा दिया ?

खुद मसीहा, खुद ही कातिल हैं तो वे भी क्या करें ?
जख्मेदिल पैदा करें या जख्मेदिल ग्रच्छा करें ॥

छूटे जब कैदेहस्तीसे तो ग्राये कुंजेतुरबतमें[1]।
रिहा होते हैं हम, यानी बदल देते हैं जिन्दांको[2] ॥

दिल है वो ताक[3] ग़मकदएग्रश्रेदोशका[4]।
रक्खी है जिसपै शमएतमन्ना बुझी हुई ॥

मैं मंजिलेफनाका निशानेशिकस्ता हूँ।
तसवीरेगर्द बादेवफा हूँ मिटी हुई ॥

कीजे दुग्रा कि उफ तो करे दर्दमन्देइश्क।
ग्रव्वल तो दिलकी चोट, फिर इतनी दुखी हुई ॥

लाजिम है ग्रहतियात, नदामत नहीं जरूर।
ले ग्रब छुरी तो फेंक लहूसे भरी हुई ॥

तुरबतके फूल शामसे मुर्भाके रह गये।
रो-रोके सुबह की मेरी ग्रामयेमज़ारने ॥

मेरी मैयतपै उनका तर्जेमातम किस बलाका है !
दिले बेमुद्दग्रासे पूछते हैं 'मुद्दग्रा क्या है' ?

---

[1]क़ब्ररूपी उद्यानमें, [2]कारागृहको,
[3]ग्राला, [4]जीवनकी विपत्तियाका ।

नाउमीदी मौतसे कहती है अपना काम कर।
आस कहती है ठहर, ख़तका जवाब आनेको है॥

बिजलियोंसे गुरबतमें कुछ भरम तो बाक़ी है।
जल गया मकाँ यानी था कोई मकाँ अपना॥

वादेके ये तेवर हैं कह दूँ कि यक़ीं आया।
अब उनसे कोई क्योंकर कह दे कि नहीं आया॥

अपने कमालेशौक़पर हश्रका दिन है मुनहसिर।
वादयेदीद चाहिये, ज़हमतेइन्तज़ार क्या?

किसीकी कश्ती तहे गरदाबे फ़ना जा पहुँची।
शोरे-लब एक जो 'फ़ानी' लबेसाहिलसे उठा॥

हूँ असीरे फ़रेबे आज़ादी।
पर हैं, और मश्क़े हौलयेपरवाज़॥

दुनिया मेरी बला जाने मँहगी है या सस्ती है।
मौत मिले तो मुफ़्त न लूँ, हस्तीकी क्या हस्ती है?

जीने भी नहीं देते मरने भी नहीं देते।
क्या तुमने मुहब्बतकी हर रस्म उठा डाली?

मुस्कराये वोह हालेदिल सुनकर।
और गोया जवाब था ही नहीं॥

कुछ कटी हिम्मतेसवालमें उम्र।
कुछ उम्मीदेजवाबमें गुज़री*॥

२२ नवम्बर १९४६

---

*इसी मज़मूनका किसीका शेर याद आया :—
उम्रेदराज माँगकर लाया था चार रोज़।
दो आरज़ूमें कट गए, दो इन्तज़ारमें॥

असगरहुसेन 'असगर' गोण्डवी

(जन्म ज़िला गोण्डा १८८४ मृ० १९३६)

असगरकी शायरी बहुत ऊँचे दर्जेकी है। मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद और डा० सर तेज बहादुर सप्रू जैसे ख्याति प्राप्त विद्वानोंने उनके कलामकी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की है। उन्होंने उर्दू ग़ज़लमें नया चमत्कार पैदा कर दिया है।

असगर एक प्रभावशाली व्यक्ति थे। जिगर मुरादाबादी जैसे रिन्द जो मुशायरोंमें भी बैठे हुए पीते रहते हैं आपके यहाँ जानेपर शराबकी ओर देखते भी नहीं थे। जिगरने अपने 'शोलयेतूर'में स्थान-स्थान पर असगरके प्रति श्रद्धा भक्ति प्रकट की है।

असगर १ मार्च १८८४ को गोण्डेमें उत्पन्न हुए और १९३६ ई० में समाधि पाई। अंग्रेजी फारसीकी अच्छी योग्यता रखते थे। चश्मेका कारखाना था। जीवनके अन्तिम दिनोंमें हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबादके त्रैमासिक पत्र हिन्दुस्तानीके सम्पादक थे।

सुनता हूँ बड़े ग़ौरसे अफ़सानएहस्ती ।
कुछ ख्वाब है, कुछ अस्ल है, कुछ तर्ज़ेअदा है ॥

रूदादेचमन[1] सुनता हूँ इस तरह क़फ़समें ।
जैसे कभी आँखोंसे गुलिस्ताँ नहीं देखा ॥

निज़ामेमैकदेको[2] समझा हूँ क्या ऐ वाइज़ेनादाँ !
हज़ारों बन गये काबे जबीं मैंने जहाँ रख दी ॥

असीरानेबलाकी[3] हसरतोंको[4] आह क्या कहिये ।
तड़पके साथ ऊँची हो गई दीवार ज़िन्दाँकी[5] ॥

बारेअलम[6] उठाया, रंगेनिशात[7] देखा ।
आये नहीं हैं यूँही अन्दाज़ बेहिसीके[8] ॥

न मैं दीवाना हूँ 'असग़र' न मुझको ज़ौक़ेउरियानी[9] ।
कोई खींचे लिये जाता है खुद जेबोगिरेबाँको ॥

जीना भी आ गया मुझे मरना भी आ गया ।
पहिचानने लगा हूँ तुम्हारी नज़रको मैं ॥

आलमकी फ़िज़ा पूछो महवेमेतमसासे ।
बैठा हुआ दुनियामें, उठ जाय जो दुनियासे ॥

---

[1]उद्यानका वृत्तान्त; [2]प्रेम-पद्धतिको;
[3]विपत्तियोंमें मारोंकी, क़ैदियोंकी;
[4]अभिलाषाओंको, [5]कारावासकी;
[6]दुखका बोझ; [7]भोगविलासके अनुभव;
[8]बेहोशीके, आत्मरतहोनेके; [9]नग्न रहनेका चाव ।

होश किसीका भी न रख जल्वागहे नियाज़में[1]।
बल्कि खुदाको भूल जा, सिज्दयेबेनियाज़में[1]॥

यह दीन है, वह दुनिया, यह काबा वोह बुतख़ाना।
इक और कदम बढ़कर ऐ हिम्मते मर्दाना॥

तेरा जमाल है, तेरा ख़याल है, तू है।
मुझे यह फ़ुरसतेकाविश कहाँ कि क्या हूँ मैं?

ये शोरशें, निज़ामे जहाँ जिनके दममे हैं।
जब मुख़्तसिर किया, उन्हें इन्साँ बना दिया॥

कफ़स क्या, हल्क़ाहायेदाम क्या, रंजेअसीरी क्या?
चमनपर मिट गया जो हर तरह आज़ाद होता है॥

क्या दर्देहिज्र और क्या यह लज्ज़तेविसाल!
इससे भी कुछ बुलन्द मिली है नज़र मुझे॥

जिसपे मेरी जुस्तजूने डाल रक्खे थे हिजाब।
बेखुदीने अब उसे महसूसेउरियाँ कर दिया॥

ख़स्तगीने[2] कर दिया उसको रगेजाँसे क़रीब।
जुस्तजू ज़ालिम कहे जाती थी मंज़िल दूर है॥

बच, हुस्नेतअय्युनसे ज़ाहिर हो कि बातिन हो।
यह क़ैद नज़रकी है, वोह फ़िक्रका ज़िन्दाँ है॥

लौ शम्अ हक़ीक़तकी अपनी ही जगहपर है।
फ़ानूसकी गर्दिशसे, क्या-क्या नज़र आता है॥

---

[1]-[1]ईश्वरके प्रासादमें, प्रेममन्दिरमें, [1]भक्तिकी तल्लीनतामें;
[2]थकानने, गरीबीने।

बहुत लतीफ़ इशारे थे चश्मेसाक़ीके ।
न मैं हुआ कभी बेख़ुद न होशियार हुआ ॥

आग़ोशमें साहिलके क्या लुत्फ़ेसकूँ उसको ।
यह जान अजल हीसे परवरदए तूफ़ाँ है ॥

सारा हुसूल इश्क़की नाकामियोंमें है ।
जो उम्र रायगाँ है वही रायगाँ नहीं ॥

सौ बार तेरा दामन हाथोंमें मेरे आया ।
जब आँख खुली देखा अपना ही गिरेबाँ है ॥

रख दिये दैरोहरम सर मारनेके वास्ते ।
बन्दगीको बेनियाज़े कुफ़्र-ओ-ईमाँ कर दिया ॥

तू बर्क़ेहुस्न और तजल्लीसे यह गुरेज़ ।
मैं ख़ाक और ज़ौक़ेतमाशा लिये हुए ॥

बुलबुलेज़ारसे गो सहनेचमन छूट गया ।
उसके सीनेमें है इक शोलयेगुलफ़ाम अभी ॥

यहाँ तो उम्र गुज़री है इसी मौजेतलातुममें ।
वे कोई और होंगे, सैरेसाहिल देखनेवाले ॥

जो नक़्श है हस्तीका धोका नज़र आता है ।
पर्देपै मुसव्वर ही तनहा नज़र आता है ॥

दास्ताँ उनकी अदाओंकी है रंगीं, लेकिन ।
उसमें कुछ ख़ूनेतमन्ना भी है शामिल मेरा ॥

दैरोहरम भी मंज़िलेजानाँमें आये थे ।
पर शुक्र है कि बढ़ गये दामन बचाके हम ॥

चमन-चमनपर मिटा हुआ हूं, यह बाग़बां तुझको क्या हुआ है ?
फ़रेबेशबनममें मुब्तिला हूं, चमनको अबतक ख़बर नहीं है ॥

सहने हरम नहीं है, ये कूएबुतां नहीं।
अब कुछ न पूछिए कि कहां हूं कहां नहीं ॥

ज़ाहिर हैं थोड़ी-सी भी ग़फ़लत तरीक़े इश्क़में।
आंख अपनी झपकी और सामने महफ़िल न था ॥

तड़पना है, न जलना है, न जलकर ख़ाक होना है।
यह क्यों सोई हुई है, फ़ितरते परवाना बरसोंसे ॥

यह आस्ताने यार है सहनेहरम नहीं।
जब रख दिया है सर तो उठाना न चाहिए ॥

एक ऐसी भी तजल्ली आज मयख़ानेमें है।
लुत्फ़ पीनेमें नहीं है, बल्कि खो जानेमें है ॥

जल्वये हुस्ने परिस्तिश, गर्मिये हुस्नेनियाज़।
वर्ना कुछ काबेमें रक्खा है न बुतख़ानेमें है ॥

मैं यह कहता हूं फ़नाको भी मना कर ज़िन्दगी।
तू कमालेज़िन्दगी कहता है मर जानेमें है ॥

पहली नज़र भी आपकी, उफ़ ! किस बलाकी थी।
हम आजतक वोह चोट हैं दिलपर लिये हुए ॥

रिन्द जो ज़र्फ़ उठालें वही साग़िर बन जाय।
जिस जगह बैठके पी लें वही मयख़ाना बने ॥

वे इश्क़की अज़मतसे शायद नहीं वाक़िफ़ हैं।
सौ हुस्न करूं पैदा, एक-एक तमन्नासे ॥

तूने यह एजाज़ क्या ऐ सोज़ेपिन्हा कर दिया ?
इस तरह फूँका कि आख़िर जिस्मको जाँ कर दिया ॥

कीजिये आज किस तरह दौड़के सजदये नियाज़ ।
यह भी तो होश अब नहीं, पाँव कहाँ है, सर कहाँ ॥

सौ बार जला है तो यह सौ बार बना है ।
हम सोख़्ता जानोंका नशेमन भी बला है ॥

यह भी फ़रेब-से हैं कुछ दर्देआशिक़ीके ।
हम मरके क्या करेंगे, क्या कर लिया है जीके ?

अगर ख़ामोश रहूँ मैं तो तू ही सब कुछ है ।
जो कुछ कहा तो तेरा हुस्न हो गया महदूद ॥

मजनूंको नज़रमें भी शायद कोई लैली है ।
एक-एक बगोलेको दीवाना बना आई ॥

इक जह्दे कशाकश है, हस्ती जिसे कहते हैं ।
कफ़्फ़ारका मिट जाना, ख़ुद मर्गेमुसलमाँ है ॥

एक-एक नफ़समें है सदमर्ग बला मुज़मिर ।
जीना है बहुत मुश्किल, मरना बहुत आसाँ है ॥

आदमी नहीं सुनता आदमीकी बातोंको ।
पैकरे अमल बनकर ग़ैबकी सदा हो जा ॥

ऐ काश ! मैं हक़ीक़ते हस्ती न जानता ।
अब लुत्फ़ेख़्वाब भी नहीं अहसासेख़्वाबमें ॥

उभरना हो जहाँ, जी चाहता है डूब मरनेको ।
जहाँ उठती हों मौजें हम वहाँ साहिल समझते हैं ॥

२६ नवम्बर १९४६

३०

सिकन्दरअली 'जिगर' मुरादाबादी

(जन्म १८९० ई०)

मालूम होता है अल्लाहमियाँ जब अपने बन्दोको हुस्न तक्सीम कर रहे थे, तब हज़रते जिगर कौसरपर बैठे पी रहे थे। उन्हें जिगरकी यह मस्ती और बेपरवाही शायद पसन्द न आई और कुढ़कर हुस्नके एवज़ इश्क़ अता फर्माया ताकि जिगर उम्रभर जलते और बुझते रहे।

रंग आबनूसी, मुँहपर चेचकके दाग, बूटा-सा क़द, सरके बाल घने, रंगीले और बेतरतीब। मशहूर रिन्द ऐसे कि मुशायरोंमें भी पीकर आयें और मुनासिब समझे तो वहाँ बैठकर भी पियें और झूम-झूम कर ग़ज़ल ... चाल-ढालमें मस्ती और रिन्दी। शक्लोशबाहतसे शायर होनेका यक़ीन न आये, मगर बड़े-बड़े मुशायरो और ... मुशायरेके प्रोग्रामोंमें आपका होना लाज़मी। हज़रते जि... यराके स्हेरवाँ हैं। आप न हो तो सब फीका फीका है।

हज़रते जिगरके कलामकी अपनी विशेषता है। वे ... लिखते हैं। हुस्नो इश्क़ और शराबो रिन्दीकी ... कुछ तसवीर खींचते हैं कि सुननेवाले कलेजा थाम कर ... और फिर कहनेका ढंग भी उनका अपना है। मालूम हो... गर मोहनी-सी डाल रहा है।

लोगोका खयाल था कि जिगर पीना छोड दें तो ...

तेरी आँखोंका कुछ क़सूर नहीं।
हाँ, मुझीको ख़राब होना था॥

जो पड़ी दिलपं सह गये लेकिन।
एक नाज़ुक-सी बातने मारा॥

अर्ज़े नियाज़े इश्क़को सब आइना न करना।
यह भी इक इल्तिजा है, कुछ इल्तिजा न करना॥

कोई समझ सकें तो कम्बख़्त दिलसे समझे।
दिलमें भी उसके रहना, फिर दिलमें जा न करना॥

मेरा जो हाल हो सो हो बर्क़ेनज़र गिराये जा।
मैं यूँही नालाकशा रहूँ, तू यूँही मुस्कराये जा॥

जो अब भी न तकलीफ़ फ़र्माइयेगा।
तो बस हाथ मलते ही रह जाइयेगा॥
मिटाकर हमें आप पछताइयेगा॥
कमी कोई महसूस फ़र्माइयेगा॥
सितम, इश्क़में आप आसाँ न समझें।
तड़प जाइयेगा, जो तड़पाइयेगा॥
हमीं जब न होंगे तो क्या रंगेमहफ़िल।
किसे देखकर आप शर्माइयेगा॥

महवे तसबीह तो सब है मगर इदराक कहाँ?
जिन्दगी ख़ुद ही इबादत है, मगर होश नहीं॥

हिज़ोएमयने तेरा ऐ शेख़ ! भरम खोल दिया ।
तू तो मस्जिदमें है, नीयत तेरी मयख़ानेमें ॥

बताओ, क्या तुम्हारे दिलपै गुज़रे ।
अगर कोई तुम्हींसा बेवफ़ा हो ॥

शौक़का मर्सिया न पढ़, इश्क़की बेबसी न देख ।
उसकी ख़ुशी ख़ुशी समझ, अपनी ख़ुशी ख़ुशी न देख ॥

यह भी तेरी तरह कभी रुख़से नक़ाब उलट न दे ।
हुस्नपै अपने रहमकर, इश्क़की सादगी न देख ॥

सुनता हूँ कि हर हालमें वह दिलके क़रीं हैं ।
जिस हालमें हूँ अब मुझे अफ़सोस नहीं है ॥

वे आये हैं, ऐ दिल ! तेरे कहनेका यक़ीं है ।
लेकिन मैं करूँ क्या ? मुझे फ़ुर्सत ही नहीं है ॥

क्या शौक़ है, क्या ज़ौक़ है, क्या रब्त है, क्या ज़ब्त ?
सजदा है जबींमें, कभी सज्देमें जबीं है ॥

अज़ल ही से चमनबन्दे मुहब्बत ।
यही नैरंगियाँ दिखला रहा है ॥
कली कोई जहाँपर खिल रही है ।
वहीं एक फूल भी मुर्झा रहा है ॥

मेरे ग़मख़ानये मुसीबतकी ।
चाँदनी भी स्याह होती है ॥

हम इश्क़के मारोंका इतना ही फ़साना है ।
रोनेको नहीं कोई, हँसनेको ज़माना है ॥

मेरा क़िस्सये इश्क़ फ़ानी नहीं है।
यह मुर्दा दिलोंकी कहानी नहीं है॥
मुहब्बत है अपनी भी लेकिन न अपनी।
जवानी है लेकिन दिवानी नहीं है॥

ख़िजल जिससे होना पडे दिल ही दिलमें।
वोह कुछ और है महर्बानी नहीं है॥
न सुनिये, न सुनिये ग़मोदर्द मेरा।
ये है आप-बीती, कहानी नहीं है॥

मैं तो जब मानूँ मेरी तौबाके बाद।
करके मजबूर पिला दे साक़ी॥

तक़दीरसे शिकायत कोई न आस्माँसे।
शिकवा है सिर्फ़ अपने एक ख़ास महर्बाँसे॥

अल्लाह अल्लाह हस्तिये शाइर।
क़ल्ब गुचेका, आँख शबनमकी॥
इस ज़मानेका इनक़लाब न पूछ।
रह गई शक्ल आदमकी॥

एक जगह बैठके पीलूँ मेरा दस्तूर नहीं।
मैकदा तंग बना दूँ मुझे मंज़ूर नहीं॥

यह नशा भी क्या नशा है, कहते हैं जिसे हुस्न।
जब देखिये कुछ नींद-सी आँखोंमें भरी है॥

मुझको ख़ुदायेइश्क़ने जो भी दिया बजा दिया।
उतनी ही ताबेज़ब्त दी, जितना कि ग़म सिवा दिया॥

फ़ितरतने मुहब्बतकी इस तरह् बिना डाली ।
जो फ़ंद नजर आई, इक वार उठा डाली ॥

उनको अपनी शानेरहमतपर ग़रूर ।
मुझको अपनी बेबसीपर नाज है ॥

वोह् मेरी तरफ़ बढ़ा दे गुलचीं !
जिन फूलोंमें रंग है न बू है ॥

इधर दामन किसीका झाड़कर महफ़िलसे उठ जाना ।
उधर नजरोंमें हर-हर चीजका बेकार हो जाना ॥

उदासी तबियतपै छा जायगी ।
उन्हें जब मेरी याद आ जायगी ॥

सदमोंकी जान, दर्दका क़ालिब दिया मुझे ।
जो कुछ दिया किसीने मुनासिब दिया मुझे ॥

पाँव लटकाये हुए क़ब्रमें बैठे हैं 'जिगर' !
देर चलनेमें नहीं, सुबह् चले, शाम चले ॥

इन्हें आँसू समझकर यूं न मिट्टीमें मिला जालिम !
पयामे दर्देदिल है और आँखोंकी जबानी है ॥

मौतोहयातमें है सिर्फ़ एक क़दमका फ़ासिला ।
अपनेको जिन्दगी बना, जल्वयेजिन्दगी न देख ॥

सबपै तू महर्बान है प्यारे !
कुछ हमारा भी ध्यान है प्यारे ?
हमसे जो हो सका सो कर गुजरे ।
अब तेरा इम्तहान है प्यारे ॥

सोज़े तमाम चाहिये, रंगे दवाम चाहिये।
शमअ तहेमज़ार हो, शमअ सरेमज़ार क्या?

हँसी फिर उड़ने लगी इश्क़के फ़सानेकी।
नक़ाब उठाओ, बदल दो फ़िज़ा ज़मानेकी॥
चली कुछ ऐसी मुख़ालिफ़ हवा ज़मानेकी।
पनाह बर्क़ने ली मेरे आशियानेकी॥
दिलमें बाक़ी नहीं, वोह जोशेजुनूँ ही, वर्ना।
दामनोंकी न कमी है न गिरेबानोंकी॥

पहले कहाँ ये नाज़ थे, ये इश्वओ अदा।
दिलको दुआएँ दो, तुम्हें क़ातिल बना दिया॥

आँखोंमें नूर, जिस्ममें बनकर वोह जाँ रहे।
यानी हमींमें रहके वोह हमसे निहाँ रहे॥

जाहिद! यह मेरी शोख़ियेरिन्दाना देखना।
रहमतको बातों-बातोंमें बहलाके पी गया॥

बुतख़ानेमें आ निकले, तो काबेकी बिना डाल।
काबेमें पहुँच जायें तो बुतख़ाना बना दे॥

दरियाकी ज़िन्दगीपर सदक़े हज़ार जानें।
मुझको नहीं गवारा साहिलकी मौत मरना॥

५ दिसम्बर १९४६

३१

प्रोफ़ेसर रघुपतिसहाय 'फ़िराक़' गोरखपुरी

फ़िराक़ साहब गोरखपुरके रहनेवाले हैं। आपके पिता मुंशी गोरखप्रसाद 'इबरत' उपनामसे शायरी करते थे। फ़िराक़ साहब कांग्रेस आन्दोलनमें जेलयात्रा और कांग्रेसके अण्डर सेक्रेटरीका कार्य भी कर चुके हैं। १९३०से आप इलाहाबाद युनिवर्सिटीमें अंग्रेज़ीके लेक्चरार हैं। आपकी शायरीका आरम्भ गज़लगोईसे हुआ है और मोमिनके रंगमें इश्क़िया गज़ल कहते हैं। प्रसिद्ध आलोचक 'नियाज़' फ़तहपुरीने फ़िराक़ साहबके कलामकी आलोचना करते हुए फ़र्माया है—

"दौरे हाज़र (वर्तमान युग) इसमें शक नहीं नसरियतसे मुतअल्लिक़ दौर (शायरीकी उन्नतिका युग) है; और मग़रिबी तालीम (पश्चिमी शिक्षा) ने अहलियते इन्सानी (मनुष्य-स्वभाव) को इतना बुलन्द और वसीअ कर दिया है कि हमको हर जगह अच्छे-अच्छे सुख़नगो नज़र आ रहे हैं; लेकिन मुझसे यह सवाल किया जाए कि इनमें कितने ऐसे हैं कि जिनके शानदार मुस्तक़बिलका पता उनके हालसे चलता है तो यह फ़हरिस्त बहुत मुख़्तसिर हो जायगी। इतनी मुख़्तसिर कि अगर मुझसे कहा जाय कि मै बिना ताम्मुल उनमेंसे किसी एकका इन्तख़ाब कर दूँ तो मेरी ज़बानसे फ़ौरन 'फ़िराक़' गोरखपुरीका नाम निकल जायगा।

"......शायरीके लिये अल्फ़ाज़का इन्तख़ाब और तर्जेअदा दो निहायत ज़रूरी चीजें हैं; लेकिन अगर इसीके साथ ख़याल भी पाकीज़ा हो तो क्या कहना? इसको दो आतिशा सह आतिशा (दुगुना

तिगुना दहकता हुआ जाज्वल्यमान कथन) जो कुछ कहिये कम है। फिर चूंकि फ़िराक़के कलाममें इन तीनोंका इज्तमा (मिश्रण) है, इस लिये कोई वजह नहीं कि उसे 'क़द्रे अव्वल' का मर्तबा (प्रथम-श्रेणीका सम्मान) न दिया जाय।"[1]

---

[1]इन्तकादयात हिस्सा अव्वल पृ०, ३४२।

सरमें सौदा भी नहीं, दिलमें तमन्ना भी नहीं ।
लेकिन इस तर्केमुहब्बतका भरोसा भी नहीं ॥
मुद्दतें गुज़रीं तेरी याद भी आई न हमें ।
और हम भूल गये हों, तुझे ऐसा भी नहीं*
महर्बानीको मुहब्बत नहीं कहते ऐ दोस्त !
आह ! अब मुझसे तुझे रंजिशेबेजा भी नहीं ॥

न समझनेकी हैं बातें न यह समझानेकी ।
जिन्दगी उचटी हुई नींद है दीवानेकी ॥

क़ैद क्या, रिहाई क्या, है हमींमें हर आलम ।
चल पड़े तो सहरा है, रुक गये तो जिन्दाँ है ॥

कहाँका वस्ल तनहाईने शायद भेस बदला है ।
तेरे दमभरके आजानेको हम भी क्या समझते हैं ॥

तू न चाहे तो तुझे पाके भी नाकाम रहें ।
तू जो चाहे तो ग़मेहिज्र[1] भी आसाँ हो जाए ॥

पर्दयेयासमें[2] उम्मीदने करवट बदली ।
शबेग़म तुझमें कमी थी इसी अफ़सानेकी ॥

---

*नहीं आती तो याद उनकी महीनोंतक नहीं आती ।
मगर जब याद आते हैं तो अकसर याद आते हैं ॥

—हसरत मोहानी

[1]विरह-दुख; [2]निराशाके पर्देमें ।

फरेबेसब्र खाकर मौतसे हस्ती समझ बैठे।
न आया चैरसाशीरो हयातेजाविदाँ होना ॥

न कोई वादा, न कोई यक़ीं, न कोई उमीद।
मगर हमें तो तेरा इन्तज़ार करना था ॥

ग़रज़ कि काट दिये ज़िन्दगीके दिन ऐ दोस्त!
वोह तेरी यादमें हों या तुझे भुलानेमें ॥

जिनकी सदाएदर्दसे नींदें हराम थीं।
नाले अब उनके बन्द हैं तूने सुना नहीं?

नैरंगिये उमीदेकरम उनसे पूछिये।
जिनको जफायेयारका भी आसरा नहीं ॥

या हासिलेपयाम तेरा ऐ निगाहेनाज़!
वोह राज़ेआशिकी जिसे तूने कहा नहीं ॥

हर गर्दिशेहयात हैं, दौरेहयाते नौ।
दुनियाको जो बदल न दे वोह मैक्दा नहीं ॥

उस रहगुज़ारपर है रवाँ कारवाने इश्क़।
कोसों जहाँ किसीको खुद अपना पता नहीं ॥

मैं हूँ, दिल है, तनहाई है।
तुम भी जो होते अच्छा होता ॥

वादियेदर्दसे कौन यह निकला।
आँसू रोके, दिलको सम्हाले ॥

थरथरी-सी है आस्मानोंमें।
ज़ोर कितना है नातवानोंमें ॥

---

[1]अमर जीवन।

चुपके-चुपके उठ रहे हैं मदभरे सीनोंमें दर्द ।
धीमे-धीमे चल रही हैं इश्क़की पुरवाइयाँ ॥

पूछ मत कैफ़ीयतें उनकी, न पूछ उनका शुमार ।
चलती-फिरती हैं मेरे सीनेमें जो परछाइयाँ ॥

यूँही 'फ़िराक़'ने उम्र बसर की ।
कुछ ग़मेजानाँ, कुछ ग़मेदौराँ ॥

थी यूँ तो शामेहिज्र, मगर पिछली रातको ।
वह दर्द उठा 'फ़िराक़' कि मैं मुस्करा दिया ॥

अभी तो ऐ ग़मे पिन्हाँ जहान बदला है ।
अभी कुछ और जमानेके काम आयेगा ॥

जिनकी तामीर इश्क़ करता है ।
कौन रहता है इन मकानोंमें ॥

शाम भी थी धुआँ-धुआँ, हुस्न था कुछ उदास-उदास ।
दिलको कई कहानियाँ याद-सी आके रह गईं ॥

तू याद आये मगर जौरोसितम तेरे न याद आएँ ।
तसव्वुरमें यह मायूसी बड़ी मुश्किलसे आती है ॥

तेरे ख़यालमें तेरी जफ़ा शरीक नहीं ।
बहुत भुलाके तुझे कर सका हूँ याद तुझे ॥

जो जहर हलाहल है, अमृत भी वही लेकिन ।
मालूम नहीं तुझको अन्दाज ही पीनेके ॥

एक फ़सूँ सामाँ निगाहेआश्नाकी देर थी ।
इस भरी दुनियामें हम तनहा नजर आने लगे ॥

रफ़्ता-रफ़्ता इश्क़ मानूसेजहाँ होने लगा ।
ख़ुदको तेरे हिज्रमें तनहा समझ बैठे थे हम ॥

फिराक साहब सिर्फ लिखनेके लिये ही नही लिखते, बल्कि जब वे हृदयगत भावोंको दबा कर रखनेमें मजबूर हो जाते है, तभी कुछ लिखते हैं। नियाज साहबको एक पत्रमें लिखते हैं—"जिस तरह रोनेसे कुछ फ़ायदा नही होता, फिर भी आँसू निकल ही आते हैं, उसी तरह गजल कहनेसे होता क्या है? मगर मजबूरियाँ और मायूसियाँ झख मारनेको मजबूर कर देती हैं।" यही वजह है कि आप बडे-बडे उस्तादोंके होते हुए भी इस क्षेत्रमें बहुत जल्द चमक उठे।

फिराक साहब अस्थिर स्वभाव और भावुक प्रकृतिके मनुष्य हैं। उनकी यह अस्थिरता और भावुकता उन्हें किसी एक रगमें नही रहने देती। प्रारम्भ उन्होंने गज़ल-गोईसे की किन्तु सहसा वे 'आसी' ग़ाजीपुरीकी रुबाइयोंसे प्रभावित होकर रुबाइयाँ कहने लगे। 'जोश' मलीहाबादीके रगमें भी लिखनेका प्रयत्न किया, और धीरे-धीरे अपना जुदागाना रग अख्तियार कर लिया। नमूना देखिये—

रूप

यह रुबाइया उनकी 'रूप' पुस्तक से ३५१ रुबाइयोंमेंसे ५ बतौर नमूना दी जा रही हैं। इनमे जिस तरहके भाव, भाषा और उपमाएँ व्यक्त की गई हैं, आजकल यह रग फिराक साहबके अधिकाश कलाममें पाया जाता है।

अब्रू घुलते हैं या लचकती है कटार,
यह रूप कि रहमतोंकी जैसे चमकार।
यह लोच, यह धज, यह मुस्कराहट, यह निगाह,
यह मौजेनफ़स कि साँस लेती है बहार॥

इन्सानके पैकरमें उतर आया है माह।
कद या चढती नदी है अमरितकी अथाह।

लहराते हुए बदनपै पड़ती है जब आँख,
रसके सागरमें डूब जाती है निगाह ॥

हैं रूपमें वह खटक, वोह रस, वोह झंकार,
कलियोंके चटखते वक़्त जैसे गुलज़ार।
या नूरकी उँगलियोंसे देवी कोई,
जैसे शबेमाहमें बजाती हो सितार ॥

वोह पेंग है रूपमें कि बिजली लहराये,
वह रस आवाज़में कि अमरित ललचाये।
रफ़्तारमें वोह लचक पवन-रस बलखाये,
गेसुओंमें वह लटक कि बादल झँडलाये ॥

क़तरे अरक़ेजिस्मके मोतीकी लड़ी,
है पैकरे नाज़नीं कि फूलोंकी छड़ी।
गर्दिशमें निगाह है कि बटती है हयात,
जन्नत भी है आज उम्मीदवारोंमें खड़ी ॥

आज दुनिया पै रात भारी है

फ़िराक़ साहब वर्त्तमान युगकी प्रगतिशील शायरीसे प्रभावित होकर कभी सामाजिक, इन्क़लाबी और कभी इश्क़िया नज़्म लिखते हैं :—

. . . .

आपसे डर रही है यह दुनिया, यह भी किन आफ़तोंकी मारी है।

. . . .

नींद आती नहीं सितारोंको, आज दुनियापै रात भारी है।
गर्दिशें बन्द हैं ज़मानेकी, बेक़रारी-सी बेक़रारी है ॥

. . . .

फ़िराक़ साहब सिर्फ़ लिखनेके लिये ही नहीं लिखते, बल्कि जब वे हृदयगत भावोंको दबा कर रखनेमें मजबूर हो जाते हैं, तभी कुछ लिखते हैं। नियाज़ साहबको एक पत्रमें लिखते हैं—"जिस तरह रोनेसे कुछ फ़ायदा नहीं होता, फिर भी आँसू निकल ही आते हैं, उसी तरह ग़ज़ल कहनेसे होता क्या है? मगर मजबूरियाँ और मायूसियाँ भन्न मारनेको मजबूर कर देती हैं।" यही वजह है कि आप बड़े-बड़े उस्तादोंके होते हुए भी इस क्षेत्रमें बहुत जल्द चमक उठे।

फ़िराक़ साहब अस्थिर स्वभाव और भावुक प्रकृतिके मनुष्य हैं। उनकी यह अस्थिरता और भावुकता उन्हें किसी एक रंगमें नहीं रहने देती। प्रारम्भ उन्होंने ग़ज़ल-गोईसे की। किन्तु सहसा वे 'आसी' ग़ाज़ीपुरीकी रुबाइयोंसे प्रभावित होकर रुबाइयाँ कहने लगे। 'जोश' मलीहाबादीके रंगमें भी लिखनेका प्रयत्न किया, और धीरे-धीरे अपना जुदागाना रंग अख़्तियार कर लिया। नमूना देखिये—

रूप

यह रुबाइयाँ उनकी रूप' पुस्तक से ३५१ रुबाइयोंमेंसे ५ बतौर नमूना दी जा रही हैं। इनमें जिस तरहके भाव, भाषा और उपमाएँ व्यक्त की गई हैं आजकल यह रंग फ़िराक़ साहबके अधिकांश कलाममें पाया जाता है।

> अब घुलते हैं या लचकती है कटार,
> यह रूप कि रहमतोंकी जैसे चुमकार।
> यह लोच, यह धज, यह मुस्कराहट, यह निगाह,
> यह मौजेनफ़स कि साँस लेती है बहार॥
>
> इन्सानके पैकरमें उतर आया है माह।
> कद या चढ़ती नदी है अमरितकी अथाह।

हस्तिए मेस्तीनुमाँकी क़सम, ज़िन्दगी ज़िन्दगीसे भारी है।
डर रहे हैं शक्तिसे दुश्मनसे, लड़नेवालोंकी धज्जदारी है॥

मुल्कको हार बैठे, जीतके जग, वाह क्या मुह्अावरअारी है।

हमसे लड़ती है मौतकी आँखें, अपनी ऐसों ही से तो यारी है।

मिट चला इम्तयाज़े रजोनिशान, वाह क्या शाने ग़मगुसारी है।

मौतसे खेलते हैं हम उश्शाक़, ज़िन्दगी है तो बस हमारी है।

नई आवाज़

अफ़सुर्दासे क्यों ऐ दिल! सब दाग़ हैं सीनेके।
तुझको तो सलीक़ हैं, मरनके न जीनेके॥
माज़ीके भँवरसे अब मासूमियत उभरेगी।
वोह पार नज़र आए क़िस्मतके सफ़ीनेके॥

मज़हब कोई लौटाले और उसकी जगह दे दे।
तहज़ीब सलीक़को, इन्सान क़रीनेके॥

तक़दीरेआदम

नसीबेख़ुफ़्ताके शाने झिंझोड़ सकता हूँ,
तिलस्मे ग़फ़लते कौनैन तोड़ सकता हूँ।

न पूछ है मेरी मजबूरियोंमें क्या कसबल ?
मुसीबतोंकी कलाई मरोड़ सकता हूँ।
उचल पड़ें अभी आबेहयातके चश्मे,
शरारे संगको ऐसा निचोड़ सकता हूँ॥

. . . .

कुछ ग़मे जाना कुछ ग़मे दौरां

तेरे आनेकी महफ़िलने कुछ आहट-सी जो पाई है।
हर इकने साफ़ देखा शमअ़की लौ लड़खड़ाई है॥
तपाक और मुस्कराहटमें भी आँसू थरथराते हैं।
निशाते दीद भी चमका हुआ दर्देजुदाई है॥

. . . .

सकूते बहरोबरकी ख़िलवतोंमें खो गया हूँ जब,
उन्हीं मौक़ोंपे कानोंमें तेरी आवाज़ आई है॥
बहुत कुछ यूँतो था दिलमें मगर लब सी लिये मैंने।
अगर सुन लो तो आज इक बात मेरे दिलमें आई है॥

. . . .

तेरी दुनिया तेरे उक़बे तो कबके मिट चुके वाइज़ !
जमानेमें नई इन्सानियतकी अब ख़ुदाई है।

. . . .

शामेअयादत

फ़िराक़ साहबने यह ४६० अशआरकी तूल नज़्म भिन्न-भिन्न अवसरोंपर अपनी प्रेयसी के लिये १९४२—४४ में लिखी है। प्रेयसीके नख, शिख, स्वभाव, प्रेम आदिका बड़ा ही सजीव चित्रण किया है। स्थानाभावके कारण केवल ७ शेर पेश किये जाते हैं। सिविल अस्पताल इलाहाबादमें रुग्ण शैयापर पड़े हुए फ़िराक़ फ़र्माते हैं:—

यह कौन मुस्कराहटोंका कारवाँ लिये हुए,
शबाबो शेरो रंगो नूरका धुआँ लिये हुए।
धुआँ कि बर्क़ेहुस्नका महकता शोला है कोई,
चटीली ज़िन्दगीकी शादमानियाँ लिये हुए।
लबोंसे पखड़ी गुलाबकी हयात माँगे है,
कँवल-सी आँख सौ निगाह मेहरबाँ लिये हुए।
क़दम-क़दमपै दे उठी है लौ ज़मीनेरहगुज़र,
अदा-अदामें बेशुमार बिजलियाँ लिये हुए।

•

जगानेवाले नग़मयेसहर लबोंपै मौजज़न,
निगाहें नींद लानेवाली लोरियाँ लिये हुए।

स्वस्थ होनेपर—

हर अदा गोया पयामे ज़िन्दगी देती हुई,
सुबह तक हुस्नमें अँगड़ाइयाँ लेती हुई।
जिस्मकी ऐसी सजावट रंगका ऐसा निखार,
सरबसर साँचेमें गोया ढल गई रूहेबहार।

क्या कहना!

रसमें डूबा हुआ लहराता बदन क्या कहना!
करवटें लेती हुई सुब्हेचमन क्या कहना!!
मदभरी आँखोंकी अलसाई नज़र पिछली रात।
नींदमें डूबी हुई चन्द्रकिरन क्या कहना!!

दिलके आइनेमें इस तरह उतरती है निगाह।
जैसे पानीमें लचक जाये किरन क्या कहना!!
तेरी आवाज़ सवेरा तेरी बातें तड़का।
आँखें खुल जाती हैं एजाज़ेसख़ुन क्या कहना!!

. . . .

फ़िराक़ साहब किसीके अनुयायी नहीं। पहले आप मोमिनके रंगमें लिखते थे, परन्तु अब अपना जुदागाना रंग अख़्तियार किया है। ग़ज़लों, रुबाइयों और नज़्मोंमें आप नये-नये अनोखे शब्द, विचित्र-विचित्र उपमाएँ और कल्पनातीत कल्पनाएँ ऐसे ढंगसे समोते हैं कि आपके आलोचक और प्रशंसक आश्चर्यचकित रह जाते हैं। इस तरहके रंगमें लिखनेवाले फ़िराक़ साहब उर्दू-साहित्यमें अकेले और यकता हैं। फ़िराक़ साहबके इस तरहके क़लामको कुछ लोग मोहमिल (अर्थहीन दुरूह) कहकर मज़ाक़ उड़ाते हैं और कुछ लोग अछूती कल्पना समझकर प्यार करते हैं। नमूना देखिये :—

आधीरातको—

अब आप अपनी ही परछाईंमें है घने अशजार,
फ़लकपै तारोंको पहली जम्हाइयाँ आईं।
तम्बोलियोंकी दुकानें कहीं-कहीं हैं खुलीं,
कुछ ऊँघती हुई बढ़ती हैं शाहराहोंपर।
सवारियोंके बड़े घुंगरुओंकी झनकारें॥
खड़े हैं सिमटे हुए ऐसे हारसिंगारके पेड़।
जवानी जैसे हयाकी सुगन्धसे बोझल॥
यह मौजेनूर, यह ख़ामोश और खुली हुई रात,
कि जैसे खिलता चला जाए इक सफ़ेद कँवल।

. . . .

कँवलकी मुट्ठियोंमें बन्द है नदीका सुहाग,
जहाँमें जाग उठा आधीरातका जादू ॥
न मुफ़लिसी हो तो कितनी हसीन है दुनिया,
यह भांय-भांय-सी रह-रहके एक झींगरकी।
हिनाकी टट्टियोंमें जैसे सरसराहट-सी,
यह सरनगूँ है सरेशाख फूल गुड़हलके,
कि जैसे बेबुझे अंगारे ठण्डे पड़ जाएँ।

करीब चाँदके मँडला रही है इक चिड़िया,
भँवरमें नूरके करवटसे जैसे नाव चले।

मेरे ख़यालसे अब एक बज रहा होगा।

कुछ आलोचकोंका मत है कि फ़िराक़ साहब चन्द सालसे प्रगतिशील शायरीके हमाममें नंगे कूद पड़े हैं[1], और उनकी नग्न तथा अश्लील शायरीके प्रमाणमें उनके इस तरहके अशआर पेश करते हैं —

यह भीगी मसें रूपकी जगमगाहट।
यह महकी हुई रसमसी मुस्कराहट ॥
तुझे भींचने वक्त नाज़ुक बदनपर।
वोह कुछ जामयेतनमेंकी सरसराहट ॥
पसेख़्वाब पहलूए आशिक़से उठना।
धुले सादा जोड़ेकी वह मलगजाहट ॥

---

[1] शायर फ़रवरी-मार्च-१६४६, पृ० ५५।

यह वस्लका है करिश्मा कि हुस्न जाग उठा।
तेरे बदनकी कोई अब खुद आगही देखे॥

जरा विसालके बाद आइना तो देख ऐ दोस्त!
तेरे जमालकी दोशीज़गी निखर आई॥

कुछ समालोचकोंका कथन है कि कलाको कलाकी दृष्टिसे देखना चाहिये। कला न चरित्रसे सम्बन्ध रखती है न दोषोंसे। वह केवल सौन्दर्यसे सम्बन्ध रखती है। जिसका अन्तरंग और वाह्य सुन्दर है वह कला है। चाहे वह नग्न ही क्यों न हो। असुन्दरता कला नहीं। अच्छे-अच्छे परिधानोंसे वेष्टित और मूल्यवान आभूषणोंसे अलंकृति भी आकर्षण हीन है, यदि उसमें कला नही है तो। फ़िराक़ साहबका भी यही सिद्धान्त मालूम होता है। वे इस बातकी चिन्ता नहीं करते कि नग्न चित्र हमारे सामाजिक जीवनपर क्या प्रभाव डालेगा और उसका क्या घातक प्रभाव हमारी पीढ़ियों पर पड़ेगा। वह तो कला-उपासक हैं और कलाका सौन्दर्य निखारनेमें वह नग्न, अश्लील सब कुछ लिख सकते हैं। इसलिये हमने फ़िराक़ साहबको उन प्रगतिशील शायरोंके साथ नही रखा है जो कलाको जीवनके लिये उपयोगी मानते हैं। मनुष्यके हृदयगत भावोंके व्यक्त करनेका नाम शायरी है। वह चाहे गद्यमें प्रस्फुटित हो या पद्यमें। गद्य और पद्यमें अन्तर केवल इतना ही है कि गद्यका क्षेत्र विस्तृत है और पद्यका अत्यन्त सीमित।

फ़िराक़ साहब अपने मनोभावोंको बड़ी खूबीसे गद्य और पद्यमें प्रकट करते हैं। उनके जो अन्तस्थलमें होता है वह कलाकी साधनासे उभर आता है। इसीलिये वह कभी इश्क़िया ग़ज़ल कहते-कहते जब वाह्य समाजिक जीवनसे प्रभावित होते हैं तो यकायक इन्क़लाबी नज़्म कहने लगते हैं, और फिर जब उन्हें अपना महबूब दिखाई देता है या याद आता है तो फिर मादक स्वर अलापने लगते हैं। क्या कहना चाहिये और क्या नहीं, प्रेमोन्मादमें उन्हें पता नहीं रहता।

फ़िराक़ साहबकी शायरी नये-नये मार्गोंको खोजती हुई बढ़ रही है। देखें कब वह अपने ठीक लक्ष्यको पहुँचती है। फ़िराक़ साहब यूँ तो नज़्म भी लिखते हैं मगर मुख्य अधिकार आपको ग़ज़लगोई पर है, और इस क्षेत्रमें आप अपना विशेष स्थान रखते हैं। इस परिच्छेदमें हमने अनुभवी वयोवृद्ध उस्तादोंके पास नौजवान ग़ज़लगो शायरोंमेंसे सिर्फ़ फ़िराक़ को बैठाया है, क्योंकि फ़िराक़ साहब नौजवान ग़ज़लगो शायरोंमें इम्तियाज़ी हैसियत रखते हैं।

१२ मार्च १९४८

सहायक ग्रंथ-सूची

प्रस्तुत पुस्तकमें ३१ शायरोंका कलाम उनकी निम्न-लिखित कृतियोंसे संकलित किया गया है :—

१ मीर

इन्तख़ाबेमीर—मौलवीनूरुअलरहमान (मकतबेजामा, देहली ,१९४१)

२ दर्द

दीवानेदर्द (मुज़फ़्फ़र बुकडिपो, लाहौर)

३ नज़ीर

कुलयातेनज़ीर (नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, १९२२)

४ ज़ौक़

दीवानेज़ौक़—मुहम्मदहुसेन आज़ाद (आज़ाद बुकडिपो,लाहौर१९३२)

५ ग़ालिब

दीवानेग़ालिब—अलीहैदर तबातबाई (अनवर मतालिस प्रेस, लखनऊ)

६ मोमिन

दीवानेमोमिन—ज़ियाअहमद एम० ए० (शान्तिप्रेस, इलाहाबाद १९३४)

७ अमीर मीनाई

(खेद है कि इनका दीवान हमें नहीं मिल पाया । लाचार, कलामका संकलन 'मज़ामीनेचकवस्त' वग़ैरहसे करना पड़ा ।)

८ दाग़

मुन्तख़िबेदाग़—अहसन माहरहरवी

६ आजाद

नरमआजाद—मौ० मुहम्मदहुसन आजाद (लाहौर १६४४

१० हाली

मुसद्दसहाली (ताजप्रस लाहौर)

दीवानहाली (एम० फरमान अली बुकसलर लाहौर)

११ अकबर

कुलियातअकबर (तीन भाग)

१२ इकबाल

बाँगदरा—चौधरी मुहम्मद हुसन एम० ए० (जावदइकबाल मयरोड लाहौर १६४२)

बालजिबरील—चौधरी मुहम्मद हुसन एम० ए० (जावदइकबाल मयोरोड लाहौर १६४६)

१३ चकबस्त

सुबहवतन (हिन्दी)—(इडियन प्रस प्रयाग १६४४)

१४ जोश

रूहअदब— (मकतबउर्दू लाहौर १६४२)

हर्फहिकायत— (१६४३)

शोलओशबनम—(१६४३)

फिक्रोनिशात— (तृतीय संस्करण)

आयातोनगमात—(१६४१)

सफोसुबू—

नक्शोनिगार—(कुतुबखाना रशीद दहली १६३६)

अर्शोफर्श

१५ सीमाब

सोजोसाज्ञ—(दफ्तर शादर आगरा १६४१)

कारेग्रमरोज़—(दफ़्तर शाइर आगरा १९३४)

१६ अहसान

आतिशेख़ामोश—(मकतबेदानिश, लाहौर)
नवायेकारगर—(" ")
दर्देज़िन्दगी— (" ")
जोदेहनी— (" ")

१७ वर्क़

मतलयेअनवार—(आर्य बुकडिपो, नई सड़क, देहली, १९२९)
हर्फ़ेनातमाम—शीशचन्द्र सक्सेना (चावड़ी बाज़ार, देहली, १९४१)

१८ हफ़ीज़

नग़मयेज़ार—(कुतुबख़ाना शाहनामा, लाहौर, १९३२)
सोज़ोसाज—(" " " १९३३)
तस्वीरेकाश्मीर—(उर्दू एकेडेमी, लाहौर, ३ मई, १९३७)

१९ साग़र

रंगमहल—(इदारहे इशाअते उर्दू, हैदराबाद, १९४३)
रस-सागर (हिन्दी)

२० अख़्तर शीरानी

सुबहेबहार—(हामिद एण्ड सन्स, अलीगंज टोंक स्टेट)
नग़मयेबहार—(मकतबेउर्दू, लाहौर, १९३९)
शेरस्तान—(उर्दू एकेडेमी, लाहौर, १९४१)

२१ अर्श मलसियानी

(उर्दू-पत्र-पत्रिकाओंसे संकलित)

२२ फ़ैज़

नक़्शेफ़रियादी

२३ मजाज़
  आहंग—(मक्तबेउर्दू, लाहौर, जनवरी १९४३)

२४ जरबी
  फ़िरोज़ाँ—(मक्तबेउर्दू, लाहौर, १९४२ के क़रीब)

२५ साहिर लुधियानवी
  तलख़ियाँ—(नया इदारा, लाहौर, तीसरी आवृत्ति)

२६ साक़िब
  दीवानेसाक़िब—(निज़ामी प्रेस, लखनऊ १९३६)

२७ हसरत
  इन्तख़ाबेहसरत—(जामेदेहली)
  कुलियातेहसरत मोहानी—(हसरत मोहानी, कानपुर, १९४३)

२८ फ़ानी
  वज्दानियत—(हैदराबाद, १९४०)
  बाक़ियातेफ़ानी (जलील बुकडिपो, हैदराबाद)

२९ असग़र
  सरूरेज़िन्दगी—(ताज कम्पनी, लाहौर)
  निशातेरूह—(सद्दीक़ बुकडिपो, लखनऊ)

३० जिगर
  शोलातूर—(मक्तबजामा, देहली, १९४२)

३१ फ़िराक़
  रूहेकायनात—(संगम पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद, १९४५)
  शबनमिस्तान—(" " " १९४७)
  रमज़ोकनायात—(" " " १९४७)
  मशअल—(नसरादे नौ, लखनऊ १९४६)
  रूप—(संगम पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद १९४६)

शायरोंका जीवन-वृत्तान्त, उर्दू-शायरीकी प्रगतिका ऐतिहासिक और आलोचनात्मक परिचय मुझे उपर्युक्त पुस्तकोंकी भूमिकाओंके अतिरिक्त निम्न-पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओंके सैकड़ों लेखोंसे मिला है। इनके प्रकाशमें जो मैं देख सका हूँ, वही ज़बानेक़लमसे बयान किया है। आवश्यकतानुसार प्रमाण-स्वरूप जिन पुस्तकोंके उद्धरण आदि दिये गये हैं, उनका यथा-स्थान उल्लेख भी कर दिया है।

आबेहयात—मौ० मुहम्मदहुसेन आज़ाद
तारीख़ेअदबेउर्दू—रामबाबू सक्सेना, डिप्टी कलेक्टर (नवल किशोर प्रेस, लखनऊ)
नये अदबी रुजाहनात—सैयद एजाज हुसेन एम० ए० (इसरार करीमी प्रेस, इलाहाबाद)
यादगारेग़ालिब—हाली
मज़ामीनेचकवस्त—पं० बृजनारायण 'चकवस्त'
हिन्दी, उर्दू, हिन्दुस्तानी (हिन्दी)—स्व० पं० पद्मसिंह शर्मा (हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद)
आजकल (उर्दू पाक्षिक)—सम्पा० सैयद वक़ार अज़ीम एम० ए० (देहली, जून, १९४४ से अक्टूबर, १९४७ तक)
निगार (मासिक)—नियाज़ फ़तेहपुरी (जुलाई, १९४५ से मई, १९४८ तक। अमीनाबाद पार्क लखनऊ)
शायर (मासिक)—एजाज़ सद्दीक़ी (जनवरी, १९४४ से मई, १९४८ तक। आगरा)
एशिया (मासिक)—साग़िर निज़ामी (बम्बई, सितम्बर १९४३ और जनवरी अप्रैल १९४४ के तीन अंक)
नक़्दोनज़र—हामिद हुसेन क़ादरी (शाह एण्ड कं०, आगरा १९४२)
इन्तक़ादयात—भाग दो—नियाज फ़तहपुरी (अब्दुल हक़ एकेडमी, हैदराबाद दकन १९४४)

अन्दाजे—फ़िराक़ गोरखपुरी (हिन्दोस्तानी पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद)
नया अदब मेरी नजरमें—आग़ा सरमुश कज़लबाश (हिन्दोस्तानी पब्लिशर्स, देहली, १९४४)
सनअतीदे जाविद—सैयद एहतमाम हुसैन (इदारहे इशाअत उर्दू, हैदराबाद)
हिन्दोस्तानी मुसलमान शायर—अब्दुल्ला बट (मक्तबे उर्दू, लाहौर)
रहिमन विलास (हिन्दी)—ब्रजरत्न दास बी० ए०, एल-एल० बी० रामनारायणलाल इलाहाबाद स० १९८७)
रसखान (हिन्दी)—चन्द्रशेखर पाण्डेय एम० ए० (हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग स १९९९)
मस्ती हिन्दी—रामचन्द्र वर्मा (साहित्य रत्न माला, बनारस, स० २००१)

३१ शायराके अतिरिक्त और जिन शायरोंकी नज़्म या अशआर पुस्तकमें दिये गये हैं, उनका सकलन ऊपर लिखी किताबोंके अलावा नीचे लिखी किताबोंसे भी किया गया है —

ईरानके सूफ़ी कवि (हिन्दी)—बाके बिहारी, कन्हैयालाल (भारती भण्डार इलाहाबाद)
चिराग़ेनूर—बेहज़ाद लखनवी
मयखानयरियाज़—तस्लीम मीनाई
तराना—यगाना चगेज़ी
बादहसरजोश—जोशमलसियानी
गुलकदा—अज़ीज लखनवी
गुफ्तारबखुद—बखुद देहलवी
तीरानश्तर—आग़ा शाइर देहलवी
इल्म मजलिसी भाग ७

उर्दू-शब्दोंके अर्थ लिखनेमें विशेषकर इन दो कोषोंसे सहायता ली गई है :—

सईदी डिक्शनरी—मौ० मुहम्मदमुनीर (मतबये मजीदी, कानपुर १६४०)

उर्दू-हिन्दी-कोष—रामचन्द्र वर्मा (हिन्दी-ग्रंथ-रत्नाकर का० बम्बई १६४०)

शेरोशायरीके निर्माणमें ३००-४०० ग्रन्थोंका परिशीलन हुआ है। सैकड़ों मुशायरों और उर्दू-साहित्यक मित्रोंकी अदबी चर्चाओंसे भी अनुभूति मिली है। जिन पुस्तकोंके उद्धरण दिये गए हैं या जिनसे जीवन वृत्तांत मालूम हुआ है, और शेर संकलित हुए हैं, केवल उन्हीं पुस्तकोंका ऊपर उल्लेख किया गया है। हम उन सभी शायरों, लेखकों, सम्पादकों, और प्रकाशकोंके अत्यन्त कृतज्ञ हैं जिनकी रचनाओं, सम्पादित ग्रन्थों और प्रकाशनोंसे शेरोशायरीके निर्माणमें सहायता या अनुभूति मिली है।

डालमियानगर, बिहार
१२अगस्त, १६४८

—गोयलीय

अनुक्रमणिका

शायर, लेखक, विशेष व्यक्ति

अ

अकबर इलाहाबादी ६८, ६३ ६७ १०० ११० १२४, १२६ १३० १३३ १३६ १६४ २११ २४५ २६७ (२६४से ३०६ तक) ३३० ३३५ ३५१ ३९७ ४५३
अकबर बादशाह ८३ २६४
अकबर मेरठी १०४ १२१
अकबरशाह १६६ १६६
अख्तर शीरानी ४४५ (५०२से ५११ तक)
अज़मत अल्लाहख़ाँ ४५५
अज़ीज़ लखनवी ६४ ७६ १०५ १०६ १२३ १२४ १२५ ५७४
अज़ीम (डाक्टर) ६२
अज़ीम बेग चग़ताई ७७
अजुन १७७ २७७ ४५७
अजुनलाल सेठी २३२
अताहुसैन तहसीन ५५ ५६
अताउल्लाह पालवी ६१
अदब १७५
अनवरी ४६१
अनीस ३१ ६३ २६६
अन्दलीब शादानी (डा०) ५७ ७७
अब्दुल्ला मुअर्री ३४५
अब्दुस्सलाम आज़ाद २६६
अमरचन्द कैस ४५५
अमीन अज़ीमाबादी १०८
अमानुद्दीन २१०
अमीर ख़ुसरो ८१ ५२ ५५ १४८, १७७ १७८ ४५३
अमीर मीनाई ६४ ८२ ६८ १००, १०१ १०४ ११३, ११८, १३३ १६८ (२४२से २६० तक) २६४ ४५३
अरशद देहलवी १३१
असलम मुज़फ्फरनगरी १०५ १२६ ५७४
अलाउद्दीन ५७३, ५७४
अर्श मलसियानी ४५५ (५१२से ५१५)
अर्शी भोपाली ८२

अली ६३
असग़र गोण्डवी ७८, ९०, ९१, ९२, ९७, १४०, २९४, ४३४, ४६० (५९६से ६०१ तक)
असर लखनवी ५७४
अशफ़ाक़ुल्लाह ५२८
असीर लखनवी ९७, १२९, २५५
अहमदनदीम क़ासिमी ४५५, ५३१
अहसन माहरहरवी ७९, २५५, ५७४
अहसान दानिश १११ (४१७से ४३१ तक) ४५५, ५२९, ५३१, ५४८

आ

आग़ा शाइर देहलवी ७९, १०५, ११३, १३०, २५५, ४३३, ४५३, ५७४
आज़ाद (मुहम्मद हुसेन) ६२, ६६, १२९, १९२, १९५, १९७, १९९, २६७ (२६८से २७३ तक) २७७, ३०७, ३७६, ४३२, ५७१
आज़ाद (लखनवी) १०५
आतिश ७९, ८९, १०३, ११५, ११८, १३८, १७८, २०९, २६५
आदम १४२
आनन्दनारायण मुल्ला ३३५
आबरू ५५, ९७, १५०
आरज़ू लखनवी १०८, १५०, ४५३, ५७४
आरिफ़ हस्वी देहलवी १३१
आसफ़अली (गवर्नर) ४३३
आसफ़ुद्दौला ५५, १५७, १५९
आसी ग़ाज़ीपुरी ६१४
आसी लखनवी ८५, ८७, १०९, ११३, ११५

इ

इक़बाल (डाक्टर, सर) ८२, ८६ ८७, ९०, ११२, ११५, १९५, २०७, २१०, २५५, २६३, २६४, २६७ (३०७से ३४६ तक) ३४८, ३५१, ३७६, ४०५, ४५४, ४६०, ४६१, ५२८, ५२९, ५३१, ५७१
इक़बाल मारूफ़ ५२६
इक़बाल सलमाँ ५२५
इन्द्रजीत शर्मा ४५५
इम्दाद इमाम असर १२३
इन्शा ६१, ६३, १२९, १७७

उ

उमर खैयाम ६५, ९४, ९५

ए

एजाज़ (प्रोफ़ेसर) २६६, ३४८

एजाज़ सद्दीक़ी ४५६

औ

औरंगज़ेब १४६, ४४४

क

कर्ज़न (लार्ड) २६७
कद्र बिलगिरामी १३२
कनीज़ फातिमा ('हया' ५२६
कबीर ५२, ३७८, ४५३
क़ायम ५५, १११
क़ायम चाँदपुरी १३६, १३८
किशनचन्द्र ज़ेबा ३७५
कुदरत १५१
कुम्भकर्ण ३७३
कुर्सी १३२
कैफ़ी ७९, ५७४
कैसर देहलवी ९९, १११, १२३, १२८
कृष्ण १७८, ४५६, ४६४

ख

ख्वाजा वज़ीर १३३
खानख़ाना ५३

ग

गंग कवि ५३, ५४, ६०९
गणेशशंकर विद्यार्थी ३८७
गयासुद्दीन ५१
गायत्री देवी ५७२
ग़ालिब ५५, ७९, ९९, ११४, १२१, १४३, १५३, १५७, १६२(२०६से२३१तक)२४७, २५३, २५४, २६४, २७४, २७५, ४३३, ४५६, ४६०, ५२८, ५३१, ५७१, ५७६, ५७७, ५९०
गोरखप्रसाद इबरत ६०९

च

चकबस्त ६६, २६४, २६५, २६७, ३०७ (३४७से ३७० तक) ३७६, ४५४, ५३१
चन्द्रशेखर 'आज़ाद ५२८

ज

जकाउल्लाह ५७३
जगन्नाथ 'आज़ाद' ५३१
जज़्बी ५३१ (५५१से ५५६ तक)
जफ़र ३७८
जमील ५५८
ज़रीफ़ लखनवी ७९ ५७४
जलील ७९, १०७, १०८, ११७, १३०, १३४, १३६, ४५३, ५७४, ५७८
जहाँगीर १७७
ज़ाकिर देहलवी १२१
जानजाना १५१
जामी ४६१
जायसी ५३, ५५३

जावेद लखनवी १३४, १३७
जिगर मुरादावादी १०५, १११, ४५३, ५७४, ५९६ (६०२से ६०८ तक)
जिन्ना ३३५
जिनेश्वरदास जैन 'माइल' ७९, १००, १०३, ४४३
जिया ११५, १५१
जुरअत ५५, १७७
जोश मलसियानी १००, १२३, १२७, १४३
जोश मलीहावादी ६६, (३७६से ४०४ तक) ५२९, ५३१, ६१४
जौक़ ६३, ७८, ९९, ११६, १३२, १४८, १४५, १५३, १९२ (१९३से २०५ तक) २५३, २६४, २६८, ४३३, ५२३, ५७१

त

तनहा ११२
तसकीन १९९
तसलीम १२८
तहसीन ५५
तासीर (डा०) ५३१
तुलसीदास (गोस्वामी) १५५
तेजवहादुर सप्रू ३४९, ५९६
तोला वदायूनी १३२
तौक़ीर ४१९

द

दर्द १५१ (१६७से १७४ तक) १७७
दवीर ६३, २६६
दयाशंकर नसीम ६३
दाग़ ७८, ९२, ९८, ९९, १०१, १०८, ११९, १२०, १२२, १२९, १३२, १३३, १३८, १९२, १९९, २४३, २५०, २५१, २५२ (२५३से २६० तक) ३४६, ३५१, ४०५, ४३२, ४३३, ४५३, ५२३, ५७१
दिल शाहजहाँपुरी ७९, ४५३, ५७४
दिल अज़ीमावादी १२०
देवीप्रसाद पीतम १३१

न

नज़ीर अकवरावादी ६६ (१७७से १९० तक) २६६, ४५३
नरसी भगत १७८
नल-दमयन्ती ४५८
नवी १७८
नसीम ७९, ९९
नाज़नीन ६२
नाज़िम १३७
नाज़ी १५०
नातिक गुलाठवी ४५९

नानक १७८
नासिख ७६, ८६, १२८, १३१
१७८ नासेह ६४
निज़ाम ११२, १२६, १२८, १३४, १३६
नियाज़ फ़तहपुरी २३३, ४०६ ४५४, ६०६, ६१८
नून-मीम-राशिद ५३१
नूर बिजनौरी ५२२
नूरजहाँ १७७
नूह्नारवी ७६, १३३, १३५, ५७४
नौशा आज़मगढ़ी १३६

प

पद्मिनी १७७, ५७३, ५७४
परवाज़ ५३१
पद्मसिंह शर्मा ५२
पितरस ४६३
पृथ्वीराज १७७

फ

फ़रहाद १४५, १४६, १७७, ४५८, ५२०
फ़ानी बदायूनी ८१, ८५, २३० २३१, ४६०, ५५१, ५७४ (५६०से ५६५ तक)
फ़िराक़ गोरखपुरी ५७५ (६११से ६२२ तक)
फ़ुग़ाँ १५०
फ़ैज़ ५३१ (५३२से ५३६ तक)

ब

बर्क़ ६१
बर्क़ देहलवी २६३ (४३२से ४५० तक)
बर्क़ लखनवी १३६
बट ६२
बयाँ १५१
बशीर अहमद ४५५
बहर १३६
बहज़ाद लखनवी १०५, ४५३ ४५५
बहादुरशाह १६३, १६६, २१४, २५४
ब्राउन 'कर्नल' २१२
बिस्मिल इलाहाबादी १३६, १४१, ४५३, ५७४
बिस्मिल देहलवी १२१
बीमार ११७
बूम मेरठी ५४८
बख़ुद देहलवी ७६, १०३, ११६ १२१, १३२, २५५, ४३३, ४५३, ५७४
बेनज़ीरशाह वारसी १११
बैरमख़ाँ ५३
बृजमोहन दत्तात्रिय कैफ़ी ३८१

भ

भगतसिंह ६१, ५२८
भीम १७७, ५५७
भैरों १७८

म

मक़बूलहुसेन ४५५, ५३१
मखमूर जालन्धरी ५३१, ५४८
मजनूं १४३, १७७, ५२०
मजरूह १०५
मजाज ५३१ (५४०से ५५० तक)
मदहोश ग्वालियरी ८५, १०६
मसहफ़ी १७७
महमूद ११८
महमूदी ग़ज़नवी ३२०
महदीअलीख़ाँ ४५५
महशर ३५२
महशर लखनवी ११६
महात्मा गांधी ३७४, ४६६, ५७३
महादेव १७८
मानूस सहसरामी ४७३
मीर हसन ६३
मीर ५५, ७८, १५०, १५१ (१५३ से १६६ तक) १७७, ५२८, ५३१, ५७६, ५७७, ५६०
मीराजी ४५५, ५३१
मुख्तार सद्दीक़ी ५३१
मुग़लजान तसलीम ११६
मुज़तर खैरावदी ११०
मुश्तर लखनवी ११२
मुश्ताक़ देहलवी १२०
मुसोलनी ५२६
मुहम्मद ६३
मुहम्मद तुग़लक़ ५१
मुहम्मद दीन तासीर (डा०) ४५५
मुहम्मदशाह १४६
मोमिन १०३, ११४, ११७, १२१, १२५, १३२, १३५, १३८, १३६, १६२, २१७, २१८. (२३३से २४१ तक) २५३, २६४, २६६, ४३३, ६०६, ६१६
मौज ५२१

य

यकरंग १४६
यक़ीन १०७, १५१
यगाना चंगेज़ी ६२, १४०, ५७४
यतीन्द्रनाथ ५२८

र

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ३०८, ३७८, ३८१
रविश सद्दीक़ी ७६, ५३१
रसखान ४५३
रसारामपुरी १२४
रसूल १७८

रहमन १११
रहमत मझवाकुनी ६०
रहीन ५३, ४५३
रामचन्द्र वर्मा ४५६
रामप्रसाद बिस्मिल ५२८
रिन्द १२२, २७८
रियाज खैराबादी ७८, ७६, ६६, ६७, ६८, १०१, १०७, ११५, १२४, १२६, ४५३, ५७४
रुस्तम १७७, ४५७
रूजवेल्ट ५२६

ल

लम्भूराम जोश ११७, ५१२
लालचन्द्र फलक ३७५
लैला १४३, १७७, ४५८

व

वली ५५, १४६, १५०, १७८, २१४, ४५३
वहशत कलकत्तवी ११६, ५७४
वाजिद अलीशाह २४२
विकार अम्बालवी ४५५

श

शफीक ११४
शरत बाबू ५२४
शाकिर मेरठी १०३
शाद अज़ीमाबादी ८२, ६२, ११४, १२४, १३५, २६५
शाह आलम १५०, १५४
शाहआलम 'गुमनाम' १४४, १४५
शाहमुबारिक ५५
शाहहातम ५२
शीरीं १७७, ४५८
शुजाउद्दौला ५५
शम्र ६४
शेफ्ता १०३
शेरी भोपाली ५८५
शैदा ४३२
शोरत मानवी ७८

स

समादतअलीखाँ १५६
सफी ७६, ११६, १३६, ५७४
सलाम मछलीशहरी ५३१, ५४८, ५७२
संयोगिता १७७
सरशार ३५१
सर सैयद अहमद २६६
सरोजिनी नायडू ३८१
सवा मयरावी ५२६
साइल देहलवी ७६, १२६, २५५, ४३३, ४५३, ५७४
साकिब लखनवी ८१, ८२, ८४, ८५, ८७, ८८, ८६, ६२, ६३, ६७, १०८, ११४, ११६, ११७,

१२२, १२६, १२७, १३७, १४०, ५७४, (५७६से ५८३ तक)
साग़िर निज़ामी ४५५ (४७६से ५०२ तक) ५२६, ५४८
सादी ५५, ४६१
सावित लखनवी १३८
साहिर देहलवी ७६
साहिर लुधियानवी ५३१, (५५७से ५६८ तक)
साहिर देहलवी ५७४
सिराजुद्दीन ज़फ़र ४५५
सीमाव अकवरावादी २५५ (४०३ से ४१६) ४४६, ४६०
सुभाप ५७४
सुमतप्रसाद जैन ३३३, ३८०
सुरैया ५२५
सुहराव ४५७
सोज़ १५१
सौदा ५२, ५५, ६२, ७६, ११०, ११५, १२६, १४६, १५१, १७७

ह

हमदम अकवरावादी ११२
हसन निज़ामी १७७
हसरत मोहानी ५६, ५७४ (५८४से ५८६ तक) ६११
हरिश्चन्द्र अख़्तर ७६, ४५७
हफ़ीज़ जालन्धरी १०१, १३७, २०८, ४५४, ४५५, (४५६से ४७५)
हव्वा १४२
हफ़ीज़ होशियारपुरी ४५५
हातिम १५०
हाफ़िज़ ६४, ६४, १२०, ४६१
हामिद अल्लाह अफ़सर ४५५
हामिदअलीखाँ ४५५
हामिदहुसेन क़ादरी २५३
हाली ६६, ८६, १६२, २५४, २६३, २६७ (२७४से २६३) २६४, २६५, ३०७, ३५१, ३७६, ४३२, ५७१
हिदायत १५१
हुकुममदरासी १३५
हैरत वदायूनी १२०
हिटलर ५२६, ५७४
हीर-राँझा ४५८,

त्र

त्रिलोकचन्द्र महरूम ७६

ग्रन्थ

आवेहयात २१०, २६८, ५७१
उर्दूएक़दीम ५२
उर्दूएमुअल्ला ५५
उपनिषद १७८

क़ुरान १७८ २६४
कोलतार ७७
ख़ालिक़बारी ५२
गुलकदा ६४
चहारदरवेश ५५
तारीख़ नस्र उर्दू ५२
तारीख़ अदब उर्दू १६९ ३५०
पचायत ५३
पुराण १७८
बालजिबरील ३३३ ३३६
बाग़दरा ३३३
महाभारत ४२४
रामायण ४२४
वेद १७८
शाहनामाए इस्लाम ४६४
हदीस १७८

साहित्य सम्बन्धी

अपभ्रंश भाषा ५१
अभारतीय भाषा ५५
अरबी फ़ारसी ५१ ५२ १४९
  १५१ ३४५
अलंकार ४५३ ४५४ ४५९ ४६२
अंजुमन उ॰ २६९
आज़ाद नज़्म ५६
उर्दू ५२ ५५ १४९ ४५४ ४६३
  ५१२
उर्दू-अदीब ५१ ६३
उर्दू पद्य ५६
उर्दू शायर ६४ ७८ ७९
उर्दू शायरी ५१ ५८ ६४ १४९
  १५१ १८२ २६६ २६८
  २६९ २७५ २९४ २९६
  ३०७ ३७३ ३७५ ३७९
  ४०३ ४५३ ४५४ ४५७
  ४५९ ४६४ ५१९ ५२५
  ५२८ ५७१
उर्दू-साहित्यिक २३३ २५४ ४५६
क़सीदा ६३ १७८ २७५
क़ाफ़िया ६७
ग़ज़ल ५६ ५७ ५८ ६० ६१
  ६५ ७९ १२८ १४९ १५२
  १५३ १५८ १७९ १९५
  २७५ ३०७ ४०६ ४३२
  ४५४ ५१० ५३१ ५७१
  ५७२ ५७३ ५९६ ६०३
  ६०७ ६१७ ६१९
गद्य ६२
गीत ५६
तसव्वुफ़ ६४
तारीख़ ५५ ५६
तुर्की भाषा ५५

नज़्म ५६, ६६, ५१२
नात ६४
पद्य ६२
व्रजभाषा ४६२
प्राकृत ५२
भाषा ४५३, ४६४
मसनवी ५६, ६३
मर्सिया ५६, ६३, ६४, १८०
मुक्त छन्द ६५, ७६
मुसलमान ३२०, ३४७
मुसलमान लेखक ५२
मुस्लिमकवि ५१
रदीफ़ ६७
राष्ट्रीयभाषा ५२
रुबाई ६५, ७४, २७७, ४६५
रेख्ता ५२, ५५, ६२, १४६
रेख्ती ६१, ६३
व्रज ५१
संस्कृत ५१, ४५६, ४६१, ४६२, ४६३, ५२४, ५२८
सानेट ५६
हिन्दी ५२, ५५, ६२, ६८, ६६, १४६, १५०, १५१, ४१८, ४५३, ४५४, ४५५, ४५८, ४५६, ४६०, ४६१, ५२८
हिन्दवी ५२, ५५, ६२
हिन्दूकवि ५१
हिन्दी कविता ५१, ५८, ६१
हिन्दी-उर्दू ५२, ५७३
हिन्दी-साहित्यिक ५१
हिन्दू-मुसलमान ५१, १७६, ३०८, ३४८, ४५३
हिन्दू लेखक ५२
हिन्दुस्तानी ५२, ४५३, ४६१
शृंगारिक कविता ५६, ५८